भोलानाथ राय

तर्कशास्त्र -निगमन

28/-

तर्कशास्त्र—निगमन

भोला नाथ राय, एम०ए०

अध्यापक, कलकत्ता विश्वविद्यालय

अनुवादक तथा भारतीय दर्शन में अनुमान के लेखक

अर्जुन मिश्र

एम०ए०, बी ए० (आनर्स)

अध्यापक, डी० ए० वी० कॉलेज,

लखनऊ

सम्पादक

गोवर्धन भट्ट

एम०ए०, पी-एच० डी०

अध्यापक, बरेली कॉलेज, बरेली

लखनऊ

दि अपर इंडिया पब्लिशिंग हाउस लिमिटेड

१९[illegible]७

भारतीय तर्कशास्त्रकी प्रस्तावना

प्रस्तुत पुस्तकमें भारतीय तर्कशास्त्रका उतना ही अंश रखा गया है जो इंटरमीडिएटके पाठ्यक्रममें निर्धारित है। स्वयं मूल पुस्तक का ही आकार इतना बड़ा है कि इसमें अधिक विषय-सामग्री नहीं दी जा सकती है फिर भी विद्यार्थियोंकी आवश्यकतानुसार उसे पूर्ण करने की ही चेष्टा की गई है। आशा है अधिकारीवर्ग और विद्यार्थीगण इसे अवश्य अपनायेंगे।

जुलाई ८—१९५४ —अर्जुन मिश्र

विषय-सूची

अध्याय १

पृष्ठ

तर्कशास्त्रकी परिभाषा और क्षेत्र ... १–४३
भाग १. तर्कशास्त्र क्या है? ... १
भाग २. ज्ञान और उसके स्रोत ... ४
भाग ३. ज्ञानके प्रकार : अव्यवहित और व्यवहित ज्ञान ... ७
भाग ४. विचार ... ९
टिप्पणी १. प्रत्ययोंका निर्माण ... १०
२. प्रत्ययोंका स्वरूप : वस्तुवाद, प्रत्ययवाद और नामवाद ... १२
भाग ५. विचार और भाषा : तर्कशास्त्र और व्याकरण ... १३
भाग ६. विचारका आकार और द्रव्य ... १५
भाग ७. आकार-सम्बन्धी और द्रव्य-सम्बन्धी सत्यता ... १७
भाग ८. विज्ञान ... १९
टिप्पणी. विधायक और नियामक विज्ञान ... २२
भाग ९. विज्ञान और कला ... २२
भाग १०. तर्कशास्त्रकी परिभाषा ... २३
टिप्पणी १. आकारविषयक और द्रव्यविषयक तर्कशास्त्र ... २६
२. तर्कशास्त्रका क्षेत्र या विस्तार ... २८
भाग ११. तर्कशास्त्र, विज्ञान और कलाके रूपमें ... २९
भाग १२. तर्कशास्त्रकी विभिन्न परिभाषाएं ... ३१
भाग १३. तर्कशास्त्रकी उपयोगिता ... ३४
भाग १४. तर्कशास्त्र और मनोविज्ञान ... ३६
टिप्पणी. तर्कशास्त्र और मनोविज्ञानमें विचार ... ३८
भाग १५. तर्कशास्त्र और तत्वज्ञान ... ३९
अभ्यासार्थ प्रश्न १ ... ४१

अध्याय २

तर्कशास्त्रके मूल नियम ४४—५१
भाग १. मूल नियमोंका स्वरूप ... ४४
भाग २. विचारके मूल नियम ... ४५
(१) तादात्म्यका नियम ... ४५
(२) व्याघातका नियम ... ४६
(३) मध्यदशा-परिहारका नियम ... ४७
टिप्पणी. विचारके तीन नियमोंका पारस्परिक सम्बन्ध ... ४९
(४) पर्याप्त कारणका नियम (लाइबनित्स) ... ५०
टिप्पणी. हैमिल्टन की मान्यता ... ५०
अभ्यासार्थ प्रश्न २ ... ५१

अध्याय ३

पद ५२—८१
भाग १. शब्द और पद: पदयोग्य और पदसंयोज्य शब्द ... ५२
टिप्पणी. क्या पद-प्रकरण तर्कशास्त्रका अंग है? ५५
भाग २. पदोंका निर्देश (या विस्तार) और स्वभाव (या अभिप्राय) ... ५५
भाग ३. पदोंके विभाग ... ६१
(क) एकशब्दात्मक और अनेकशब्दात्मक पद ... ६२
(ख) एकवाचक और जातिवाचक पद ... ६२
(ग) समूहवाचक और अ-समूहवाचक पद: पदोंका समष्टचर्थ और व्यष्टचर्थमें प्रयोग ... ६४
(घ) वस्तुवाचक और गुणवाचक पद ... ६५
(ङ) विधिवाचक, निषेधवाचक और राहित्यवाचक पद ... ६७
टिप्पणी. पदोंमें विरोध: व्याघातक और विपरीत पद ... ६९
(च) निरपेक्ष और सापेक्ष पद ... ७०
(छ) स्वभाववाचक और अ-स्वभाववाचक पद ७१
हल किये हुए प्रश्न ... ७८
अभ्यासार्थ प्रश्न ३ ... ७९

अध्याय ४

वाच्यधर्म ८२–९०
भाग १. पांच वाच्यधर्म ... ८२
(१) जाति ... ८२
(२) उपजाति ... ८२
(३) व्यावर्तक गुण ... ८२
(४) सहज गुण ... ८२
(५) आकस्मिक गुण ... ८२
भाग २. पॉरफ़ीरी का वृक्ष ... ८७
हल किये हुए प्रश्न ... ८८
अभ्यासार्थ प्रश्न ४ ... ८९

अध्याय ५

परिभाषा—उसकी सीमाएं और आकारविषयक नियम ९१–१००
भाग १. परिभाषाका स्वरूप ... ९१
टिप्पणी. परिभाषा और वर्णन : इनका वाच्यधर्मोंसे सम्बन्ध ... ९२
भाग २. परिभाषाके नियम और उनके उल्लंघनसे पैदा होनेवाले दोष ... ९३
भाग ३. परिभाषाकी सीमाएं ... ९७
हल किये हुए प्रश्न ... ९८
अभ्यासार्थ प्रश्न ५ ... ९८

अध्याय ६

तार्किक विभाजन १०१–१०९
भाग १. तार्किक विभाजनका स्वरूप ... १०१
टिप्पणी. विभाजन और परिभाषा ... १०२
भाग २. तार्किक विभाजनके नियम और उनके भंग होनेसे होनेवाले दोष ... १०२
भाग ३. द्विवर्गाश्रित विभाग ... १०५

हल किये हुए प्रश्न ... १०७
अभ्यासार्थ प्रश्न ६ ... १०८

अध्याय ७

तर्कवाक्य ११०–१४१
भाग १. तार्किक वाक्यका विश्लेषण ... ११०
टिप्पणी. व्याकरणका वाक्य और तर्कवाक्य ... ११२
भाग २. तर्कवाक्योंके भेद ... ११३
(अ) सरल और जटिल ... ११३
(ब) सम्बन्धकी दृष्टिसे वाक्योंका विभाजन : निरपेक्ष और सापेक्ष ... ११३
(स) गुणके अनुसार विभाजन : विधानात्मक और निषेधात्मक ... ११५
टिप्पणी १. हेतुफलाश्रित वाक्योंका गुण ... ११६
,, २. वैकल्पिक वाक्योंका गुण ... ११७
(द) परिमाणके अनुसार विभाजन : सामान्य और विशेष ... ११७
टिप्पणी १. एकवाचक वाक्य ... ११९
,, २. सामान्य वाक्य ... ११९
,, ३. हेतुफलाश्रित वाक्योंका परिमाण ... १२०
,, ४. वैकल्पिक वाक्यका परिमाण ... १२०
(य) विधिके अनुसार विभाजन : आवश्यक, सम्प्रज्ञात और सन्दिग्ध वाक्य ... १२०
(फ) तात्पर्यके अनुसार विभाजन : शाब्दिक और वास्तविक वाक्य ... १२१
भाग ३. वाक्योंका सरलीकरण : गुण और परिमाणके अनुसार वाक्योंके रूप : आ, ए, ई, ओ ... १२२
भाग ४. साधारण वाक्योंको तर्कवाक्योंके रूपमें रखना ... १२३
भाग ५. पदोंकी व्याप्ति ... १३१
टिप्पणी. विधेयका परिमाण व्यक्त करना ... १३२
भाग ६. आकृतियोंके द्वारा चार प्रकारके वाक्योंको दिखाना : यूलर के वृत्त ... १३३
अभ्यासोंको हल करनेके लिये संकेत ... १३४

	हल किये हुए प्रश्न	...	१३५
	अभ्यासार्थ प्रश्न ७	...	१३९

अध्याय ८

	निरपेक्ष वाक्योंका तात्पर्य और विधानके सिद्धान्त		१४२–१४६
भाग	१. विधानके सिद्धान्त	...	१४२
भाग	२. वाक्योंके तात्पर्यके बारेमें नामवादी, प्रत्ययवादी और वस्तुवादी सिद्धान्त	...	१४४
	अभ्यासार्थ प्रश्न ८	...	१४५

अध्याय ९

	वाक्योंका विरोध		१४७–१५१
भाग	१. विरोधके विभिन्न रूप	...	१४७
	(क) उपाश्रितता	...	१४७
	टिप्पणी. क्या उपाश्रितता विरोधका प्रकार है?	...	१४७
	(ख) विपरीतता	...	१४८
	(ग) अनुविपरीतता	...	१४८
	(घ) व्याघातकता	...	१४९
भाग	२. विरोध-प्रदर्शक वर्ग	...	१४९
	अभ्यासार्थ प्रश्न ९	...	१५१

अध्याय १०

	अनन्तरानुमान या अव्यवहित अनुमान		१५२–१९१
भाग	१. अनुमान-प्रकरण—निगमनात्मक और आगमनात्मक अनुमान; अव्यवहित अनुमान या अनन्तरानुमान और व्यवहित अनुमान या सान्तरानुमान	...	१५२
भाग	२. परिवर्तन	...	१५४
	टिप्पणी १. क्या आ वाक्यका साधारण परिवर्तन हो सकता है?	...	१५७

टिप्पणी २. निषेधके द्वारा परिवर्तन—ओ वाक्यका परिवर्तन ... १५८
टिप्पणी ३. परिवर्तित सम्बन्धके द्वारा अनुमान ... १५८
भाग ३. प्रतिवर्तन ... १५८
टिप्पणी. भौतिक प्रतिवर्तन ... १६०
भाग ४. परिवर्तित प्रतिवर्तन ... १६१
टिप्पणी १. परिवर्तित प्रतिवर्तन अनुमानकी मिश्रित प्रक्रिया है ... १६३
टिप्पणी २. परिवर्तित प्रतिवर्तन प्रतिवर्तित परिवर्तनसे भिन्न है ... १६५
भाग ५. विपर्यय ... १६५
अनन्तरानुमानके चार विशेष प्रकारोंकी तुलनाकी तालिका ... १६९
भाग ६. विरोध ... १७१
भाग ७. विध्यनुकूल अनुमान ... १७७
भाग ८. सम्बन्धका रूपान्तर ... १७७
भाग ९. विशेषण-संयोजनात्मक अनुमान ... १८२
भाग १०. मिश्रविचाराश्रित अनुमान ... १८३
हल किये हुए प्रश्न ... १८४
अभ्यासार्थ प्रश्न १० ... १८८

अध्याय ११

न्यायवाक्य १९२–२६२
भाग १. न्यायवाक्य (अथवा न्याय) की परिभाषा ... १९२
भाग २. न्यायवाक्यकी रचना ... १९३
भाग ३. न्यायके प्रकार ... १९६
भाग ४. शुद्ध निरपेक्ष न्यायकी स्वयंसिद्धियां ... १९७
भाग ५. अरस्तू का सिद्धान्त ... १९८
भाग ६. लैम्बर्ट के सिद्धान्त ... १९९
भाग ७. निरपेक्ष न्यायवाक्यके सामान्य नियम और उनके भंग होनेसे उत्पन्न दोष ... २००

टिप्पणी. अनियमित दीर्घपद-दोष और अनियमित ह्रस्वपद-दोष ... २०४
टिप्पणी. निषेधात्मक आधारवाक्योंका दोष ... २०६
भाग ८. न्यायके आकार ... २११
भाग ९. न्यायवाक्यके संयोग ... २१२
भाग १०. प्रामाणिक संयोगोंका निर्धारण ... २१४
(१) प्रथम आकारके प्रामाणिक संयोग ... २१५
टिप्पणी १. प्रथम आकारके विशेष नियम ... २१७
टिप्पणी २. प्रथम आकारकी मुख्य विशेषताएं ... २१८
(२) द्वितीय आकारके प्रामाणिक संयोग ... २१९
टिप्पणी. द्वितीय आकारके विशेष नियम ... २२१
(३) तृतीय आकारके प्रामाणिक संयोग ... २२२
टिप्पणी. तीसरे आकारके विशेष नियम ... २२५
(४) चतुर्थ आकारके प्रामाणिक संयोग ... २२६
टिप्पणी. चतुर्थ आकारके विशेष नियम ... २२८
भाग ११. रूपान्तरण: अनुलोम और विलोम ... २३०
टिप्पणी. क्या रूपान्तरण आवश्यक है? ... २३१
भाग १२. स्मृति सहायक पद्य ... २३२
भाग १३. अपूर्ण संयोगोंका अनुलोम रूपान्तरण ... २३४
भाग १४. अपूर्ण संयोगोंका विलोम रूपान्तरण ... २३६
भाग १५. मौलिक, निर्बल और सबल न्याय ... २४९
भाग १६. शुद्ध हेतुफलाश्रित तथा शुद्ध वैकल्पिक न्याय ... २५३
हल किये हुए प्रश्न ... २५४
अभ्यासार्थ प्रश्न ११ ... २६०

अध्याय १२

मिश्रित न्याय २६३–२८२
भाग १. हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्याय ... २६३
(अ) नियम ... २६३
(ब) दोष ... २६५
(स) हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्याय का शुद्ध निरपेक्ष न्यायमें रूपान्तरण ... २६६

भाग २. वैकल्पिक-निरपेक्ष न्याय ... २६७
भाग ३. उभयतोपाश ... २६८
उभयतोपाशके प्रकार ... २६९
उभयतोपाशका प्रतिक्षेप ... २७२
उभयतोपाशकी परीक्षा ... २७५
उभयतोपाशकी आकारविषयक सत्यता ... २७५
द्रव्यकी दृष्टिसे उभयतोपाशकी सत्यता ... २७७
टिप्पणी. प्रतिक्षेपसे उभयतोपाशकी कमजोरी प्रकट हो जाती है ... २७९
अभ्यासार्थ प्रश्न १२ ... २८०

अध्याय १३

संक्षिप्त न्यायवाक्य २८३–२८५
भाग १. संक्षिप्त न्याय ... २८३
अभ्यासार्थ प्रश्न १३ ... २८५

अध्याय १४

संयुक्त न्यायवाक्य या न्यायमाला. अनुलोम (वर्धमान) और विलोम (हीयमान) २८६–२८८
भाग १. अनुलोम और विलोम न्यायमाला ... २८६
अभ्यासार्थ प्रश्न १४ ... २८८

अध्याय १५

संक्षिप्त न्यायमाला :—संक्षिप्त अनुलोम न्यायमाला : संक्षिप्त विलोम न्यायमाला २८९–२९९
भाग १. संक्षिप्त अनुलोम न्यायमाला ... २८९
भाग २. संक्षिप्त अनुलोम न्यायमालाके प्रकार ... २९०
भाग ३. संक्षिप्त अनुलोम न्यायमालाके नियम ... २९२
भाग ४. संक्षिप्त विलोम न्यायमाला ... २९५
टिप्पणी. वर्गीकरण तालिका ... २९८
अभ्यासार्थ प्रश्न १५ ... २९८

अध्याय १६

न्यायवाक्य पर मिल की आपत्तियां ३००–३०४

भाग १. मिल की दो आपत्तियां ... ३००

अभ्यासार्थ प्रश्न १६ ... ३०४

अध्याय १७

निगमनके दोष ३०५–३७४

भाग १. दोषका स्वरूप और वर्गीकरण ... ३०५

भाग २. निगमनके दोष ... ३०६

दोष-सम्बन्धी प्रश्नोंको हल करनेके लिये संकेत तथा कुछ हल किये हुए उदाहरण ... ३११

हल किये हुए प्रश्न ... ३१७

अभ्यासार्थ प्रश्न १७ ... ३६३

परिशिष्ट: भारतीय दर्शन में अनुमान ... ३७५

शब्दकोष ... ४०१

तर्कशास्त्रकी परिभाषा और क्षेत्र
(Definition and Scope of Logic)

भाग १. तर्कशास्त्र क्या है ?

शुरूमें एक नपी-तुली परिभाषा देनेकी कठिनाइयां

किसी भी विज्ञानको सीखनेके पहिले प्रत्येक विद्यार्थीको यह उत्सुकता होनी स्वाभाविक ही है कि आखिर वह क्या सीखने जा रहा है ? तर्कशास्त्र क्या है ? इसकी विषय-सामग्री क्या है ? इसके अध्ययन की विधि क्या है ? इसका ज्ञानकी अन्य शाखाओंसे क्या सम्बन्ध है ? इस तरहके सवालोंको पूछना निश्चय ही बहुत ठीक है। लेकिन अभी से इनके जवाब दे देना बहुत मुश्किल है। यह कठिनाई तर्कशास्त्रके लिये अनोखी नहीं है। जब कभी हम कोई नया विषय सीखना शुरू करते हैं तब हमेशा यह कठिनाई सामने आती है। इसको कुछ-कुछ वैसी ही समझिए जैसी किसी पिताको तब होती है जब उसका बच्चा एकके बाद दूसरे सवालोंकी झड़ी लगा देता है। पिता उस समय बड़े असमंजसमें पड़ जाता है। वह बच्चेकी ज्ञान-पिपासा को तृप्त तो करना चाहता है, लेकिन इसमें अपनेको असमर्थ पाता है। बच्चेका मानसिक स्तर इतना निम्न होता है कि उसके अन्दरसे वह समस्याओंके समाधानके लिये आवश्यक सामग्रीको नहीं ढूंढ़ पाता। ऐसे समय एक ऐसा पिता जो होशियार नहीं है झुंझलाकर शायद चिल्ला पड़े कि "तुम बिना जाने क्या समझोगे ?" यह कहनेके बाद शायद वह यह समझे कि उसने बहुत ही बुद्धिमानीकी बात कही है। लेकिन अगर उसके अन्दर कुछ विवेक होगा तो वह श्री विलियम जोन्स की माताकी तरह जवाब देगा। जोन्स की माताने कहा था: "पढ़ो, जान जाओगे।" झुंझलाहट-भरा जवाब और

मुलायम किन्तु टालू जवाब, दोनों ही इस बातके सबूत हैं कि हमने बच्चेके स्तर पर आकर उससे व्यवहार करनेकी कोशिश नहीं की। तर्कशास्त्रकी किताब लिखनेवाले और तर्कशास्त्रको पढ़ानेवाले भी ऐसी ही कठिन परिस्थितिमें होते हैं। बिल्कुल नये सिरेसे तर्कशास्त्रका अध्ययन करनेवाले विद्यार्थीको हम एकाएक एक नपी-तुली और सही-सही परिभाषा नहीं समझा सकते। इसके पहिले उसको तर्कशास्त्रसे थोड़ा-बहुत परिचित हो जाना ज़रूरी है। विद्यार्थी निश्चय ही कुछ झुंझलायेगा और अन्धेरेमें भटकना पसन्द नहीं करेगा, लेकिन इसका कोई इलाज नहीं है, सिवाय इसके कि कुछ हम झुकें, कुछ वह झुके। एक बिल्कुल नपी-तुली और शुद्ध परिभाषा न देकर हम पहिले तर्क-शास्त्र के स्वरूप और प्रयोजन पर कुछ विस्तारसे सोच-समझ लेंगे जिससे अभी मोटे तौरसे हम तर्कशास्त्रका बोध कर सकें।

'लॉजिक' शब्दकी व्युत्पत्ति।

तर्कशास्त्र अंग्रेज़ी शब्द **'लॉजिक'** का पर्याय है। 'लॉजिक' शब्द ग्रीक विशेषण **'लॉजिके'** (**Logike**) से लिया गया है जिसकी संज्ञा **'लॉगस'** (**Logos**) है। 'लॉगस' का अर्थ है **'विचार'** या **'शब्द'** जो कि विचारका प्रकट रूप है। एक ही शब्द 'लॉगस' का दोनों अर्थों ('विचार' और 'शब्द') में प्रयोग होना सिद्ध करता है कि विचार और भाषा अर्थात् उसके प्रकाशनके मध्य घनिष्ठ सम्बन्ध है। अतः व्युत्पत्ति की दृष्टिसे तर्कशास्त्रकी यह परिभाषा हो सकती है—**"तर्कशास्त्र भाषा में प्रकाशित विचारोंका विज्ञान है।"** 'विचार' शब्दसे सभी लोग भली-भांति परिचित हैं और साधारण तरीक़ेसे सभी लोग जानते हैं कि विचार करना क्या है। विचार करना मनकी एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा ज्ञान प्राप्त होता है। चूंकि 'विचार' शब्दका ठीक अर्थ निश्चित करना आसान नहीं है, इसलिए काम चलानेके लिये हम इसके स्थान पर 'तर्क' (reasoning) शब्दको ले लेते हैं जो कि 'विचार' शब्दकी तुलनामें कुछ आसान है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि **तर्कशास्त्र वह शास्त्र है जो भाषामें व्यक्त तर्कसे और कुछ सहायक प्रक्रियाओंसे सम्बन्ध रखता है।** अब इस परिभाषाको समझनेकी कोशिश करनी चाहिए।

तर्कशास्त्र विचारका विज्ञान है।

तर्कशास्त्र तर्कका विज्ञान है।

तर्कका अर्थ है कुछ ज्ञात बातोंसे कुछ अज्ञात बातों तक पहुंचना। 'कुछ ज्ञात बातों' का अर्थ है तर्कके प्रदत्त (data) या सामग्री, जब कि 'कुछ अज्ञात बातों' का अर्थ है निष्कर्ष जिस पर हम तर्कके द्वारा पहुंचते हैं। बच्चा पैदा होता है; हम तर्क करते हैं और इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि वह मर जायगा। बच्चा इतना भाग्यशाली हो सकता है कि वह मनुष्यकी पूरी आयुका भोग करे, लेकिन कभी-न-कभी वह मरेगा अवश्य। बच्चेका जन्म और यह बात कि मनुष्य मरणशील है, तर्कके प्रदत्त हैं, और इन प्रदत्तोंसे हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि बच्चा मर जायगा। पूरी तरहसे व्यक्त करने पर इस तर्कका रूप निम्नलिखित होगा:— तर्कका अर्थ है ज्ञातसे अज्ञातमें पहुंचना।

सब मनुष्य मरणशील हैं;
बालक मनुष्य है;
∴ बालक मरणशील है।

इसी तरह दूसरा उदाहरण लीजिए—यात्री देखता है कि आकाशमें बादल छाये हुए हैं, बिजलीकी चमक भी है। इससे वह तर्क करता है कि वर्षा होनेवाली है और उसे वर्षासे बचनेके लिये शीघ्रता करनी चाहिए। इस प्रकार तर्क एक क़िस्मका परोक्ष ज्ञान है जो प्रत्यक्ष ज्ञान पर आधारित रहता है। तर्क-प्रक्रिया (reasoning) को पूरी तरहसे समझनेके लिये हमें **'ज्ञान'**, **'परोक्ष ज्ञान'** इत्यादि शब्दोंके अर्थको भली-भांति समझ लेना चाहिए। ये शब्द इसी अध्यायके दूसरे और तीसरे भागमें पूरी तरहसे स्पष्ट किये जायेंगे।

तर्क सत्य होता है या असत्य; अतः तर्कशास्त्र का सम्बन्ध सत्यतासे है।

तर्क **सत्य** भी हो सकता है और **असत्य** भी। अज्ञातका अनिश्चित होना प्रसिद्ध है। अगर ज़ोरकी हवा चलना शुरू हो जाय तो सम्भावित वर्षा नहीं भी हो सकती है। ऐसी हालतमें उपर्युक्त तर्क असत्य सिद्ध होगा। अतः तर्कके विषयमें सबसे महत्त्वपूर्ण बात सत्यता और असत्यता की है। तर्क-प्रक्रियाओंसे सम्बन्धित होनेके कारण तर्कशास्त्रको सत्यता के स्वरूप और हेतुओंका विचार करना पड़ता है। (इस अध्यायका भाग ७ देखिए)।

तर्कशास्त्रपद, वाक्य और तर्कसे सम्बन्ध रखता है।

अगर हम किसी तर्क-प्रक्रिया का विश्लेषण करें तो हमें मालूम होगा कि वह वाक्यों (propositions) से बनी हुई है जो व्याकरणके वाक्यों (sentences) की तरह होते हैं। ऊपरके तर्कमें तीन वाक्य हैं: "सब मनुष्य मरणशील हैं", "बालक मनुष्य है" और "बालक मरणशील है।" इससे स्पष्ट है कि तर्क-प्रक्रियाका अध्ययन करनेमें तर्कशास्त्र वाक्योंका भी अध्ययन करता है। वाक्योंका पदों (terms) में विश्लेषण किया जा सकता है जो मोटे तौरसे व्याकरणके शब्दों (words) की तरह होते हैं। "सब मनुष्य मरणशील हैं" इस वाक्यमें 'मनुष्य' और 'मरणशील' पद हैं। अतः तर्कशास्त्रमें तर्क, पद और वाक्योंका वर्णन करनेकी परम्परा है। यद्यपि तर्कशास्त्र विशेष रूपसे तर्कसे ही सम्बन्धित है, तथापि पदों और वाक्योंसे भी उसका सम्बन्ध है, क्योंकि ये तर्कके अंग हैं। यही कारण है कि तर्कशास्त्रके सिद्धान्त तीन प्रमुख शीर्षकोंके अन्तर्गत रखे जाते हैं—**पद, वाक्य** और **तर्क**।

तर्कशास्त्र कुछ सहायक प्रक्रियाओंसे भी सम्बन्ध रखता है।

इनके अलावा तर्कशास्त्र कुछ और प्रक्रियाओंका भी वर्णन करता है जो तर्क-प्रक्रियाकी सहायक होती हैं, जैसे, परिभाषा, नामकरण, वर्गीकरण इत्यादि। इनका वर्णन यथास्थान किया जायगा।

भाग २. ज्ञान और उसके स्रोत.

ज्ञान क्या है?

ज्ञान क्या है? ज्ञान ऐसे विचारोंके समूहका नाम है जो वस्तुओंके अनुसार हों और जिनके तदनुसार होनेमें ज्ञाताका विश्वास हो। इस प्रकार ज्ञानमें तीन बातें शामिल हैं—(१) मनमें विचारोंका रहना; (२) इन विचारोंका सचमुच अस्तित्व रखनेवाली वस्तुओंके अनुसार होना; और (३) उनके तदनुसार होनेमें ज्ञाताको विश्वास होना। एक मामूली उदाहरण लीजिए—जब हम कहते हैं कि हम सूर्यको जानते हैं तब हमारे कहनेका तात्पर्य यह होता है कि हमारे मनमें एक तारे (सूर्य) के विषयमें कुछ विचार हैं, जो आकारमें बहुत बड़ा है, बहुत चमकीला है और जिसके चारों ओर ग्रह परिक्रमा करते हैं; कि इन

विचारोंके अनुरूप सचमुच सूर्यका अस्तित्व है; और अन्तमें यह कि हम उसके अस्तित्वमें विश्वास करते हैं। यदि इन तीनोंमें से किसी भी बातकी कमी पड़ जाय तो ज्ञानका होना नहीं कहा जा सकेगा।

दैनिकजीवन के उदाहरण।

हम सभी लोग सामान्य रूप से जानते हैं कि ज्ञानका क्या अर्थ होता है। हम बिजलीकी चमक देखते हैं और जान जाते हैं कि वहां प्रकाश है। हम बादलोंकी गड़गड़ाहट सुनते हैं और उनकी ध्वनिको जान जाते हैं। हम आमको चखते हैं और जान जाते हैं कि वह मीठा है; गुलाबको सूंघते हैं और जान जाते हैं कि वह महकता है; बर्फके टुकड़ेको छूते हैं और जान जाते हैं कि वह ठंडा है। जो कुछ भी हम देखते, सुनते, चखते, छूते और सूंघते हैं उसे जानते हैं। फिर हम यह भी जानते हैं कि एक खास मौके पर हमारे मन में क्या हो रहा है। हम यह भी जानते हैं कि हम प्रसन्न हैं, अप्रसन्न हैं, क्रोध में हैं या ईर्षा कर रहे हैं। इन सभी चीज़ोंको हम **प्रत्यक्ष** रूप से जानते हैं। केवल इतना ही नहीं। प्रातः काल हम सोकर उठते हैं और देखते हैं कि ज़मीन गीली है, आकाशमें बादल घिरे हुए हैं, पानीकी बूंदे पेड़की पत्तियोंसे धीरे-धीरे टपक रही हैं; तब हम जान जाते हैं कि जब हम रात में सो रहे थे तब पानी बरसा था। हम धुवां देखते हैं और जान जाते हैं कि वहां आग है। जब हम एक आनन्द में मग्न आदमीकी मुखाकृति देखते हैं तो जान जाते हैं कि वह प्रसन्न है। इसके अलावा हम यह भी जानते हैं कि पृथ्वी सूर्यके चारों ओर घूमती है, यद्यपि वह स्थिर प्रतीत होती है। हमें इस बातका भी ज्ञान है कि प्राचीन कालमें जब हम उत्पन्न नहीं हुए थे, यूनान देशमें सुकरात नाम का एक महान् दार्शनिक उत्पन्न हुआ था। अतः यह स्पष्ट है कि हम केवल उन्हीं चीज़ोंको नहीं जानते जिन्हें प्रत्यक्ष देखते हैं, बल्कि उन चीज़ोंको भी जानते हैं जिनके अस्तित्वका हमको तर्क या दूसरे लोगों के साक्ष्य (testimony) के बल पर विश्वास होता है।

ज्ञानके स्रोत

स्रोत:

ज्ञानके तीन स्रोत हैं. प्रत्यक्ष (immediate apprehen-

sion), अनुमान (inference), साक्ष्य और आप्त-वाक्य (testimony and authority)।

(क) बाह्य वस्तुओं और मानसिक दशाओंका अव्यवहित प्रत्यक्ष।

(क) **प्रत्यक्ष** वह मानसिक प्रक्रिया है जिसके द्वारा हम वस्तुका अव्यवहित (direct) ज्ञान प्राप्त करते हैं। यह अव्यवहित ज्ञान बाह्य या आन्तरिक प्रत्यक्षसे उत्पन्न होता है। बाह्य प्रत्यक्षमें हम सीधे ज्ञानेन्द्रियोंके द्वारा (आंख, कान इत्यादिके द्वारा) यह जानते हैं कि वस्तुओंका हम से बाहर अस्तित्व है और उनके अन्दर कुछ गुण हैं। हम सूर्यको देखते हैं और जान जाते हैं कि उसका अस्तित्व है और उसमें चमकनेका गुण भी है। आन्तरिक प्रत्यक्ष (internal perception) में (जिसे अन्तर्दर्शन कहते हैं) हमें अपनी आन्तरिक मनोवृत्तियों का अव्यवहित ज्ञान होता है, जैसे, अपने सुख-दुःखका। इस प्रकार बाह्य और आन्तरिक प्रत्यक्ष अव्यवहित ज्ञानके स्रोत हैं।

(ख) अव्यवहित प्रत्यक्षसे अनुमान।

(ख) **अनुमान (inference या reasoning)** ज्ञानका दूसरा स्रोत है। अनुमानमें कुछ ज्ञात बातों अर्थात् प्रदत्तोंसे हम कुछ अज्ञात बातों तक पहुंचते हैं। अनुमानके प्रदत्त यानी दी हुई सामग्री प्रत्यक्ष के द्वारा प्राप्त की जाती है। उदाहरणके लिये, हम धुवां देखते हैं और जान जाते हैं कि वहां आग है; एक मुसकराते हुए मनुष्यको देखते हैं और जान लेते हैं कि वह आनन्दित है।

(ग) साक्ष्य या विश्वसनीय लोगोंके कथन।

(ग) **साक्ष्य (testimony)** का अर्थ है विश्वसनीय लोगोंका कथन। हमारा अपना अनुभव और उससे प्राप्त अनुमान बहुत थोड़ा होता है। हमारी जरूरतें हमें विवश करती हैं कि हम इस सीमित दायरे से बाहर निकल जायं। इसलिए हमें दूसरे लोगोंसे जानकारी हासिल करनी पड़ती है। लेकिन हम किसी आदमीका तुरन्त विश्वास नहीं कर लेते। पहिले हम उसके अनुभवकी परीक्षा करते हैं और फिर यदि वह हमें सन्तुष्ट कर सका तो उस पर विश्वास कर लेते हैं। ऐसे व्यक्तिको 'आप्त-पुरुष' (authority) कहते हैं। आप्त-पुरुष हमेशा दूसरेके विचारोंको प्रभावित करता है और उसके अन्दर अपने प्रति विश्वास पैदा करता है। इस प्रकारकी शक्तिका प्रयोग किसी व्यक्ति, वस्तु या

संस्था के द्वारा किया जा सकता है जिसके लिये हमारे मनमें श्रद्धा और आदरका भाव होता है। माता-पिता, गुरुजनों, धार्मिक पुस्तकों, धार्मिक संस्थाओं इत्यादिके अन्दर ऐसी शक्ति होती है। आप्त-पुरुषों के साक्ष्यसे प्राप्त ज्ञानको बहुत सावधानीसे अपनाना चाहिए, क्योंकि उनके प्रति श्रद्धाका भाव रखनेके कारण हम उनके अन्धानुयायी बन सकते हैं और इस तरहसे सचाईके मार्गसे भटक सकते हैं।

भाग ३. ज्ञानके प्रकार : अव्यवहित और व्यवहित ज्ञान.

ज्ञानके प्रकार: (१) अव्यवहित ज्ञान बाह्य और आन्तरिक प्रत्यक्षसे प्राप्त होता है।

ज्ञान दो प्रकारका होता है अर्थात् **अव्यवहित** और **व्यवहित**। अव्यवहित ज्ञान ज्ञानेन्द्रियोंसे उत्पन्न होता है अर्थात् बाह्य और आन्तरिक प्रत्यक्षसे। बाह्य प्रत्यक्षसे हमें बाहरी वस्तुओंका अव्यवहित ज्ञान होता है, जैसे सूर्य, चन्द्रमा इत्यादि का। आन्तरिक प्रत्यक्षसे आन्तरिक दशाका ज्ञान होता है, जैसे, अपने सुख-दुःख का। व्यवहित ज्ञान (mediate knowledge) को हम अप्रत्यक्ष या परोक्ष ज्ञान कह सकते हैं। अनुमान व्यवहित ज्ञान इसलिए कहलाता है कि इसमें हमें चीज़ोंकी जानकारी सीधे नहीं होती बल्कि इसके लिये हमें दूसरे ज्ञान की सहायताकी आवश्यकता पड़ती है। बिना किसी अन्य ज्ञानकी मध्यस्थताके हम अनुमान कर ही नहीं सकते। इस प्रकार जब हम धुवां देखते हैं और आगका अनुमान करते हैं तब यह ज्ञान व्यवहित रूपसे (धुवेंके ज्ञानकी मध्यस्थताके द्वारा) ही प्राप्त किया जाता है। साक्ष्य से प्राप्त ज्ञान भी व्यवहित ज्ञान है क्योंकि इस प्रकारका ज्ञान भी व्यक्ति, वस्तु या संस्थाओंकी मध्यस्थताके द्वारा ही प्राप्त किया जाता है। इतिहासका ज्ञान भी इसी प्रकारका कहा जा सकता है क्योंकि यह ज्ञान भी विश्वसनीय लोगोंके कथनके द्वारा ही, जिन्होंने अतीत घटनाओंको देखा है और उन्हें पुस्तकोंमें लिखा है, प्राप्त किया जाता है। धार्मिक लोगोंको ईश्वर तथा अन्य दैवी शक्तियोंका ज्ञान धर्म-ग्रन्थोंसे प्राप्त होता है।

(२) व्यवहित ज्ञान अनुमान, साक्ष्य और आप्त-पुरुषसे प्राप्त होता है।

साक्ष्य अनुमान का रूप है।

साक्ष्यसे प्राप्त ज्ञान भी अनुमान कहा जा सकता है क्योंकि हम तक करते हैं कि आप्त-पुरुषसे प्राप्त ज्ञान सत्य है क्योंकि वह आप्त-पुरुष है। हमारे अन्दर एक इस प्रकारका भाव होता है कि साक्ष्यसे जो ज्ञान होता है वह सही है, ख़ास तौरसे इसलिए कि अगर हमारे पास छान-बीन करनेके लिये काफ़ी समय, शक्ति और योग्यता होती तो हम भी उसी निष्कर्ष पर पहुंचते जिस पर आप्त-पुरुष पहुंचा है। साधारणत: जीवन छोटा है। ज्ञान असीम है। इसलिए हमें अनेक प्रकारकी जान-कारीके लिये दूसरे विश्वसनीय आदमियोंके अनुभवके ऊपर निर्भर रहना पड़ता है। यही कारण है कि बहुत ही प्रतिभा-सम्पन्न व्यक्तिके लिये भी सत्यका निर्णय हमेशा सम्भव नहीं होता। हममेंसे सभी रसायनवेत्ता, भौतिकशास्त्री, वनस्पतिशास्त्री, भूगर्भशास्त्री या खगोल-शास्त्री नहीं हो सकते। विभिन्न विज्ञानोंके बारेमें हमको उन सुरक्षित लेखोंसे जानकारी प्राप्त करनी चाहिए जिन्हें वैज्ञानिक अपने-अपने क्षेत्र में अनुसन्धान करनेके बाद छोड़ गये हैं। इस प्रकार साक्ष्यसे प्राप्त ज्ञान अनुमानमें शामिल किया जा सकता है।

तर्कशास्त्र का विषय अव्यवहित ज्ञान नहीं बल्कि व्यवहित ज्ञान है।

क्या तर्कशास्त्रका अव्यवहित ज्ञानसे सम्बन्ध है? यह पूछा जाता है कि क्या तर्कशास्त्र अव्यवहित और व्यवहित दोनों प्रकारके ज्ञानसे सम्बन्ध रखता है? इस विषयमें तर्कशास्त्रियोंके अलग-अलग विचार हैं। किन्तु अधिकतर तर्कशास्त्रियोंका यही विचार है कि तर्कशास्त्र अव्यवहित ज्ञानसे कोई सम्बन्ध नहीं रखता, बल्कि इसका सम्बन्ध केवल व्यवहित ज्ञानसे है। उनके अनुसार तर्कशास्त्रके सामने सबसे बड़ी समस्या उपपत्ति (proof) की है, यानी तर्कशास्त्रमें हमारा उद्देश्य किसी बातकी सत्यताको सिद्ध करना होता है। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि साधारण स्थितिमें अव्यवहित ज्ञान सत्य होता है। अगर हमारी आंखें ठीक और निर्दोष हैं तो जो हम देखेंगे वह ठीक होगा। अत: यहां उपपत्तिका सवाल ही नहीं उठता। इस प्रकारके ज्ञानकी सत्यता सिद्ध करनेके लिये किसी प्रकारके विज्ञानकी आवश्यकता नहीं पड़ती। लेकिन ज्यों ही हम अव्यवहित ज्ञानकी सीमाके बाहर

जाते हैं और अनुमान तथा साक्ष्यमें पहुंचते हैं त्यों ही ग़लतियोंकी सम्भावना होने लगती है। ज़मीनको भीगी हुई देखकर हम वर्षाका अनुमान करते हैं। यह अनुमान ठीक भी हो सकता है और ग़लत भी। इस प्रकार सत्यता और असत्यता दोनोंकी सम्भावना उत्पन्न हो जाती है। इसी कारण यह मत कि तर्कशास्त्र केवल व्यवहित ज्ञानसे ही सम्बन्ध रखता है अव्यवहित ज्ञानसे नहीं, अधिक उचित मालूम पड़ता है।

भाग ४. विचार.

विचार साधारण ज्ञान है।

तर्कशास्त्र भाषामें प्रकट विचारोंका विज्ञान कहलाता है। 'विचार' शब्द बहुत ही अस्पष्ट है। इसका प्रयोग अनेक अर्थोंमें किया जाता है। कभी-कभी विचार और ज्ञान शब्द समानार्थक समझे जाते हैं। लेकिन तर्कशास्त्रमें विचार शब्दका प्रयोग साधारण ज्ञान (general knowledge) के अर्थमें किया जाता है। इस अर्थ में विचार ज्ञानका एक उपविभाग है। ज्ञान विशेष (particular) और साधारण दोनों हो सकता है और विचार केवल साधारण ज्ञान होता है। विचारका अर्थ कभी-कभी विचारकी प्रक्रिया (process) होता है और कभी-कभी विचारका फल (product)। विचारकी प्रक्रियाएं हैं: प्रत्ययन (conception), निर्णय करना (judgement) और तर्क करना (reasoning)। विचारके फल हैं: प्रत्यय (concept), निर्णय और तर्क।

विचारका अर्थ है विचार की प्रक्रिया या फल।

प्रत्यय

प्रत्ययका अर्थ है सामान्य विचार (general idea)। हम 'मनुष्य' और 'एक मनुष्य' इन शब्दोंके द्वारा प्रकट दो विचारोंके अन्तर को समझते हैं। 'एक मनुष्य' पद एक एक विशेष मनुष्यका निर्देश करता है, लेकिन 'मनुष्य' पद पूरे मनुष्य-समुदायका निर्देश करते हुए भी किसी एक विशेष मनुष्यका निर्देश नहीं करता। 'मनुष्य' पद सामान्य रूपसे सभी मनुष्योंके लिये प्रयुक्त होता है क्योंकि जब हम विभिन्न मनुष्यों की तुलना करते हैं तो देखते हैं कि कुछ ऐसे गुण हैं जो सभी मनुष्योंमें

पाये जाते हैं। यही सामान्य और आवश्यक गुण जो प्रत्येक मनुष्यमें पाये जाते हैं हममें मनुष्यका विचार उत्पन्न करते हैं और इनसे हमें एक प्रत्यय मिलता है। सामान्य विचारोंका निर्माण करनेकी प्रक्रिया प्रत्ययन कहलाती है और इसके फलको प्रत्यय कहते हैं। भाषा में व्यक्त किया हुआ प्रत्यय पद (term) कहलाता है।

निर्णय

निर्णय करना (judgement) वह प्रक्रिया है जिसमें दो प्रत्ययों की आपसमें तुलना की जाती है। तुलनाकी इस प्रक्रियाका फल निर्णय कहलाता है। जैसे, दो प्रत्ययों, मनुष्य और मरणशीलताकी आपसमें तुलना करनेसे फल मिला: "मनुष्य मरणशील है।" भाषामें व्यक्त निर्णयको वाक्य (proposition) कहते हैं।

तर्क

तर्क करना वह प्रक्रिया है जिसमें हम एक या अधिक निर्णयोंसे एक नये निर्णय पर पहुंचते हैं जो उससे या उनसे उचित रूपसे निकाला जा सकता है। इस प्रक्रियाके फलको तर्क कहते हैं। इस प्रकार तर्कमें एक से अधिक निर्णयोंकी ज़रूरत होती है। जब तर्क भाषा में प्रकट किया जाता है तब उसे युक्ति (argument) कहते हैं। इस प्रकार युक्ति में एकसे अधिक वाक्य होते हैं। उदाहरण—

आधारवाक्य (premise)— सब मनुष्य मरणशील हैं।

निष्कर्ष (conclusion)— कुछ मरणशील प्राणी मनुष्य हैं।

इस प्रकार युक्तिमें हम एक या अधिक दिये हुए वाक्योंसे एक नया वाक्य निकालते हैं। दिये हुए वाक्य आधारवाक्य कहलाते हैं और उनसे निकाला हुआ वाक्य निष्कर्ष कहलाता है।

जब हम कहते हैं कि तर्कशास्त्र विचारोंका अध्ययन करता है तो हम विचार शब्दका प्रयोग विचारकी प्रक्रिया और फल दोनोंके अर्थमें करते हैं।

टिप्पणी १. प्रत्ययोंका निर्माण.

प्रत्ययोंके निर्माणमें

यह सवाल कि प्रत्ययोंका निर्माण किस प्रकार होता है, तर्कशास्त्र से सम्बन्धित न होकर मनोविज्ञानसे सम्बन्ध रखता है। थोड़ेमें हम

कह सकते हैं कि प्रत्ययोंके निर्माणके लिये निम्नलिखित बातें आवश्यक हैं:

(१) तुलना (**Comparison**). कई विभिन्न व्यक्तियों या वस्तुओंकी आपसमें तुलना की जाती है जिससे यह पता चलता है कि ऐसे कौन-कौनसे विशेष गुण सबमें पाये जाते हैं जिनके कारण उन्हें एक वर्गमें रखा जाता है। उदाहरणके लिये जब हम विभिन्न मनुष्यों की एक-दूसरेसे तुलना करते हैं तो मालूम होता है कि वे परस्पर भिन्न होते हुए भी कुछ गुणोंमें समानता रखते हैं, जैसे, जीवत्व और समझदारी में, जबकि दूसरे गुणों, यथा, शरीरकी बनावट, रंग-रूप, ईमानदारी, इत्यादिमें वे एक-दूसरेसे भिन्न हैं। अतः तुलना करके हमें मालूम होता है कि कौनसे गुण बदलनेवाले और आकस्मिक हैं और इनके विपरीत कौनसे सबमें पाये जानेवाले और आवश्यक हैं।

व्यक्तियोंकी आपसमें तुलना की जाती है,

(२) पृथक्करण (**Abstraction**). दूसरा काम पृथक्करण का है अर्थात् समान और आवश्यक गुणोंको असमान और आकस्मिक गुणोंसे अलग करने का। जैसे उपर्युक्त उदाहरणमें आवश्यक गुण जीवत्व और समझदारीको जो सभी मनुष्योंमें पाये जाते हैं, अलग कर लिया गया है।

उनके आवश्यक गुणोंको अलग कर दिया जाता है,

(३) सामान्यीकरण (**Generalisation**). पृथक्करण के बाद इन आवश्यक और समान गुणोंका सामान्यीकरण कर लिया जाता है अर्थात् यह दिखाया जाता है कि ये गुण केवल उन्हीं व्यक्तियों में नहीं पाये जाते जिनकी हमने जांच की है बल्कि उनकी तरहके सभी व्यक्तियोंमें पाये जाते हैं। जैसे, यह देखा जाता है कि जीवत्व और समझदारी केवल उन्हीं मनुष्योंके गुण नहीं हैं जिनकी हमने परीक्षा की है बल्कि सभी मनुष्योंके गुण हैं।

इन गुणोंका सामान्यीकरण कर दिया जाता है, और

(४) नामकरण (**Naming**). अन्तमें समान और आवश्यक गुणोंके सामान्यीकृत समूहको हम एक नाम दे देते हैं। जब यह कार्य हो जाता है तब हमारे लिये यह आसान हो जाता है कि हम उसका एक सामान्य विचार (प्रत्यय) अपने मनमें सुरक्षित रख सकें और फिर

फिर उनको एक नाम दे दिया जाता है।

आवश्यकता पड़ने पर उसे याद कर सकें। इस प्रकार मनुष्योंमें पाये जानेवाले समान और आवश्यक गुणोंके सामान्यीकृत समूहको हम मनुष्य नाम देते हैं।

टिप्पणी २. प्रत्ययोंका स्वरुप : वस्तुवाद, प्रत्ययवाद और नामवाद.

तीन दार्शनिक मत :

यह सवाल कि प्रत्ययोंका स्वरूप क्या है, तर्कशास्त्रका न होकर दर्शनशास्त्रका है। इस सवाल पर तीन भिन्न दार्शनिक मत हैं— वस्तुवाद, प्रत्ययवाद और नामवाद।

वस्तुवादके अनुसार प्रत्यय वास्तविक चीज़ें होते हैं।

वस्तुवाद (realism) वह मत है जिसके अनुसार प्रत्येक प्रत्ययके अनुरूप कोई न कोई वस्तु अवश्य रहती है। इस मतसे मनुष्य प्रत्ययके अनुरूप एक ऐसी सत्ता है जो विशेष मनुष्योंसे भिन्न है, फिर भी प्रत्येक विशेष मनुष्य जिसकी अनुकृति है। यह सत्ता मनुष्य-सामान्य (universal man) है जिसे एक तरहसे मनुष्यका सार (man-essence) कहा जा सकता है और विश्वमें यही एकमात्र सच्चा मनुष्य है। यह मत प्लैटो और अरस्तूका है।

प्रत्ययवादके अनुसार प्रत्यय सामान्य विचार हैं।

प्रत्ययवाद (Conceptualism) के अनुसार प्रत्यय वास्तविक नहीं हैं बल्कि केवल सामान्य विचार हैं। प्रत्यय हमारे मनमें रहनेवाला उन चीज़ोंके समान और आवश्यक गुणोंका ज्ञान है जिन पर वह लागू होता है। व्यक्तियोंके आकस्मिक और असमान गुणोंको अलग कर लेते हैं, फिर समान तथा आवश्यक गुणोंको ले लेते हैं। इस प्रकार प्रत्यय बनता है। मनुष्य प्रत्यय सब मनुष्योंमें पाये जानेवाले समान और आवश्यक गुणोंका एक सामान्य विचार है। यह लॉक (Locke) का मत है।

नामवादके अनुसार प्रत्यय सामान्य नाम मात्र हैं।

नामवाद (Nominalism) के अनुसार प्रत्यय केवल साधारण नाम है, सामान्य विचार नहीं। सामान्य विचार नामकी कोई चीज़ हो ही नहीं सकती। सभी विचार विशेष चीज़ोंके विशेष विचार होते हैं। सामान्य तो केवल नाम होता है जो सभी विशेष चीज़ोंमें समान रूपसे

रहता है। अतः प्रत्यय केवल शब्द है, कोई भी चीज़ या सामान्य विचार उसके अनुरूप नहीं होता। 'मनुष्य' हमारे मनमें एक विशेष मनुष्यके विचारको पैदा करता है और साथ ही साथ सामान्य नाम 'मनुष्य' को भी। किसी विशेष मनुष्यका मनमें ध्यान किये बिना मनुष्यके बारेमें सोचना असम्भव है। यह मत हॉब्स (Hobbes) और बर्कले (Berkeley) का है।

भाग ५. विचार और भाषा : तर्कशास्त्र और व्याकरण.

भाषाके विभिन्न रूप।

भाषा शब्दका प्रयोग अनेक अर्थोंमें किया जाता है। विस्तृत अर्थमें छोटे-छोटे जानवरोंकी बोलियां, जैसे, भोंकना, दहाड़ना, रेंकना इत्यादि भी भाषामें शामिल हैं। इन्हें जानवरोंकी भाषा कहा गया है। मनुष्य-जातिमें भाषाका सबसे सरल रूप उन प्राकृतिक संकेतोंमें मिलता है जिनका उपयोग कोई आदमी कभी-कभी अपने विचारोंको किसी ऐसे आदमीको समझानेमें करता है जो उसकी मातृभाषासे अपरिचित होता है। उदाहरणके लिये गुलीवरको ले लीजिये। जब वह अज्ञात नवीन द्वीप लिलीपुटमें गया होगा तब अपनेको भूखा दिखानेके लिये उसने मुंह खोल दिया होगा और उंगलीसे उधर इशारा किया होगा। किन्तु तर्कशास्त्रमें हमारा भाषाके इस प्राथमिक या मूल रूपसे सम्बन्ध नहीं होता। तर्कशास्त्रमें **भाषाका अर्थ है बोलनेके अंगोंसे उत्पन्न सार्थक ध्वनियोंका एक क्रम अथवा लिखे हुए शब्दोंका एक क्रम, जो बोले हुए शब्दोंके प्रतीक होते हैं।** बोले और लिखे हुए शब्द हमेशा विचारके साधनके रूपमें और विचारोंके आदान-प्रदानके लिये संकेतोंके रूपमें इस्तेमाल होते हैं।

तर्कशास्त्रमें भाषाकी परिभाषा।

भाषाका काम विचारोंको व्यक्त करना और दूसरों तक पहुंचाना है।

भाषाका कार्य (Function) विचारोंको व्यक्त करना और दूसरों तक पहुंचाना है। भाषा जटिल तथ्योंका उनके सरल तत्वोंमें विश्लेषण करनेमें हमारी मदद करती है। वह प्रत्ययोंको बनानेमें सहायता करती है। वह विचार करनेकी प्रक्रियाको छोटा करती है।

वह विचारोंकी वाहक (vehicle) होती है जिसके द्वारा हम अपने विचार अपने साथियों तक आसानीसे पहुंचा सकते हैं। लिखित भाषा विचारोंको संचित रखती है जिसके माध्यमसे हम न केवल उन लोगों से जिनके साथ हमारा सीधा सम्पर्क है बल्कि सब देशों और सब कालों में रहनेवाले लोगोंसे विचारोंका आदान-प्रदान कर सकते हैं।

तर्कशास्त्रमें विचार भाषा के बिना असम्भव है।

कभी-कभी यह सवाल पूछा जाता है कि क्या विचार बिना भाषा के सम्भव है? यह सवाल वास्तवमें तर्कशास्त्रसे सम्बन्ध नहीं रखता। इसका सम्बन्ध मनोविज्ञानसे है। साधारण कोटिका विचार बोली या लिखी हुई भाषाके बग़ैर हो सकता है। किन्तु तर्कशास्त्रमें विचारका अर्थ है सूक्ष्म या सामान्य विचार जो कि भाषाके बिना बिल्कुल सम्भव नहीं होता।

सामान्य व्याकरण उन नियमोंका वर्णन करता है जो सभी भाषाओंमें माने जाते हैं।

तर्कशास्त्र और व्याकरण: भाषा और विचारोंका इतना निकट सम्बन्ध है कि यह प्रश्न अपने आप उठ खड़ा होता है कि तर्कशास्त्र जो विचारोंका विज्ञान है, व्याकरणसे जो कि भाषाका विज्ञान है, क्या सम्बन्ध रखता है? इस प्रसंगमें व्याकरणसे हमारा मतलब एकमात्र उस व्याकरणसे है जिसे सामान्य व्याकरण (universal grammar) कहते हैं, अर्थात् उस विज्ञानसे जिसके सामान्य नियमोंको सभी भाषाओं को मानना पड़ता है; विशेष व्याकरण (special grammar) से नहीं, जो इन सामान्य नियमोंको एक विशेष भाषामें लागू करता है। सामान्य व्याकरण भाषाके सही प्रयोगका विज्ञान है। यह विविध शब्द-विभागोंके आपसके सम्बन्धको जाननेका प्रयत्न करता है जो भाषाके लिये ज़रूरी होते हैं, और इस बातकी खोज भी करता है कि वे जिन विचारोंको व्यक्त करते हैं उनसे उनका क्या सम्बन्ध है। व्याकरण इस प्रश्नको लेकर चलता है कि किन शर्तोंका पालन करनेसे हमारी भाषा सही हो सकती है। तर्कशास्त्र भाषामें प्रकट विचारोंका विज्ञान है। इस प्रकार तर्कशास्त्र और व्याकरण दोनोंका सम्बन्ध भाषासे है। इस घनिष्ठ सम्बन्धके कारण ही कुछ विचारक यहां तक कहने लगे है कि तर्कशास्त्र व्याकरणका अंग है, क्योंकि दोनोंका विषय एक है। उदाहरण

के लिये ह्वेटली (Whately) को लीजिये। उनका कथन है कि तर्कशास्त्रका एकमात्र ध्येय शब्दोंका सुसंगत प्रयोग (verbal consistency) है। यह मत बिल्कुल ग़लत है। यह ठीक है कि तर्कशास्त्र और व्याकरण दोनोंका सम्बन्ध भाषासे है, किन्तु दोनोंमें अन्तर यह है कि तर्कशास्त्र भाषाको सिर्फ़ विचारोंके वाहक और साधनके ही रूपमें देखता है। अतः यह मुख्यतः विचारोंसे ही सम्बन्धित है और भाषासे केवल गौण सम्बन्ध रखता है। तर्कशास्त्रमें भाषाकी संज्ञा, सर्वनाम इत्यादि विभिन्न भेदोंको जाननेकी हमें उत्सुकता नहीं रहती; हमारी रुचि केवल उन विचारोंमें होती है जिन्हें ये प्रकट करते हैं। इसके विपरीत, व्याकरणका मुख्य सम्बन्ध भाषासे रहता है। तर्कशास्त्र और व्याकरण दोनों भाषासे सम्बन्ध रखते हैं, लेकिन अलग-अलग तरीक़ेसे।

भाग ६. विचारका आकार और द्रव्य (Form and Matter of Thought).

सभी भौतिक चीज़ोंमें कोई न कोई आकार होता है और वे किसी न किसी द्रव्यकी बनी होती हैं। उदाहरणके लिये सोनेकी मोहरको लीजिये। उसका आकार गोल होता है और वह सोनेकी बनी होती है। एक मेज़ गोल, अण्डाकार या चौकोर हो सकती है और लकड़ीकी बनी होती है। अतः प्रत्येक भौतिक वस्तुका कुछ न कुछ आकार होता है और वह किसी न किसी द्रव्यकी बनी होती है। न बिना किसी आकारके द्रव्य हो सकता है और न बिना किसी द्रव्यके आकार हो सकता है। द्रव्य और आकार हमेशा साथ रहते हैं और उसी भौतिक पिण्डमें साथ-साथ पाये जाते हैं। लेकिन यह सभी जानते हैं कि चीज़ोंका आकार और जिस द्रव्यकी वे बनी होती हैं वह एक-दूसरे पर असर डाले बग़ैर बदल सकते हैं। एकही द्रव्यसे निर्मित कई चीज़ें अलग-अलग आकारकी हो सकती हैं और एक ही आकारकी कई वस्तुएं अलग-अलग द्रव्यकी बनी हुई हो सकती हैं। उदाहरणके लिये, सोनेकी घड़ी गोल, चौकोर, आयताकार इत्यादि हो सकती है और गोल घड़ी, सोने, चांदी, गिलट इत्यादि

भौतिक चीज़ों का आकार और द्रव्य।

धातुओंकी बनी हुई हो सकती है। एक ही सांचे में ढले तमगे एक ही आकारके होंगे, लेकिन उनका द्रव्य कोई भी धातु हो सकती है।

विचारका आकार और द्रव्य।

विचारका आकार और द्रव्य : जिस प्रकार हम भौतिक वस्तुओं में आकार और द्रव्य नामकी दो बातें पाते हैं उसी प्रकार विचारमें भी आकार और द्रव्य होते हैं। विचारके द्रव्यसे हमारा मतलब उस विषयसे है जिसके बारेमें विचार किया जाता है; और विचारके आकारसे हमारा मतलब उस तरीकेसे है जिससे मन उसके बारे में विचार करता।

विचार जब भाषामें व्यक्त होता है तब वह पद, वाक्य या अनुमान कहलाता है। इन भेदोंमें से प्रत्येकमें आकार और द्रव्य होता है। 'श्वत' और 'अश्वेत' पद आकारकी दृष्टिसे क्रमश: विधानात्मक और निषेधात्मक हैं और इनके अर्थ ही इनके द्रव्य हैं। 'सब मनुष्य मरणशील हैं' इस वाक्यका आकार सामान्य विधानात्मक है और इसका अर्थ ही इसका द्रव्य है।

सब मनुष्य मरणशील हैं,
सब राजा मनुष्य हैं;
∴ सब राजा मरणशील हैं।

यह अनुमान आकारकी दृष्टिसे न्यायवाक्य (syllogism) है और इसका द्रव्य वही है जो इसके तीन वाक्योंका अर्थ है।

भौतिक पदार्थोंकी तरह विचारोंमें भी आकारके एक रहते हुए द्रव्य भिन्न हो सकते हैं और द्रव्यके एक रहते हुए आकार भिन्न हो सकते हैं। इस बातको वाक्योंके दो जोड़ोंकी मददसे समझा जा सकता है:—

सब मनुष्य मरणशील हैं; और
सब कुत्ते चतुष्पद हैं।

ये दो वाक्य एक ही आकारवाले यानी सामान्य विधानात्मक हैं, लेकिन इनके अर्थ भिन्न हैं यानी इनके द्रव्य भिन्न हैं। इसके विपरीत,

सब मनुष्य मरणशील हैं; और
कोई मनुष्य अमर नहीं है।

ये वाक्य भिन्न आकारवाले हैं, पहिला विधानात्मक है और दूसरा निषेधात्मक, लेकिन इनके द्रव्य एक ही हैं, क्योंकि दोनोंका एक ही अर्थ है।

विचारके दो अन्य रूपों, पद और युक्तिके भी इस तरहके उदाहरण दिये जा सकते हैं।

भाग ७. आकार-सम्बन्धी और द्रव्य-सम्बन्धी सत्यता (Formal and Material Truth).

आइये अब आकार-सम्बन्धी और द्रव्य-सम्बन्धी सत्यताके अन्तर को समझनेकी चेष्टा करें। यह अन्तर विचारके आकार और द्रव्यके अन्तर पर आधारित है।

आकार-विषयक सत्यताका अर्थ है आत्म-संगति।

आकारविषयक सत्यता का अर्थ है आत्म-संगति या स्वगत संवाद (self-consistency) अर्थात् आत्म-विरोधका अभाव। प्रश्न है—क्या विचार आत्म-संगत है? क्या वह आन्तरिक विरोधसे रहित है? क्या जिसे हम विचार कहते हैं वह सचमुच विचार है या निरर्थक शब्द मात्र? उदाहरणके लिये 'वृत्ताकार वर्ग' कहना आत्म-विरोधी है। इस तरहकी किसी चीजका अस्तित्व सम्भव नहीं है। इतना ही नहीं बल्कि ऐसी चीज़की बात सोची भी नहीं जा सकती। यह अविचारणीय है, अकल्पनीय है। इसका मिथ्या होना जाननेके लिये हमें बाहर जानेकी ज़रूरत नहीं है। इसका मिथ्यात्व स्वतः प्रमाणित है।

द्रव्यविषयक सत्यताका अर्थ है विचार की वस्तुओंसे संगति।

द्रव्यविषयक सत्यता का अर्थ है विचारोंकी वास्तविक जगत्की चीज़ोंसे संगति या संवाद। अगर हम किसी एक दृष्टान्तमें यह देखते हैं कि हमारे मनके अन्दर रहनेवाले विचारोंकी दुनियामें सचमुच अस्तित्व रखनेवाली किसी चीज से संगति नहीं है अर्थात् यह कि हमारे विचारोंका वास्तविकतासे विरोध है; तो हमारे ये विचार द्रव्यकी दृष्टिसे सत्य नहीं हैं बल्कि मिथ्या हैं। इस प्रकार सोनेके पहाड़, हवाई

महल, दूधके समुद्र इत्यादिको वास्तविक जगत्में ढूंढ़नेकी कोशिश व्यर्थ होगी। इनकी वास्तविक जगत्में कोई सत्ता नहीं है। ये मिथ्या हैं। इसके बिपरीत, जब हम धुवेंकी उपस्थितिसे आगके होनेका अनुमान करके चलकर सचमुच आगको देखते हैं, तब हमारा अनुमान द्रव्यकी दृष्टिसे सत्य सिद्ध हो जाता है। कोलम्बस ने गणना करके एक ऐसे महाद्वीपके अस्तित्वका अनुमान किया जो तब तक अज्ञात था; उसने अज्ञात समुद्रोंकी यात्रा की और अमेरिकाको खोज निकाला। इस प्रकार उसका अनुमान द्रव्यकी दृष्टिसे सत्य सिद्ध हुआ। रसायनशास्त्र यह बताता है कि ऑक्सीजन और हाइड्रोजन नामकी दो गैसोंको एक निश्चित अनुपातमें मिला देनेसे पानी पैदा हो जाता है। जब हम स्वयं प्रयोग करके यह देखते हैं कि इस प्रकारकी मिलावटसे पानी तैयार हो गया, तब रसायनशास्त्रकी बात प्रमाणित होकर सत्य सिद्ध हो गई।

तर्ककी आकार-विषयक और द्रव्यविषयक सत्यता।

तर्क या युक्तिकी आकारविषयक और द्रव्यविषयक सत्यताका विचार करनेमें हम देखते हैं कि युक्ति आकारकी दृष्टिसे तब सत्य होती है जब निष्कर्ष निकालनेमें उसका जो विशेष आकार होता है उसके नियमोंका पालन किया जाता है, और युक्ति द्रव्यकी दृष्टिसे तब सत्य होती है जब उसका प्रत्येक वाक्य वास्तविक तथ्योंसे संगति रखता है। इस प्रकार

सब मनुष्य मरणशील हैं।
सब राजा मनुष्य हैं।
∴ सब राजा मरणशील हैं।

यह युक्ति आकारकी दृष्टिसे सत्य है क्योंकि इस युक्तिके आकार यानी न्यायवाक्यके जो नियम हैं उनका ठीक-ठीक पालन किया गया है। यह युक्ति द्रव्यकी दृष्टिसे भी सत्य है क्योंकि इसके तीनों वाक्यों का तथ्योंसे सचमुच मेल है—सब मनुष्य सचमुच मरणशील हैं, सब राजा सचमुच मनुष्य हैं, और सब राजा सचमुच मरणशील हैं।

लेकिन आकारविषयक सत्यता और द्रव्यविषयक सत्यता सदैव साथ-साथ नहीं चला करतीं। कोई युक्ति ऐसी हो सकती है कि वह आकारकी दृष्टिसे सत्य हो और द्रव्यकी दृष्टिसे मिथ्या। उदाहरणार्थ:

ये सदैव साथ नहीं रहतीं।

सब मनुष्य अमर हैं।
सब राजा मनुष्य हैं।
∴ सब राजा अमर हैं।

यह युक्ति आकारकी दृष्टिसे सत्य है, लेकिन द्रव्यकी दृष्टिसे मिथ्या है। यह आकारकी दृष्टिसे सत्य इसलिए है कि इसके आकार यानी न्यायवाक्यके नियमोंका सही-सही पालन हुआ है। फिर भी द्रव्यकी दृष्टिसे यह मिथ्या है क्योंकि 'सब मनुष्य अमर हैं' यह आधार-वाक्य द्रव्यकी दृष्टिसे अर्थात् यथार्थतः मिथ्या है और 'सब राजा अमर हैं' यह निष्कर्ष भी।

आकारविषयक और द्रव्यविषयक सत्यताके अन्तरके आधार पर तर्कशास्त्रियों ने तर्कशास्त्रके दो मोटे विभाग किये हैं: आकारविषयक तर्कशास्त्र (Formal Logic) और द्रव्यविषयक तर्कशास्त्र (Material Logic)। (भाग १०, टिप्पणी १)

भाग ८. विज्ञान.

विज्ञान और लौकिक ज्ञान (Science and Popular Knowledge). विज्ञान जगत्के एक विशेष भागके बारेमें शृंखलाबद्ध ज्ञानका नाम है। विज्ञानमें नीचे लिखी विशेषताएं होती हैं जो लौकिक ज्ञान में नहीं पाई जातीं :—

विज्ञान और लौकिक ज्ञान में अन्तर:

(क) कोई भी विज्ञान दुनियाके एक खास भागसे सम्बन्ध रखता है और अपने अध्ययनको उसी भाग तक सीमित रखता है, जबकि साधारण आदमी ज्ञान के सम्पूर्ण क्षेत्र में रुचि रखता हुआ प्रतीत होता है।

(क) विज्ञान अपनेको एक भाग तक सीमित रखता है।

औसत दर्जेका आदमी दुनियाकी हरेक चीज़के बारेमें कुछ-न-

कुछ जानता प्रतीत होता है। वह तरह-तरहके पेड़-पौधोंकी प्रकृति और उनके विकासके बारेमें, तरह-तरहके जानवरोंकी आदतोंके बारे में, अपनी जातिके लोगोंके स्वभावके बारेमें, ऋतु-परिवर्तनके बारे में, मौसमकी अनिश्चितताके बारेमें, ज्वार-भाटाके बारेमें, सूर्य-ग्रहण और चन्द्र-ग्रहणके बारेमें कुछ-कुछ जानकारी रखता ही है। वस्तुतः उसके ज्ञानका क्षेत्र सीमाओंमें नहीं बांधा जा सकता बल्कि दुनियाके सभी भागोंमें फैला रहता है। इसके विपरीत विज्ञान दुनियाके एक विशेष भाग तक ही अपनेको सीमित रखता है। वनस्पति-विज्ञान (Botany) पेड़-पौधोंके जीवनका विज्ञान है, जन्तुविज्ञान (Zoology) जन्तुओंके जीवनका विज्ञान है, मनोविज्ञान मनका विज्ञान है, अन्तरिक्ष-विज्ञान (Meteorology) वायु-मण्डलमें होनेवाले परिवर्तनोंका विज्ञान है, रसायनविज्ञान पदार्थोंका विज्ञान है, नक्षत्र-विज्ञान (Astronomy) आकाशस्थ पिण्डोंका विज्ञान है, इत्यादि। इनमें से प्रत्येक विज्ञान अपने क्षेत्रके अन्दर ही सीमित रहता है और अपने लिये उसने जो सीमाएं निर्धारित कर ली हैं उनके बाहर क़दम नहीं रखता। यह कहना ठीक नहीं है कि दुनियाका एक भाग दूसरे भागसे बिल्कुल अलग है, और इस दृष्टिसे कहा जा सकता है कि कोई भी विज्ञान अपने क्षेत्रके अन्दर क़ैद नहीं किया जा सकता। फिर भी किसी विज्ञानका सीधा सम्बन्ध अपने ही विभागसे रहता है। दूसरे विभागोंसे उसका सम्बन्ध परोक्ष ही रहता है, केवल वहीं तक जहां तक कि वे उसके अपने विषयके ऊपर कुछ प्रभाव डालते हैं।

विज्ञान क्रमयुक्त होता है।

(ख) विज्ञान क्रमबद्ध, एकतापूर्ण, संगठित और सामान्य होता है, जबकि लौकिक ज्ञान एक-दूसरेसे पृथक् और असम्बन्धित तथ्योंका संचय मात्र होता है।

औसत आदमीके ज्ञानकी विशेषता यह होती है कि उसमें क्रम और परस्पर-सम्बन्धका अभाव रहता है। वह परस्पर पृथक् तथ्योंका संचय मात्र होता है और अगर उसमें उन तथ्योंके पारस्परिक सम्बन्धों की जानकारी शामिल रहती भी है तो वह बहुत ही अस्पष्ट और अधूरी

होती है। विज्ञान इस तरहके पृथक् तथ्योंको सामान्य नियमोंके अन्तर्गत लानेकी कोशिश करता है और उन नियमोंसे एक स्वसंगतिपूर्ण समष्टिका निर्माण करता है। विज्ञान अकेले तथ्योंकी उपेक्षा नहीं करता। इसके विपरीत, वह ऐसे तथ्योंकी बड़ी-से-बड़ी संख्याको इकट्ठा करता है और उसके बाद उनके पारस्परिक सम्बन्धोंको ढूंढ़ कर उनके अन्दर एकता लानेकी कोशिश करता है।

विज्ञान विशेष उपकरणोंका इस्तेमाल करता है।

(ग) विज्ञान ज्ञानको सही और निश्चयात्मक बनानेके लिये विशेष साधनों और उपकरणोंका इस्तेमाल करता है जबकि लौकिक ज्ञान अव्यवस्थित निरीक्षण पर ही विश्वास कर लेता है।

ज्ञानकी सामग्री जुटानेमें साधारण आदमी बग़ैर आलोचना किये अपनी ज्ञानेन्द्रियों पर विश्वास कर लेता है और उसका ज्ञान प्राय: उसकी भावनाओंसे रंगा होता है और पक्षपातपूर्ण होता है। लेकिन वैज्ञानिक तथ्यों का निष्पक्ष अध्ययन करता है और अपने ज्ञान की जांच करने के लिये प्राय: विशेष साधनोंका उपयोग करता है। नक्षत्र-विज्ञानवेत्ता आकाशस्थ पिण्डोंका निरीक्षण दूरबीनकी मददसे करता है; रसायनशास्त्री पदार्थोंकी तौलके लिये बहुत ही सूक्ष्म तराज़ूका इस्तेमाल करता है; जीवाणु-विज्ञान-वेत्ता सूक्ष्म जीवोंका निरीक्षण करनेमें खुर्दबीनका इस्तेमाल करता है, इत्यादि।

वैज्ञानिक और लौकिक ज्ञान में मात्राका अन्तर होता है।

इस प्रकार वैज्ञानिक ज्ञान और लौकिक ज्ञानमें प्रकारका भेद नहीं है बल्कि केवल मात्राका भेद है। वैज्ञानिक ज्ञान लौकिक ज्ञानकी अपेक्षा अधिक विशिष्टीकृत, ज्यादा संगठित और ज्यादा निश्चित होता है।

तर्कशास्त्र एक विज्ञान है।

तर्कशास्त्र एक विज्ञान है; इसका विषय तर्क और तर्ककी कुछ सहायक प्रक्रियाएं हैं; इसका लक्ष्य विधिपूर्वक और क्रमपूर्ण तरीक़ेसे उन शर्तोंकी छानबीन करना है जिनका पूरा होना विचारके सही होने और ग़लतियोंको मालूम करने और उनसे बचनेके लिये ज़रूरी है। इसलिए अधिक क्रमयुक्त और निश्चित होनेके कारण यह लौकिक विचारों और तर्कोंसे श्रेष्ठ है।

टिप्पणी. विधायक और नियामक विज्ञान (Sciences, Positive and Normative).

विधायक और नियामक विज्ञान

विज्ञानोंका विधायक और नियामकमें वर्गीकरण किया गया है। विधायक विज्ञान वस्तुओंका उसी रूपमें अध्ययन करता है जिस रूप में उनका अस्तित्व है जबकि नियामक विज्ञान उनका अध्ययन उस रूप में करता है जिस रूपमें उनको होना चाहिए। चीज़ें जैसी हैं और जैसी उनको होना चाहिए इन दो बातोंके मध्य, वस्तुस्थिति और आदर्शके मध्य, है और चाहिएके मध्य जो वैषम्य है वह स्पष्ट ही है। उदाहरणार्थ, एक आदमी प्राय: जानता है कि उसे क्या करना चाहिए लेकिन वास्तव में वह उससे भिन्न व्यवहार करता है ; वह जानता है कि सच बोलना चाहिए लेकिन प्राय : सच बोलता नहीं। जो विज्ञान वस्तुओंका अध्ययन उस रूपमें करता है जिस रूपमें उनको होना चाहिए उसे नियामक विज्ञान कहते हैं। उसे आदर्श-निर्धारक विज्ञान भी कहते हैं क्योंकि वह एक आदर्श या प्रतिमानको निर्धारित करता है। तर्कशास्त्र एक नियामक या आदर्श-निर्धारक विज्ञान है, क्योंकि वह विचार और तर्कके आदर्श रूपकी खोज करता है उनके वास्तविक रूप की नहीं। तर्कशास्त्र अपने सामने सत्यका आदर्श रखता है और सत्यके आदर्शकी प्राप्तिके लिये जिन शर्तोंका पूरा होना ज़रूरी है उनकी खोज करता है। विचारोंका उनके वास्तविक रूपमें अध्ययन करनेवाला विधायक विज्ञान मनोविज्ञान कहलाता है (इस अध्यायका भाग १४ देखिए)।

भाग ९. विज्ञान और कला (Science and Art).

विज्ञान जानना सिखाता है और कला करना।

विज्ञान प्रकृतिके एक विशेष विभागसे सम्बन्धित क्रमबद्ध ज्ञान है। दूसरी ओर कला हमें यह सिखाती है कि किसी निश्चित लक्ष्यकी प्राप्ति के लिये व्यवहारमें ज्ञानका किस तरह उपयोग किया जाय। **विज्ञान हमको जानना सिखाता है और कला करना।** वास्तवमें जाननेका महत्त्व ही इस कारण है कि वह करनेमें हमारी मदद करता है। सारे ज्ञानका

चरम लक्ष्य व्यवहारको रास्ता दिखाना प्रतीत होता है और मानव-जातिकी विविध आवश्यकताओंके अनुसार व्यवहारके विविध क्षेत्र होते हैं। इन क्षेत्रोंको ही कला कहते हैं।

अनुभव-मूलक और विज्ञान-मूलक कलाएं।

इस प्रकार कला ज्ञान पर आधारित होती है। यह ज्ञान वैज्ञानिक हो सकता है या औसत आदमीका अव्यवस्थित ज्ञान हो सकता है। अगर कला केवल उस ज्ञान पर आधारित है जिसकी उपलब्धि स्वयं उसकी साधना करते हुए हुई है तो उसे अनुभव-मूलक (empirical) कला कहते हैं। लेकिन अगर कला विज्ञानसे प्राप्त ज्ञान पर आधारित तो उसे विज्ञानमूलक (scientific) कला कहते हैं। जिस तरह लौकिक ज्ञान वैज्ञानिक ज्ञानके पहिले आता है उसी तरह अनुभवमूलक कलाएं विज्ञानमूलक कलाओंसे पहिले आती हैं। उदाहरणके बतौर नाविककी कला (Navigation) को लीजिए। पहिले नाविक उतने ही ज्ञानसे सन्तुष्ट हो जाते थे जितना उनको समुद्र-यात्रा करते हुए प्राप्त हो सकता था, लेकिन आज नाविककी कला गणित, नक्षत्रविज्ञान, अन्तरिक्षविज्ञान, प्रकाशविज्ञान इत्यादि उन्नतिशील विज्ञानोंसे प्राप्त ज्ञान पर आधारित है।

भाग १०. तर्कशास्त्र की परिभाषा. — (4)

तर्कशास्त्रकी परिभाषा देते हुए हम कह सकते हैं कि यह सही विचारके व्यवस्थापक नियमों (regulative laws) का विज्ञान है अर्थात् उन नियमोंका विज्ञान है जिनका पालन करना विचारोंके सत्य होनेके लिये आवश्यक है।

विज्ञान।

विज्ञान किसी विशेष विषयका क्रमपूर्ण ज्ञान होता है। विज्ञान दुनियाके एक विशेष भागका अध्ययन करता है, ज्ञानके सम्पूर्ण क्षेत्रसे उसका सम्बन्ध नहीं होता और इस दृष्टिसे वह लौकिक ज्ञानसे भिन्न होता है। विज्ञान अपने विशेष क्षेत्रके अलग-अलग तथ्योंको एक व्यवस्थामें बांधकर उन्हें एकता प्रदान करनेका यत्न करता है और

उनको सामान्य नियमोंके अन्तर्गत लाता है जिनसे एक सामंजस्यपूर्ण समष्टिका निर्माण होता है। विज्ञान विधायक होते हैं या नियामक अर्थात् वस्तुओंके वास्तविक रूपका अध्ययन करते हैं या जैसा उनको होना चाहिए उस रूपका। तर्कशास्त्र एक विज्ञान है; इसका विषय तर्क और उसकी सहायक प्रक्रियाएं हैं; और यह उन नियमोंका एक क्रमपूर्ण तरीक़ेसे अध्ययन करता है जिनका पालन करना विचारोंके सही होने और ग़लतियोंको पहिचानने और उनसे बचनेके लिये ज़रूरी है। इसलिए अधिक क्रमपूर्ण और निश्चित होनेके कारण यह लौकिक तर्कोंसे श्रेष्ठ होता है। तर्कशास्त्र एक नियामक विज्ञान है क्योंकि यह विचारोंका उस रूपमें अध्ययन नहीं करता जिस रूपमें हम वास्तवमें विचार करते हैं बल्कि उस रूपमें अध्ययन करता है जिस रूपमें हमें विचार करना चाहिए अर्थात् यथार्थ विचारोंका अध्ययन करता है। यह अपने सामने एक आदर्श यानी सत्यका आदर्श रखता है और इस आदर्शकी प्राप्तिके लिये जिन शर्तोंका पालन करना ज़रूरी है उनको जाननेकी कोशिश करता है। "व्यवस्थापक" शब्दके इस्तेमालमें यह बात छिपी हुई है कि तर्कशास्त्रके दो पहलू हैं, एक सैद्धान्तिक (theoretical) और दूसरा व्यावहारिक (practical), अर्थात् तर्कशास्त्र विज्ञान और कला दोनों ही है। इसका सैद्धान्तिक पहलू "विज्ञान" शब्दसे प्रकट होता है और व्यावहारिक पहलू "व्यवस्थापक" शब्द से।

नियम।

नियम किसी सामान्य सत्यका कथन होता है यानी उस सत्यका जो किसी विज्ञानके क्षेत्रमें सर्वत्र पाया जाय और इस प्रकारका सत्य विशेष सत्यसे, जो कुछ ही दृष्टान्तोंमें पाया जाता है, भिन्न होता है। व्यवस्थापक नियम वे सामान्य सत्य होते हैं जो समग्र विचारके मूलमें रहते हैं अर्थात् सभी विचारोंको उनका पालन करना पड़ता है और कोई भी विचार तब तक सही नहीं हो सकता जब तक वह इन सामान्य सत्योंके अनुसार न हो।

"**विचार**" शब्द अनेकार्थक है। कभी इसका अर्थ होता है सोचने

की प्रक्रिया और कभी होता है इस प्रक्रियाका फल। प्रत्ययन, निर्णय करना और तर्क करना सोचनेकी प्रक्रियाएं हैं; प्रत्यय, निर्णय और तर्क सोचनेकी प्रक्रियाके फल हैं। भाषामें व्यक्त प्रत्यय, निर्णय और तर्क क्रमशः पद, वाक्य और युक्ति कहलाते हैं। तर्कशास्त्र सोचनेकी प्रक्रियाओं और सोचनेके फल दोनोंसे ही सम्बन्ध रखता है। "विचार" शब्दमें यह बात भी छिपी हुई है कि तर्कशास्त्र न केवल तर्कसे सम्बन्धित है बल्कि तर्ककी कुछ सहायक प्रक्रियाओंसे भी, यथा, पद, वाक्य, परिभाषा, वर्गीकरण इत्यादि। विचार।

"सत्यता" शब्द दो अर्थोंमें इस्तेमाल होता है। संकुचित अर्थमें सत्यता और आकारविषयक सत्यता यानी स्वगत-संवाद एक ही चीजें हैं और इस प्रकार विचार सत्य तब होता है जब वह अपनेसे संवाद या संगति रखता हो और उसमें आन्तरिक विरोध न हो। विस्तृत अर्थमें सत्यता में न केवल आकार-सम्बन्धी सत्यता शामिल होती है बल्कि द्रव्य-सम्बन्धी सत्यता भी अर्थात् विचारोंकी वस्तुओंसे संगति भी और इस प्रकार सत्य होनेके लिये विचारको आत्म-विरोधसे मुक्त होना चाहिए तथा दुनियाके वास्तविक तथ्योंसे मेल रखना चाहिए। तर्कशास्त्रियोंमें इस बातके ऊपर विवाद होता है कि तर्कशास्त्रका सम्बन्ध केवल आकार-विषयक सत्यतासे है या द्रव्यविषयक सत्यतासे भी। **हैमिल्टन (Hamilton), मैन्सेल (Mansel)** इत्यादि तर्कशास्त्रियोंका मत है कि तर्कशास्त्रका सम्बन्ध केवल विचारके आकार-सम्बन्धी नियमों से है और इस प्रकार वे तर्कशास्त्र और आकारविषयक तर्कशास्त्रको एक मानते हैं। अन्य तर्कशास्त्री कहते हैं कि इस तरहसे तो तर्कशास्त्र का क्षेत्र बहुत ही संकुचित हो जाता है। सत्यता बिल्कुल एक होती है; आकारविषयक सत्यता और द्रव्यविषयक सत्यता सत्यताके दो भिन्न प्रकार नहीं हैं, बल्कि एक ही चीज़के दो पहलू मात्र हैं। सुविधाके लिये उनका अलग-अलग अध्ययन किया जाता है, लेकिन चूंकि सत्यता अनिवार्यतः एक होती है इसलिए जिन विषयों पर अलग-अलग विचार किया

आकार-विषयक और द्रव्यविषयक सत्यता।

जाता है उनको एक ही समष्टि (system) के विभिन्न अंग समझना चाहिए।

संक्षेप

संक्षेपमें: तर्कशास्त्र वह क्रमबद्ध ज्ञान है जो सत्य विचारको व्यवस्थित करनेवाली प्रक्रियाओं और उनके फलोंकी छानबीन करता है और उन नियमोंको निर्धारित करता है जिनका पालन करनेसे विचार सत्य हो सकता है। इसका सम्बन्ध न केवल आकारविषयक सत्यतासे है बल्कि द्रव्यविषयक सत्यतासे भी है क्योंकि सत्यता अनिवार्यतः एक है।

टिप्पणी. १ आकारविषयक और द्रव्यविषयक तर्कशास्त्र (Formal and Material Logic).

आकारविषयक और द्रव्यविषयक सत्यताके आधार पर तर्कशास्त्रियों ने तर्कशास्त्रके दो मोटे विभाग किये हैं: आकारविषयक और द्रव्यविषयक तर्कशास्त्र।

आकार-विषयक तर्कशास्त्र केवल आत्म-संगति से सम्बन्ध रखता है।

आकारविषयक तर्कशास्त्र का लक्ष्य आकारविषयक सत्यता मात्र है। आकारविषयक तर्कशास्त्र का सम्बन्ध केवल विचारके आकारोंसे है अर्थात् हमारे विचार करनेके तरीक़ोंसे, जिन वस्तुओंके बारेमें हम विचार करते हैं उनसे नहीं। आकारविषयक तर्कशास्त्रमें आधारवाक्यों की सत्यताके प्रति कोई सन्देह नहीं किया जाता—उनको सत्य मान लिया जाता है और केवल यह देखा जाता है कि उनसे जो निष्कर्ष निकाला गया है वह सचमुच निकलता है या नहीं। आकारविषयक तर्कशास्त्रको विशुद्ध तर्कशास्त्र या आत्म-संगतिका तर्कशास्त्र भी कहा जाता है।

द्रव्यविषयक तर्कशास्त्र विचारोंकी वस्तुओंसे संगतिसे भी सम्बन्ध रखता है।

द्रव्यविषयक तर्कशास्त्र का लक्ष्य आकारविषयक सत्यता मात्र नहीं होती बल्कि द्रव्यविषयक सत्यता भी होती है। द्रव्यविषयक तर्कशास्त्र यह विचार करता है कि जिन विशेष विषयोंके बारेमें हम विचार करते हैं वे वास्तविक जगत्की वस्तुओंके अनुरूप हैं या नहीं। द्रव्यविषयक

तर्कशास्त्र यह देखता है कि आधारवाक्य यथार्थ हैं या नहीं और कि उनसे निकला हुआ निष्कर्ष वस्तुस्थितिके अनुसार है या नहीं। द्रव्यविषयक तर्कशास्त्रको व्यावहारिक (applied) तर्कशास्त्र भी कहते हैं।

तर्कशास्त्रियों के दो सम्प्रदाय :

आकारविषयक और द्रव्यविषयक तर्कशास्त्री. तर्कशास्त्रियोंमें इस बातके ऊपर विवाद होता है कि तर्कशास्त्रको द्रव्यविषयक सत्यताका विचार करना चाहिए या नहीं। **हैमिल्टन, मैन्सेल, टॉमसन** इत्यादि आकारविषयक तर्कशास्त्री कहते हैं कि तर्कशास्त्र केवल विचारके आकारों से सम्बन्ध रखता है, उसके द्रव्यसे नहीं। **हैमिल्टन के अनुसार "तर्कशास्त्र विचारके आकारविषयक नियमोंका विज्ञान है।"** इस प्रकार आकारविषयक तर्कशास्त्रियोंका मत है कि "तर्कशास्त्र सत्यता (truth) का नहीं बल्कि संवाद (consistency) का विज्ञान है।" इस उद्धरण में 'सत्यता' शब्द केवल द्रव्यविषयक सत्यताके अर्थमें इस्तेमाल हुआ है और 'संवाद' शब्द केवल आत्म-संवाद या आकार-विषयक सत्यताके अर्थ में। इस प्रकार इस उद्धरणका अर्थ यह हुआ कि तर्कशास्त्र आकारविषयक सत्यता मात्रका विचार करता है, द्रव्य-विषयक सत्यताका नहीं।

आकार-विषयक तर्कशास्त्र तर्कशास्त्रके क्षेत्रको संकुचित बनाता है।

सही मत यह है कि तर्कशास्त्र आकारविषयक और द्रव्यविषयक दोनों ही सत्यता का विचार करता है और इसलिए तर्कशास्त्र आकार-विषयक और द्रव्यविषयक दोनों ही है। तर्कशास्त्रको केवल आकार-विषयक मान लेनेसे उसका क्षेत्रबहुत ही संकुचित हो जायगा। यह मत इस ग़लत मान्यता पर आधारित है कि विचारके आकारोंको उसके द्रव्यसे पूर्णतया अलग किया जा सकता है। आकारविषयक तर्कशास्त्र और द्रव्यविषयक तर्कशास्त्रको एक-दूसरेसे पूर्णतया पृथक् नहीं समझना चाहिए, ये एक ही विज्ञानके दो पहलू हैं। वर्णनकी सुविधाके लिये उनका अलग-अलग विचार किया जाता है, लेकिन सत्यताके अनिवार्यत: एक होनेके कारण अलग-अलग विचार किये जानेवाले विषयोंको एक ही समष्टिके अंग मानना चाहिए।

कभी-कभी निगमनात्मक और आकार-विषयक तर्कशास्त्रको एक माना जाता है और आगमनात्मक और द्रव्य-विषयक तर्कशास्त्र को एक; कभी-कभी निगमनात्मक और आगमनात्मक तर्कशास्त्रको केवल तर्कका विचार करने वाला कहा जाता है (सहायक प्रक्रियाओंका विचार करने वाला नहीं)।

निगमनात्मक (Deductive) और आगमनात्मक (Inductive) तर्कशास्त्र: कभी-कभी यह सवाल पूछा जाता है कि आकारविषयक और द्रव्यविषयक तर्कशास्त्रके अन्तर और निगमनात्मक और आगमनात्मक तर्कशास्त्रके अन्तरमें क्या सम्बन्ध है? कभी-कभी आकारविषयक तर्कशास्त्र और निगमनात्मक तर्कशास्त्रको एक समझा जाता है तथा द्रव्यविषयक तर्कशास्त्र और आगमनात्मक तर्कशास्त्रको एक। फिर भी ज़्यादे आम बात यह है कि निगमन और आगमनका इस्तेमाल तर्कके दो मुख्य आकारोंके लिये किया जाता है और इस अर्थमें ये क्रमश: आकारविषयक और द्रव्यविषयक तर्क के तुल्य हैं। लेकिन तर्कशास्त्र केवल तर्कका ही अध्ययन नहीं करता बल्कि कुछ सहायक प्रक्रियाओंका भी करता है। अत: आकारविषयक तर्क-शास्त्रमें निगमनात्मक तर्कोंके अलावा कुछ सहायक प्रक्रियाएं, जैसे, पदों और वाक्योंके आकार, आकारविषयक परिभाषा और विभाजन के नियम इत्यादि भी शामिल हैं; जबकि द्रव्यविषयक तर्कशास्त्रमें आगमनात्मक तर्कोंके अलावा परिभाषा और वर्गीकरणके द्रव्यविषयक नियम, वाक्योंके अर्थविषयक सिद्धान्त, वाच्यधर्म इत्यादि सहायक प्रक्रियाएं भी शामिल हैं।

टिप्पणी २. तर्कशास्त्रका क्षेत्र या विस्तार (Scope).

किसी विज्ञानके क्षेत्र या विस्तारसे मतलब उस विषय-सामग्री का है जिसका वह विचार करता है—जिसकी सीमाओंके अन्दर वह अपनी छानबीनको सीमित रखता है। हरेक विज्ञानका अपना एक विशेष क्षेत्र होता है और उसकी परिभाषा देनेमें हम उसकी सीमाओं को निर्धारित करते हैं अर्थात् हम यह निश्चित करते हैं कि ज्ञानका वह कौन-सा विशेष विभाग है जिससे उसका सम्बन्ध है।

तर्कशास्त्रको शुद्ध विचारके व्यवस्थापक नियमोंके विज्ञानके रूपमें परिभाषित किया गया है। इस प्रकार जिस विभागके अन्दर तर्कशास्त्र

अपनी छानबीन को सीमित रखता है वह शुद्ध या सही विचार है। अतः सही विचारको तर्कशास्त्रका क्षेत्र या विस्तार कहा जा सकता है।

'विचार' शब्दका अर्थ सोचनेकी प्रक्रिया और उसका फल दोनों है। प्रत्ययन, निर्णय करना और तर्क करना सोचनेकी प्रक्रियाएं हैं और प्रत्यय, निर्णय और तर्क सोचनेके फल हैं। चूंकि तर्कशास्त्रकी विषय-सामग्रीमें सोचनेकी प्रक्रियाएं और फल दोनों शामिल हैं, इसलिए तर्कशास्त्रके क्षेत्रमें इन सबका समावेश होता है।

सत्यता आकारविषयक हो सकती है या द्रव्यविषयक और तर्कशास्त्रका सम्बन्ध इन दोनोंसे है। आकारविषयक तर्कशास्त्रमें निगमनात्मक तर्कके सभी रूप शामिल हैं तथा साथ ही अन्य आकारविषयक प्रक्रियाएं भी, जैसे आकारविषयक परिभाषा और विभाजनके नियम, और तर्कशास्त्रमें वाक्योंको जिन आकारोंमें व्यक्त करना चाहिए वे आकार। द्रव्यविषयक तर्कशास्त्रमें सभी प्रकारके द्रव्यविषयक तर्क शामिल हैं और साथ ही वाच्यधर्मोंका सिद्धान्त, वाक्यों का अर्थ, तथा विभाजन, वर्गीकरण और नामकरणके द्रव्यविषयक नियम। इस प्रकार ये सब बातें तर्कशास्त्रके क्षेत्रमें शामिल हैं।

भाग ११. तर्कशास्त्र, विज्ञान और कलाके रूप में.

इस बातके ऊपर बहुत विवाद हुआ है कि तर्कशास्त्रको केवल एक विज्ञान मानना चाहिए, या केवल एक कला, या दोनों एक साथ। पोर्ट रॉयल लॉजिक (Port Royal Logic) के लेखक **आल्डरिच** (**Aldrich**) इत्यादि तर्कशास्त्रको एक कला कहते हैं। **मैन्सेल** और **टॉमसन** तर्कशास्त्रको कला माननेसे इन्कार करते हैं और उसे एक विज्ञान कहते हैं। **व्हेटली**(**Whately**) इन दोनों मतोंको मिला देता है और तर्कशास्त्रको विज्ञान और कला दोनों मानता है। **मिल** भी यही मानता है।

तर्कशास्त्र विज्ञान है या कला?

तर्कशास्त्र विज्ञान और कला दोनों है—इसका एक पहलू सैद्धान्तिक है और दूसरा व्यावहारिक।

सही मत यह मालूम पड़ता है कि तर्कशास्त्र **विज्ञान और कला दोनों ही है**। विज्ञान तथ्योंके एक निश्चित समूह पर शासन करनेवाले नियमोंकी छानबीन करता है और कला एक निश्चित लक्ष्यकी प्राप्ति के लिये नियम बनाती है। विज्ञान हमको जानना सिखाता है और कला करना। तर्कशास्त्र एक विज्ञान है, इसलिए कि यह हमको सही विचार के नियमोंकी जानकारी कराता है, तथा यह एक कला है इसलिए कि यह सत्यताकी प्राप्ति और ग़लतियोंसे बचनेके लिये नियम निर्धारित करता है। इस प्रकार तर्कशास्त्रका एक पहलू सैद्धान्तिक है और दूसरा व्यावहारिक। चूंकि तर्कशास्त्र सही विचारके नियम बनाता है, अतः यह ग़लत तर्कोंको पहिचानने और उनसे बचनेके नियम भी प्रदान करता है। अतः तर्कशास्त्रको व्यावहारिक विज्ञान भी कहा गया है अर्थात् सही विचारके सामान्य नियमोंका वह विज्ञान जो सत्यकी प्राप्तिके लिये व्यवहारमें लागू करनेकी दृष्टिसे उन नियमोंका क्रमबद्ध अध्ययन करता है।

तर्कशास्त्र विज्ञानोंका विज्ञान और कलाओंकी कला है।

तर्कशास्त्रको विज्ञानोंका विज्ञान और कलाओंकी कला कहा गया है। इसे **विज्ञानोंका विज्ञान** इस कारण कहा गया है कि यद्यपि विभिन्न विज्ञान प्रकृतिके विभिन्न विभागोंका अध्ययन करते हैं तथापि उन सभीके लिये सही विचारके सामान्य नियमोंकी जानकारी, जो कि तर्कशास्त्रके अध्ययनके विषय हैं, आवश्यक है। हरेक विज्ञानको तर्क-सम्मत होना पड़ता है अर्थात् तर्कशास्त्र सही विचारके जिन सामान्य नियमोंकी खोज करता है उनका पालन करना उनके लिये आवश्यक है। संक्षेपमें, कोई ऐसी चीज़ है जो सभी विज्ञानोंमें समान है और तर्कशास्त्रका कार्य सभी विज्ञानोंके इस समान आधारका अध्ययन करना है। इसी तरह तर्कशास्त्रको **कलाओंकी कला** इस कारण कहा गया है कि यद्यपि निभिन्न कलाएं सत्यकी प्राप्तिके लिये अपने-अपने विशेष क्षेत्रोंमें नियम निर्धारित करती हैं तथापि वे सभी सत्य की प्राप्तिके लिये जो सामान्य नियम हैं उनका पालन करती हैं। सही

विचारकी कलाके रूपमें तर्कशास्त्र सभी अन्य कलाओंका आधार है और उनको रास्ता दिखता है।

भाग १२. तर्कशास्त्रकी विभिन्न परिभाषाएं.

१. **आल्डरिच** यह परिभाषा देता है कि "तर्कशास्त्र **तर्ककी कला है।**" आल्डरिच

व्हेटली इसमें परिवर्धन करके यह कहता है कि "तर्कशास्त्र **तर्कका विज्ञान और कला** है।" व्हेटली

ये परिभाषाएं बहुत ही संकीर्ण हैं और इनके विरुद्ध नीचे लिखे आक्षेप हैं:—

(क) आल्डरिच की परिभाषा इस बातका उल्लेख नहीं करती कि तर्कशास्त्र एक विज्ञान भी है। व्हेटली की परिभाषामें यह दोष नहीं है। फिर भी ये दोनों परिभाषाएं तर्कशास्त्रके व्यावहारिक पहलूको मान्यता देती हैं।

(ख) इन दोनों परिभाषाओंमें दूसरा दोष यह है कि इनके अनुसार तर्कशास्त्र केवल तर्कसे सम्बन्ध रखता है। यह सही है कि तर्कशास्त्रका मुख्य सम्बन्ध तर्कसे है, फिर भी कुछ विषय ऐसे हैं जो "तर्क" में शामिल न होने पर भी तर्कशास्त्रके अध्ययनके क्षेत्रमें आते हैं, जैसे विभाजन, वर्गीकरण, परिभाषा इत्यादि। इनको कुछ नियमों का पालन करना पड़ता है ताकि ये सही हों। इस प्रकार तर्कशास्त्रको केवल तर्क तक ही सीमित रखना उसकी परिभाषाको अव्याप्त (too narrow) बना देता है।

२. **टॉमसन** ने यह परिभाषा दी है कि तर्कशास्त्र **'विचारके नियमों का विज्ञान है।"** टॉमसन

इसमें नीचे लिखे दोष हैं:—

(क) तर्कशास्त्र एक विज्ञान मात्र नहीं है बल्कि एक कला भी है। इसका एक पहलू सैद्धान्तिक है और दूसरा व्यावहारिक। यह केवल यही नहीं सिखाता कि सही विचार क्या है बल्कि यह भी कि विचारको सही

कैसे बनाया जाय। यह परिभाषा तर्कशास्त्रके व्यावहारिक पहलूकी बिल्कुल उपेक्षा कर देती है।

(ख) "विचार" शब्द भिन्नार्थक है। विशाल अर्थमें यह "ज्ञान" का पर्यायवाची है और इसमें प्रत्यक्ष, स्मृति, कल्पना तथा अमूर्त और सामान्य विचारका समावेश होता है। तर्कशास्त्रमें "विचार" शब्द संकुचित अर्थमें इस्तेमाल होता है इसका मतलब केवल अमूर्त (सूक्ष्म) और सामान्य विचार होता है।

(ग) इस परिभाषाके विरुद्ध एक गम्भीर आरोप यह है कि इससे यह मालूम होता है कि तर्कशास्त्र विचारोंके वास्तविक रूपसे सम्बन्ध रखता है। लेकिन तर्कशास्त्र एक विधायक विज्ञान नहीं है बल्कि एक नियामक विज्ञान है। तर्कशास्त्र सब तरहके विचारसे सम्बन्ध नहीं रखता बल्कि केवल सही विचारसे सम्बन्ध रखता है। विचार जिस प्रकार किया जाता है उसका अध्ययन मनोविज्ञान करता है। तर्कशास्त्र केवल विचारके आदर्श रूपका अर्थात् विचार जिस प्रकार किया जाना चाहिए उसका अध्ययन करता है।

हैमिल्टन

३. **हैमिल्टन** ने यह परिभाषा दी है कि तर्कशास्त्र **"विचारके आकारविषयक नियमोंका विज्ञान"** है।

इसमें नीचे लिखे दोष हैं :—

(क) यह परिभाषा तर्कशास्त्रके केवल सैद्धान्तिक पहलू पर ही लागू होती है, लेकिन तर्कशास्त्र विज्ञान होनेके अलावा एक कला भी है।

(ख) "विचार" शब्द अनेकार्थक है। तर्कशास्त्रका सम्बन्ध केवल सूक्ष्म और सामान्य विचारसे है, लेकिन "विचार" शब्दका इस्तेमाल कभी-कभी एक विस्तृत अर्थमें किया जाता है (देखिए २ (ख))।

(ग) इन दोषोंके अलावा जो कि टॉमसन की परिभाषामें भी पाये जाते हैं, इस परिभाषामें एक गम्भीर दोष यह है कि यह तर्कशास्त्रके क्षेत्र को केवल "आकारविषयक सत्यता" तक ही सीमित रखती है। लेकिन

तर्कशास्त्र केवल आकारविषयक नियमोंकी जिनका लक्ष्य आकारविषयक सत्यता होती है, खोज नहीं करता बल्कि द्रव्यविषयक नियमोंकी भी खोज करता है और इस प्रकार द्रव्यविषयक सत्यता भी उसका लक्ष्य है। यह परिभाषा तर्कशास्त्रको केवल आकारविषयक तर्कशास्त्र समझती है और इस प्रकार द्रव्यविषयक तर्कशास्त्रको बिल्कुल ध्यानमें नहीं लाती।

४. आर्नोल्ड (**Arnauld**) की परिभाषा यह है कि तर्कशास्त्र **"सत्यके अनुसन्धानमें लगी हुई बुद्धिका विज्ञान है"।** आर्नोल्ड

इसमें नीचे लिखी त्रुटियां हैं:—

(क) यह तर्कशास्त्रके व्यावहारिक पक्षकी उपेक्षा कर देती है और केवल सैद्धान्तिक पक्षको स्वीकार करती है।

(ख) "सत्य" शब्द अनेकार्थक है। इस बातका साफ़-साफ़ उल्लेख होना चाहिए कि तर्कशास्त्रका लक्ष्य आकारविषयक सत्यता और द्रव्यविषयक सत्यता दोनों ही हैं।

(ग) इनसे अधिक गम्भीर त्रुटि इसमें यह है कि तर्कशास्त्र बुद्धिके व्यापारोंके अलावा कुछ अन्य प्रक्रियाओंका भी अध्ययन करता है, जैसे, परिभाषा, विभाजन, वर्गीकरण इत्यादि सहायक प्रक्रियाओं का।

५. मिल ने यह परिभाषा दी है:— मिल

तर्कशास्त्र बुद्धिके उन व्यापारोंका विज्ञान है जो प्रमाण (evidence) के मूल्यांकनमें उपयोगी हैं और यह ज्ञात तथ्योंसे अज्ञात तथ्योंमें पहुंचनेकी प्रक्रिया तथा इसमें सहायता करनेवाले सभी अन्य बौद्धिक व्यापारोंका विचार करता है।

इस परिभाषाका विश्लेषण करने पर ये बातें मालूम होती हैं:—

(क) तर्कशास्त्र एक विज्ञान मात्र नहीं है बल्कि यह प्रमाणके मूल्यांकनसे भी सम्बन्ध रखता है। "प्रमाणके मूल्यांकन" से यह बात प्रकट होती है कि तर्कशास्त्रको आधारवाक्योंकी परीक्षा भी करनी पड़ती है ताकि उनसे निकलनेवाले निष्कर्षकी सत्यताका निश्चय हो सके।

अतः यह परिभाषा तर्कशास्त्रके सैद्धान्तिक और व्यावहारिक दोनों पहलुओंको स्वीकार करती है।

(ख) तर्कशास्त्रका क्षेत्र "प्रमाणके मूल्यांकनमें सहायता करने वाले बुद्धिके व्यापारों" मात्र तक सीमित नहीं है। उसमें "इसमें सहायता करनेवाले सब अन्य बौद्धिक व्यापार" भी शामिल हैं। इस प्रकार तर्कशास्त्रमें नामकरण, परिभाषा, वर्गीकरण इत्यादिका भी समावेश होती है।

भाग १३. तर्कशास्त्रकी उपयोगिता.

तर्कशास्त्रके अध्ययनके विरुद्ध आपत्तियां:

तर्कशास्त्रके अध्ययनके विरुद्ध आपत्तियां. कुछ लोगोंने तर्कशास्त्र की उपयोगितामें सन्देह प्रकट किया है। कहा गया है कि तर्कशास्त्रको पढ़ना बेकार है क्योंकि, एक तो, तर्कशास्त्र हमें तर्क करना नहीं सिखाता और, दूसरें, यह सही तर्क करना भी नहीं सिखाता।

(क) तर्कशास्त्र हमें तर्क करना नहीं सिखाता;

(क) यह कहना कि तर्कशास्त्र तर्क करना नहीं सिखाता ठीक है। लेकिन तर्कशास्त्र यह सिखानेका दावा भी तो नहीं करता। जिस प्रकार हम चलना और बोलना सीखते हैं उसी प्रकार तर्क करना भी अपनी स्वाभाविक शक्तियोंका इस्तेमाल करके सीखते हैं। जैसे फ़ौजमें चलना नहीं सिखाया जाता बल्कि सही तरीक़ेसे चलना, नपे-तुले क़दम रखते हुए चलना सिखाया जाता है, वैसे ही तर्कशास्त्र हमें तर्क करना नहीं सिखाता बल्कि केवल सही तर्क करना सिखाता है। तर्कशास्त्रका काम हमें केवल यह सिखाना है कि हम स्वयं अपने तर्कके दोषोंसे बचें और दूसरे लोगों के विचारों और तर्कोंके दोषोंको खोज निकालें।

(ख) यह सही तर्क करना भी नहीं सिखाता।

(ख) आलोचकोंने कहा है कि तर्कशास्त्रने सही तर्क करना सिखानेका जो दावा किया है उसमें भी वह ज़्यादा सफल साबित नहीं हुआ है। क्या जिन लोगोंने तर्कशास्त्र कभी नहीं पढ़ा वे सही तर्क नहीं करते? क्या जिन लोगोंने तर्कशास्त्र पढ़ा है वे ग़लतियां नहीं करते? पहिली नज़रमें यह आपत्ति अकाट्य मालूम पड़ती है, लेकिन सच्ची

बात यह है कि यह लौकिक ज्ञानसे अलग वैज्ञानिक ज्ञानका जो स्वरूप और कार्य है उसके बारेमें एक ग़लत धारणा पर आधारित है। तर्कशास्त्र तर्कका विज्ञान है; लेकिन वैज्ञानिक तर्क और लौकिक तर्क प्रकारकी दृष्टिसे भिन्नता नहीं रखते; भेद केवल इतना है कि वैज्ञानिक तर्क लौकिक तर्ककी अपेक्षा अधिक क्रमयुक्त और निश्चित होता है। अतः यह आवश्यक नहीं है कि लौकिक तर्क ग़लत ही हो। तर्कशास्त्रका सम्बन्ध सही तर्कके नियमोंसे है। साधारण आदमी इन नियमोंका शायद बग़ैर जाने पालन करता है। तर्कशास्त्र केवल इन नियमोंका जानबूझकर और नियमित तरीक़ेसे उपयोग करता है। यह कहना कि तर्कशास्त्रको न जानकर भी लोग सही तर्क कर सकते हैं, उतना ही सच्चा है जितना यह कहना कि चिकित्साविज्ञानकी जानकारीके बिना लोग स्वस्थ रह सकते हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं है, लेकिन इसका मतलब केवल यह है कि जब तक लोग स्वस्थ हैं तभी तक वे स्वस्थ रह सकते हैं, लेकिन जैसे ही वे बीमार पड़ते हैं उन्हें चिकित्साविज्ञानकी जानकारी रखनेवालोंसे सहायता लेनी पड़ती है। इसी तरह, जब तक लोग अपनी मानसिक शक्तियोंका स्वाभाविक इस्तेमाल करके सही तर्क करते हैं तब तक उनको तर्कशास्त्रकी मदद लेनेकी ज़रूरत नहीं है, लेकिन जब वे ग़लतियां करने लगते हैं तब ग़लतियोंका कारण जाननेके लिये और सही तर्कका तरीक़ा मालूम करनेके लिये तर्कशास्त्रका ज्ञान करना अनिवार्य हो जाता है।

केवल तर्कशास्त्रके अध्ययनसे ही तर्क सही हो सकता है।

तर्कशास्त्रके उपयोग संक्षेपमें नीचे दिये जाते हैं:—

लाभ: तर्कशास्त्रसे सही विचारके नियम मालूम होते हैं।

(क) तर्कशास्त्रसे शुद्ध विचारके नियमोंकी वैज्ञानिक जानकारी हासिल होती है, जिनका पालन करनेसे सत्यताकी प्राप्ति होती है, ग़लतियां मालूम होती हैं और उनसे बचा जाता है। इसमें सन्देह नहीं है कि तर्कशास्त्रका विशेष अध्ययन किये बिना एक बुद्धिमान आदमी केवल साधारण बुद्धिकी मददसे सही तर्क कर सकता है और कह सकता है कि अमुक युक्ति ग़लत है। लेकिन यह हम केवल तर्कशास्त्र पढ़कर

ही समझ सकते हैं कि कोई ग़लत युक्ति ग़लत किस वजहसे है और कि उसमें जो ग़लती है उसका ठीक-ठीक नाम क्या है।

विज्ञानोंका विज्ञान।

(ख) तर्कशास्त्र विज्ञानोंका विज्ञान है। अलग-अलग विज्ञान दुनियाके अलग-अलग हिस्सोंसे ताल्लुक़ रखते हैं; और तर्कशास्त्रका इन विज्ञानोंकी विशेष विषय-सामग्रियोंसे कोई ताल्लुक़ नहीं है। फिर भी तर्कशास्त्रका विचारके उन सामान्य नियमोंसे ताल्लुक़ है जिनका पालन करना हरेक विज्ञानके लिये इसलिए ज़रूरी है कि उसके अपने क्षेत्रमें जो ज्ञान है वह सही हो सके। प्रत्येक विज्ञानको सही विचार के सामान्य नियमोंके अनुसार चलना पड़ता है और इन नियमोंकी जानकारी तर्कशास्त्रसे होती है।

मानसिक व्यायाम।

(ग) तर्कशास्त्रका ख़ास लाभ यह है कि यह प्रधानतः एक बौद्धिक अनुशासन (discipline) या मानसिक व्यायाम है। तर्कशास्त्र पढ़ने से सूक्ष्म विचारकी शक्ति बढ़ती है और तर्ककी शक्तियां प्रशिक्षित और विकसित होती हैं। आदमी निम्न स्तरके जानवरोंसे इस बातमें श्रेष्ठ है कि उसके अन्दर चेतन बुद्धि होती है और वह प्रत्ययों और सामान्य विचारोंकी मददसे सोचनेकी शक्ति रखता है। तर्कशास्त्रको पढ़नेसे इन शक्तियोंका व्यायाम होता है और इसलिए इसके महत्त्वमें कोई सन्देह नहीं रह जाता। जिस आदमीने तर्कशास्त्र पढ़कर सही तर्क करनेमें दक्षता प्राप्त कर ली है वह किसी भी विद्या की साधनामें उसका फ़ायदा उठा सकता है।

भाग १४. तर्कशास्त्र और मनोविज्ञान.

मनोविज्ञान का शाब्दिक अर्थ है मनका विज्ञान।

मनोविज्ञान जानने, महसूस करने और संकल्प करने का विज्ञान है।

मनके तीन प्रमुख व्यापार हैं: जानना, महसूस करना और संकल्प करना। उदाहरणके लिये, मान लीजिए कि एक विद्यार्थी परीक्षा में बैठा है और सफल विद्यार्थियोंकी सूचीमें अपना नाम देखता है—उसे ज्ञात होता है, कि वह सफल हो गया है तब उसे उल्लासकी

अनुभूति होती है; तब वह यह संकल्प करता है कि वह अपनी पढ़ाई जारी रखेगा और अगली उच्च परीक्षा में बैठेगा। इस प्रकार जानना, महसूस करना और संकल्प करना मन के तीन व्यापार हैं और मनोविज्ञान के अध्ययनके विषय हैं।

मनोविज्ञान का सम्बन्ध सब प्रकारके ज्ञानसे है जब कि तर्कशास्त्र का सम्बन्ध केवल व्यवहित, सामान्य और सूक्ष्म ज्ञान से है।

ज्ञान व्यवहित हो सकता है या अव्यवहित। ज्ञान विशेष और मूर्त या स्थूल वस्तुका हो सकता है या सामान्य और अमूर्त्त यानी सूक्ष्म वस्तुका। तर्कशास्त्रका सम्बन्ध सामान्य और सूक्ष्म वस्तुके ज्ञानसे है जो कि "विचार" शब्दके संकीर्ण अर्थमें शामिल है। इस प्रकार मनोविज्ञानका सम्बन्ध सभी प्रकारके ज्ञान से, व्यवहित और अव्यवहित, विशेष और सामान्य, स्थूल और सूक्ष्म ज्ञानसे है, जबकि तर्कशास्त्रका सम्बन्ध केवल व्यवहित सामान्य और सूक्ष्म ज्ञानसे है। इस दृष्टिसे देखने पर तर्कशास्त्रका क्षेत्र मनोविज्ञानके क्षेत्रसे छोटा है।

मनोविज्ञान का सम्बन्ध अनुभति और संकल्पसे भी है लेकिन तर्कशास्त्रका केवल ज्ञान से है।

एक अन्य दृष्टिसे भी तर्कशास्त्रका क्षेत्र मनोविज्ञानके क्षेत्रसे छोटा है। मनोविज्ञानका सम्बन्ध न केवल ज्ञानसे है बल्कि अनुभूति और संकल्पसे भी है। हमें वस्तुओंका ज्ञान मात्र नहीं होता बल्कि सुख-दुःख, उल्लास और शोक इत्यादिकी अनुभूतियां भी होती हैं। इसके अलावा हमारी कुछ मनोदशाएं ऐसी भी होती हैं जो स्वयंको बाह्य व्यवहारके रूपमें व्यक्त करती हैं। इनका सामूहिक नाम संकल्प है। इस शीर्षकके अन्तर्गत आनेवाली मनोदशाओंमें सबसे उत्कृष्ट वह है जिसे प्रायः इरादा करना कहते हैं। हम कुछ करनेका इरादा करते हैं और हमारा इरादा कार्योंमें प्रकट होता है। इस प्रकार जहां मनोविज्ञान ज्ञानके अलावा अनुभति और संकल्पमें भी रुचि रखता है वहां तर्कशास्त्र केवल ज्ञानमें रुचि रखता है, अनुभूति और संकल्पमें नहीं। इस तरहसे मनोविज्ञानके क्षेत्रसे तर्कशास्त्रका क्षेत्र छोटा है।

तर्कशास्त्र और मनोविज्ञानमें एक और महत्त्वपूर्ण अन्तर है। मनोविज्ञान एक विधायक विज्ञान है जबकि तर्कशास्त्र एक नियामक

मनोविज्ञान एक विधायक विज्ञान है जब कि तर्कशास्त्र एक नियामक विज्ञान।

विज्ञान है। विधायक विज्ञान चीज़ोंका उसी रूपमें अध्ययन करता है जिस रूपमें उनका अस्तित्व है, नियामक विज्ञान उनका जिस रूपमें उन्हें होना चाहिए उस रूप में अध्ययन करता है। मनोविज्ञान विधायक विज्ञान है क्योंकि यह विचारका उसके वास्तविक रूपमें अध्ययन करता—यह इस सवालका ज़वाब देता है कि हम सोचते कैसे हैं। इस प्रकार यह सही और ग़लत दोनों ही प्रकारके विचारसे सम्बन्ध रखता है। इसके विपरीत, तर्कशास्त्र नियामक विज्ञान है क्योंकि यह देखता है कि विचार करना कैसे चाहिए। इस प्रकार तर्कशास्त्र अपने सामने एक आदर्श रखता है जो कि शुद्धता या सत्यताका आदर्श है, और उन शर्तोंकी छान-बीन करता है जिनका पूरा होना विचारोंके सत्यताके आदर्शके अनुसार होनेके लिये अर्थात् विचारोंके सत्य होने के लिये आवश्यक है।

मनोविज्ञान का अध्ययन तर्कशास्त्रका सहायक है।

इन अन्तरोंके बावजूद यह कहा जा सकता है कि तर्कशास्त्रके अध्ययनमें मनोविज्ञनका ज्ञान बहुत ही महत्त्व रखता है। यह स्पष्ट है कि 'हमें सोचना कैसे चाहिए' इस सवालकी छान-बीनमें 'हम वास्तवमें सोचते कैसे हैं' इस बातकी जानकारी अत्यधिक महत्त्व-पूर्ण है।

संक्षेप

संक्षेप में: (क) मनोविज्ञानका सम्बन्ध ज्ञान, अनुभूति और संकल्पसे है जबकि तर्कशास्त्रका केवल ज्ञानसे।

(ख) ज्ञान अव्यवहित या व्यवहित, स्थूल या सूक्ष्म, विशेष या सामान्य हो सकता है। मनोविज्ञानका सम्बन्ध सभी तरहके ज्ञानसे है जबकि तर्कशास्त्रका केवल व्यवहित, सूक्ष्म क्षौर सामान्य ज्ञानसे है। इस प्रकार तर्कशास्त्रका क्षेत्र मनोविज्ञानके क्षेत्रसे बहुत छोटा है।

(ग) तर्कशास्त्र एक नियामक विज्ञान है जबकि मनोविज्ञान एक विधायक विज्ञान है।

टिप्पणी. तर्कशास्त्र और मनोविज्ञानमें विचार.

तर्कशास्त्र और मनोविज्ञान दोनोंका सम्बन्ध विचारसे है।

'विचार' शब्दके यहां दो अर्थ हैं। एक अर्थमें विचार एक तरहकी मूर्त मानसिक अवस्था है। इस प्रकार जब मैं कोई रंग देखता हूं तब मेरे अन्दर एक मानसिक अवस्था पैदा होती है जिसे संवेदना (sensation) कहते हैं; जब मैं अपने सामने एक चीजको देखता हूं तब मेरे अन्दर एक दूसरी मानसिक अवस्था पैदा होती है जिसे प्रत्यक्ष (perception) कहते हैं; जब मैं पहिले देखी हुई एक चीजका ध्यान करता हूं जो कि इस समय मौजूद नहीं है, तब एक तीसरी मानसिक अवस्था पैदा होती है जिसे प्रतिमा (image) कहते हैं। मनोविज्ञान संवेदना, प्रत्यक्ष, प्रतिमा और इसी तरहकी अन्य मानसिक अवस्थाओंका अध्ययन करता है। इस प्रकार मनोविज्ञान विचार अर्थात् व्यक्तिकी उपर्युक्त मूर्त मानसिक अवस्थाओंसे सम्बन्ध रखता है। लेकिन तर्कशास्त्रका विचारके एक दूसरे अर्थसे सम्बन्ध है। तर्कशास्त्रमें विचारका अर्थ है विश्वासके वास्तविक या सम्भावित आधारोंके अन्दर रहनेवाली सूक्ष्म विशेषताएं और सम्बन्ध। एक आसान-सा उदाहरण लीजिए: दिया हुआ वाक्य "सब मनुष्य मरणशील हैं" सत्य है; अगर यह सत्य है तो "कुछ मनुष्य मरणशील हैं" इस वाक्यके बारेमें क्या कहा जायगा? तर्कशास्त्र बताता है कि दूसरे वाक्यकी सत्यता पहिलेकी सत्यता में छिपी हुई है, कि इन दोनोंका सम्बन्ध ऐसा है कि पहिलेकी सत्यतासे दूसरेकी सत्यताका अनुमान होता है।

यहां यह ध्यान रखना चाहिए कि तर्कशास्त्रका सम्बन्ध विचारसे उतना नहीं है जितना विचारकी सत्यता से है। विचारोंके सत्य होने और ग़लतियोंसे बचनेके लिये जिन शर्तोंका पूरा होना आवश्यक है तर्कशास्त्र उनकी छानबीन करता है।

भाग १५. तर्कशास्त्र और तत्वज्ञान.

तत्वज्ञान (Metaphysics) ज्ञानकी वह शाखा है जो अन्तिम

तत्वका अनुसन्धान करती है यानी सत्ताके स्वकीय रूपका, प्रतीयमान रूपका नहीं।

तत्वज्ञान पारमार्थिक सत्ताकी खोज करता है जब कि विज्ञान व्यावहारिक सत्ता की।

तत्वज्ञान विज्ञानसे भिन्न है। विज्ञान सत्ताके एक विशेष भागका अध्ययन करता है। विज्ञान जिस सत्ताका अध्ययन करता है वह पारमार्थिक सत्ता नहीं है बल्कि व्यावहारिक, प्रतीत होनेवाली सत्ता है। विज्ञान व्यवहारसे, प्रातीतिक जगत्से, सम्बन्ध रखता है, परमार्थसे, प्रतीतियोंके पीछे रहनेवाले चरम तत्वसे नहीं। पारमार्थिक सत्ता तत्वज्ञानका विषय है।

प्रत्येक विज्ञान कुछ मान्यताओंको लेकर चलता है जिन्हें वह प्रमाण के बग़ैर स्वीकार कर लेता है। ये मान्यताएं विज्ञानकी आधार-शिला हैं। उदाहरणार्थ, रसायन भौतिक वस्तुओंका विज्ञान है। यह द्रव्य या पुद्गल (matter) के अस्तित्वको मान लेता है और इस मान्यताके आधार पर यह अपने विशेष क्षेत्रमें अनुसन्धानको आगे बढ़ाता है। अन्य विज्ञान भी इसी तरह कुछ मान्यताओं पर आधारित होते हैं और उन्हें बग़ैर विवादके सत्य मान लेते हैं।

तत्वज्ञान सब विज्ञानोंकी मान्यताओंकी परीक्षा करता है

तत्वज्ञान जो जगत्के पारमार्थिक स्वरूपकी खोज करता है, विभिन्न विज्ञानोंकी इन मान्यताओंके स्वरूपकी जांच करता है। विभिन्न विज्ञानों की इन मान्यताओंकी सत्यताकी परीक्षा तत्वज्ञान करता है। रसायन-शास्त्र पुद्गलके अस्तित्वको मान लेता है और तत्वज्ञान यह जांचता है कि यह मान्यता सत्य है या नहीं, कि पुद्गल सचमुच अस्तित्व रखता है या नहीं? एक विज्ञानके रूपमें मनोविज्ञान मनके अस्तित्वको मान लेता है जब कि तत्वज्ञान यह देखता है कि सचमुच मनकी सत्ता है या नहीं? इस प्रकार तत्वज्ञान विभिन्न विज्ञानोंकी मान्यताओं यानी आधारोंकी परीक्षा करता है और उनको सत्य या असत्य सिद्ध करता है।

तर्कशास्त्र एक विज्ञान है। इसका क्षेत्र सत्य विचार है। तर्कशास्त्र सत्य विचारके व्यवस्थापक (regulative) नियमोंकी खोज करता है अर्थात् उन नियमोंकी जिनका पालन करना विचारके सही होनेके

लिये ज़रूरी है, जिनको तोड़नेसे विचार ग़लत हो जाता है। विज्ञानके रूपमें तर्कशास्त्र कुछ मान्यताओंको लेकर चलता है, उदाहरणार्थ, तादात्म्य, व्याघात, मध्यदशा-परिहार और पर्याप्त कारणके नियम, समरूपताका नियम इत्यादि। यद्यपि तर्कशास्त्र उपपत्ति (proof) का विज्ञान है तथापि यह इन मूलभूत नियमोंको बग़ैर उपपत्तिके मान लेता है। तत्वज्ञानका काम यह देखना है कि तर्कशास्त्र जिन मान्यताओंके आधार पर प्रतिष्ठित है वे परमार्थतः सत्य हैं या नहीं। इस दृष्टिकोण से देखने पर तत्वज्ञानका तर्कशास्त्रसे वही सम्बन्ध है जो उसका अन्य विज्ञानोंसे है।

और इसलिए तर्कशास्त्रकी मान्यताओं की भी।

एक अन्य दृष्टिकोणसे तर्कशास्त्र तत्वज्ञानका उसी तरह सहायक है जिस तरह वह अन्य विज्ञानोंका है। तर्कशास्त्र सत्य विचार का विज्ञान है। विशेष विज्ञानोंकी तरह तत्वज्ञानमें भी विचार और तर्क होता है और इसे सही होना चाहिए। तत्वज्ञानके तर्कोंको तर्कशास्त्र-सम्मत होना चाहिए अर्थात् तर्कशास्त्रने सही विचारके जो सामान्य नियम निर्धारित किये हैं उनका अनुसरण तत्वज्ञानको भी करना चाहिए।

संक्षेपमें तत्वज्ञान तर्क-विज्ञानकी आधारभूत मान्यताओंका विवेचन करता है, किन्तु तर्कशास्त्र सही विचारका विज्ञान होनेके नाते तत्वज्ञानके क्षेत्रमें भी दख़ल रखता है क्योंकि तत्वज्ञानके तर्कोंको तर्कशास्त्रके नियमोंके अनुसार होना पड़ता है।

अभ्यासार्थ प्रश्न १.

१. ज्ञानका स्वरूप क्या है? उसके विभिन्न प्रकार और उद्गम बताइये। क्या सभी तरहका ज्ञान तर्कशास्त्रके क्षेत्रमें आता है?

२. ज्ञान क्या है? इसके विभिन्न रूपोंको उदाहरण देकर समझाइये। उनमें से किन-किन रूपोंसे तर्कशास्त्रका सम्बन्ध है और क्यों?

३. प्रत्यक्ष, अनुमान और साक्ष्यको ज्ञानके स्रोत कहा गया है; इनमें से प्रत्येकका स्वरूप समझाइये और उदाहरणपूर्वक इनके अन्तर बताइये।

४. व्यवहित और अव्यवहित ज्ञानका अन्तर बताइए। इनमें से कौन तर्कशास्त्रके क्षेत्रमें आता है?

५. विचार तर्कके लिये कहांसे सामग्री जुटाता है? क्या तर्कशास्त्र का अव्यवहित ज्ञानसे कोई सम्बन्ध है?

६. जब आप सबेरे घूमने जाते हैं और सड़कों पर कीचड़ देखते हैं तब आपको तुरन्त विश्वास हो जाता है कि रातमें वर्षा हुई है। कारण देते हुए बताइए कि यहां अव्यवहित ज्ञान क्या है और व्यवहित ज्ञान क्या?

७. अव्यवहित और व्यवहित सत्यमें अन्तर बताइए।

८. अन्तर बताइए: (१) विचारके आकार और द्रव्यमें; (२) विचारकी आकारविषयक और द्रव्यविषयक सत्यतामें।

९. तर्कके आकार और द्रव्यका अन्तर स्पष्ट कीजिए।

१०. सत्यतासे आप क्या समझते हैं? आकारविषयक और द्रव्य-विषयक सत्यताका अन्तर समझाइए। तर्कशास्त्रका सम्बन्ध किससे है?

११. "तर्कशास्त्र सत्यताका नहीं बल्कि संवादका विज्ञान है।" इस कथनकी आलोचना कीजिए।

१२. आकारविषयक और द्रव्यविषयक तर्कशास्त्रमें अन्तर बताइये और जीवनके व्यावहारिक मामलोंमें उनका उपयोग बताइये।

१३. (क) आकारविषयक और द्रव्यविषयक तर्कशास्त्रमें, और (ख) निगमनात्मक और आगमनात्मक तर्कशास्त्रमें जो अन्तर है उसको सोदाहरण समझाइये। इनमें अगर कोई सम्बन्ध है तो उसे भी ठीक-ठीक बताइए।

१४. इस कथनसे आप क्या समझते हैं कि तर्कशास्त्र विचारके आकारों से सम्बन्ध रखता है?

१५. प्रत्ययका स्वरूप बताइए। प्रत्यय किस तरह बनते हैं, मन में वे किस तरह सुरक्षित रहते हैं और कैसे प्रकट किये जाते हैं?

१६. वस्तुवाद, प्रत्ययवाद और नामवाद क्या हैं?

१७. विचारसे क्या मतलब है? विचार और भाषाका सम्बन्ध बताइए।

१८. विज्ञान क्या है? कला क्या है? उदाहरण देकर समझाइए। तर्कशास्त्र विज्ञान है या कला या दोनों? कारण भी दीजिए।

१९. तर्कशास्त्र क्या है? यह विज्ञान है या कला या दोनों?

२०. विज्ञान और कलाका अन्तर बताइए। तर्कशास्त्रको विज्ञानों का विज्ञान और कलाओंकी कला क्यों कहा गया है?

२१. (क) विज्ञान और कलामें, (ख) विधायक विज्ञान और

नियामक विज्ञानमें अन्तर बताइए। तर्कशास्त्र नियामक विज्ञान क्यों है?

२२. तर्कशास्त्रको "विचारके आकारविषयक नियमोंका विज्ञान" परिभाषित किया गया है। यहां "विचार" और "विचारके आकार-विषयक नियम" से क्या मतलब है? क्या यह परिभाषा पर्याप्त है? अगर नहीं है तो कारण बताते हुए इससे अच्छी परिभाषा बताइए।

२३. (क) "तर्कशास्त्र विचारका विज्ञान है।"

(ख) "तर्कशास्त्र तर्ककी कला है।"

(ग) "तर्कशास्त्र तर्कका विज्ञान और कला है।"

उपर्युक्त परिभाषाओंको समझाकर उनके गुण-दोष बताइए और तर्कशास्त्रकी सन्तोषजनक परिभाषा दीजिये।

२४. "तर्कशास्त्र बुद्धिके उन व्यापारोंका विज्ञान है जो प्रमाणके मूल्यांकनके सहायक हैं।" इस परिभाषाको स्पष्ट कीजिए।

२५. "तर्कशास्त्र विचारके नियमोंका विज्ञान है।" इस परिभाषा में 'विज्ञान', 'नियम' और 'विचार' शब्दको स्पष्ट कीजिए।

२६. तर्कशास्त्रकी क्या परिभाषा है? कारण देते हुए बताइए।

२७. "तर्कशास्त्र वह विज्ञान है जो सत्य विचारके सामान्य नियमों की खोज करता है।" इसे स्पष्ट कीजिए।

२८. जब ऐसे लोग भी सही तर्क करते हैं जिन्होंने तर्कशास्त्र कभी नहीं पढ़ा, तो तर्कशास्त्रके अध्ययनको उपयोगी कहा जा सकता है? अपने उत्तरको कारणोंसे पुष्ट कीजिए।

२९. तर्कशास्त्रका क्षेत्र बताइये और इसे पढ़नेके लाभ बताइए। क्या इसे पढ़कर आदमी कभी ग़लतियां नहीं करता?

३०. "तर्कशास्त्र पढ़े बिना लोग तर्क कर सकते हैं।" क्या यह तर्कशास्त्रके अध्ययनके विरुद्ध पर्याप्त आक्षेप है?

३१. "तर्कशास्त्र पढ़ना बेकार नहीं है।" तर्कशास्त्र पढ़नेके फ़ायदे बताइए।

३२. तर्कशास्त्रकी परिभाषा दीजिए और विज्ञानोंसे, विशेष रूप से मनोविज्ञानसे, इसका सम्बन्ध बताइये।

३३. तर्कशास्त्रका तत्वज्ञानसे और विशेष विज्ञानोंसे सम्बन्ध बताइए।

२

तर्कशास्त्र के मूल नियम

भाग १. मूल नियमोंका स्वरूप.

मूल नियम सारे प्रमाणके आधार हैं; लेकिन उनको प्रमाणित नहीं किया जा सकता।

नियम किसी सामान्य सत्यका कथन होता है अर्थात् उस सत्य का जो सार्वभौम होता है, विशेष सत्यका नहीं जो केवल कुछ ही दृष्टान्तोंमें घटित होता है। किसी नियमको मूल (**fundamental**) नियम तब कहते हैं जब उसे किसी प्रमाणकी अपेक्षा नहीं होती और न उसे प्रमाणित किया ही जा सकता है। लेकिन यद्यपि मूल नियमोंको प्रमाणित नहीं किया जा सकता तथापि वे सब प्रमाणोंके आधार होते हैं। ज्ञानकी प्रत्येक शाखा कुछ मूल नियमों पर आधारित होती है। तर्कशास्त्रका सम्बन्ध सत्य विचारसे है। अतः **तर्कशास्त्रके मूल नियमवे सत्य हैं जिनको तर्कशास्त्र बग़ैर प्रमाणके मान लेता है लेकिन जिनका अनुसरण हमारे सभी विचारोंको करना पड़ता है ताकि वे सत्य हो सकें।** ये वे प्राथमिक सत्य हैं जो सारे सही विचारके आधार हैं और जिनके उल्लंघनसे विचार असम्भव हो जाता है।

इनको स्वयं सिद्धियां या मान्यताएं भी कहते हैं।

इन नियमोंको अलग-अलग तर्कशास्त्रियोंने अलग-अलग नाम दिये हैं। यूबरवेग (**Ueberweg**) ने इन्हें **"Axioms of Inference"** (अनुमानकी स्वयंसिद्धियां) कहा है और **मिल** ने इन्हें **"Universal Postulates of all reasonings"** (**सारे तर्कोंकी सार्वभौम मान्यताएं**) कहा है। इन नामोंसे प्रकट होता है कि तर्कशास्त्र इन नियमोंकी सत्यताको मान लेता है, उन्हें सिद्ध करनेकी कोशिश नहीं करता। तर्कशास्त्र उपपत्तिका विज्ञान है—वह इन मूल नियमोंकी मददसे सभी बातें सिद्ध करता है लेकिन स्वयं

इनको सिद्ध नहीं कर सकता। जिस प्रकार आदमीकी आंख सभी चीज़ों को देखती है लेकिन अपने आपको नहीं देख सकती (शीशेमें आंखका जो प्रतिबिम्ब होता है वह स्वयं आंख नहीं है), उसी प्रकार तर्कशास्त्र के मूल नियम सभी बातोंको सिद्ध करते हैं लेकिन स्वयंको नहीं। ये सभी उपपत्तियोंके आधार हैं लेकिन स्वयं उपपत्तिके दायरेके बाहर हैं। इनकी सत्यताको मान लिया जाता है।

भाग २. विचारके मूल नियम.

तर्कशास्त्रके मूल नियमोंकी संख्याके बारेमें तर्कशास्त्रियोंका एक मत नहीं है और वे अलग-अलग तरीक़ोंसे उनका कथन करते हैं। **अरस्तू** ने तीन नियम बताये हैं अर्थात् तादात्म्य, व्याघात और मध्यदशा-परिहारके नियम। आधुनिक कालमें **लाइबनित्स (Leibnitz)** ने एक नियम और जोड़ा है जिसे पर्याप्त कारणका नियम कहते हैं।

१. तादात्म्यका नियम
(The Law of Identity)

तादात्म्यके नियमको सबसे आसान तरीक़ेसे इस सूत्रके द्वारा "अ अ है।" प्रकट किया गया है: "**अ अ है**" या "**प्रत्येक वस्तु जो है वह है।**" इसे निम्न तरीक़ोंसे भी व्यक्त किया गया है:

जो कुछ है, है;
प्रत्येक वस्तु अपने बराबर है;
कोई वस्तु वही है जो वह है;
प्रत्येक वस्तु अपने अनुरूप है;
प्रत्येक वस्तु अपने ही स्वभावके अनुसार है;
सत्य हमेशा आत्म-संगत होता है।

पहिली दृष्टि में सूत्र "अ अ है" एक पुनरुक्ति मात्र मालूम पड़ती है लेकिन इसका सही अर्थ यह है कि किसी चीजको वाद-विवाद या

निगमनात्मक तर्कशास्त्रमें प्रदत्तोंको अपरिवर्तित रहना चाहिए

विचारके समय शुरूसे आखिर तक एक ही बना रहना चाहिए। डा० पी० के० राय के कथनानुसार इस नियमका मतलब यह है कि निगमनात्मक तर्कशास्त्रमें हम जिन प्रदत्तों (data) से शुरू करते हैं उनको अपरिवर्तित रहना चाहिए। किसी भी युक्तिमें हरेक पदका एक ही अर्थमें इस्तेमाल होना चाहिए। निगमनात्मक तर्कशास्त्र में समय या परिवर्तनके लिये कोई स्थान नहीं है। प्रकृतिमें एक बहती हुई नदीकी तरह निरन्तर परिवर्तन होता रहता है और अलग-अलग क्षणोंमें उसकी शक्ल अलग-अलग रहती है। एक प्राचीन यूनानी दार्शनिक हिरेक्लिटस (Heraclitus, ५०० ई० पू०) ने कहा है कि हम एक ही धारामें दो बार नहीं उतर सकते। जब हम किसी नदीमें दूसरी बार कूदते हैं तब पहिलेका पानी बह चुका होता है और इसलिए वह पहिलेकी नदी नहीं होती। लेकिन निगमनात्मक तर्कशास्त्र ऐसे परिवर्तनों पर ध्यान नहीं देता। अगर हम किसी चीजका कोई गुण मानकर चलते हैं तो हमें हमेशा उसमें उस गुणका अस्तित्व मानना होगा; अगर हम किसी पदको एक अर्थमें इस्तेमाल करते हैं तो हमेशा ही उसे उसी अर्थमें इस्तेमाल करना होगा।

२. व्याघातका नियम
(The Law of Contradiction)

व्याघातके नियमको प्रकट करनेके नीचे लिखे तरीक़े हैं:—

अ ब और अ-ब दोनों नहीं हो सकता। किसी वस्तु के अन्दर व्याघातक गुण नहीं हो सकते।

अ ब और अ-ब दोनों नहीं हो सकता; कोई भी वस्तु एक साथ भावरूप और अभावरूप नहीं हो सकती।

इस नियमका मतलब यह है कि किसी भी वस्तुके अन्दर एक ही समय और स्थानमें दो व्याघातक गुणोंका अस्तित्व नहीं हो सकता— कि एक ही वस्तुके ऊपर एक ही समय दो व्याघातक पद लागू नहीं हो सकते। दो व्याघातक गुण ब और अ-ब एक ही चीज अ में अस्तित्व नहीं रख सकते। अगर अ में ब नामक गण है तो उसी समय व्याघातक

गुण अ-ब उसमें वर्तमान नहीं हो सकता। कागज़का एक टुकड़ा एक ही समय श्वेत भी और अश्वेत भी नहीं हो सकता। अगर वह श्वेत है तो अश्वेत नहीं हो सकता और अगर वह अश्वेत है तो श्वेत नहीं हो सकता। यह सत्य है कि कागज़का एक हिस्सा अश्वेत (जैसे, काला) हो सकता है और दूसरा श्वेत अथवा एक समय श्वेत हो सकता है और बादमें अश्वेत। लेकिन कागज़का एक ही काल और स्थानमें श्वेत और अश्वेत दोनों होना सोचा ही नहीं जा सकता।

हैमिल्टन ने व्याघातके नियमको अव्याघातका नियम कहा है क्योंकि अव्याघात अर्थात् व्याघातका अभाव विचारके सत्य होनेकी एक शर्त है।

३. मध्यदशा-परिहार का नियम
(The Law of Excluded Middle)

मध्यदशा-परिहारके नियमको इस प्रकार प्रकट किया जा सकता है :—

अ या तो ब है या अ-ब।

अ या तो ब है या अ-ब ;

प्रत्येक वस्तु या तो भावरूप है या अभावरूप।

एक चीज़के अन्दर दो व्याघातक गुणोंमें से एक अवश्य होना चाहिए।

इस नियमका मतलब यह है कि एक ही चीज़के बारेमें एक ही समय दो व्याघातक पद मिथ्या नहीं हो सकते। दो व्याघातक गुण ब और अ-ब एक ही चीज़ अ के बारेमें एक ही कालमें एक साथ मिथ्या नहीं हो सकते। अगर अ के बारेमें ब सत्य न हो तो अ-ब को सत्य होना चाहिए और अगर अ-ब सत्य न हो तो ब को सत्य होना चाहिए। अगर कागज़का एक टुकड़ा श्वेत नहीं है तो उसे अश्वेत होना चाहिए। जेवोन्स (**Jevons**) के अनुसार इस नियमका नाम ही इस बातको प्रकट करता है कि तीसरा विकल्प या मध्यम मार्ग सम्भव नहीं है ; एक ही उत्तर सम्भव है—या हां या नहीं।

व्याघातके नियमके अनुसार एक ही चीज़के बारेमें दो व्याघातक पद सत्य नहीं हो सकते अर्थात् एकको मिथ्या होना चाहिए, उदाहरणार्थ,

व्याघात और मध्य-दशा-परिहारके नियमोंकी तुलना।

एक पत्थर एक ही साथ कठोर और अ-कठोर दोनों नहीं हो सकता। "यह पत्थर कठोर है" और "यह पत्थर अ-कठोर है" ये दोनों वाक्य सत्य नहीं हो सकते—इनमेंसे एकको मिथ्या होना चाहिए। अगर पहिला वाक्य सत्य है तो दूसरा मिथ्या और अगर दूसरा सत्य है तो पहिला मिथ्या। मध्यदशा-परिहारके नियमके अनुसार एक ही चीज़ के बारेमें एक ही समय दो व्याघातक पद मिथ्या नहीं हो सकते अर्थात् एकको सत्य होना चाहिए। अगर 'यह पत्थर' कठोर नहीं है तो उसे अ-कठोर होना चाहिए और अगर वह अ-कठोर नहीं है तो उसे कठोर होना चाहिए। इस प्रकार इन दोनों नियमोंको मिलाकर देखनेसे दो व्याघातक वाक्योंमें से एककी सत्यतामें दूसरेकी असत्यता छिपी रहती है और एककी असत्यतामें दूसरेकी सत्यता छिपी रहती है। दोनों एक साथ सत्य और दोनों एक साथ असत्य नहीं हो सकते। एकको सत्य होना चाहिए और दूसरेको असत्य।

टिप्पणी. यूबरवेग के अनुसार व्याघात और मध्यदशा-परिहारके नियमोंको एक ही सामान्य नियमके अन्तर्गत लाया जा सकता है जिसे **व्याघातकोंके विकल्प का नियम (Principle of Contradictory Disjunction)** कहा गया है। इसका सूत्र है—**अ या तो ब है या अ-ब है।** इसका मतलब यह है कि

(क) अ ब और अ-ब दोनों नहीं हो सकता (व्याघातका नियम); और

(ख) अ या तो ब है या अ-ब (मध्यदशा-परिहारका नियम)।

इन दो नियमोंके सम्बन्धमें नीचे लिखी बातें याद रखनी चाहिए:—

(१) ये नियम व्याघातक पदोंके बारे में हैं।

(१) ये दो नियम व्याघातक पदोंके बारेमें हैं विपरीत (contrary) पदोंके बारेमें नहीं। एक ही चीज़के बारेमें विपरीत पद एक साथ सत्य नहीं हो सकते लेकिन दोनों असत्य हो सकते हैं। उदाहरणार्थ, एक कागज़का टुकड़ा श्वेत और काला नहीं हो सकता

लेकिन सम्भव है कि वह श्वेत और काला दोनों ही न होकर लाल हो। इसी तरह "यह पत्थर" सम्भव है न कठोर हो न मृदु बल्कि दोनोंके बीचमें अर्थात् थोड़ा-सा कठोर और थोड़ा-सा मृदु हो। लेकिन दो व्याघातक पद 'श्वेत' और 'अश्वेत' एक साथ सत्य या असत्य नहीं हो सकते, इनमेंसे एकको सत्य होना चाहिए और दूसरेको असत्य।

(२) व्याघातके नियमके अनुसार अ ब और अ-ब दोनों नहीं हो सकता ; मध्यदशा-परिहारके नियमके अनुसार अ या तो ब है या अ-ब। दिये हुए उदाहरण में 'अ' एक वस्तु है वस्तुओंका एक वर्ग नहीं। अगर 'अ' वस्तुओंका एक वर्ग है तो दो व्याघातक गुण उसके बारेमें एक ही साथ सत्य भी हो सकते हैं और असत्य भी। उदाहरणके लिये, यह कहना बिल्कुल सही है कि 'आदमी सभ्य भी है और असभ्य भी' या 'आदमी न सभ्य है और न असभ्य', क्योंकि 'आदमी' पद एक जाति या वर्गके लिये आया है न कि एक व्यक्तिके लिये। लेकिन हम यह नहीं कह सकते कि 'सिकन्दर महान् सभ्य और असभ्य दोनों है' या 'सिकन्दर महान् न सभ्य है न असभ्य'।

(२) 'अ' का मतलब एक वस्तु या व्यक्ति है।

टिप्पणी. विचारके तीन नियमोंका पारस्परिक सम्बन्ध.

कभी-कभी यह सवाल पूछा जाता है कि तादात्म्य, व्याघात और मध्यदशा-परिहारके नियम समान रूपसे मौलिक हैं या कोई ऐसा नियम है जिसमें सबके सब छिपे हुए हों? इस प्रकार यह कहा गया है कि तादात्म्यके नियममें व्याघातका नियम समाविष्ट है क्योंकि तादात्म्यका नियम जिस बातको विधानात्मक तरीक़ेसे कहता है उसी बातको दूसरा निषेधात्मक तरीक़ेसे कहता है। लेकिन यह कहा जा सकता है कि विधान और निषेधमें मौलिक भेद है और उनके वैषम्यको नहीं मिटाना चाहिए। इसमें शक नहीं है कि विधानमें उसके व्याघातकका निषेध भी शामिल रहता है और निषेधमें उसके व्याघातकका विधान भी शामिल रहता है, लेकिन यह भी सही है कि विधान और निषेध विचारके दो

भिन्न पक्षोंसे सम्बन्ध रखते हैं। इसी तरहसे यह भी दिखाया जा सकता है कि यद्यपि मध्यदशा-परिहारके नियमका तादात्म्य और व्याघातके नियमोंसे सम्बन्ध है, तथापि वे परस्पर भिन्न नियम हैं और विचारके उन विभिन्न पक्षों पर जोर देते हैं जो मौलिक रूपसे असमान हैं।

४. पर्याप्त कारणका नियम (The Law of Sufficient Reason—Leibnitz).

परिवर्तनके लिये पर्याप्त कारण होना चाहिए।

पर्याप्त कारणके नियमको इन शब्दोंमें प्रकट किया जा सकता है:— **"किसी भी चीज़का जिस रूपमें वह है उस रूपमें होने और अन्य रूप में न होनेका पर्याप्त कारण होता है।"**

इस नियमका अर्थ यह है कि अगर वस्तुओंकी मौजूदा स्थितिमें कोई परिवर्तन हो तो उसके होनेके लिये पर्याप्त कारण होना आवश्यक है। एक प्रसिद्ध उदाहरण यह है: न्यूटन ने पेड़से एक सेव गिरते देखा और अपने आपसे पूछा—सेव क्यों गिरा? निश्चय ही इसकी कोई सन्तोषजनक व्याख्या होनी चाहिए—और यह व्याख्या उसे मिली गुरुत्वाकर्षणके नियममें।

इस प्रकार यह नियम तादात्म्यके नियमका पूरक है। तादात्म्यके नियमके अनुसार प्रदत्तोंको अपरिवर्तित रहना चाहिए, और यह नियम इतना और जोड़ देता है कि अगर कोई परिवर्तन हो तो उसके पूर्व कोई ऐसी परिस्थिति होनी चाहिए जो उसे पैदा करनेमें समर्थ हो।

टिप्पणी. हैमिल्टन की मान्यता (Postulate).

ऊपर जिन मूल नियमोंका उल्लेख हुआ है उनके अलावा कुछ गौण स्वयंसिद्धियां और मान्यताएं भी हैं। इनमेंसे यहां एकका संक्षेपमें उल्लेख किया जा सकता है जिसे हैमिल्टन की मान्यता कहते हैं।

हैमिल्टन ने अपनी तर्कशास्त्रकी मान्यताको इस प्रकार रखा है:—

"तर्कशास्त्रकी मान्यता है कि विचारमें जो कुछ गुप्त रूपसे समाविष्ट है उसे भाषामें प्रकट रूपसे कहा जा सकता है।"

तर्कशास्त्रका सम्बन्ध केवल भाषामें प्रकट विचारसे है। एक ही विचार अलग-अलग भाषाओंमें प्रकट किया जा सकता है। यह नियम बताता है कि हम भाषाके रूपको बदलनेके लिये मुक्त हैं, लेकिन शर्त यह है कि उसका अर्थ नहीं बदलना चाहिए। महत्त्व शब्दोंके अर्थका होता है, शब्दोंके रूपका नहीं। अत: जब तक अर्थ नहीं बदलता तब तक किसी वाक्यके रूपको बदला जा सकता है। उदाहरणके लिये, "सब मनुष्य मरणशील हैं," इस वाक्यमें व्यक्त विचारको हम यह कह कर भी व्यक्त कर सकते हैं कि "कोई मनुष्य अमर नहीं है।"

अर्थको न बदलते हुए भाषाके रूपको बदला जा सकता है।

इस नियमको तादात्म्यके नियमसे निगमित किया जा सकता है। एक रूपमें व्यक्त विचार दूसरे रूपमें व्यक्त विचारके तुल्य है, और चूंकि प्रत्यक चीज अपने तुल्य है, इसलिए अभिव्यक्तिके एक रूपके स्थान पर दूसरा रूप अपनाया जा सकता है।

अभ्यासार्थ प्रश्न २

१. विचारके नियम क्या हैं? तादात्म्य, व्याघात और मध्यदशा-परिहारके नियमोंको समझाइये।

२. तादात्म्यके नियमको बताकर समझाइये। इसका ठीक-ठीक अर्थ क्या है? इसे आकारविषयक तर्कका नियम क्यों कहते हैं?

३. क्या तादात्म्यका नियम पुनरुक्ति मात्र है?

४. तादात्म्य और व्याघातके नियमोंको उदाहरण देकर समझाइये और इनका सम्बन्ध भी बताइये। तर्कके नियमके रूपमें इनका उपयोग क्या है? सोदाहरण बताइये।

५. तादात्म्य, व्याघात और मध्यदशा-परिहारके नियमोंको बताइये। निगमनात्मक तर्कशास्त्रमें इनका क्या व्यावहारिक उपयोग है?

६. निगमनात्मक तर्कशास्त्रके मूल नियमोंको ठोस उदाहरण देकर समझाइये। क्या वे समान रूपसे मौलिक हैं? विस्तारसे बताइये।

७. पर्याप्त कारणके नियमसे आप क्या समझते हैं? तर्कशास्त्रमें इसका क्या महत्त्व है?

३

पद
(Terms)

भाग १. शब्द और पद : पदयोग्य और पदसंयोज्य शब्द.

शब्द शब्दसे क्या मतलब है, यह हम सब जानते हैं। शब्द एक अक्षर या अक्षरोंका समूह होता है जो कोई अर्थ रखता है। शब्दमें एक अक्षर हो सकता है, जैसे, मैं, अथवा एकसे अधिक अक्षर भी हो सकते हैं, जैसे, मनुष्य, घोड़ा, मरणशील इत्यादि।

वाक्य व्याकरणमें जिसे एक वाक्य कहते हैं वह शब्दोंसे बनता है; यथा, मैं हूं, मनुष्य मरणशील है, घोड़ा एक चतुष्पद है, इत्यादि। इस प्रकार वाक्य शब्दोंका एक समूह होता है जिसमें एक पूरा विचार रहता है।

तर्कवाक्य तर्कशास्त्रमें जिसे तर्कवाक्य (proposition) कहा जाता है वह क़रीब-क़रीब व्याकरणके वाक्य जैसा ही होता है। तर्कवाक्य और व्याकरणका वाक्य बिल्कुल एक नहीं होते, उनमें थोड़ा-सा सादृश्य होता है। तर्कवाक्यके तीन हिस्से होते हैं: उद्देश्य (subject), विधेय (predicate) और संयोजक (copula)। उद्देश्य वह है जिसके बारेमें किसी बातका विधान या निषेध किया जाता है; विधेय वह है जिसका उद्देश्यके बारेमें विधान या निषेध किया जाता है; और संयोजक वह है जो उद्देश्य और विधेयको जोड़ता है। उदाहरणार्थ, "मनुष्य मरणशील है" इस वाक्य में "मनुष्य" उद्देश्य है, "मरणशील" विधेय और "है" संयोजक।

पद पद एक शब्द या शब्द-समूह होता है जो अकेला किसी तर्कवाक्यका

उद्देश्य या विधेय बन सकता है*। अंग्रेज़ीमें इसे **टर्म (term)** कहते हैं क्योंकि अंग्रेज़ी भाषाके तर्कवाक्यमें पद दोनों किनारों पर होते हैं। "मनुष्य मरणशील है" इस वाक्य में "मनुष्य" और "मरणशील" पद हैं क्योंकि ये किसी तर्कवाक्यके उद्देश्य या विधेय बननेकी योग्यता रखते हैं। "है" शब्द पद नहीं है क्योंकि इसमें ऐसी योग्यता नहीं है।

सब पद शब्द होते हैं लेकिन सब शब्द पद नहीं होते।

अतः हम देखते हैं कि हरेक शब्द पद नहीं होता, हालांकि हरेक पद एक शब्द या शब्द-समूह होता है। शब्द या शब्द-समूह पद केवल तभी बनते हैं जब उनमें किसी तर्कवाक्यका उद्देश्य या विधेय बन सकनेकी योग्यता हो। सभी शब्दोंमें यह योग्यता नहीं होती और इसलिए वे पद नहीं होते।

अतः तर्कशास्त्रमें शब्दोंको दो वर्गों में रखा गया है: पदयोग्य (Categorematic) और पदसंयोज्य (Syncategorematic)।

पदयोग्य शब्द पद होते हैं।

पदयोग्य शब्द वह है जो अन्य शब्दोंकी मददके बग़ैर अकेला ही पदके रूपमें इस्तेमाल हो सकता है, जबकि पदसंयोज्य शब्द वह होता है जो अकेला पदके रूपमें इस्तेमाल नहीं हो सकता लेकिन जब वह एक या अधिक पदयोग्य शब्दोंसे जुड़ जाता है केवल तभी पद बन सकता है। इस प्रकार पदयोग्य शब्द पद होते हैं जबकि पदसंयोज्य शब्द पद नहीं हैं। उदाहरणार्थ, "मनुष्य" शब्द पदयोग्य शब्द या पद है क्योंकि यह किसी तर्कवाक्यका उद्देश्य या विधेय बन सकता है। इसी तरह "वह" शब्द पदयोग्य है क्योंकि यह किसी तर्कवाक्य का उद्देश्य बन

* कुछ तर्कशास्त्रियोंका मत है कि पद वह शब्द या शब्द-समूह है जो किसी तर्कवाक्यमें वस्तुतः उद्देश्य या विधेयके रूपमें इस्तेमाल हुआ हो। इस तरहसे जो शब्द या शब्द-समूह वस्तुतः किसी वाक्यका उद्देश्य या विधेय नहीं बना है लेकिन बननेकी योग्यता रखता है उसे सम्भाव्य (possible) पद कहते हैं।

सकता है, "सफ़ेद" शब्द पदयोग्य है क्योंकि यह एक तर्कवाक्यका विधेय बन सकता है। पदसंयोज्य शब्दोंके उदाहरणके रूपमें हम "का", "और" इत्यादि शब्दोंको ले सकते हैं जो अकेले कभी पद नहीं बन सकते।

शब्दोंके तर्कशास्त्रीय विभाजनकी व्याकरणके विभाजनसे तुलना।

जब हम शब्दोंके इस तर्कशास्त्रीय विभाजनकी व्याकरणमें स्वीकृत विभाजनसे तुलना करेंगे। व्याकरणमें शब्दोंके विभिन्न वर्गोंको संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया, क्रिया-विशेषण, अव्यय इत्यादि कहते हैं। लेकिन तर्कशास्त्रमें शब्दोंके केवल दो वर्ग होते हैं, पदयोग्य और पदसंयोज्य अर्थात् पद और इनके अतिरिक्त शब्द। तर्कशास्त्रमें शब्द या तो पद होता है या नहीं।

अब हम यह देखते हैं कि व्याकरणमें स्वीकृत शब्दोंके विभाग तर्कशास्त्रीय विभागोंमें किस प्रकार शामिल होते हैं। संज्ञा, सर्वनाम (सम्बन्धवाचक सर्वनामको छोड़कर), विशेषण और क्रियाके इस तरहके रूप जैसे जाना, खाना इत्यादि पदयोग्य शब्द अर्थात् पद हैं; जबकि विभक्तियां, संयोजक, क्रियाविशेषण, सम्बन्धवाचक सर्वनाम (जो, जिसने इत्यादि) आम प्रयोगमें पदसंयोज्य शब्द हैं क्योंकि ये अकेले पद बननेकी योग्यता नहीं रखते। 'का एक विभक्ति है,' 'किन्तु एक संयोजक है,' 'केवल एक क्रियाविशेषण है' इत्यादि वाक्यों में 'का', 'किन्तु', 'केवल' तर्कवाक्योंके उद्देश्यके रूपमें इस्तेमाल हुए हैं और इसलिए इनको पदयोग्य समझना चाहिए। लेकिन यह ध्यान रखना चाहिए कि यहां इनका प्रयोग विभति, संयोजक और क्रियाविशेषणके रूप में नहीं हुआ है। इस प्रकार 'का' का यहां मतलब है 'का' शब्द, 'किन्तु' का 'किन्तु' शब्द और 'केवल' का 'केवल' शब्द। तर्कशास्त्रमें एक ही क्रिया स्वीकार की गई है और वह है 'होना'। यह केवल संयोजक (copula) का काम कर सकती है।

'पदायोग्य'

कुछ तर्कशास्त्रियों ने शब्दोंका एक तीसरा विभाग भी माना है जिसे **पदायोग्य** (**Acategorematic**) कहते हैं। पदायोग्य शब्द

वह है जो कभी पद नहीं बन सकता, न अकेले न अन्य शब्दोंकी मददसे जसे विस्मयादिबोधक शब्द। पदसंयोज्य शब्द पदयोग्य शब्दोंके साथ जुड़कर पद बन जाते हैं लेकिन पदायोग्य शब्द कभी भी पद नहीं बन सकते क्योंकि अन्य शब्दोंके साथ वे जुड़ ही नहीं सकते। इस प्रसंगमें कहा जा सकता है कि विस्मयादिबोधक शब्द भावोंको व्यक्त करने वाली ध्वनियां मात्र होती हैं और दूसरे शब्दोंके साथ नहीं जुड़ सकते। कुछ वैयाकरण इन ध्वनियोंको शब्द-विभागोंमें शामिल ही नहीं करते।

टिप्पणी. क्या पद-प्रकरण तर्कशास्त्रका अंग है ?

तर्कशास्त्रमें पदोंका स्थान।

कभी-कभी यह सवाल पूछा जाता है कि पद-प्रकरण तर्कशास्त्रका अंग है या नहीं। इसका जवाब निश्चय ही 'हां' में है। यह सही है कि तर्कशास्त्रका मुख्य सम्बन्ध तर्कसे है, लेकिन भाषामें प्रकट किये जाने पर तर्क अनिवार्यतः वाक्योंके रूपमें होता है और पद वाक्यके आवश्यक अंग होते हैं। अतः तर्कका विचार करनेमें तर्कशास्त्रको अनिवार्य रूपसे वाक्यों और पदोंका विचार करना पड़ता है। वास्तवमें तर्कका विचार उसके घटकों (constituents), पदों और वाक्योंके विचारसे शुरू होता है।

भाग २. पदोंका निर्देश (या विस्तार) और स्वभाव (या अभिप्राय).

पदका निर्देश वस्तुओंसे और स्वभाव गुणोंसे बनता है।

ज्यादातर पदोंके एक साथ दो अर्थ होते हैं जिनमेंसे एकको निर्देश (denotation) कहते हैं और दूसरेको स्वभाव (connotation)। **किसी पदका निर्देश उस वस्तु या वस्तुओंसे बनता है जिन पर वह लागू होता है, जबकि उसका स्वभाव उस गुण या गुणोंके समूहसे** बनता है जो उसमें गर्भित रहते हैं। इस प्रकार एक पद वस्तुओं का निर्देश करता है और गुणोंसे उसका स्वभाव बनता है। उदाहरण

के लिये, "मनुष्य" पद उन सभी चीज़ोंका निर्देश करता है जिन पर यह लागू होता है अर्थात् "सब मनुष्यों" का, जबकि इसके स्वभावमें "प्राणित्व" और "बुद्धिमत्ता" नामक गुण आते हैं जो सभी मनुष्योंमें समान रूपसे पाये जाते हैं। इसी तरह "त्रिभुज" पदका निर्देश "सब त्रिभुजों" से बनता है और इसका स्वभाव सभी त्रिभुजोंमें समान रूपसे पाये जानेवाले और आवश्यक गुणसे बनता है जो एक समतलाकृति का तीन सीधी रेखाओंसे घिरे हुए होनेका गुण है। "सूर्य" पदका निर्देश केवल एक ही चीज़से बनता है जबकि इसके स्वभावमें वे सभी गुण आ जाते हैं जो सूर्यमें होते हैं और "सूर्य" कहनेमें जिनकी ओर हमारा संकेत होता है।

'निर्देश' शब्दको 'विस्तार' भी कहते हैं और 'स्वभाव' को 'अभिप्राय'। अंग्रेज़ी में Extension, Extent, Breadth, Scope, Domain इत्यादि शब्द 'निर्देश' के पर्याय हैं और Intention, Intent, Depth, Comprehension इत्यादि स्वभावके पर्याय।

अब सवाल यह है कि पदके निर्देश और स्वभावमें क्या सम्बन्ध है?

निर्देश और स्वभाव विपरीत दिशाओंमें घटते-बढ़ते हैं।

कहा गया है कि **पदका निर्देश और स्वभाव परस्पर विपरीत दिशाओं में घटते-बढ़ते हैं।** इसका मतलब यह है कि अगर एक घटता है तो दूसरा बढ़ता है और अगर एक बढ़ता है तो दूसरा घटता है। इस प्रकार:—

(१) यदि निर्देश बढ़ता है तो स्वभाव घटता है;
(२) यदि निर्देश घटता है तो स्वभाव बढ़ता है;
(३) यदि स्वभाव बढ़ता है तो निर्देश घटता है;
(४) यदि स्वभाव घटता है तो निर्देश बढ़ता है।

उदाहरण:

उदाहरणार्थ: "मनुष्य" पदके निर्देशमें सब मनुष्य आते हैं और इसके स्वभावमें "प्राणित्व" और "बुद्धिमानी" नामक समान और आवश्यक गुण।

अब अगर हम "मनुष्य" पद के निर्देशमें सब प्राणियोंको जोड़कर

('मनुष्य' का निर्देश + सब अन्य प्राणी = सब प्राणी) उसे बढ़ा दें तो उसके स्वभावमें केवल 'प्राणित्व' नामक गुण ही आयेगा ('मनुष्य' पदका स्वभाव – 'बुद्धिमानी' = प्राणित्व)। इस प्रकार निर्देशके बढ़ने से स्वभाव घट गया।

फिर, अगर हम 'मनुष्य' पदका निर्देश 'असभ्य मनुष्यों' को निकाल कर घटा दें ('मनुष्य' का निर्देश—असभ्य मनुष्य = सभ्य मनुष्य) तो उसका स्वभाव 'सभ्य' नामक गुणके जुड़नेसे बढ़ जायेगा ('मनुष्य' का स्वभाव + सभ्य होनेका गुण = 'सभ्य मनुष्य' का स्वभाव)। इस प्रकार निर्देशके घटनेसे स्वभाव बढ़ गया।

फिर, अगर हम 'ईमानदारी' नामक गुणको जोड़कर 'मनुष्य' पद का स्वभाव बढ़ा दें ('मनुष्य' का स्वभाव + ईमानदारी = प्राणित्व + बुद्धिमानी + ईमानदारी) तो उसका निर्देश घट जायेगा और उसमें केवल ईमानदार मनुष्य ही रह जायेंगे, सब मनुष्य नहीं ('मनुष्य' का निर्देश—जो मनुष्य ईमानदार नहीं हैं = ईमानदार मनुष्य)। इस प्रकार स्वभावके बढ़नेसे निर्देश घट गया।

अन्त में, अगर हम 'बुद्धिमानी' नामक गुणको निकालकर 'मनुष्य' पदके स्वभावको घटा दें ('मनुष्य' का स्वभाव—बुद्धिमानी = प्राणित्व) तो निर्देश बढ़ जायेगा क्योंकि शेष गुण 'प्राणित्व' केवल मनुष्यों में ही नहीं होता बल्कि सभी प्राणियोंमें होता है ('मनुष्य' का निर्देश + सब अन्य प्राणी = सब प्राणी)। इस प्रकार स्वभावके घटनेसे निर्देश बढ़ गया।

पदोंके निर्देश और स्वभावके विपरीत दिशाओंमें घटने-बढ़नेके सम्बन्धको सबसे अच्छी तरह पदोंकी एक सम्बन्धित श्रृंखलाको लेकर समझा जा सकता है :— सम्बन्धित श्रृंखला।

आकृति, समतलाकृति, सीधी रेखाओंवाली समतलाकृति, चतुर्भुज, समानान्तर चतुर्भुज, समकोण चतुर्भुज, और वर्ग।

इस श्रृंखलामें पहिले पद 'आकृति' का सबसे अधिक निर्देश है लेकिन

इसका स्वभाव सबसे छोटा है। जैसे-जैसे हम आगे बढ़ते हैं हम देखते हैं कि निर्देश घटता जाता है और स्वभाव बढ़ता जाता है। और अन्तमें हम 'वर्ग' पद पर आते हैं जिसका निर्देश सबसे छोटा और स्वभाव सबसे बड़ा है। इस प्रकार यह श्रृंखला निर्देशके घटनेके साथ स्वभावके बढ़नेका उदाहरण है। निर्देशके बढ़नेके साथ स्वभावके घटनेकी प्रक्रियाको नीचे दी हुई श्रृंखलामें देखा जा सकता है :—

मनुष्य, पशु, जीवित वस्तु, भौतिक वस्तु, वस्तु।

जाति और उपजाति।

जाति (Genus) और उपजाति (Species). जब वर्गोंका निर्देश करनेवाले दो पद एक-दूसरेसे इस तरह सम्बन्धित होते हैं कि उनमेंसे एकके निर्देशमें दूसरेका निर्देश शामिल रहता है, तब अधिक विस्तृत निर्देशवाले पदको जाति और कम विस्तृत निर्देशवाले पद को उपजाति कहते हैं। उदाहरणके लिये, 'पशु' पद 'मनुष्य' पदकी तुलनामें जाति है और 'मनुष्य' पद 'पशु' पदकी तुलनामें उपजाति है। स्पष्ट है कि यह पदोंके निर्देश और स्वभावके विपरीत दिशाओं में घटने-बढ़नेका भी उदाहरण है। 'पशु' जातिका निर्देश 'मनुष्य' उपजातिके निर्देश से बड़ा है जबकि जातिका स्वभाव अर्थात् 'पशुत्व' उपजातिके स्वभाव अर्थात् पशुत्व और बुद्धिमानीसे छोटा है। (देखिये अध्याय ४।)

निर्देश और स्वभावके उपर्युक्त सम्बन्धको ठीक-ठीक समझनेमें नीचे लिखी बातोंको ध्यानमें रखना चाहिए :—

निर्देश या स्वभावको घटाने या बढ़ानेसे एक नया पद बन जाता है।

(क) सबसे प्रथम यह ध्यान रखना चाहिए कि जब हम किसी पदके निर्देश या स्वभावको घटाते या बढ़ाते हैं तब वह पद वही नहीं रहता बल्कि एक दूसरा पद हो जाता है। उदाहरणके लिये, अगर हम 'ईमानदारी' नामक गुणको जोड़ कर 'मनुष्य' पदके स्वभावको बढ़ा दें तो यह पद एक दूसरा पद अर्थात् 'ईमानदार मनुष्य' बन जाता है, और तब पुराने पदके निर्देशसे जिस पदका निर्देश कम होता है वह यही नया पद है। इसी तरह अगर हम 'बुद्धिमानी' गुणको निकाल

कर 'मनुष्य' पदका स्वभाव घटा दें तो यह एक नया पद अर्थात् 'पशु' बन जाता है, और तब पुराने पदके निर्देशसे बड़ा इस नये पदका निर्देश होता है।

इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि अगर हम किसी पदके स्वभाव में एक ऐसा गुण जोड़ें जो उस पदके द्वारा निर्दिष्ट वर्गकी सभी चीज़ों में पाया जाता है या जो उस पदके स्वभावका परिणाम है, तो वह पद नहीं बदलता और इस तरहसे उसका निर्देश नहीं घटता। उदाहरणार्थ, 'त्रिभुज' पदका स्वभाव है तीन सीधी रेखाओंसे घिरी हुई समतलाकृति होनेका गुण। अगर हम इसमें तीन कोणोंवाला होनेका गुण और जोड़ दें, तो 'त्रिभुज' पदके निर्देशमें कोई घटती नहीं होती, क्योंकि जो गुण उसके स्वभावमें जोड़ा गया है वह सभी त्रिभुजोंमें पाया जाता है और उसे 'त्रिभुज' पदके स्वभावका परिणाम कहा जा सकता है। इस प्रकार निर्देश और स्वभावके विपरीत दिशाओंमें घटने-बढ़नेका नियम केवल तभी सही होता है जब घटने या बढ़नेसे एक नया पद बन जाता है।

वृद्धि या ह्रास का हमारे ज्ञान की वृद्धि या ह्रास से कोई सम्बन्ध नहीं है।

(ख) दूसरी ध्यान देनेकी बात यह है कि किसी पदके निर्देश या स्वभावका घटना-बढ़ना और किसी व्यक्तिके उसके निर्देश या स्वभाव के विषयमें ज्ञानका घटना-बढ़ना एक ही बात नहीं है। किसी पदके निर्देश या स्वभावके बारेमें एक आदमीकी जानकारी घट-बढ़ सकती है, लेकिन इससे उस पदके निर्देश या स्वभाव पर कोई असर नहीं होता। उदाहरणके लिये, जब कोलम्बस ने अमेरिकाकी खोज की तब 'महाद्वीप' पदके निर्देशके बारेमें हमारा ज्ञान बढ़ा लेकिन स्वयं इस पदके निर्देश में कोई वृद्धि नहीं हुई और इसलिए इसके स्वभावमें कोई कमी नहीं हु ई। इसी तरह अगर ज्ञानकी वृद्धिसे यह पता लगे कि किसी पदके स्वभावका पहिले अंग माना जानेवाला गुण वस्तुत: उसका अंग नहीं है या पहिले उसका अंग न माना जानेवाला गुण वस्तुत: उसका अंग है, तो पदके निर्देश में कोई परिवर्तन नहीं होगा।

(ग) अन्तमें, विपरीत दिशाओंमें घटने-बढ़नेका सम्बन्ध गणित-

वृद्धि और ह्रासमें कोई निश्चित अनुपात नहीं होता।

शास्त्रीय नहीं है। एक अर्थकी वृद्धि और दूसरे अर्थके ह्रासकी मात्राओंमें कोई निश्चित अनुपात नहीं होता। अगर हम 'मनुष्य' पद के स्वभावमें 'सफ़ेदी' का गुण जोड़ दें तो निर्देशमें सफ़ेद मनुष्य रहेंगे जो कि शायद पृथ्वीकी आबादीके दो-तिहाई हैं। लेकिन अगर हम 'अन्धेपन' का गुण जोड़ें तो निर्देशमें अन्धे मनुष्य रहेंगे जो कि आबादी का एक छोटा-सा अंश है। इस प्रकार यद्यपि दोनों दृष्टान्तोंमें एक ही गुण जोड़ा गया है तथापि दूसरे दृष्टान्तमें पहिलेकी अपेक्षा निर्देश बहुत घटा है।

व्यक्तिगत (Subjective), वस्तुगत (Objective) और तार्किक (Logical) स्वभाव. "स्वभाव" शब्दको तीन भिन्न-भिन्न अर्थोंमें लिया गया है: व्यक्तिगत अर्थमें, वस्तुगत अर्थमें और तार्किक अर्थमें। किसी पदके **व्यक्तिगत स्वभाव** में वे सब गुण आते हैं जो उसको सुनकर किसी खास व्यक्तिको याद आते हैं **वस्तुगत स्वभाव** में वे सब गुण आते हैं जो उस पदके द्वारा निर्दिष्ट वस्तुओंमें वस्तुतः रहते हैं, चाहे वे हमें ज्ञात हों या ज्ञात न हों। **तार्किक स्वभाव** में वे गुण आते हैं जो उस पदके द्वारा निर्दिष्ट वस्तुओंके वज्ञानिक छानबीनसे आवश्यक गुण सिद्ध हो चुके हैं। इस प्रकार व्यक्तिगत स्वभाव व्यक्ति के ज्ञान पर निर्भर होनेके कारण परिवर्तनशील होता है और वस्तुगत स्वभाव बिल्कुल निश्चित होता है, लेकिन तार्किक स्वभावकी इनके बीच की स्थिति होती है। तार्किक स्वभाव अपेक्षाकृत स्थायी होता है अर्थात् जब तक वैज्ञानिक ज्ञानकी स्थिति स्थायी रहती है तब तक वह स्थायी रहता है। इसमें सन्देह नहीं है कि वैज्ञानिक ज्ञानकी प्रगतिके साथ तार्किक स्वभाव बदल सकता है, लेकिन इस तरहकी तबदीली व्यक्ति की मनोदशा पर निर्भर नहीं होती। आकारविषयक तर्कशास्त्रमें हमारा सम्बन्ध व्यक्तिगत या वस्तुगत स्वभाव से नहीं है बल्कि केवल तार्किक स्वभावसे होता है जिसे रूढ़ स्वभाव (conventional connotation) भी कहते हैं।

भाग ३. पदोंके विभाग.

कुछ तर्कशास्त्री पदोंको एकार्थक (univocal) और अनेकार्थक (equivocal) में बांटते हैं। जेवोन्स कहता है : "पदोंको एकार्थक तब कहते हैं जब उनका केवल एक निश्चित अर्थ होता है। उनको अनेकार्थक तब कहते हैं जब उनके दो या अधिक अर्थ होते हैं।" उदाहरणके लिये, इस विभाजनके अनुसार भापका इंजन, रेलगाड़ी इत्यादि एकार्थक पद हैं क्योंकि इनका केवल एक अर्थमें इस्तेमाल हो सकता है; जबकि पद, द्विज इत्यादि अनेकार्थक हैं क्योंकि इनके एकसे अधिक अर्थ हैं। एकार्थक और अनेकार्थक शब्द।

लेकिन अगर ठीक-ठीक कहा जाय तो ये पदोंके विभाग नहीं हैं बल्कि शब्दोंके विभाग हैं। शब्दोंका एक अर्थ हो सकता है और एकसे अधिक भी। पहिली दशा में वे एकार्थक हैं और दूसरी दशा में अनेकार्थक। लेकिन तर्कशास्त्रमें कोई भी पद एकसे अधिक अर्थ नहीं रख सकता। तादात्म्यके नियमके अनुसार अगर किसी पदका एक अर्थमें इस्तेमाल होता है तो पूरी युक्तिमें उसका केवल उसी अर्थमें इस्तेमाल हो सकता है। जब किसी शब्दके एकसे अधिक अर्थ होते हैं तब वह उतने ही पदोंके बराबर होता है जितने उसके अर्थ हैं। यह पदोंका विभाजन नहीं है बल्कि शब्दों का है।

अलग-अलग तर्कशास्त्रियोंने पदोंके अलग-अलग विभाग बताये हैं। हम नीचे लिखे विभागोंका विचार करेंगे :— पदोंके विभिन्न विभाग।

(क) एकशब्दात्मक (simple) या अनेकशब्दात्मक (composite);
(ख) एकवाचक (singular) या जातिवाचक (general);
(ग) समूहवाचक (collective) या अ-समूहवाचक; Non-Collective
(घ) वस्तुवाचक (concrete) या गुणवाचक (abstract)
(ङ) विधिवाचक (positive), निषेधवाचक (negative) या राहित्यवाचक (privative);

(च) निरपेक्ष (absolute) या सापेक्ष (relative), और
(छ) स्वभाववाचक (connotative) या अ-स्वभाववाचक (non-connotative)।

ऊपर उल्लिखित विभागोंमें से प्रत्येक स्वतंत्र है और प्रत्येक पदको इनमें से एक या दूसरे शीर्षकके अन्तर्गत आना चाहिए। किसी पदकी विशेषताको निश्चित करनेके लिये हमें यह दिखाना चाहिए कि उपर्युक्त वर्गोंमें से किस-किसमें वह आता है अर्थात् हमें कहना चाहिए कि वह एकशब्दात्मक है या अनेकशब्दात्मक, व्यक्तिवाचक है या जातिवाचक इत्यादि। अब हम प्रत्येक विभागको विस्तारसे समझायेंगे।

(क) एकशब्दात्मक और अनेकशब्दात्मक पद.

एकशब्दात्मक पदमें एक शब्द होता है और अनेकशब्दात्मक पद में एकसे अधिक शब्द।

कोई पद एक शब्दसे बना हो सकता है या कई शब्दों से। **जब वह केवल एक शब्दका होता है तब उसे एकशब्दात्मक कहते हैं** जैसे, मनुष्य, विद्यार्थी, कालेज इत्यादि। दूसरी ओर, **जब पद कई शब्दोंके योगसे बनता है तब उसे अनेकशब्दात्मक कहते हैं**, जैसे, यह मनुष्य, एक बुद्धिमान् विद्यार्थी, टाउन कालेज इत्यादि।

स्पष्ट है कि अनेकशब्दात्मक पदमें कुछ पदयोग्य शब्द होते हैं, ऐसे शब्द जो अकेले पद बननेकी योग्यता रखते हैं और कुछ पदसंयोज्य शब्द, ऐसे शब्द जो स्वयं पद नहीं बन सकते। उदाहरणार्थ 'कलकत्ते का कालेज' पदमें कलकत्ता और कालेज पदयोग्य शब्द हैं और का पदसंयोज्य।

(ख) एकवाचक और जातिवाचक पद.

एकवाचक पद केवल एक वस्तुका निर्देश करता है जब कि

एकवाचक पद वह है जो एक ही अर्थमें इस्तेमाल होने पर एक अकेली वस्तुका निर्देश करता है। उदाहरणके लिये, "कलकत्ता", "विलियम शेक्सपीयर", "गंगा", "दुनियाका सबसे ऊंचा पहाड़", "यह मनुष्य" ये सब पद एकवाचक हैं क्योंकि इनसे केवल एक वस्तु या

व्यक्तिका बोध होता है। दूसरी ओर, **जातिवाचक पद वह है जो कुछ आवश्यक गुणोंकी दृष्टिसे आपसमें सादृश्य रखनेवाली वस्तुओंकी एक अनिश्चित संख्यामें से किसी एक पर उसी अर्थमें लागू हो सकता है**, जैसे, मनुष्य, पुस्तक, विद्यार्थी इत्यादि।

जातिवाचक पद वस्तुओं की एक बड़ी संख्यामें से किसी एक का।

इस प्रकार 'यह मनुष्य' पद एकवाचक है क्योंकि यह एक ही मनुष्य पर लागू होता है जबकि 'मनुष्य' पद जातिवाचक है क्योंकि उसी अर्थमें यह मनुष्य नामक व्यक्तियोंकी एक अनिश्चित संख्यामें से किसी एक पर लागू हो सकता है, इस तथ्यके कारण कि सभी मनुष्यमें कुछ आवश्यक गुण समान होते हैं।

यह ध्यान रखना चाहिए कि जातिवाचक पद वस्तुओंकी एक अनिश्चित संख्यामें से किसी एक पर लागू अपनी इच्छानुसार नहीं किया जा सकता बल्कि इस कारण कि उन सबके अन्दर कुछ आवश्यक गुण समान होते हैं। इस प्रकार जातिवाचक पद केवल वस्तुओंका निर्देश ही नहीं करता बल्कि उनमें पाये जानेवाले समान और आवश्यक गुण भी बताता है अर्थात् उसका स्वभाव भी होता है। वह केवल कुछ वस्तुओं का ही बोध नहीं कराता बल्कि यह भी बताता है कि उन वस्तुओंमें कोई समानता है। इस समानताके कारण उन वस्तुओंका एक वर्ग बन जाता है और इसलिए जातिवाचक पदको वर्गवाचक (class term) भी कहते हैं।

एकवाचक पदोंके दो वर्ग।

एकवाचक पदोंको तर्कशास्त्रियोंने दो उपविभागोंमें बांटा है, अर्थात् (१) सार्थक एकवाचक पद, और (२) निरर्थक एकवाचक पद या व्यक्तिवाचक नाममें।

सार्थक, और

(१) सार्थक एकवाचक पद किसी एक वस्तुकी ऐसी विशेषताकी ओर संकेत करके जो दूसरोंमें नहीं पाई जाती उसका निर्देश करता है। उदाहरणार्थ, 'दुनियाका सबसे ऊंचा पहाड़' पद सार्थक एकवाचक है क्योंकि यह एक खास पहाड़का निर्देश करता है, इसलिए कि उसमें दुनिया में सबसे ऊंचा होनेकी विशेषता मौजूद है जो दूसरे पहाड़ोंमें नहीं है।

व्यक्तिवाचक नाम।

(२) दूसरी ओर, निरर्थक एकवाचक पद या व्यक्तिवाचक नाम वे एकवाचक पद हैं जो किसी गुणका बोध नहीं कराते। प्रायः सभी तर्कशास्त्री यह मानते हैं कि व्यक्तिवाचक नाम निरर्थक होते हैं अर्थात् उनका कोई स्वभावार्थ नहीं होता। व्यक्तिवाचक नाम केवल प्रतीक होते हैं जो किसी व्यक्ति, स्थान, वस्तु या घटनाका निर्देश करते हैं लेकिन यह बोध नहीं कराते कि उनके द्वारा निर्दिष्ट वस्तुओंमें कोई खास गुण है। उदाहरणके लिये, व्यक्तिवाचक नाम 'राम' एक व्यक्तिका निर्देश करता है लेकिन कोई गुण नहीं बताता; यह कई व्यक्तियोंका नाम हो सकता है लेकिन इसलिए नहीं कि उनमें कोई समान गुण है; वास्तवमें यह एक कुत्तेका भी नाम हो सकता है और एक घोड़ेका भी।

(ग) समूहवाचक और अ-समूहवाचक पद: पदोंका समष्टचर्थ और व्यष्टचर्थमें प्रयोग (Collective and Distributive use).

समूहवाचक पद।

समूहवाचक पद वह है जो आपसमें समानता रखनेवाली वस्तुओं के एक समूहमें से प्रत्येकका अलग-अलग नहीं बल्कि सबका इकट्ठा नाम होता है। इस प्रकार एक समूहवाचक पद (अ) अलग-अलग इकाइयों की एक संख्याका (ब) जो कि किसी समानताके कारण एक समूह बनाते हैं, बोध कराता है। उदाहरणके लिये, सेना, नौसेना, रेजीमेन्ट, पुस्तकालय, इत्यादि समूहवाचक पद हैं। 'सेना' पद समूहवाचक है क्योंकि यह सिपाहियोंकी एक संख्याका बोध कराता है, प्रत्येक सिपाही का अलग-अलग नहीं बल्कि उनके समूहका।

अ-समूहवाचक पद।

साधारण बोलचालमें समूहवाचक पद, जैसा कि ऊपर परिभाषित किया गया है, के विरोधी पदके लिये किसी स्पष्ट नामका प्रयोग नहीं होता। इसलिए जो पद समूहवाचक नहीं हैं उनको हम सिर्फ़ अ-समूहवाचक कहेंगे। कॉफ़े (Coffey) ने समूहवाचक पदके विरोधी पदको "unitary term" (ऐकिक पद) कहा है। अ-समूहवाचक या ऐकिक पदमें किसी समूहका संकेत नहीं होता।

यह ध्यान रखना चाहिए कि समूहोंकी एक बहुत छोटी संख्याके लिये ही भाषामें विशेष सामूहिक नाम हैं। जिन समूहोंके सामूहिक नाम नहीं हैं उनका बोध करानेके लिये हम "सब" शब्दकी मदद लेते हैं जिसका मतलब होता है "सब इकट्ठे"। उदाहरणार्थ, अगर हम कहें कि "त्रिभुजके सब कोण तीन समकोणके बराबर होते हैं" तो हम इस वाक्यके उद्देश्यको समष्टि या समूहके अर्थमें इस्तेमाल कर रहे हैं जिसका मतलब है "सब कोण मिलकर या इकट्ठे"। लेकिन अगर हम कहें कि "त्रिभुजके सब कोण दो समकोणसे कम होते हैं" तो हम उद्देश्य-पदको व्यष्टिके अर्थमें इस्तेमाल कर रहे हैं जिसका मतलब है "सब कोण अलग-अलग" इकट्ठे नहीं। **पदोंके समष्टचर्थ और व्यष्टचर्थमें प्रयोग का** यही मतलब है। पदों का समष्टचर्थ और व्यष्टचर्थ में प्रयोग।

समूहवाचक पद एकवाचक हो सकते हैं या जातिवाचक। कोई समूहवाचक पद एकवाचक तब होता है जब वह केवल एक ही समूहका बोध कराता है, जैसे, अंग्रेज़ राष्ट्र, कलकत्ते की इम्पीरियल लाइब्रेरी, ४९ वीं बंगाल रेजीमेन्ट। कोई समूहवाचक पद जातिवाचक तब होता है जब वह विभिन्न समूहोंमें से किसी एकका बोध कराता है, जैसे रेजीमेन्ट, लाइब्रेरी इत्यादि। 'लाइब्रेरी' (पुस्तकालय) पद जातिवाचक है क्योंकि यह पुस्तकोंके किसी खास समूहकी ओर संकेत नहीं करता बल्कि दुनिया भरमें लाइब्रेरियोंकी जितनी अनिश्चित संख्या है उसमें से किसी भी एक का बोध कराता है। समूहवाचक पद एकवाचक या जातिवाचक होते हैं।

(घ) वस्तुवाचक और गुणवाचक पद.

पदोंका एक और विभाजन है वस्तुवाचक और गुणवाचकमें। **वस्तुवाचक पद किसी वस्तुका नाम होता है जबकि गुणवाचक पद वस्तु से पृथक् किये हुए किसी गुण (या गुणोंके समूह) का नाम होता है।** जैसे, मनुष्य, पुस्तक, कालेज, त्रिभुज इत्यादि वस्तुवाचक पद हैं क्योंकि ये वस्तुओंका निर्देश करते हैं; जबकि मनुष्यता, सफ़ेदी, सच्चरित्रता वस्तुवाचक और गुणवाचक पद।

इत्यादि गुणवाचक पद हैं क्योंकि ये गुणोंका बोध कराते हैं।

"वस्तु" से हमारा मतलब है किसी भी ऐसी चीज़से जो गुणोंसे युक्त हो। वस्तुका हमेशा कोई गुण होता है और गुण हमेशा वस्तुओंमें रहते हैं। ये एक-दूसरेसे अलग नहीं रह सकते। फिर भी हमारे लिये गुणकी जिस वस्तुमें वह रहता है उससे पृथक् कल्पना करना सम्भव है और गुणवाचक पद ऐसे ही गुणका नाम होता है।

वस्तुवाचक और गुणवाचक पदों के जोड़े।

वस्तुवाचक और गुणवाचक पद प्राय: जोड़ोंमें होते हैं। इस प्रकार: मनुष्य—मनुष्यता, पशु—पशुत्व, कंजूस—कंजूसी, बूढ़ा—बुढ़ापा, द्रव्य—द्रव्यत्व, बलवान्—बलवत्ता, वर्ग—वर्गत्व, चेतन—चेतना, थका हुआ—थकावट, इत्यादि। फिर भी यह ध्यान रखना चाहिए कि हरेक वस्तुवाचक पदका गुणवाचक पद नहीं होता।

विशेषण गुणवाचक पद होते हैं।

यह ध्यान देनेकी बात है कि विशेषण वस्तुवाचक होते हैं, गुणवाचक नहीं। अगर हम कहें कि पुस्तक उपयोगी है, तो विशेषण 'उपयोगी' पुस्तक पर लागू होता है। इस विशेषणका गुण है उपयोगिता। इस प्रकार 'समान', 'अच्छा', 'कृतज्ञ', 'बुद्धिमान्' इत्यादि वस्तुओंके नाम हैं और इसलिए वस्तुवाचक हैं; इनके गुणवाचक नाम हैं 'समानता', 'अच्छाई', 'कृतज्ञता', 'बुद्धिमत्ता' इत्यादि।

एकवाचक और जातिवाचक गुणवाचक पद.

गुणवाचक पदोंका एकवाचक और जातिवाचक में विभाजन।

तर्कशास्त्रियोंमें इस सवालके ऊपर अत्यधिक मतभेद है कि गुणवाचक पदोंको एकवाचक और जातिवाचकमें बांटा जा सकता है या नहीं। इस विषयमें सभी प्रकारके मत पेश किये गये हैं। सबसे ज्यादा तर्कपूर्ण यह मत प्रतीत होता है कि गुणवाचक पदोंको एकवाचक और जातिवाचकमें बांटा जा सकता है।

जो गुणवाचक पद एक सरल गुणका नाम होता है वह एकवाचक है, क्योंकि यद्यपि वह गुण कई वस्तुओंमें पाया जा सकता है तथापि उसको हम एक और अविभाज्य समझते हैं। इस प्रकार यद्यपि वर्गाकार

चीजें अनेक होती हैं तथापि "वर्गत्व" का गुण केवल एक ही प्रकारका होता है और इसके विभिन्न प्रकारोंकी कल्पना करना असम्भव है। इसी तरह समानता, सचाई, न्याय इत्यादि गुणवाचक पद एकवाचक हैं।

कोई गुणवाचक पद जातिवाचक तब होता है जब वह गुणोंके एक समूहका नाम होता है, जैसे, रंग, सद्गुण इत्यादि। रंग विभिन्न प्रकार के होते हैं जैसे, सफ़ेदी, लालिमा, कालिमा इत्यादि और इसलिए गुणवाचक पद 'रंग' जातिवाचक है। इसी तरह सद्गुणके भी कई प्रकार हैं, जैसे, सचाई, दानशीलता, ईमानदारी, वीरता इत्यादि।

(ङ) विधिवाचक, निषेधवाचक और राहित्यवाचक पद.

विधिवाचक, निषेधवाचक और राहित्य-वाचक पद।

विधिवाचक पद किसी वस्तु या गुणकी उपस्थिति बताता है, जैसे, मनुष्य, प्रसन्न, प्रसन्नता, पीड़ा इत्यादि। **निषेधवाचक पद किसी वस्तु या गुणकी अनुपस्थिति बताता है,** जैसे, अ-मनुष्य, अ-मानवीय, अ-प्रसन्न इत्यादि। **राहित्यवाचक पद किसी गुणकी वर्तमान अनुपस्थिति बताता है लेकिन साथ ही वस्तुमें उसके होनेकी सामर्थ्य भी बताता है,** अर्थात् राहित्यवाचक पद यह बताता है कि एक वस्तु किसी गुणसे रहित हो गयी है यद्यपि पहिले उसमें वह गुण था या उसमें उस गुणसे युक्त होनेकी सामर्थ्य थी या साधारणतया उसमें वह गुण पाया जाता है, जैसे, अन्धा, बहरा, गूंगा, लंगड़ा, अज्ञ, इत्यादि। किसी आदमीको अन्धा इसलिए कहा जाता है कि यद्यपि वह दृष्टिसे रहित है तथापि उसके अन्दर ऐसा अंग मौजूद है जिससे वह देख सकता था बशर्ते कि वह दुर्घटनाका शिकार न हुआ होता। किसी पेड़को अन्धा नहीं कहा जाता क्योंकि किसी भी स्थितिमें उसके अन्दर देखनेकी शक्ति नहीं हो सकती। इस प्रकार राहित्यवाचक पद विधिवाचक और निषेधवाचक पदोंके बीचकी स्थिति रखते हैं। निषेधवाचक पदोंकी तरह वे किसी गुणका निषेध करते हैं और विधिवाचक पदोंकी तरह वे उस गुणको रखनेकी सामर्थ्य बताते हैं।

किसी पद की विशेषता उसके अर्थ से ज्ञात होती है। उसका आकार कभी-कभी भ्रामक होता है।

आम तौर पर निषेधवाचक पदोंके पहिले अ, अन, न, वि इत्यादि चिह्न होते हैं। लेकिन बहुतसे निषेधवाचक पदोंके पहिले निषेधका कोई चिह्न नहीं होता और बहुतसे पद ऐसे भी होते हैं कि यद्यपि उनके पहिले निषेधका चिह्न होता है तथापि वे निषेधवाचक नहीं होते। असलमें किसी पदका विधिवाचक, निषेधवाचक या राहित्यवाचक होना उसके आकार पर नहीं बल्कि अर्थ पर निर्भर होता है। इस तरह के पद जैसे, असुखकर (दु:खकर), अप्रिय (घृणित), अप्रसन्न (दु:खी), अज्ञानी (मूर्ख), असंख्य (बहुत बड़ी संख्यावाला), निर्दय (क्रूर) इत्यादि निषेधात्मक आकारवाले हैं लेकिन इनका अर्थ विधिवाचक है। दूसरी ओर, परदेशी (अपने देशका नहीं), संशय (विश्वास या अविश्वासका अभाव), आलस्य (सक्रियताका अभाव), अन्धेरा (प्रकाशका अभाव) इत्यादि पद आकारसे विधिवाचक मालूम पड़ते हैं लेकिन अर्थ इनका निषेधवाचक है।

राहित्यवाचक पदोंको हम उन वस्तुओं पर लागू करते हैं जो किसी गुणसे रहित हैं यद्यपि वे वस्तुएं उस गुणसे युक्त होनेकी सामर्थ्य रखती हैं और प्राय: उससे युक्त होती हैं, जबकि निषेधवाचक पद उन वस्तुओं पर लागू किये जाते हैं जिनमें वह गुण न था और न कभी हो सकता है। यहां पर यह कह देना चाहिए कि विशेषणोंको राहित्यवाचक और उनसे सम्बन्धित गुणवाचक पदोंको निषेधवाचक पद माना जा सकता है। इस प्रकार, 'अन्धा', 'बहरा', 'गूंगा', 'आलसी' इत्यादि पद राहित्यवाचक हैं क्योंकि ये उन व्यक्तियोंकी ओर संकेत करते हैं जिनमें एक गुणका अभाव है यद्यपि उनके अन्दर उस गुणसे युक्त होनेकी सामर्थ्य है; लेकिन 'अन्धापन', 'बहरापन', 'गूंगापन', 'आलस्य' इत्यादि गुणवाचक पद निषेधवाचक हैं, क्योंकि इनसे दृष्टिका अभाव, श्रवणशक्तिका अभाव, वाणीका अभाव, सक्रियताका अभाव इत्यादि प्रकट होता है।

जब कोई निषेधवाचक पद अपने विधिवाचक पदका पूरा-पूरा व्याघातक होता है तब उसे अपरिमित पद (infinite) कहते हैं

क्योंकि उस दशामें वह अपने विधिवाचक पदके अलावा बाक़ी सभी पदोंको अपनेमें समाविष्ट करता है। इस प्रकार "अ-श्वेत" "श्वेत" के अलावा बाक़ी सभी चीज़ोंका निर्देश करता है। इसका क्षेत्र लगभग अपरिमित या असीम है। **अरस्तू** ने इस प्रकारके पदोंके इस्तेमालका विरोध किया था, इस आधार पर कि ये अत्यधिक अनिश्चित होते हैं।

टिप्पणी: पदोंमें विरोध: व्याघातक और विपरीत पद (Contradictory and Contrary Terms).

विरुद्ध पद। ऐसे पद जो एक ही उद्देश्यमें साथ-साथ न रह सकनेवाले गुणोंका बोध कराते हैं **विरुद्ध** या **असंगत** (**opposite** or **incompatible**) पद कहलाते हैं। इनको (१) व्याघातक और (२) विपरीत पदोंमें विभक्त किया जा सकता है।

व्याघातक पद। (१) जब दो पद परस्पर व्यावर्तक होते हैं और समग्र निर्देशको निःशेष कर देते हैं तब उनको **व्याघातक पद** कहा जाता है। उदाहरण के लिये, "श्वेत" और "अ-श्वेत" पद व्याघातक हैं क्योंकि ऐसी कोई चीज़ सम्भव नहीं है जिसमें ये दोनों गुण एक साथ पाये जायं और ये मिलकर सभी तरहके रंगोंको निःशेष कर देते हैं अर्थात् सभी तरहके रंग इनमें आ जाते हैं।

विपरीत पद। (२) जब दो पद इस तरहके होते हैं कि जिस क्षेत्रमें उनको लागू किया जाता है उसके अन्दर उनके द्वारा निर्दिष्ट वस्तुओंमें अधिक से अधिक वैषम्य होता है, तब उन्हें **विपरीत** पद कहते हैं। उदाहरण के लिये, "काला" और "सफ़ेद" ये दो पद विपरीत हैं क्योंकि रंगके क्षेत्रमें ये अन्तरकी अधिकतम मात्रा प्रकट करते हैं। इसी तरह "बुद्धिमान्" और "मूर्ख", "सबल" और "निर्बल", "प्रसन्न" और "दुःखी" ये विपरीत पदोंके जोड़े हैं।

विपरीत और व्याघातक पदोंमें समानता यह है कि इनमेंसे कोई भी एक वस्तुके बारेमें एक ही साथ सही नहीं हो सकते। कोई

भी वस्तु एक ही समय काली और सफ़ेद नहीं हो सकती (विपरीत पद); और न कोई वस्तु एक ही साथ श्वेत और अश्वेत (व्याघातक पद) हो सकती है। दोनोंमें भेद यह है कि विपरीत पद एक वस्तुके बारेमें एक साथ असत्य हो सकते हैं जबकि व्याघातक पद एक वस्तुके बारेमें एक साथ असत्य नहीं हो सकते। हो सकता है कि एक चीज़ न काली हो न सफ़ेद, लेकिन यह नहीं हो सकता कि न वह श्वेत हो न अश्वेत। व्याघातक पदोंके बीच कोई स्थिति सम्भव नहीं है, कोई भी चीज़ या तो एक होगी या दूसरी; लेकिन विपरीत पदोंके बीचमें कई दशाएं सम्भव हैं। उदाहरणके लिये "सफ़ेद" और "काला" के अतिरिक्त नीला, पीला, हरा इत्यादि कई रंग होते हैं। (देखिए, अध्याय २, व्याघात और मध्यदशा-परिहारके नियम)।

बिपरीत पद एक साथ असत्य हो सकते हैं लेकिन व्याघातक पद नहीं।

(च) निरपेक्ष और सापेक्ष पद.

निरपेक्ष पद किसी वस्तु या गुणका नाम होता है जिसका अर्थ स्वयं उससे ही समझमें आ सकता है और जो अपनेसे बाहर किसी अन्य वस्तु या गुणकी ओर संकेत नहीं करता। उदाहरणके लिये, पेड़, पुष्प, घोड़ा, सोना इत्यादि पद निरपेक्ष हैं।

निरपेक्ष पद किसी अन्य चीज़की ओर संकेत नहीं करता।

दूसरी ओर, सापेक्ष पद एक ऐसा नाम होता है जो केवल किसी अन्य चीजसे सम्बन्ध रखनेसे ही सार्थक होता है। सापेक्ष पद किसी ऐसी चीजका निर्देश करता है जिसे किसी दूसरी चीज़से जोड़े बग़ैर सोचा ही नहीं जा सकता अर्थात् जिसे एक बड़ी समष्टिके अंगके रूप में ही सोचा जा सकता है। इस प्रकार 'पिता' का विचार 'पुत्र' का विचार किये बिना सम्भव नहीं है। इसी तरह 'गुरू' 'शिष्य' का सापेक्ष है, 'कारण' 'कार्य' का, 'पति' 'पत्नी' का, 'राजा' 'प्रजा' का, 'शासक' 'शासित' का, 'बड़ा' 'छोटा' का, 'उत्तर' 'दक्षिण' का, 'संरक्षक' 'संरक्षित' का इत्यादि।

सापेक्ष पद किसी अन्य चीजकी ओर संकेत करता है।

सापेक्ष पद जोड़ोंमें रहते हैं और इन जोड़ोंमें से प्रत्येक पदको

दूसरेका प्रतियोगी (correlative) कहते हैं। कुछ दृष्टान्तोंमें दोनों प्रतियोगियोंका एक ही नाम होता है, जैसे, साथी-साथी, मित्र-मित्र, इत्यादि। अन्य दृष्टान्तोंमें प्रतियोगी अलग-अलग नाम रखते हैं, जैसे, पिता—पुत्र, पति—पत्नी इत्यादि। लेकिन ये हमेशा जोड़ोंमें रहते हैं और उनके नामोंका आधार एक ही तथ्य होता है। दोनों प्रतियोगी पदोंका आधार जो तथ्य होता है उसे सम्बन्धाधार (fundamentum relationis) कहते हैं। उदाहरणके लिये पति-पत्नीके दृष्टान्तमें विवाह सम्बन्धाधार है।

सापेक्ष पद जोड़ों में रहते हैं।

यह सही है कि दुनियामें कोई भी चीज़ अन्य चीज़ोंसे पूर्णतया स्वतंत्र नहीं है। सच तो यह है कि हरेक चीज़का किसी अन्य चीज़से कोई न कोई सम्बन्ध होना चाहिए। सभी चीज़ोंका आदि और अन्त होता है और अपने अस्तित्वके कालमें अन्य चीज़ोंसे प्रभावित होती रहती हैं। अतः वे पूर्णतया स्वतंत्र नहीं हैं और इस दृष्टिसे प्रत्येक पद सापेक्ष कहा जा सकता है। लेकिन तर्कशास्त्रमें 'सापेक्ष' शब्द इस अर्थ में इस्तेमाल नहीं होता। तर्कशास्त्रमें केवल उन्हीं पदोंको सापेक्ष माना जाता है जिनके बीच कोई विलक्षण और महत्त्वपूर्ण सम्बन्ध होता है—यह सम्बन्ध इतना घनिष्ठ होता है कि दोनों पदोंमें से किसी भी एकको दूसरेकी मददके बिना नहीं समझा जा सकता।

'सापेक्ष' शब्दका तर्कशास्त्र में अर्थ।

(छ) स्वभाववाचक और अ-स्वभाववाचक पद.

स्वभाववाचक पद वस्तुओंका निर्देश करता है और साथ ही आवश्यक गुणोंको बताता है जबकि अ-स्वभाववाचक पद या तो वस्तुओंका निर्देश करता है या आवश्यक गुणोंको बताता है, लेकिन दोनों बातें नहीं करता। अतः स्वभाववाचक पदका निर्देश और स्वभाव दोनों होता है जबकि अ-स्वभाववाचक पदका या तो केवल निर्देश होता है या केवल स्वभाव। **मिल** के कथनानुसार "अ-स्वभाववाचक पद या तो केवल एक वस्तुका बोध कराता है या केवल एक

स्वभाववाचक पदका निर्देश और स्वभाव दोनों होता है ; जबकि अ-स्वभाववाचक पद का केवल निर्देश होता है या केवल स्वभाव, दोनों नहीं।

गुणका। स्वभाववाचक पद एक वस्तुका निर्देश करता है और उसका आवश्यक गुण बताता है।"

यह ध्यान रखना चाहिए कि ये नाम बहुत अच्छे नहीं हैं। स्वभाववाचक पदका मतलब यह नहीं है कि उसमें केवल स्वभाव ही होता है, बल्कि यह है कि उसका स्वभाव भी होता है और निर्देश भी। इसी तरह अ-स्वभाववाचक पदका मतलब यह नहीं है कि उसका स्वभाव नहीं है बल्कि यह कि उसका या तो केवल स्वभाव होता है या केवल निर्देश, दोनों नहीं। यह परिभाषा **मिल** के अनुसार है। **वेल्टन** के अनुसार अ-स्वभाववाचक पद वह है जो केवल किसी वस्तुका निर्देश करता है।

उदाहरण।

उदाहरणार्थ: 'मनुष्य' पद स्वभाववाचक है क्योंकि यह सब मनुष्योंका निर्देश करता है और उनके आवश्यक गुण 'प्राणित्व' और 'बुद्धिमत्ता' का बोध कराता है। 'सफ़ेद' पद स्वभाववाचक है क्योंकि यह सब सफ़ेद वस्तुओंका निर्देश करता है, जैसे, बर्फ़, दूध, चूना, अण्डे इत्यादिका, और साथ ही 'सफ़ेदी' नामक गुण भी बताता है। सद्गुण पद स्वभाववाचक है क्योंकि यह सचाई, ईमानदारी इत्यादि विभिन्न प्रकारके सद्गुणोंका निर्देश करता है और इनके समान गुणको भी बताता है। इसके विपरीत, 'वर्गत्व' पद अ-स्वभाववाचक है क्योंकि यह केवल एक गुण बताता है लेकिन किसी वस्तुका निर्देश नहीं करता। **मिल** के अनुसार व्यक्तिवाचक नाम जैसे, जॉन, स्मिथ इत्यादि अ-स्वभाववाचक हैं क्योंकि इनका केवल निर्देश होता है, स्वभाव नहीं।

स्वभाववाचक पद निम्नलिखित हैं :—

स्वभाववाचक पद :— (अ) जातिवाचक पद ;

(अ) सब जातिवाचक पद—चाहे वे वस्तुवाचक हों चाहे गुणवाचक—स्वभाववाचक होते हैं। 'मनुष्य' जो कि वस्तुवाचक जातिवाचक पद है स्वभाववाचक है क्योंकि इसका निर्देश और स्वभाव दोनों है। 'रंग' गुणवाचक जातिवाचक पद है और इसी प्रकार स्वभाववाचक है क्योंकि यह तरह-तरहके रंगोंका निर्देश करता है, जैसे सफ़ेदी, कालिमा,

लालिमा इत्यादि, और इनमें समान रूपसे पाये जानेवाले गुणको भी बताता है।

(ब) कुछ ऐसे एकवाचक पद जो वस्तुओंका निर्देश करते और गुण बताते हैं। उदाहरणार्थ : 'सूर्य', 'चन्द्रमा', 'कलकत्ता विश्वविद्यालय के वर्तमान कुलपति,' 'बंगाल के वर्तमान राज्यपाल,' 'एशिया का सबसे ऊंचा पहाड़' इत्यादि स्वभाववाचक पद हैं क्योंकि ये वस्तुओंका निर्देश करते हैं और साथ ही उन वस्तुओंके कई गुणोंको बताते हैं। समूह-वाचक एकवाचक पद स्वभाववाचक होते हैं, जैसे, 'इलाहाबाद का सार्वजनिक पुस्तकालय,' 'कलकत्ता विश्वविद्यालय का लॉ कालेज' इत्यादि। (ब) कुछ एकवाचक पद।

अ-स्वभाव-वाचक पद :—

अ-स्वभाववाचक पद * निम्नलिखित हैं :—

(अ) एक-वाचक गुणवाचक पद ;

(अ) एकवाचक गुणवाचक पद, जैसे, समानता, वर्गत्व, सचाई, न्याय इत्यादि। ये अ-स्वभाववाचक इसलिए हैं कि इनका केवल स्वभाव है निर्देश नहीं।

(ब) व्यक्ति-वाचक नाम।

(ब) व्यक्तिवाचक नाम : **मिल** और उसके अनुयायियोंके अनुसार व्यक्तिवाचक नामोंका केवल निर्देश होता है, स्वभाव नहीं होता, अतः ये अ-स्वभाववाचक हैं। लेकिन इस विषयमें बहुत विवाद है। Proper names Connotative :—

क्या व्यक्तिवाचक नामोंका स्वभाव होता है?

✓ **क्या व्यक्तिवाचक नाम स्वभाववाचक हैं?** तर्कशास्त्रियोंमें इस बातके ऊपर बहुत झगड़ा है कि व्यक्तिवाचक नामोंका स्वभाव होता है या नहीं। कुछ तर्कशास्त्री, जैसे **मिल**, कहते हैं कि वे अ-स्वभाव-वाचक हैं, उनका केवल निर्देश होता है, स्वभाव नहीं। अन्य तर्कशास्त्री,

---

* **वेन** महोदयके अनुसार शुद्ध मानसिक भाव अर्थात् ऐसे भाव जिनका वास्तविक जगत्की वस्तुओंसे संवाद (correspond) नहीं है; जैसे एक वृत, द्रव्यार्थहीन होते हैं। हमें इस मतको यहां ध्यानमें नहीं रखना है क्योंकि यहां वेन का 'द्रव्यार्थ' का प्रयोग आकारविषयक तर्कशास्त्रमें इसके प्रयोगसे भिन्न है।

जैसे **जेवोन्स**, कहते हैं कि वे स्वभाववाचक हैं, उनका निर्देश और स्वभाव दोनों होता है। अब हम इन दोनों मतोंकी विस्तारसे परीक्षा करेंगे।

मिल—व्यक्तिवाचक नामोंका स्वभाव नहीं होता।

मिल के अनुसार व्यक्तिवाचक नाम अ-स्वभाववाचक होते हैं। "व्यक्तिवाचक नाम स्वभाववाचक नहीं होते: वे उन व्यक्तियोंका निर्देश करते हैं जो उनके नामसे पुकारे जाते हैं; लेकिन उनसे उन व्यक्तियोंमें रहनेवाले किसी गुणका बोध नहीं होता। जब हम किसी बच्चेका नाम पॉल रखते हैं या किसी कुत्तेका नाम सीज़र रखते हैं तब इन नामोंका उपयोग केवल चिह्नोंकी तरह होता है जो इन व्यक्तियोंको वार्तालापका विषय बनानेमें मदद करते हैं" (मिल)। व्यक्तिवाचक नाम निरर्थक होते हैं। व्यक्तिवाचक नाम एक ऐसा चिह्न होता है जिसका कोई अर्थ नहीं होता।"

"निश्चय ही यह कहा जा सकता है कि इस बातका अवश्य कोई कारण होना चाहिए कि हम उनके वे नाम रखते हैं दूसरे नाम नहीं; और यह सही है; लेकिन जब एक बार नाम रख दिया जाता है तो वह उस कारणसे स्वतंत्र हो जाता है।……किसी क़स्बेका नाम डार्टमाउथ रखा गया, शायद इस कारणसे कि वह डार्ट नदीके मुहाने पर बसा हुआ है। लेकिन डार्ट नदीके मुहाने पर बसा हुआ होना डार्टमाउथ शब्दके स्वभावका अंग नहीं है। अगर बालूके कारण डार्ट नदीका मुंह बन्द हो जाय या भूकम्पसे उसका रास्ता बदल जाय और वह नदी उस क़स्बेसे मीलों दूर हो जाय, तो क़स्बेका नाम नहीं बदलेगा। अतः डार्ट नदीके मुहाने पर बसना डार्टमाउथ शब्दके स्वभावका अंग नहीं हो सकता। अगर यह न माना जाय तो मानना पड़ेगा कि इस तथ्यके न रहने पर कोई भी उस क़स्बेको डार्टमाउथ नहीं कहेगा। व्यक्ति-वाचक नाम स्वयं वस्तुओंसे चिपके रहते हैं और वस्तुके किसी गुणके जारी रहने पर निर्भर नहीं रहते।"

इसके विरुद्ध **जेवोन्स** का मत है कि व्यक्तिवाचक नाम स्वभाव-

वाचक होते हैं। उसके अनुसार व्यक्तिवाचक नाम व्यक्तियोंका निर्देश करते हैं और उन व्यक्तियोंके "विलक्षण गुण, रूप और चरित्र" का बोध कराते हैं। अगर हम किसी विशेष देशको "इंगलैंड" नाम देते हैं तो यह केवल उस देशकी विलक्षण विशेषताओंके कारण ही।

जेवोन्स—व्यक्तिवाचक नामोंका स्वभाव होता है।

जेवोन्स के अनुसार मिल का मत "शायद ग़लत" है। "किसी नामका व्युत्पन्नार्थ या जिस तथ्यके कारण किसी वस्तुका वह नाम रखा गया है वह उस नामका स्वभावार्थ नहीं है। निश्चय ही जो इंगलैंड नामका प्रयोग करता है और इसके निर्देशको जानता है वह उस देशकी विलक्षण परिस्थितियों और विशेषताओंसे अनभिज्ञ नहीं हो सकता, और ये ही उस नामके स्वभावको बनाते हैं। जो कोई भी डार्टमाउथ क़स्बेको जानता है वह यह भी निश्चय ही जानता होगा कि उस क़स्बेकी वर्तमान परिस्थिति और विशेषता क्या है। अगर डार्ट नदी नष्ट हो जाती है या दूर हट जाती है तो उस क़स्बेकी परिस्थिति बदल जायगी और इन नामका अर्थ बदल जायगा। तब यह नाम एक ऐसे क़स्बेका निर्देश नहीं करेगा जो डार्ट नदी पर बसा हुआ है बल्कि ऐसे क़स्बेका जो पहिले डार्ट नदी पर बसा हुआ था और इस तरह उस नामका उस क़स्बेके लिये उपयुक्त न होना एक ऐतिहासिक दुर्घटना होगी। इसी तरह जॉन स्मिथ नाम या कोई अन्य व्यक्तिवाचक नाम तब तक निरर्थक रहता है जब तक हम उस नामके व्यक्तिको नहीं जानते। यह सही है कि जिसका नाम जॉन स्मिथ है वह एक टयूटन (Teuton) है और पुरुष है, लेकिन जब हम इस नामवाले व्यक्तिसे परिचित हो जाते हैं तब इस नामके स्वभावमें अवश्य ही उस व्यक्तिकी विलक्षण विशेषताएं, आकार-प्रकार और चरित्र भी शामिल हो जाते हैं। असलमें, चूंकि हम किसी व्यक्ति या वस्तुको केवल उसकी विलक्षण विशेषताओं या परिस्थितियोंसे ही पहिचान सकते हैं, इसलिए किसी नामका तब तक एक निश्चित अर्थ नहीं हो सकता जब तक हम उसके साथ उसके द्वारा निर्दिष्ट वस्तुकी

किस्मकी एक ऐसी परिभाषा न जोड़ें, कम-से-कम अपने मनमें, जो यह बतावे कि वह अमुक वस्तुका निर्देश करता है। अगर जॉन स्मिथ नामसे मुझे जॉन स्मिथ के गुणोंका स्मरण न हो, तो जॉन स्मिथ से मुलाकात होने पर मैं कैसे पहिचानूंगा कि वह जॉन स्मिथ है? जॉन स्मिथ की खोपड़ीके ऊपर तो उसका नाम लिखा हुआ नहीं है।

पी० के० राय— यह सवाल तर्कशास्त्र के क्षेत्र से बाहर है।

डा० पी० के० राय ने कहा है कि व्यक्तिवाचक नामका स्वभाव होने या न होनेका सवाल "भाषाविज्ञान और मनोविज्ञानका सवाल" है और आकारविषयक तर्कशास्त्रके क्षेत्रके बाहर है। मनोवैज्ञानिक दृष्टिसे अर्थात् व्यक्तिके ज्ञानकी दृष्टिसे, जब किसी व्यक्तिवाचक नाम का पहिले-पहल किसी व्यक्तिके लिये इस्तेमाल होता है तब उसके साथ कोई गुण नहीं जुड़ा हुआ होता, लेकिन ज्यों-ज्यों उस व्यक्तिसे हमारा परिचय बढ़ता जाता है त्यों-त्यों उस व्यक्तिके गुणोंको हम उसके नाम से जोड़ते जाते हैं और इस तरह बादमें वह नाम न केवल उस व्यक्ति का निर्देश करता है बल्कि उसके गुणोंको भी बतलाने लगता है। डा० पी० के० राय का मत यह मालूम पड़ता है कि तर्कशास्त्रीय दृष्टिसे उपर्युक्त मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण सन्तोषजनक नहीं है।

कार्वेथ रीड—व्यक्तिवाचक नाम स्वभाव-वाचक नहीं है।

कार्वेथ रीड (**Carveth Read**) के अनुसार यह मत कि साधारण प्रयोगमें व्यक्तिवाचक नाम स्वभाववाचक नहीं होते दूसरे मत से अच्छा है और यह दो कारणों से: (१) व्यक्तिवाचक नामका अर्थ "आकस्मिक" (accidental) होता है जिसे स्वभाव कहना ठीक नहीं है। 'लन्दन' या 'नेपोलियन' का आकस्मिक अर्थ है क्योंकि ये व्यक्ति-वाचक नाम जिस शहर या व्यक्तिके नाम होनेसे प्रसिद्ध हुए हैं उसके अलावा अन्य शहरों या व्यक्तियोंके भी हो सकते हैं। (२) "जिन विलक्षणताओंसे कोई विशेष व्यक्ति पहिचाना जाता है वे अनन्त होती हैं और इन विलक्षणताओंकी पूरी-पूरी गिनती किये बिना हम उस व्यक्तिको पहिचाननेमें असफल हो सकते हैं। लेकिन अनन्त विलक्षणताओंको गिनना असम्भव है। अतः व्यक्तिवाचक नामोंका

कोई निश्चित स्वभाव नहीं होता।" यहां यह कहा जा सकता है कि कार्वेथ रीड ने जो दूसरा कारण बताया है वह सही नहीं है। सवाल यह है कि व्यक्तिवाचक नामोंका स्वभाव होता है या नहीं, न कि यह कि उसे हम निर्धारित कर सकते हैं या नहीं। कार्वेथ रीड इस बातको समझता है और इसीलिए यह कहता है कि व्यक्तिवाचक नामोंका निश्चित स्वभाव नहीं होता, यह नहीं कहता कि उनका स्वभाव नहीं होता।

सही मत यह है कि व्यक्ति-वाचक नामोंका कोई स्वभाव नहीं होता

व्यक्तिवाचक नामोंके स्वभावके बारेमें जो कुछ विवाद है उसका कारण 'स्वभाव' शब्दके अर्थका अस्पष्ट होना है। 'स्वभाव' का अर्थ 'सुझाव' (suggestion) नहीं है। किसी पदका स्वभाव होना तब कहा जा सकता है जब वह यह ज्ञान करानेके लिये स्वयं पर्याप्त होता है कि उसके द्वारा निर्दिष्ट वस्तु या वस्तुओंमें अमुक गुण वर्तमान हैं। इसके विपरीत कोई पद सुझाव उन गुणोंका ही दे सकता है जो अन्य तरीक़ेसे ज्ञात हों। अतः यह कहना ठीक नहीं है कि व्यक्तिवाचक नाम 'इंगलैंड' का स्वभाव उसके द्वारा निर्दिष्ट देशके विलक्षण गुणोंसे बनता है। यह नाम कुछ आदमियोंको जो कि उन विलक्षण गुणोंको किसी अन्य तरीक़ेसे जान गये हैं उनका सुझाव दे सकता है, लेकिन हम यह नहीं कह सकते कि ये गुण उस नामके स्वभावमें शामिल हैं। असलमें यह भी आवश्यक नहीं है कि व्यक्तिवाचक नाम 'इंगलैंड' एक विशेष देश का निर्देश अनिवार्यतः करे ही ; यह एक इमारत, एक घोड़े या एक जहाज़का नाम भी हो सकता है। जेवोन्स का यह कहना ग़लत है कि व्यक्तिवाचक नाम 'जॉन स्मिथ' एक टयूटन और पुरुषका निर्देश करता है ; हो सकता है कि यह यह नाम किसी मनुष्यका हो ही नहीं। व्यक्तिवाचक नाम 'जॉन' व्यक्तियोंकी एक बड़ी तादादका हो सकता है, लेकिन यह अपने-आप यह सूचित नहीं करता कि उन व्यक्तियोंमें कोई समान गुण हैं। इससे यह भी सूचित नहीं होता कि वे व्यक्ति मनुष्य हैं क्योंकि कुत्ते और घोड़े तक इस नामके हो सकते हैं। कॉफ़ी ने कहा है: "किसी व्यक्तिको कोई व्यक्तिवाचक नाम उसके अन्दर किसी

विशेष गुणके मौजूद होनेके कारण नहीं दिया जाता।" अत: निष्कर्ष यह हुआ कि तर्कशास्त्रके दृष्टिकोणसे मिल का मत सर्वश्रेष्ठ है। व्यक्तिवाचक नाम "निरर्थक चिह्न" या "इच्छानुसार गढ़े हुए शब्द" हैं और उनका कोई स्वभाव नहीं होता ; उनका एकमात्र प्रयोजन किसी व्यक्तिका निर्देश करना होता है।

हल किये हुए प्रश्न

संकेत. किसी पदकी तर्कशास्त्रीय विशेषता बतानेका अर्थ यह है कि पदोंके विभागोंकी पूरी सूचीमें से हमको वे विभाग छांटने हैं जिनमें वह पद आता है ; दूसरे शब्दोंमें हमें नीचे लिखे वर्गोंमें से उन वर्गों का कथन करना है जिनके अन्तर्गत वह आता है:—

(क) एकशब्दात्मक या अनेकशब्दात्मक ;
(ख) एकवाचक या जातिवाचक ;
(ग) समूहवाचक या अ-समूहवाचक ;
(घ) वस्तुवाचक या गुणवाचक ;
(ङ) विधिवाचक, निषेधवाचक या राहित्यवाचक ;
(च) निरपेक्ष या सापेक्ष ;
(छ) स्वभाववाचक या अ-स्वभाववाचक।

प्रश्न. निम्नलिखित पदों की तार्किक विशेषता बताइये :—(१) कालेज, (२) कलकत्ते का यूनिवर्सिटी लॉ कालेज, (३) कलकत्ता विश्वविद्यालयके वर्तमान कुलपति, (४) दुनियाका सबसे ऊंचा पर्वत, (५) नगर, (६) मानवता, (७) अन्धापन, (८) अन्धा व्यक्ति, (९) कलकत्ता, (१०) सिकन्दर महान्।

[उत्तर. (१) कालेज—एकशब्दात्मक, जातिवाचक, समूहवाचक वस्तुवाचक, विधिवाचक, निरपेक्ष, स्वभाववाचक।

(२) कलकत्ते का यूनिवर्सिटी लॉ कालेज—अनेकशब्दात्मक, एकवाचक, समूहवाचक, वस्तुवाचक, विधिवाचक, निरपेक्ष, स्वभाववाचक।

(३) कलकत्ता विश्वविद्यालयके वर्तमान कुलपति—अनेकशब्दात्मक, एकवाचक, अ-समूहवाचक, वस्तुवाचक, विधिवाचक, निरपेक्ष, स्वभाववाचक।

(४) दुनियाका सबसे ऊंचा पर्वत—अनेकशब्दात्मक, एकवाचक, अ-समूहवाचक, वस्तुवाचक, विधिवाचक, सापेक्ष, (अन्य पर्वतोंसे सम्बन्ध होनेसे) स्वभाववाचक।

(५) नगर—एकशब्दात्मक, जातिवाचक, अ-समूहवाचक, (अगर नगरमें रहनेवालोंके लिये इस्तेमाल हुआ हो तो समूहवाचक), वस्तुवाचक, विधिवाचक, निरपेक्ष, स्वभाववाचक।

(६) मानवता—एकशब्दात्मक, एकवाचक, अ-समूहवाचक, गुणवाचक, विधिवाचक, निरपेक्ष, अ-स्वभाववाचक।

(७) अन्धापन—एकशब्दात्मक, एकवाचक, अ-समूहवाचक, गुणवाचक, निषेधवाचक (दृष्टि-शक्तिका अभाव), निरपेक्ष, अ-स्वभाववाचक।

(८) अन्धा व्यक्ति—अनेकशब्दात्मक, जातिवाचक, अ-समूहवाचक, वस्तुवाचक, राहित्यवाचक, निरपेक्ष, स्वभाववाचक।

(९) कलकत्ता—एकशब्दात्मक, एकवाचक, अ-समूहवाचक वस्तुवाचक, विधिवाचक, निरपेक्ष, अ-स्वभाववाचक (व्यक्तिवाचक नाम होने से)।

(१०) सिकन्दर महान्—अनेकशब्दात्मक एकवाचक, अ-समूहवाचक, वस्तुवाचक, विधिवाचक, निरपेक्ष, अ-स्वभाववाचक (व्यक्तिवाचक नाम होने से)।]

अभ्यासार्थ प्रश्न ३

१. पद क्या है? पदसंयोज्य पद वस्तुतः पद हैं?

२. शब्द और पदका अन्तर बताइये। क्या ये तर्कशास्त्रके क्षेत्रमें आते हैं? यदि हां तो क्यों?

३. तर्कशास्त्रके दृष्टिकोणसे व्याकरणके शब्दविभागोंका वर्णन कीजिये।

४. निम्नलिखितको उदाहरण देकर समझाइये:—

(क) व्यक्तिवाचक नाम और अन्य एकवाचक पद, (ख) निरपेक्ष और सापेक्ष पद, (ग) व्याघातक और विपरीत पद, (घ) एकवाचक और जातिवाचक पद, (ङ) निषेधवाचक और राहित्यवाचक पद, (च) वस्तुवाचक और गुणवाचक पद।

५. उदाहरण देकर प्रत्यय और पदका अन्दर समझाइये। अपरिमित पद क्या है?

[संकेत. प्रत्ययका अर्थ है सामान्य विचार। अतः यह एक मानसिक अवस्था है जो भाषामें व्यक्त हो सकती है या नहीं। भाषामें व्यक्त होने पर यह पद हो जाता है। जब भाषामें ये व्यक्त नहीं होते तब ये मनोविज्ञानके क्षेत्रम आते हैं, तर्कशास्त्रके क्षेत्रमें नहीं।]

६. पदके स्वभाव और निर्देशसे क्या मतलब है? निम्नलिखित पदोंको उनके स्वभाव और निर्देशके अनुसार क्रममें रखिये:—

चतुष्पद पशु, द्रव्य, शरीरधारी वस्तुएं, हाथी, हिन्दुस्तानी हाथी, रीढ़की हड्डीवाले पशु, स्तनपायी पशु।

[उत्तर. स्वभावके क्रममें—द्रव्य, शरीरधारी वस्तुएं, रीढ़की हड्डी वाले पशु, स्तनपायी पशु, चतुष्पद पशु, हाथी, हिन्दुस्तानी हाथी। निर्देशके अनुसार क्रम इसका उल्टा है।]

७. पदके स्वभावसे आप क्या समझते हैं? क्या हरेक पदका स्वभाव होता है? इस प्रश्नका पूरा-पूरा विचार कीजिये और अन्य मतों पर विचार करते हुए अपने मतकी पुष्टिमें तर्क दीजिए। पदके स्वभाव और निर्देशमें क्या सम्बन्ध होता है?

८. पदके निर्देश और स्वभावमें अन्तर बताइये। इस अन्तरका स्वभाववाचक और अस्वभाववाचक पदोंके अन्तरसे क्या सम्बन्ध है? स्वभाववाचक पद कौन होते हैं और अस्वभाववाचक कौन?

९. क्या (१) ऐसे पद जिनका निर्देश बढ़ जाय और स्वभावमें कोई परिवर्तन न हो, तथा (२) ऐसे पद जिनका स्वभाव बढ़ जाय और निर्देशमें कोई परिवर्तन न हो, होते हैं? इस प्रश्न पर विस्तारसे विचार कीजिये।

१०. नीचे लिखे पदोंको उनके निर्देशके अनुसार क्रममें रखिये:—

रीढ़की हड्डीवाले, मनुष्य, पशु, द्रव्य, लड़का, शरीरधारी, स्कूल का लड़का।

[उत्तर. द्रव्य, शरीरधारी, पशु, रीढ़की हड्डीवाले, मनुष्य, लड़का, स्कूलका लड़का।]

११. पदके निर्देश और स्वभावके पारस्परिक सम्बन्धको सोदाहरण समझाइये। क्या प्रत्येक पदका निर्देश और स्वभाव होता है? स्वभाववाचक पदोंके उदाहरण दीजिए। उनको ऐसा क्यों कहा जाता है?

१२. निर्देश और स्वभावकी मात्राएं किस नियमके अनुसार सम्बन्धित हैं? यह दिखाइये कि नीचे दी हुई पद-शृंखला पर यह नियम लागू होता है:—पुस्तक, छपी हुई पुस्तक, कोष, लैटिन कोष।

१३. पदोंके स्वभाव और निर्देशसे आप क्या समझते हैं? यह

दिखाइये कि ये प्रत्येक पदके अवियोज्य पहलू हैं। उदाहरण भी दीजिए।

१४. यह कहना कहां तक सही है कि निर्देश और स्वभाव विपरीत दिशाओंमें घटते-बढ़ते हैं? ठोस उदाहरण देकर समझाइये।

१५. क्या व्यक्तिवाचक नामोंका स्वभाव होता है? इस प्रश्न पर पूरा विचार कीजिये और इसके विषयमें अपने मतको तर्कोंसे पुष्ट कीजिये।

१६. 'स्वभाव' शब्दके तीन भिन्न अर्थ क्या हैं? उनमेंसे आप किसको स्वीकार करेंगे?

१७. पदोंके विभिन्न विभाग कौन-कौन हैं? उनमें से प्रत्येकको समझाइये और उदाहरण भी दीजिये।

१८. नीचे लिखे पदोंकी तार्किक विशेषताएं बताइये :—

समान, समीकरण, समानता, असमानता, समानीकरण।

१९. पदोंके समष्टचर्थ और व्यष्टचर्थमें प्रयोगको अन्तर बताते हुए समझाये। इनको न समझनेसे जो दोष होते हैं उनके दो उदाहरण दीजिए।

२०. निम्नलिखित पर विचार कीजिये :—

"Popocatapell हमारे लिये केवल तब तक अस्वभाववाचक पद रहता है जब तक हम यह नहीं जानते कि मेक्सिको के लोग इस पद को किस अर्थमें इस्तेमाल करते हैं।"

४

वाच्यधर्म
(Predicables)

भाग १. पांच वाच्यधर्मः जाति, उपजाति, व्यावर्तक गुण, सहज गुण, आकस्मिक गुण.

वाच्यधर्म

वाच्यधर्म उद्देश्योंके सम्बन्धमें विधेयोंके विभिन्न वर्गोंके नाम हैं। विधेय वह पद होता है जिसका उद्देश्यके बारेमें विधान या निषेध किया जाता है, वाच्यधर्म वे विभिन्न प्रकारके सम्बन्ध हैं जो विधेयोंके उद्देश्योंसे हो सकते हैं। अरस्तू के अनुसार वाच्यधर्म चार प्रकारके होते हैं, जैसे परिभाषा (definition), सहज गुण (proprium), जाति (genus) और आकस्मिक गुण (accidens)। **पॉरफ़ीरी** (**Porphyry**, एक दार्शनिक; २३३-३०४ ईस्वी) ने वाच्यधर्मों की एक पंचांगी योजना बनाई जिसके अनुसार वाच्यधर्मोंके ये पांच भेद हैं: जाति, उपजाति (species), व्यावर्तक गुण (differentia)। सहज गुण और आकस्मिक गुण। इस प्रकार पॉरफीरी के अनुसार प्रत्येक तर्कवाक्यमें जिसमें हम उद्देश्य और विधेयके मध्य किसी सम्बन्ध का विधान करते हैं।

विधेयको उद्देश्यका
- १. जाति या
- २. उपजाति या
- ३. व्यावर्तक गुण या
- ४. सहज गुण या
- ५. आकस्मिक गुण

होना चाहिए

यहां यह कहा जा सकता है कि ऊपर दी हुई पंचांगी योजनामें एकवाचक विधेयोंके लिये कोई गुंजाइश नहीं रखी गई है। इस प्रकार,

'सिकन्दर महान् मैसीडन के फ़िलिप का एकलौता लड़का है' इस वाक्य का विधेय पॉरफीरी द्वारा स्वीकृत पांच वाच्यधर्मोंके वर्गोंमें किसी में भी नहीं आता। कारण यह है कि पुराने तर्कशास्त्रियों ने एकवाचक पदोंका विधेय होनेकी कल्पना नहीं की थी।

जाति और उपजाति.

जाति और उपजाति दोनों वर्गोंके नाम हैं। दो वर्गोंका आपसमें इस प्रकार सम्बन्ध हो सकता है कि उनमेंसे एकका निर्देश दूसरे के निर्देशकी अपेक्षा अधिक व्यापक हो। उदाहरणार्थ, 'पशु' वर्गका निर्देश 'मनुष्य' वर्गके निर्देशसे अधिक व्यापक है। **कम व्यापक निर्देश वाले वर्ग, जिसे कि उपजाति कहते हैं, की तुलनामें अधिक व्यापक निर्देशवाले वर्गको जाति कहते हैं।** अतः 'पशु' 'मनुष्य' उपजातिकी तुलनामें जाति है।

जाति = अधिक व्यापक वर्ग। उपजाति = कम व्यापक वर्ग।

स्पष्ट है कि जाति और उपजाति सापेक्ष पद हैं, एकमें अनिवार्यतः दूसरेका संकेत रहता है। जातिका उन विभिन्न उपजातियोंसे अलग जो उसमें शामिल रहती हैं कोई अर्थ नहीं है और न उपजातिका ही उस जाति या अधिक विस्तृत वर्गसे अलग कोई अर्थ होता है जिसमें वह स्वयं शामिल रहती है। इस प्रकार एक ही पद एक कम विस्तार वाले वर्गकी तुलनामें जाति और एक अधिक विस्तारवाले वर्ग की तुलनामें उपजाति हो सकता है। उदाहरणके लिये 'पशु' वर्ग कम विस्तारवाले 'मनुष्य' वर्गकी तुलनामें जाति है और अधिक विस्तार वाले 'प्राणी' वर्गकी तुलनामें उपजाति है। इस प्रकार :—

जाति और उपजाति सापेक्ष हैं।

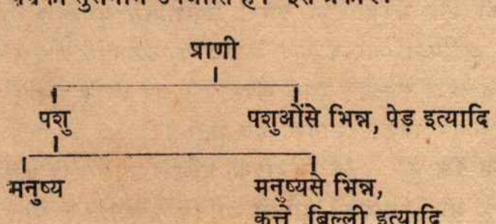

यह स्पष्ट है कि निर्देशकी दृष्टिसे जातिमें उपजाति शामिल रहती है और स्वभावकी दृष्टिसे उपजातिमें जाति शामिल रहती है।

सर्वोच्च जाति।

किसी पदको **सर्वोच्च जाति (Summum Genus)** तब कहते हैं जब उसका निर्देश इतना अधिक व्यापक होता है कि उससे बड़ा वर्ग कोई न हो। सर्वोच्च होनेके कारण उससे उच्च कोई होता ही नहीं। अत: सर्वोच्च जाति कभी उपजाति नहीं बन सकती।

निम्नतम उपजाति।

किसी पदको **निम्नतम उपजाति (Infima Species)** तब कहा जाता है जब वह इतना कम विस्तार रखता है कि उससे कम विस्तार किसी वर्गका हो ही नहीं सकता। निम्नतम होनेके कारण उससे छोटा वर्ग कोई हो ही नहीं सकता। अत: निम्नतम उपजाति कभी जाति नहीं बन सकती।

अवर जाति या उपजाति।

समकक्ष उपजाति।

आसन्नतम जाति।

सर्वोच्च जाति और निम्नतम उपजातिके बीचके वर्गोंको अवर जाति या अवरोपजाति (subaltern genera or species) कहते हैं। एक ही जातिके नीचे आनेवाले दो या अधिक वर्ग या उपजातियां एक-दूसरेकी तुलनामें समकक्ष उपजातियां (Cognate or Co-ordinate) कहलाती हैं और किसी उपजातिके सबसे नज़दीक रहनेवाली जातिको आसन्नतम (proximate) जाति कहते हैं।

व्यावर्तक गुण (Differentia).

व्यावर्तक गुण = उपजातिकी पहिचान करानेवाला गुण। यह उपजाति के स्वभावका अंग होता है।

व्यावर्तक गुण उस गुण या गुणोंके समूहको कहते हैं जो एक ही जातिकी एक उपजातिको दूसरी उपजातिसे पृथक् करता है। इस प्रकार 'बुद्धिमानी' नामक गुण 'मनुष्य' का व्यावर्तक गुण है क्योंकि यह मनुष्यको अन्य पशुओंसे पृथक् करता है। यह ध्यान रखना चाहिए कि व्यावर्तक गुण पदके स्वभावका अंग होता है।

हम देख चुके हैं कि स्वभावकी दृष्टिसे उपजातिमें जाति शामिल रहती है और निर्देशकी दृष्टिसे जातिमें उपजाति शामिल रहती है।

अत: व्यावर्तक गुण उपजातिके स्वभावका वह भाग है जो आसन्नतम जातिके स्वभावसे अधिक होता है। इस प्रकार, जातिके स्वभावमें व्यावर्तक गुणको जोड़ देनेसे उपजातिका स्वभाव प्राप्त हो जाता है। उदाहरणके लिये, 'प्राणित्व' (आसन्नतम जाति 'प्राणी' का स्वभाव) + 'बुद्धिमानी' ('मनुष्य' पदका व्यावर्तक गुण) = 'मनुष्य' पदका स्वभाव अर्थात् 'प्राणित्व' और 'बुद्धिमानी'।

व्यावर्तक गुण = उपजातिका स्वभाव— जातिका स्वभाव।

सहज गुण (Property या Proprium).

सहज गुण वह गुण है जो पदके स्वभावका अंग नहीं है लेकिन जो उसके स्वभावका अनिवार्य परिणाम होता है, चाहे कारणसे निकलने वाले कार्यके रूपमें हो, चाहे आधारवाक्यसे निकलनेवाले निष्कर्षके रूपमें।

सहज गुण स्वभावका परिणाम होता है।

व्यावर्तक गुणसे सहज गुण इस बातमें भिन्न है कि वह स्वभावका अंग नहीं होता बल्कि स्वभावका अनिवार्य परिणाम होता है। यह दो तरीक़ोंसे होता है, या तो आधारवाक्यसे निकलनेवाले निष्कर्षके रूपमें या कारणसे निकलनेवाले कार्यके रूपमें।

उदाहरणके लिये: सब त्रिभुजोंके तीनों कोण दो समकोणके बराबर होते हैं। इस दृष्टान्तमें 'तीनों कोणोंका दो समकोणके बराबर होने' का गुण 'तीन सीधी रेखाओंसे घिरे हुए होने' के गुणका परिणाम है जो गुण कि 'त्रिभुज' का स्वभाव है। यहां सहज गुण स्वभाव से आधारवाक्यसे निष्कर्षके रूपमें परिणमित हुआ है। फिर इस तर्कवाक्यको लीजिये: मनुष्य निर्णयकी शक्ति रखता है। यहां सहज गुण 'निर्णय की शक्ति' 'बुद्धिमत्ता' का परिणाम है जो 'मनुष्य' पदके स्वभावका अंग है। इसमें 'बुद्धिमत्ता' कारण है और 'निर्णयकी शक्ति' उसका कार्य।

सहज गुण जातिसिद्ध होता है या उपजातिसिद्ध। यदि वह जातिके स्वभावका परिणाम होता है तो उसे जातिसिद्ध (generic) कहते हैं

सहजगुणके जातिके स्वभावका परिणाम होनेसे वह जातिसिद्ध होता है और उपजातिके स्वभावका परिणाम होने से उपजाति-सिद्ध।

और यदि उपजातिके स्वभावका परिणाम है तो उपजातिसिद्ध (specific) कहते हैं। उदाहरणके लिये, अगर हम कहें कि 'समद्विबाहु त्रिभुजके तीनों कोणोंका योग दो समकोण होता है' तो 'तीन कोणोंके योगका दो समकोण होने' का सहज गुण 'त्रिभुज' के स्वभावका परिणाम है 'समद्विबाहु त्रिभुज' के स्वभावका परिणाम नहीं और इस-लिये यह जातिसिद्ध सहज गुण है। लेकिन अगर हम कहें कि 'समद्विबाहु त्रिभुजके दो कोण समान होते हैं' तो 'दो कोण समान होने' का सहज गुण उपजातिसिद्ध है क्योंकि यह उपजाति यानी 'समद्विबाहु त्रिभुज' के स्वभावका परिणाम है।

आकस्मिक गुण.

स्वभाव और सहजगुणके अलावा अन्य गुण आकस्मिक गुण होते हैं।

आकस्मिक गुण वह गुण है जो न तो पदके स्वभावका अंग होता है और न उसका परिणाम। व्यावर्तक गुणसे इसका अन्तर इस बातमें है कि यह पदके स्वभावका हिस्सा नहीं होता, और सहज गुणसे इसका अन्तर यह है कि यह पदके स्वभावका परिणाम नहीं होता। इस प्रकार स्वभाव और सहज गुणके अलावा अन्य सभी गुण आकस्मिक गुण होते हैं। वर्ग या व्यक्तिसे आकस्मिक गुणको हटा देनेसे उसमें कोई आवश्यक परिवर्तन नहीं होता, लेकिन अगर व्यावतक गुण या सहज गुण को हटा दिया जाय तो वर्ग या व्यक्तिका स्वरूप ही बदल जाता है।

चार प्रकारके आकस्मिक गुण :— (क) वर्गका अवियोज्य आकस्मिक गुण ; (ख) वर्गका वियोज्य आकस्मिक गुण ;

आकस्मिक गुण किसी वर्ग या व्यक्तिका हो सकता है और दोनों ही दशाओंमें वह वियोज्य हो सकता है या अवियोज्य।

किसी वर्गका अवियोज्य आकस्मिक गुण वह है जो उस वर्गके प्रत्येक सदस्यमें पाया जाता है, जैसे कौवेका कालापन। जहां तक हमें अनुभव होता है कौवे सब काले देखे जाते हैं, लेकिन कालापन कौवेके स्वभावका अंग भी नहीं है और उसका परिणाम भी नहीं। किसी वर्ग का वियोज्य आकस्मिक गुण वह होता है जो उस वर्गके कुछ सदस्योंमें पाया जाता है सबमें नहीं, जैसे कुत्तोंका सफेद होना।

किसी व्यक्तिका अवियोज्य आकस्मिक गुण वह है जो उसमें सभी समय वर्तमान रहता है और कभी नहीं बदलता, जैसे, किसी व्यक्तिके जन्मका स्थान और तिथि; जबकि किसी व्यक्तिका वियोज्य आकस्मिक गुण वह है जो उसमें कभी रहता है और कभी नहीं, जैसे व्यक्तिका पेशा, पोशाक, स्थिति इत्यादि।

(ग) व्यक्ति का अवियोज्य आकस्मिक गुण; (घ) व्यक्ति का वियोज्य आकस्मिक गुण।

भाग २. पॉरफ़ीरी का वृक्ष.

पॉरफ़ीरी का वृक्ष मुख्य वाच्य-धर्मोंके उदाहरण प्रस्तुत करता है। इसको सोलहवीं शताब्दीमें पैदा होनेवाले एक तर्कशास्त्री रेमस (Ramus) के नामसे रेमस का वृक्ष भी कहते हैं। यह नीचे दिया जाता है:—

पॉरफ़ीरी का वृक्ष।

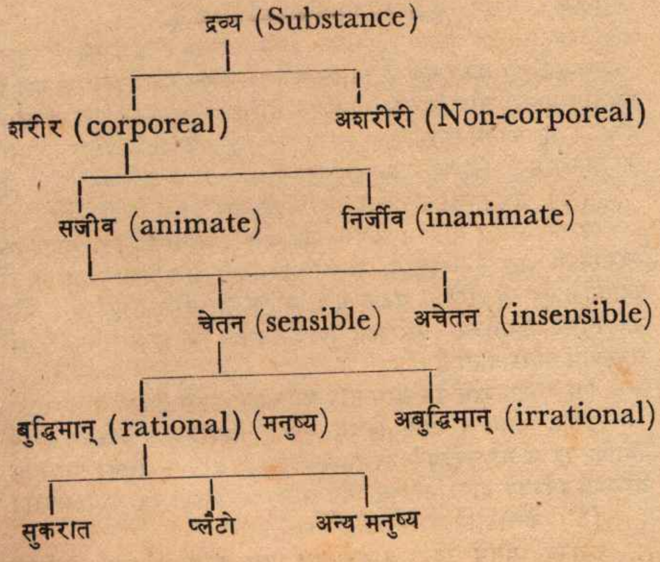

इस तालिकामें द्रव्य सर्वोच्च जाति है और मनुष्य निम्नतम उपजाति है क्योंकि मनुष्यका विभाजन सुकरात, प्लैटो इत्यादि व्यक्तियोंमें किया गया है, दो उपजातियोंमें नहीं। बीचके वर्ग, शरीरी, सजीव इत्यादि अवर जातियां और उपजातियां हैं—इनमेंसे प्रत्येक अपनेसे ऊंचे वर्गकी उपजाति और अपनेसे छोटे वर्गकी जाति है।

'शरीरी', 'सजीव', 'चेतन' इत्यादि व्यावर्तक गुण हैं अर्थात् उपजातिको जातिसे अलग करते हैं।

हल किये हुए प्रश्न

प्रश्न. नीचे लिखे विधेयोंके वाच्यधर्म बताइये:—

(क) मनुष्य भी पशु हैं।

उत्तर. इस वाक्यमें विधेय 'पशु' जाति है जिसकी उपजाति उद्देश्य 'मनुष्य' है।

(ख) तर्कशास्त्र अच्छा मानसिक प्रशिक्षण है।

उत्तर. इस वाक्यमें विधेय 'अच्छा मानसिक प्रशिक्षण', उद्देश्य 'तर्कशास्त्र' का सहज गुण है क्योंकि तर्कशास्त्रके स्वभावका एक गुण है 'विज्ञान होना' और 'अच्छा मानसिक प्रशिक्षण' होनेका गुण 'विज्ञान होने' के गुणका परिणाम है। इस प्रकार उद्देश्यके स्वभावके एक भाग का परिणाम होनेसे यह एक सहज गुण है।

(ग) सब हब्शी ऊन जैसे बालोंवाले होते हैं।

उत्तर. इस वाक्यमें विधेय 'ऊन जैसे बालोंवाले' न तो उद्देश्यके स्वभावका अंग है और न उसका परिणाम। इस प्रकार यह न तो व्यावर्तक गुण है और न सहज गुण, बल्कि आकस्मिक गुण है। और यह वर्गका अवियोज्य आकस्मिक गुण है क्योंकि यह 'हब्शी' वर्गके सभी सदस्योंमें पाया जाता है।

(घ) फाउन्टेन पेन आम तौर पर काला होता है।

उत्तर. इस वाक्यमें विधेय वर्गका वियोज्य आकस्मिक गुण है क्योंकि यह न तो उद्देश्यके स्वभावका अंग है और न उसका परिणाम और यह उद्देश्यके द्वारा निर्दिष्ट वर्गके सब सदस्योंमें भी नहीं पाया जाता।

(ङ) केलीडोनिया स्कॉटलैंड है।

उत्तर. इसमें उद्देश्य और विधेय पर्याय मात्र हैं, और इसलिए

इनमें निर्भरताका सम्बन्ध नहीं हो सकता। लेकिन इस वाक्यको इस रूपमें रखा जा सकता है: केलीडोनिया और स्कॉटलैंड एकही जगहके नाम हैं। इस रूपमें विधेय 'एक ही जगहके नाम' उद्देश्यकी निम्नतम उपजाति है, क्योंकि उद्देश्य एक व्यक्ति है वर्ग नहीं।

अभ्यासार्थ प्रश्न ४

१. वाच्यधर्म क्या हैं? उनमें आपसमें क्या भेद हैं? उदाहरण देकर बताइये। पदोंकी परिभाषा और वर्णनसे उनका सम्बन्ध बताइये।

२. वाच्यधर्मसे आप क्या समझते हैं? विधेय और वाच्यधर्मका अन्तर समझाइये।

३. वाच्यधर्मोंकी परिभाषा दीजिये। गुणोंके व्यावर्तक गुण, सहज गुण और आकस्मिक गुणमें विभाजनका क्या मतलब है?

४. जाति, उपजाति, व्यावर्तक गुण, सहज गुण और आकस्मिक गुणके तार्किक अर्थ क्या हैं? 'मनुष्य' की जाति, व्यावर्तक गुण, सहज-गुण और आकस्मिक गुण बताइये। अगर हम कहें कि 'कोई भी तर्कशास्त्रका लेखक वस्तुत: वैज्ञानिक नहीं है' तो इसके विधेयकी तार्किक विशेषता क्या होगी?

५. व्यावर्तक गुण, सहज गुण और आकस्मिक गुणको उदाहरण देकर समझाइये। आप (क) जातिसिद्ध सहज गुण और उपजातिसिद्ध सहज गुणमें तथा (ख) अवियोज्य आकस्मिक गुण और वियोज्य आकस्मिक गुणमें क्या अन्तर समझते हैं?

६. पदोंके नीचे दिये हुए पारस्परिक सम्बन्धोंके तीन-तीन उदाहरण दीजिये :—

जाति और उपजाति, उपजाति और आकस्मिक गुण, उपजाति और सहज गुण।

७. नीचे लिखे पर टीका कीजिये :—

"जाति उपजातिका भाग है और उपजाति जातिका"।

८. नीचे लिखे विधेयोंके वाच्यधर्म बताइये :—

(अ) वर्गके सब कोण समान होते हैं।

(ब) त्रिभुज तीन रेखाओंसे घिरा होता है।

(स) सभी गणतंत्र राज्य होते हैं।

(द) ज्ञान शक्ति है।
(ई) व्हेल स्तनपायी होते हैं।
(फ) सभी बतख झिल्लीदार पंजेवाले होते हैं।
(ज) शेर शिकारी जानवर है।

५

परिभाषा—उसकी सीमाएं और आकारविषयक नियम

(Definition—Its Limits and Formal Conditions)

भाग १. परिभाषाका स्वरूप.

परिभाषा किसी पदके सम्पूर्ण स्वभावका स्पष्ट कथन है। किसी पदका स्वभाव उसके द्वारा व्यक्त समान और आवश्यक गुणोंसे बनता है और परिभाषाका मतलब है सम्पूर्ण स्वभावका कथन करना।

परिभाषा = सम्पूर्ण स्वभावका कथन।

परिभाषाका सर्वमान्य नियम यह है कि परिभाषाको पदकी आसन्नतम जाति और व्यावर्तक गुणका कथन होना चाहिए (per genus et differentiam)।

नियम: जाति और व्यावर्तक गुणका कथन।

अगर हम आसन्नतम जातिके स्वभावको लें तो उस जातिके नीचे आनेवाली सभी उपजातियोंके सब तमाम गुणोंका उल्लेख हो जाता है, और जब हम इसमें व्यावर्तक गुणको जोड़ देते हैं तब पदके स्वभावका पूरा-पूरा कथन हो जाता है क्योंकि इससे उन गुणोंका भी कथन हो जाता है जो उस पदके द्वारा निर्दिष्ट उपजातिको उसकी समकक्ष उपजातियों से अलग करते हैं। दूसरे शब्दोंमें, किसी पदकी परिभाषा देनेमें हम पहिले यह निर्णय करते हैं कि वस्तुओंके किस वर्गमें वह आता है और तब हम उस गुण या गुणोंके समूहको बताते हैं जो उसे उस वर्गके अन्य सदस्योंसे अलग करता है। उदाहरणके लिये, हम 'मनुष्य' की परिभाषा यह कहकर देते हैं कि 'मनुष्य एक बुद्धिमान् प्राणी है' अर्थात् मनुष्य 'प्राणित्व' गुणसे युक्त है जो कि आसन्नतम जाति 'प्राणी' का स्वभाव है

पदका स्वभाव = उसकी आसन्नतम जातिका स्वभाव + व्यावर्तक गुण।

और उसका व्यावर्तक गुण है 'बुद्धिमान् होना'। इसी तरह 'त्रिभुज' की परिभाषा है 'तीन सीधी रेखाओंसे घिरी हुई एक समतलाकृति'। इसमें 'समतलाकृति' आसन्नतम जाति है और व्यावर्तक गुण है 'तीन सीधी रेखाओंसे घिरी हुई होना'।

टिप्पणी. परिभाषा और वर्णन (Description): इनका वाच्यधर्मोंसे सम्बन्ध.

गुण तीन समूहोंमें आते हैं: वे जिनसे पदका स्वभाव बनता है, वे जो स्वभावके परिणाम होते हैं (सहज गुण) और वे जो न स्वभावमें शामिल होते हैं और न उसके परिणाम होते हैं (आकस्मिक गुण)। अब अगर हम सम्पूर्ण स्वभावका अर्थात् आसन्नतम जाति और व्यावर्तक गुणका कथन करते हैं तो यह पदकी परिभाषा हो जाती है। अगर हम सहज गुण या आकस्मिक गुण मात्रका या स्वभावके एक हिस्से मात्रका उल्लेख करते हैं तो यह **वर्णन** है। इस प्रकार प्लैटों ने 'मनुष्य' का वर्णन करते हुए कहा था कि 'मनुष्य बग़ैर पंखोंका द्विपद है'। कभी-कभी वर्णनमें सहज और आकस्मिक गुणोंके अलावा पदके स्वभावके एक भागका उल्लेख भी रहता है। उदाहरणके लिये, घोड़ा वह जानवर है जिसकी अयाल होती है और पूंछ होती है तथा जिसकी बड़ी क़ीमत होती है; शेर एक जंगली जानवर है जिसकी आकृति बिल्लीकी-सी होती है लेकिन जो बिल्लीसे कहीं बड़ा होता है। वर्णनका उद्देश्य यह होता है कि जिस वस्तुके बारेमें कहा जाता है उसे हम पहिचान सकें।

वर्णन और परिभाषाकी तुलनाके सम्बन्धमें नीचे लिखीं बातें ध्यान देने योग्य हैं:—

(१) परिभाषा सम्पूर्ण स्वभावका कथन करती है, जबकि वर्णन सहज और आकस्मिक गुण तथा कभी-कभी स्वभावके एक हिस्सेका कथन करता है। अतः यह स्पष्ट है कि सभी वर्णनोंका समान मूल्य नहीं होता। वर्णनमें उल्लिखित गुणोंका जितना अधिक महत्त्व होगा, वस्तुको

पहिचाननेमें वर्णनका उतना ही अधिक मूल्य होगा।

(२) परिभाषा वैज्ञानिक होती है जबकि वर्णन लौकिक (popular) होता है; पहिलेका लक्ष्य हमारे वस्तुविषयक विचारोंको स्पष्ट करना होता है और दूसरेका लक्ष्य किसी वस्तुकी आसानीसे पहिचान कराना होता है।

(३) वर्णन किसी पदका नहीं होता। परिभाषा किसी पदकी की जाती है और वर्णन उस वस्तुका जिसका वह पद नाम होता है।

(४) परिभाषामें पदके स्वभावका पूरा-पूरा कथन किया जाता है; अतः जिन पदोंका स्वभाव नहीं होता उनकी परिभाषा नहीं हो सकती। ऐसी दशामें पदको स्पष्ट करनेका एकमात्र तरीक़ा यह है कि हम उस पदके द्वारा निर्दिष्ट वस्तुओंका वर्णन उनकी पहिचान करानेवाले किसी गुणका उल्लेख करके करें।

भाग २. परिभाषाके नियम और उनके उल्लंघनसे पैदा होनेवाले दोष.

परिभाषा में निम्नलिखित नियमोंका पालन होना चाहिए:— नियमः

नियम १. परिभाषामें परिभाषित पदके सम्पूर्ण स्वभावका कथन होना चाहिए, न उससे कम न अधिक। १. पूरे स्वभावका कथन होना चाहिए।

किसी पदका स्वभाव समान और आवश्यक गुणोंसे बनता है। अतः पदकी परिभाषामें अनावश्यक गुणोंका उल्लेख नहीं होना चाहिए। समान गुणोंका उल्लेख भी तभी करना चाहिए जब वे आवश्यक हों, अन्यथा नहीं। उदाहरणके लिये, 'मनुष्य' पदका स्वभाव 'प्राणित्व' और 'बुद्धिमत्ता' नामक समान और आवश्यक गुणोंसे बनता है, इसलिए 'मनुष्य' की परिभाषा यह हुई कि 'मनुष्य एक बुद्धिमान् प्राणी है'। इसी तरह 'त्रिभुज' पदकी परिभाषा हुई: 'त्रिभुज तीन सरल रेखाओंसे घिरी हुई समतलाकृति है'।

दोष।

इस नियमके उल्लंघनसे या तो स्वभावसे अधिक कथन करने का दोष होता है या स्वभावसे कम कथन करनेका।

स्वभावसे अधिक कथन करनेसे उत्पन्न दोष :

(अ) अगर परिभाषामें स्वभावसे अधिक कथन किया गया है तो जिस अधिक गुणका कथन किया गया है वह या तो (१) सहज गुण, (२) या अवियोज्य आकस्मिक गुण, (३) या वियोज्य आकस्मिक गुण होगा, और इनसे क्रमशः व्यर्थ, आकस्मिक और अव्याप्त परिभाषा नामक दोष पैदा होंगे।

(१) व्यर्थ परिभाषा।

(१) यदि अतिरिक्त गुण एक सहज गुण है (वह गुण जो स्वभाव का अंग नहीं है लेकिन उसका परिणाम है) तो **व्यर्थ** परिभाषाका दोष (redundant definition) पैदा होता है। यह अतिरिक्त गुण एक समान गुण है लेकिन आवश्यक नहीं, और इसलिए परिभाषामें उसका उल्लेख करना व्यर्थ है। उदाहरणके लिये, 'त्रिभुज तीन सरल रेखाओं से घिरी हुई और तीन कोणोंवाली समतलाकृति है' यह व्यर्थ परिभाषा है क्योंकि इसमें 'तीन कोणोंवाली' होनेका गुण व्यर्थ है।

(२) आकस्मिक परिभाषा।

(२) यदि अतिरिक्त गुण अवियोज्य आकस्मिक गुण (अर्थात् यदि वह न तो स्वभावका अंग है, न स्वभावका परिणाम, यद्यपि परिभाषित पदके द्वारा निर्दिष्ट सभी वस्तुओंमें पाया जाता है) है तो **आकस्मिक** परिभाषाका दोष पैदा होता है, जैसे, 'मनुष्य एक हंसनेवाला प्राणी है' यह आकस्मिक (accidental) परिभाषा है क्योंकि 'हंसनेवाला' होने का गुण सब मनुष्योंमें पाये जाने पर भी 'मनुष्य' पदके स्वभावका अंग नहीं है।

आकस्मिक परिभाषाके अन्य उदाहरण :—

मनुष्य दो हाथ और दो पैरोंवाला बुद्धिमान् प्राणी है; मनष्य अपने लिये कपड़े बनानेवाला प्राणी है; चावल भारत में खाया जानेवाला पदार्थ है; कुत्ता एक पालतू जानवर है; सिपाही अपने देशके लिये मरनेको तैयार रहनेवाला बहादुर आदमी है; विद्यार्थी वह युवक है जो किताब लेकर किसी शिक्षा-संस्था में जाता है; सोना एक क़ीमती

धातु है; दिन सूर्योदय और सूर्यास्तके बीचका समय है; सूर्य दिनमें चमकनेवाला तारा है; मनुष्य मकान बनानेवाला प्राणी है; मछली पानीमें रहनेवाला प्राणी है; राजदूत वह ईमानदार आदमी है जो अपने देशके हितके लिये झूठ बोलनेके लिये विदेश भेजा जाता है और वकील वह ईमानदार आदमी है जिसे अपने देशके अन्दर झूठ बोलने का इनाम मिलता है (सर हेन्री वोटन)।

(३) अव्याप्त परिभाषा।

(३) यदि अतिरिक्त गुण वियोज्य आकस्मिक गुण है (अर्थात् वह आकस्मिक गुण जो परिभाषित पदके द्वारा निर्दिष्ट कुछ वस्तुओंमें पाया जाता है, सबमें नहीं) तो **अव्याप्त** (too narrow) परिभाषा का दोष होता है, क्योंकि ऐसी परिभाषा पूरे पद पर लागू नहीं होती बल्कि उसके निर्देशके एक हिस्से पर लागू होती है। 'मनुष्य एक सभ्य बुद्धिमान प्राणी है' यह अव्याप्त परिभाषा है क्योंकि 'सभ्य' होनेका गुण सब मनुष्यों में नहीं होता। इसी तरह 'त्रिभुज तीन बराबर सरल रेखाओं से घिरी हुई समतलाकृति है' यह अव्याप्त परिभाषा है।

स्वभावसे कम कथन करनेसे उत्पन्न दोष: अतिव्याप्त परिभाषा।

(ब) यदि परिभाषा स्वभावसे कम कथन करती है तो **अतिव्याप्त** (too wide) परिभाषाका दोष होता है, क्योंकि उस दशामें वह परिभाष्य पदके निर्देशमें शामिल वस्तुओंसे अधिक वस्तुओं पर लागू होती है। 'मनुष्य एक प्राणी है' यह अतिव्याप्त परिभाषा है क्योंकि यह न केवल मनुष्यों पर लागू होती है बल्कि अन्य प्राणियों पर भी; इसी तरह 'कुनीन एक दवा है', 'हीरा एक प्रकारका कार्बन है', 'पत्थर एक कठोर पदार्थ है' अतिव्याप्त परिभाषाएं हैं।

नियम २. परिभाषाको दुर्बोध या आलंकारिक नहीं होना चाहिए।

नियम २. परिभाषाको परिभाष्य पदसे अधिक स्पष्ट होना चाहिए और इसलिए उसमें आलंकारिक, अनेकार्थक या दुर्बोध भाषाका प्रयोग नहीं होना चाहिए।

दोष:

इस नियमको तोड़नेसे **आलंकारिक (Figurative)** और **दुर्बोध (Obscure)** परिभाषा के दोष होते हैं।

आलंकारिक परिभाषाओंके उदाहरण : शेर जंगली जानवरोंका

आलंकारिक परिभाषाएं।

राजा है ; मनुष्य सृष्टिका शिरोमणि है ; आवश्यकता आविष्कारकी जननी है ; रोटी ज़िन्दगीकी लकड़ी है ; संगीत एक खर्चीला शोर है ; कवि माधुर्य और प्रकाशका दूत है ; अज्ञान एक अन्धा मार्गदर्शक है ; श्रम जीवनका नमक है ; तर्कशास्त्र मनकी दवा है ; बचपन जीवनकी सुबह है ; बच्चा मनुष्यका पिता है ; काल नित्यताकी चलती-फिरती प्रतिमा है।

दुर्बोध परिभाषाएं।

दुर्बोध परिभाषाओंके उदाहरण : पेंशन एक भत्ता है जो किसीको बिना कामके दिया जाता है ; लड़की एक उर्ध्वस्थ जैविक तथ्य है जो घाघरा पहिनता हो।

नियम ३. परिभाषामें परिभाष्य पद नहीं होना चाहिए।

नियम ३. परिभाषामें परिभाष्य पद या उसके किसी पर्यायको नहीं आना चाहिए।

दोष :

इस नियमको तोड़नेसे **पर्यायोक्ति-दोष** (**Synonymous definition**) या **चक्रक-दोष** (**Circle in definition**) होता है।

चक्रक दोष।

उदाहरण : सत्यता वाणी और कर्मकी सचाई है ; जीवन जीवन-व्यापारोंका योग है ; शक्ति गति पैदा करनेवाली ताक़त है ; मनुष्य मानवीय प्राणी है ; पेड़ एक वानस्पतिक शरीर है ; गुरुत्वाकर्षण द्रव्य का सामान्य धर्म है जिसके कारण प्रत्येक वस्तु एक-दूसरेको आकर्षित करती है ; लेखक लिखनेवाला है ; प्रसादका मतलब सुख है ; सूर्य सौर-मण्डलका केन्द्र है ; उत्पादक श्रमका अर्थ है सम्पत्तिका उत्पादन करनेवाला श्रम ; मौखिक समझौतेका लिखित होना ज़रूरी नहीं है।

नियम ४. परिभाषाको निषेधात्मक नहीं होना चाहिए।

नियम ४. परिभाषा जब विधानात्मक हो सकती है तब उसे निषेधात्मक नहीं होना चाहिए।

परिभाषाको यह कहना चाहिए कि पदका अर्थ क्या है, लेकिन एक निषेधात्मक वाक्य केवल यह कहता है कि पदका अर्थ क्या नहीं है। अतः अगर परिभाषाका विधानात्मक होना सम्भव हो तो उसे निषेधात्मक नहीं होना चाहिए।

इस नियमको भंग करनेसे **निषेधात्मक (negative)** परिभाषा का दोष होता है। दोष : निषेधात्मक परिभाषा।

उदाहरण : पुण्य पाप नहीं है ; सत्य असत्य नहीं है ; आत्मा द्रव्य नहीं है ; द्रव वह है जो ठोस या वायुरूप न हो ; शान्ति युद्धका अभाव है ; सोना जागनेका विरोधी है।

कभी-कभी जब किसी पदकी परिभाषा देना मुश्किल या असम्भव लगता है तब निषेधात्मक परिभाषासे वर्णनका काम लिया जा सकता है।

संक्षेप में : **परिभाषाको पर्याप्त, निश्चित, स्पष्ट होना चाहिए और पुनरुक्ति या निषेधात्मक नहीं होना चाहिए।**

भाग ३. परिभाषाकी सीमाएं.

परिभाषाकी सीमाएं निम्नलिखित हैं :—

(क) **सर्वोच्च जाति** की परिभाषा नहीं हो सकती। परिभाषा में आसन्नतम जातिका कथन होता है। लेकिन सर्वोच्च जाति सबसे बड़ी जाति होनेसे किसी बड़े वर्गके अन्तर्गत नहीं होती और इसलिए अपरिभाष्य होती है। सर्वोच्च जाति।

(ख) **एकवाचक गुणवाचक नाम** प्रारम्भिक गुणोंके नाम होते हैं और उनसे अधिक सरल या प्रारम्भिक कोई चीज़ नहीं होती, अतः उनकी परिभाषा नहीं हो सकती, जैसे, समानता, वर्गत्व इत्यादि की परिभाषा नहीं हो सकती। एकवाचक गुणवाचक नाम।

(ग) **व्यक्तिवाचक नाम और वस्तुएं.** व्यक्तिवाचक नामोंका स्वभाव नहीं होता और जब स्वभाव होता ही नहीं तो उसका कथन कहांसे होगा? वस्तुओंके अनन्त गुण होते हैं और उनका पूरा-पूरा कथन असम्भव होता है। अतः उनकी परिभाषा नहीं हो सकती। उनको समझानेका एक ही तरीक़ा है और वह है किसी समयोचित वर्णनका सहारा लेना। व्यक्तिवाचक नाम और वस्तुएं।

हल किये हुए प्रश्न

प्रश्न. निम्नलिखित परिभाषाओंकी जांच कीजिये :—

(क) कुत्ता एक पालतू जानवर है।

उत्तर. यह तार्किक परिभाषा नहीं है क्योंकि 'पालतू जानवर' होना कुत्तेका एक आकस्मिक गुण है। इसमें सम्पूर्ण स्वभावके बजाय एक आकस्मिक गुण मात्रका कथन किया गया है। अत: यह आकस्मिक परिभाषा या वर्णन मात्र है।

(ख) कवि माधुर्य और प्रकाशका दूत है।

उत्तर. यह आलंकारिक परिभाषा है क्योंकि सम्पूर्ण स्वभावके बजाय आलंकारिक वर्णन मात्र किया गया है।

(ग) शान्ति बेचैनीका अभाव है।

उत्तर. यह निषेधात्मक परिभाषा है क्योंकि 'बेचैनीका अभाव' कहनेसे केवल उस बातका बोध होता है जो शान्ति नहीं है जबकि परिभाषाको कहना चाहिए कि वह है क्या।

(घ) शेर तस्वीरमें बने हुए जानवरकी तरह होते हैं।

उत्तर. यह वर्णन मात्र है, तार्किक परिभाषा नहीं क्योंकि यह स्वभावका कथन नहीं है।

अभ्यासार्थ प्रश्न ५

१. तार्किक परिभाषा क्या है? इसकी सीमाएं और आकार-विषयक नियम बताइये।

२. क्या पदकी परिभाषामें पदके द्वारा निर्दिष्ट वर्गमें रहनेवाले सभी समान गुण आ जाते हैं? अगर नहीं तो किन समान गुणोंका उसमें समावेश होना चाहिए?

३. एक ठोस उदाहरण देकर इस कथनको स्पष्ट कीजिये कि परिभाषा में जाति और व्यावर्तक गुणका उल्लेख होना चाहिए।

४. सही परिभाषाके तार्किक नियमोंको उदाहरण देकर समझाइये। परिभाषाका वाच्यधर्मोंसे क्या सम्बन्ध होता है?

५. तार्किक परिभाषाके नियमोंको सोदाहरण समझाइये और उनके भंग होनेसे जो दोष पैदा होते हैं उन्हें भी बताइये। परिभाषाकी सीमाएं क्या हैं?

६. वाच्यधर्मोंका पदकी परिभाषा और वर्णनसे सम्बन्ध बताइये।

७. कुछ पदोंकी परिभाषा हो सकती है और कुछकी नहीं। ऐसा क्यों होता है?

८. परिभाषाके मुख्य दोष क्या हैं? चक्रक-दोष क्या है? उदाहरण भी दीजिये।

९. परिभाषा और वर्णनके अन्तरको ठोस उदाहरण देते हुए समझाइये।

१०. परिभाषाकी ये परिभाषाएं दी गई हैं: "परिभाषा किसी नाम के स्वभावका कथन है"; "परिभाषा किसी प्रत्ययके अर्थका स्पष्टीकरण है"; "परिभाषा अब तक ज्ञात वास्तविक वस्तुओंके आवश्यक स्वरूपका विश्लेषण है"। अपने शब्दोंमें इन कथनोंका अर्थ समझाइये। परिभाषा के स्वरूपका सबसे अधिक पर्याप्त कथन आपके मतमें क्या है?

११. नीचे लिखी परिभाषाओंकी जांच कीजिये:—

(क) वर्ग वह चार भुजाओंवाली आकृति है जिसकी चारों भुजाएं बराबर हों और चारों कोण समकोण हों।

(ख) चांदी वह धातु है जो सोनेसे कम क़ीमती हो।

(ग) कागज़ वह पदार्थ है जो चीथड़ोंसे बना हो।

(घ) समकोण त्रिभुज वह त्रिभुज है जिसका एक कोण समकोण हो और दो भुजाएं समान या असमान हों।

(ङ) मनुष्य एक आत्म-चेतन प्राणी है।

(च) मनुष्य आदतोंकी गठरी है।

(छ) तर्कशास्त्र एक मानसिक विज्ञान है।

(ज) भूख वह चीज़ है जो आदमीके भोजनकी उपयोगिता पर विचार करनेसे पैदा होती है।

(झ) टीन सोनेसे हलकी धातु है।

(ञ) शरीफ़ आदमी वह है जो अच्छे समाजमें घूमता है।

(ट) शरीर आत्माका चिह्न है।

(ठ) शान्ति युद्धका अभाव है।

(ड) ज्ञान शक्ति है।

(ढ) मन सोचनेवाला पदार्थ है।

(ण) जीवन आन्तरिक सम्बन्धोंका बाह्य सम्बन्धोंसे निरन्तर होने वाला समायोजन है।

(त) प्रतिभासम्पन्न व्यक्ति वह है जो अपनी रोज़ी न कमा सकता हो।

(थ) शिक्षा वह है जो प्रत्येक सीखी हुई चीज़के भुला दिये जाने पर बाक़ी बचती है।

(द) बंक व्यापारके लिये आवश्यक संस्थाएं हैं।
(ध) कारण वह है जो समयमें हमेशा पहिले होता हो।
(न) वास्तुशिल्प घनीभूत संगीत है।
(प) कूटनीतिज्ञ वह है जो अपने बारेमें कभी बात नहीं करता जबकि उसके मुलाक़ाती उसके बारेमें बात करना चाहते हैं।
(फ) जीवन वह दुर्घटना है जो मृत्युसे पहिले होती है।
(ब) पर्याय वह शब्द है जिसका इस्तेमाल आप तब करते हैं जब दूसरे शब्दके हिज्जे नहीं जानते।
(भ) राजनीतिज्ञ विधानसभाका सदस्य है।
(म) बुद्धि आत्माका नेत्र है।

टिप्पणी. परिभाषाका दोष मालूम करनेमें हो सकता है कि एक से अधिक नियमोंका उल्लंघन होना प्रकट हो। अतः प्रत्येक दृष्टान्तमें न केवल दोषका नाम देना ज़रूरी है बल्कि उसके दूषित होनेका कारण बताना भी ज़रूरी है।

Miss. Bharati Sinha
B.A. 1st year
University, Sagar

६

तार्किक विभाजन

भाग १. तार्किक विभाजनका स्वरूप.

तार्किक विभाजन किसी जाति या उच्च वर्गको एक सिद्धान्तके अनुसार उसकी उपजातियों या निम्न वर्गोंमें तोड़ना है। तार्किक विभाजन

इस तरह जैसे तार्किक परिभाषा किसी पदके स्वभावका कथन होता है वैसे ही तार्किक विभाजन पदके निर्देशका विश्लेषण होता है। किसी पदके द्वारा निर्दिष्ट वस्तुओंको गिनना तार्किक विभाजन नहीं है, बल्कि इसका अर्थ है जातिको उसकी अंशभूत उपजातियोंमें बांटना। इस प्रकार तार्किक विभाजन हमेशा किसी वर्गका उपवर्गोंमें विभाजन होता है, किसी व्यक्तिका उसके अंगोंमें विभाजन नहीं।

तार्किक विभाजन भौतिक विभाजन (physical division) और आभिधर्मिक विभाजन (metaphysical division) से अलग चीज है।

भौतिक विभाजन का अर्थ है व्यक्तिको उसके अंशभूत अवयवोंमें बांटना। उदाहरणके लिये, पेड़को उसकी जड़ों, पत्तियों, शाखाओं और तनेमें बांटना, मनुष्यको उसके सिर, धड़, हाथ, पांव इत्यादिमें, त्रिभुज को उसकी तीन भुजाओंमें बांटना भौतिक विभाजन है। **भौतिक विभाजन और**

आभिधर्मिक विभाजन किसी वस्तु या वस्तुओंके वर्गका उसके धर्मों या गुणोंमें विश्लेषण करना है। जैसे, अगर हम शीशेका कठोरता, पारदर्शिता इत्यादिमें विश्लेषण करें तो यह आभिधर्मिक विभाजनका दृष्टान्त होगा। मनुष्यका उसके गुणों 'बुद्धिमत्ता' और आभिधर्मिक विभाजनसे भिन्न है।

'प्राणित्व' में विभाजन दूसरा दृष्टान्त है। आभिधर्मिक विभाजन को प्रत्ययसम्बन्धी विश्लेषण (conceptual analysis) भी कहते हैं।

विभाजक धर्म।

तार्किक विभाजनमें हम किसी ऐसे धर्मके बारेमें सोचते हैं जो वर्ग के कुछ सदस्योंमें पाया जाता है और अन्योंमें नहीं और इसे विभाजक धर्म (fundamentum divisionis) कहते हैं। उदाहरणके लिये 'मनुष्य' वर्गका विभाजन करनेमें हम देखते हैं कि कुछ मनुष्य सभ्य होते हैं और कुछ नहीं होते, अतः हम सभ्यताके गुणके होने या न होनेको विभाजनका आधार बनाते हैं। यह स्पष्ट है कि एक ही वर्गका अलग-अलग विभाजक धर्मोंके अनुसार अलग-अलग उपवर्गोंमें विभाजन हो सकता है। इस तरह 'मनुष्य' का श्वेत और अश्वेत, लम्बे और जो लम्बे नहीं हैं, सभ्य और असभ्य, यूरोप के निवासी और जो यूरोप के निवासी नहीं हैं, इत्यादिमें विभाजन हो सकता है।

टिप्पणी. विभाजन और परिभाषा: विभाजनका सम्बन्ध पदोंके निर्देशसे होता है और परिभाषाका उनके स्वभावसे। अधिकतर पदों का निर्देश और स्वभाव दोनों होता है। ये अर्थ आपसमें घनिष्ठ सम्बन्ध रखते हैं और वास्तवमें एक ही चीजके दो पहलू होते हैं। अतः विभाजन और परिभाषा मिलकर पदोंके पूरे अर्थको स्पष्ट कर देते हैं। पदके द्वारा निर्दिष्ट वर्गमें कौन-से उपवर्ग शामिल हैं, यह विभाजन बताता है जबकि उनके समान और आवश्यक गुण क्या हैं, यह परिभाषा बताती है। इस प्रकार विभाजन और परिभाषा परस्पर सहायक प्रक्रियाएं हैं।

भाग २. तार्किक विभाजनके नियम और उनके भंग होनेसे होनेवाले दोष.

तार्किक विभाजनको निम्नलिखित नियमोंके अनुसार होना चाहिए, ये नियम इस प्रक्रियाके स्वरूपसे प्राप्त होते हैं।

नियम १. तार्किक विभाजन हमेशा किसी वर्गका होता है व्यक्ति

का नहीं। उदाहरणके लिये, हम 'मनुष्य' पदका तार्किक विभाजन कर सकते हैं लेकिन 'सिकन्दर महान्' का नहीं कर सकते। नियम १. तार्किक विभाजन वर्ग का होता है।

यह तार्किक विभाजनकी परिभाषा में ही गर्भित है। यही विशेषता तार्किक विभाजनको भौतिक विभाजन और आभिधर्मिक विभाजनसे अलग करती है।

नियम २. तार्किक विभाजनमें एक वक्त एक ही विभाजक धर्म होना चाहिए। अर्थात् कोई एक ही गुण ऐसा हो जो विभाज्य वर्गके कुछ सदस्योंमें मौजूद हो और अन्य सदस्योंमें मौजूद न हो। इस प्रकार 'विद्यार्थी' का बुद्धिमान् और अबुद्धिमानमें विभाजन किया जा सकता है—इसमें विभाजक धर्म है कुछ विद्यार्थियोंमें बुद्धिका होना और अन्यों में न होना। नियम २. केवल एक विभाजक धर्म होना चाहिए।

इस नियमके भंग होनेसे **विभाग-संकरता (cross division)** का दोष पैदा होता है। उदाहरणके लिये, 'मनुष्य' का लम्बे, सफ़ेद, सभ्य और यूरोपियन में विभाजन करनेमें चार विभाजक धर्म हैं: क़दकी, त्वचाके रंगकी, सभ्यताकी और नस्लकी भिन्नताएं। 'त्रिभुज' का समत्रिबाहु और समकोण त्रिभुजमें विभाजन करनेमें दो विभाजक धर्म हैं: भुजाओं और कोणोंके प्रकार। दोष।

नियम ३. तार्किक विभाजनमें उन उपवर्गोंको जिनमें किसी पद को विभाजित किया गया है, मिलकर विभाज्य वर्गके बराबर होना चाहिए। दूसरे शब्दोंमें, उपवर्गोंके निर्देशोंका योग विभाज्य वर्गके निर्देशके तुल्य होना चाहिए। उदाहरणके लिये, अगर हम 'भौतिक पदार्थों' को ठोस, द्रव और वायव्यमें विभाजित करें तो उपवर्ग मिलकर 'भौतिक पदर्थ' पदके पूरे निर्देशके बराबर हो जाते हैं। नियम ३. उपवर्गोंको मिलकर विभाज्य वर्ग के बराबर होना चाहिए।

इस नियमके भंग होनेसे अव्याप्त (too narrow) और अतिव्याप्त (too wide) विभाजनके दोष होते हैं। अगर कोई उपजाति छूट गई है तो यह **अव्याप्त** विभाजन है, उदाहरणके लिये, त्रिभुजोंका समद्विबाहु और समत्रिबाहुमें विभाजन (इसमें विषमबाहु त्रिभुज छूट **दोष।**

गये हैं)। अगर विभाजनमें ऐसे वर्ग शामिल हो जाते हैं जो विभाज्य जातिमें शामिल नहीं हैं तो यह **अतिव्याप्त** विभाजन है, जैसे सिक्कोंका सोने, चाँदी, तांबे, पीतल इत्यादिके बने हुए और नोटोंमें विभाजन।

नियम ४. उपवर्गोंको परस्पर व्यावर्तक होना चाहिए।

नियम ४. तार्किक विभाजनमें उपवर्गोंको परस्पर व्यावर्तक होना चाहिए।

इस नियमका मतलब यह है कि कोई भी व्यक्ति एक साथ एकसे अधिक उपवर्गोंमें शामिल न हो। उदाहरणके लिये, अगर हम 'त्रिभुज' को समद्विबाहु, समत्रिबाहु और विषमबाहुमें बांटें तो ये उपवर्ग परस्पर व्यावर्तक हैं अर्थात् कोई त्रिभुज एकसे अधिक समूहोंमें नहीं पड़ता।

यह नियम दूसरे नियममें गर्भित है जिसके अनुसार एक वक्तमें एक ही विभाजक धर्म होना चाहिए। अगर विभाजक धर्म एक होगा तो उपवर्ग परस्पर व्यावर्तक होंगे, लेकिन अगर एकसे ज़्यादा विभाजक धर्म होंगे तो उपवर्ग एक-दूसरेको अंशत: आच्छादित कर देंगे।

दोष।

इस नियमके भंग होनेसे **साच्छादनता-दोष** (**overlapping-division**) पैदा होता है। उदाहरणके लिये, अगर 'मनुष्य' को सफ़ेद और लम्बेमें बांटा जाय तो यह दोष होगा क्योंकि सफ़ेद मनुष्य लम्बे हो सकते हैं और लम्बे मनुष्य सफ़ेद हो सकते हैं और इस तरह उपवर्ग एक-दूसरेको आच्छादित कर देते हैं।

नियम ५. वर्गका नाम उपवर्गों पर लागू होना चाहिए।

नियम ५. विभाज्य वर्गका नाम उसी अर्थमें सब उपवर्गों पर लागू होना चाहिए। उदाहरणके लिये, 'त्रिभुज' नाम समद्विबाहु, समत्रिबाहु और विषमबाहु प्रत्येक पर लागू होता है।

यह नियम तीसरे नियममें गर्भित है। अगर कोई ऐसा उपवर्ग हो जिसपर वर्गका नाम लागू नहीं होता तो स्पष्टतया उपवर्गोंका निर्देश मिलकर विभाज्य वर्गके निर्देशसे बड़ा होगा।

दोष।

इस नियमके भंग होनेसे **भौतिक या आभिधर्मिक** विभाजनका दोष होता है। उदाहरणके लिये, अगर हम 'मनुष्य' को सिर, धड़, हाथ, पैर इत्यादिमें बांटते हैं तो 'मनुष्य' नाम निश्चय ही शरीरके इन

विभिन्न अंगों पर अलग-अलग लागू नहीं होता। इसी तरह, अगर हम 'एशिया' को जापान, चीन, तुर्की, पर्सिया, भारत इत्यादिमें बांटते हैं तो यह तार्किक विभाजन नहीं है क्योंकि 'महाद्वीप' नाम इन देशों पर अलग-अलग लागू नहीं होता। ये दोनों ही भौतिक विभाजनके उदाहरण हैं। अगर हम 'मनुष्य' का 'प्राणित्व' और 'बुद्धिमत्ता' में विश्लेषण करें तो 'मनुष्य' नाम इन गुणों पर लागू नहीं होता। इस तरह यह तार्किक विभाजन नहीं है बल्कि आभिधर्मिक विभाजन है।

नियम ६. विभाजनकी जारी रहनेवाली प्रक्रियामें वर्ग या उपवर्गको आसन्नतम उपवर्गोंमें बांटना चाहिए। विभाजनमें छलांग (jump) नहीं लेनी चाहिए। जब विभाजनमें एकसे अधिक चरण होते हैं तो उसको अविच्छिन्न होना चाहिए अर्थात् क़दम-क़दम करके आगे बढ़ना चाहिए और किसी मध्यवर्ती उपजातिको नहीं छोड़ना चाहिए। नियम ६. विभाजन आसन्नतम उपवर्गोंमें होना चाहिए।

इस नियमके भंग होनेसे **अव्याप्त** विभाजनका दोष होता है। इस प्रकार 'सीधी रेखाओंसे घिरी समतलाकृति' को तुरन्त इस तरहकी दूरस्थ उपजातियोंमें जैसी समत्रिबाहु त्रिभुज, वर्ग, समानान्तर चतुर्भुज इत्यादि हैं, नहीं बांटना चाहिए। दोष।

अन्तमें यह ध्यान रखना चाहिए कि ऊपर दिये हुए सभी नियम परस्पर जुड़े हुए हैं और उनमेंसे एकके भंग होनेमें अन्य नियमोंका भंग होना भी शामिल हो सकता है। अत: हम देखते हैं कि एक विशेष उदाहरणमें एकसे अधिक दोष पाये जाते हैं।

भाग ३. द्विवर्गाश्रित विभाग (Division by Dichotomy).

विभाजनके नियमोंके अनुसार एकसे अधिक विभाजक धर्म नहीं होने चाहिए, यह हम देख ही चुके हैं। साथ ही उपवर्गोंको परस्पर व्यावर्तक होना चाहिए और उनके निर्देशोंके योगको विभाज्य वर्गके निर्देशके तुल्य होना चाहिए। अब, यह स्पष्ट है कि एक विशेष

द्विवर्गाश्रित विभाग एक आकार-विषयक प्रक्रिया है।

तार्किक विभाजन इन नियमोंका पालन करता है या नहीं, ऐसा हम असन्दिग्ध रूपसे तब तक नहीं कह सकते जब तक कि हमें विभाज्य वर्ग में आनेवाली चीज़ोंकी जानकारी न हो। लेकिन आकारविषयक तर्कशास्त्रमें ऐसी जानकारीका अभाव रहता है और इसीलिए कुछ तर्कशास्त्री विभाजनको द्रव्यविषयक तर्कशास्त्रका अंग मानते हैं। अत: आकारविषयक तर्कशास्त्रियोंने एक प्रकारका विभाजन बनाया है जिसे वे **द्विवर्गाश्रित विभाग** कहते हैं, जिसमें विभाज्य वर्गकी वस्तुओं की जानकारी न रखते हुए भी विभाजनके आकार मात्रसे हम निश्चित रूपसे कह सकते हैं कि विभाजनके नियमोंका पालन हुआ है।

यह दो उपवर्गोंमें बांटना है जिनमेंसे एक विधिवाचक नामवाला और दूसरा निषेधवाचक नामवाला होता है।

द्विवर्गाश्रित विभागका अर्थ है प्रत्येक क़दम पर उच्च वर्गका ऐसे दो उपवर्गोंमें विभाजन जिनमेंसे एकका नाम विधिवाचक हो और दूसरेका उसका निषेधवाचक। चूंकि दोनों उपवर्ग विधिवाचक और निषेधवाचक पद होते हैं, इसलिए एकसे अधिक विभाजक धर्म नहीं हो सकते। व्याघात और मध्यदशा-परिहारके नियमोंके अनुसार इन दो उपवर्गोंको परस्पर व्यावर्तक होना चाहिए और मिलकर विभाज्य वर्ग के निर्देशके बराबर होना चाहिए। इस प्रकार इस विधिसे विभाजन के नियमोंका पालन हो जाता है और फिर भी सम्बन्धित वस्तुओंकी जानकारी आवश्यक नहीं रहती।

सांकेतिक उदाहरण

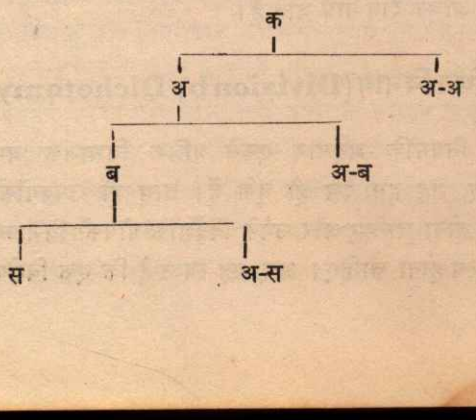

ठोस उदाहरण

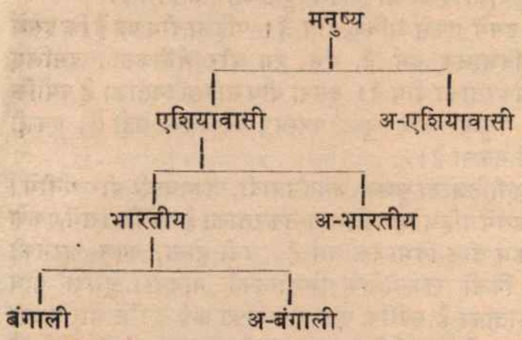

इसकी अच्छाई और कमज़ोरी।

द्विवर्गाश्रित विभागकी खास अच्छाई यह है कि इससे विभाजन के पूर्ण होनेका आश्वासन मिल जाता है। यह आकारकी दृष्टिसे पूर्ण होता है क्योंकि यह व्याघात और मध्यदशा-परिहारके नियमों पर आधारित होता है। लेकिन इसके विरुद्ध एक गम्भीर आरोप यह है कि विभाजनके हरेक क़दम पर निषेधवाचक पदके द्वारा निर्दिष्ट उपवर्ग अस्पष्ट और अनिश्चित रहता है।

हल किये हुए प्रश्न

संकेत. जैसे तार्किक परिभाषामें वैसे ही तार्किक विभाजनमें भी दिये हुए उदाहरणमें एकसे अधिक दोष हो सकते हैं। अतः एक दिये हुए विभाजनकी जांच करनेमें हमें न केवल दोषका नाम बताना चाहिए बल्कि दूषित होनेका कारण भी।

प्रश्न. नीचे लिखे विभाजनोंकी जांच कीजिये और बताइये कि वे तार्किक दृष्टिसे सही हैं या नहीं :—

(क) पेड़ोंका तना, जड़ और शाखाओंमें।

उत्तर. यह तार्किक विभाजन नहीं है बल्कि भौतिक विभाजन है क्योंकि इसमें एक पेड़को उसके अवयवोंमें बांटा गया है।

(ख) मनका अनुभूति, ज्ञान और संकल्पमें।

उत्तर. यह तार्किक विभाजन नहीं है बल्कि आभिधर्मिक

विश्लेषण है क्योंकि इसमें मनका उसके गुणोंमें विश्लेषण किया गया है।

(ग) मनुष्योंका सफ़ेद और काले, दुष्ट और क़ातिलमें।

उत्तर. इसमें एकसे अधिक दोष हैं। पहिला दोष यह है कि इसमें एकसे अधिक विभाजक धर्म हैं, जैसे, रंग और नैतिकता। इसलिए इसमें विभाग-संकरताका दोष है। दूसरा दोष साच्छादनताका है क्योंकि उपवर्ग 'सफ़ेद मनुष्य' और 'दुष्ट' परस्पर व्यावर्तक नहीं हैं; एकही मनुष्य दोनों हो सकता है।

(घ) राजनीतिज्ञोंका कुशल, जनतंत्रवादी, राज्यवादी और धनीमें।

उत्तर. इसमें पहिला दोष विभाग-संकरताका है क्योंकि इसमें एकके बजाय कमसे कम तीन विभाजक धर्म हैं: धनी होना, काम करनेकी सामर्थ्य, और किसी राजनीतिक सिद्धान्तको मानना। दूसरा दोष इसमें साच्छादनताका है क्योंकि एक ही व्यक्ति कई वर्गोंमें आ सकता है, जैसे कि एक ही राजनीतिज्ञ कुशल और जनतंत्रवादी दोनों हो सकता है।

अभ्यासार्थ प्रश्न ६

१. ठोस उदाहरण देते हुए तार्किक विभाजनको ससझाइये और परिभाषासे उसका सम्बन्ध बताइये।

२. तार्किक विभाजनके नियमोंको सोदाहरण समझाइये और उनके भंग होनेसे पैदा होनेवाले दोषोंके उदाहरण दीजिये। विभाजनमें किन त्रुटियोंसे बचना चाहिए?

३. तार्किक विभाजनके स्वरूप और उपयोगको बताइये। इसका उदाहरण भी दीजिये। विभाजनमें होनेवाले दोषोंको सोदाहरण बताइये।

४. एक निबन्ध लिखनेमें आप परिभाषा और विभाजन दोनोंका इस्तेमाल करते हैं। यह समझाइये कि इसका प्रयोजन क्या है।

५. तार्किक, भौतिक और आभिधर्मिक विभाजनमें अन्तर बताइये।

६. परिभाषा, विभाजन और वर्गीकरणमें सम्बन्ध बताइये। तार्किक विभाजनकी क्या विशेषताएं हैं?

निम्नलिखित विभाजनोंकी जांच कीजिये :—

(क) क़लमोंका लोहे और सरकन्डेकी क़लमोंमें।

(ख) पशुओंका रीढ़की हड्डीवालों और रीढ़की हड्डीका अभाव वालोंमें।

(ग) भौतिक पदार्थोंका ठोस, द्रव, भारी और हलकेमें।
(घ) रंगका सफ़ेदी, कालिमा और हरेपनमें।
(ङ) भारतीयोंका समृद्ध, दीन, मलेरियासे पीड़ित और यक्ष्मासे पीड़ितमें।
(च) प्रकाशका कृत्रिम, लाल और ज्योत्स्नामें।
(छ) पदोंका एकवाचक, गुणवाचक और स्वभाववाचकमें।
(ज) मनुष्यका सभ्य, लम्बे, ईमानदार और पुरोहितमें।
(झ) मानवका पुरुष, स्त्री और बच्चोंमें।
(ञ) कुर्सीका पाए, पीठ और बैठनेकी तख्तीमें।
(ट) मनुष्यका शरीर, मन और आत्मामें।
(ठ) पुस्तकोंका नैतिक, अनैतिक और चातुर्यपूर्णमें।
(ड) रेलगाड़ीका स्थानीय और बिजलीसे चलनेवालीमें।
(ढ) मनुष्यका चीनी और यहूदीमें।
(ण) ग्रेट ब्रिटेन का इंगलेंड, स्कॉटलैंड और वेल्स में।
(त) सांपोंका विषैले और सीधोंमें।
(थ) कमरेका छत, फ़र्श और दीवारमें।
(द) धातुओंका सफ़ेद, भारी और क़ीमतीमें।
(ध) विज्ञानका सैद्धान्तिक, व्यावहारिक और नियामकमें।
(न) कालेजोंका विज्ञान, कला तथा कानून विद्यालयोंमें।
(प) किताबोंका अच्छी, क़ीमती और बेकारमें।
(फ) मनुष्योंका धूर्त और मूर्खमें।

७

तर्कवाक्य

भाग १. तार्किक वाक्यका विश्लेषण.

वाक्य। उसके तीन भाग। उद्देश्य। विधेय। संयोजक

तर्कवाक्य या वाक्य दो पदोंके किसी सम्बन्धका कथन होता है। इसमें तीन भाग होते हैं: दो पद और तीसरा उनके सम्बन्धका चिह्न। दो पदोंमें से एकको उद्देश्य कहते हैं और दूसरेको विधेय और सम्बन्ध बतानेवाले चिह्न को संयोजक कहते हैं। वाक्यका **उद्देश्य** वह पद होता है जिसके विषयमें कुछ कथन किया जाता है (अर्थात् विधान या निषेध किया जाता है); **विधेय** वह पद होता है जिसका कथन नहीं किया जाता है (यानी जिसका विधान या निषेध होता है); और **संयोजक** विधान या निषेधका चिह्न होता है। उदाहरणके लिये, 'मनुष्य पूण नहीं है' इस वाक्य में 'मनुष्य' और 'पूर्ण' क्रमशः उद्देश्य और विधेय हैं जबकि इनके सम्बन्धका सूचक 'नहीं है' संयोजक है।

तर्कशास्त्रियोंमें संयोजकके स्वरूपके बारेमें कुछ विवाद है और इस विवादके केन्द्र दो सवाल हैं: (१) क्या संयोजक 'होना' क्रियाका वर्तमानकालिक रूप होता है या अन्य रूप भी संयोजक हो सकता है? (२) क्या संयोजक हमेशा विधानात्मक होता है या समयानुसार विधानात्मक और निषेधात्मक दोनों हो सकता है?

संयोजक 'होना' क्रियाका वर्तमान-कालिक रूप होता है।

(१) पहिले सवालका **हैमिल्टन, मैन्सेल, फ़ाउलर** इत्यादि तर्कशास्त्री यह जवाब देते हैं कि संयोजक हमेशा वर्तमान-कालमें होता है, जबकि **मिल** कहता है कि वह किसी भी कालमें हो सकता है। इस विवादके विस्तारमें न जाकर केवल यह कहा जा सकता है कि संयोजक उद्देश्य और विधेयका सम्बन्ध बताता है और इस तरह यह समयके

परिवर्तनसे अछूता रहता ह। अत: उसे वर्तमान कालमें रहना चाहिए। संयोजकको कालके बन्धनसे मुक्त होना चाहिए और कालके तत्वको विधेयमें शामिल होना चाहिए। उदाहरणार्थ, बजाय यह कहने के कि 'सुकरात एक बड़ा दार्शनिक था' तर्कशास्त्रमें हमें यह कहना चाहिए कि 'सुकरात वह व्यक्ति है जो एक बड़ा दार्शनिक था', जिसमें कालका तत्व विधेयमें शामिल है। इसी प्रकार 'जहाज़ मध्याह्न में रवाना होगा' इस वाक्यको तर्कशास्त्रमें 'जहाज वह वस्तु है जो मध्याह्न में रवाना होगा' इस वाक्यके रूपमें रखना चाहिए।

अत: हम मानते हैं कि संयोजकको 'होना' क्रियाका वर्तमान-कालिक रूप होना चाहिए, 'होना' क्रियाके विभिन्न वर्तमानकालिक रूप हैं--हूं, हो, हैं, है। समयके अनुसार संयोजकका इनमेंसे कोई भी एक रूप हो सकता है।

संयोजक विधानात्मक होता है या निषेधात्मक।

(२) दूसरे सवालके बारेमें कुछ तर्कशास्त्रियोंका यह मत है कि संयोजकको हमेशा विधानात्मक होना चाहिए, जबकि अन्योंका मत है कि समयके अनुसार संयोजक विधानात्मक और निषेधात्मक दोनों हो सकता है। जो यह मानते हैं कि संयोजकको विधानात्मक ही होना चाहिए, निषेध-सूचक 'न' या 'नहीं' को वे विधेयमें जोड़नेकी कोशिश करते हैं। 'मनुष्य पूर्ण नहीं है' ऐसा कहनेके बजाय वे कहेंगे 'मनुष्य अ-पूर्ण है'। लेकिन यह कहा जा सकता है कि विधान और निषेध मूलत: भिन्न हैं और शब्दोंका हेर-फेर करके इनके भेदको नहीं मिटाया जा सकता। अत: हम यह मानते हैं कि अगर उद्देश्य और विधेयका सम्बन्ध विधानका है तो संयोजक विधानात्मक होगा और अगर वह निषेधका है तो संयोजक निषेधात्मक होगा।

निष्कर्ष यह है कि **संयोजक को 'होना' क्रियाका कोई वर्तमान-कालिक रूप होना चाहिए और वह विधानात्मक हो सकता है या निषेधात्मक।**

दूसरे शब्दोंमें, संयोजकका रूप इनमें से कोई भी हो सकता है: है

या नहीं है, हूं या नहीं हूं, हो या नहीं हो, हैं या नहीं हैं।

संयोजकके बारेमें एक बात और है जिस पर ध्यान देना चाहिए।

सयोजक अस्तित्वका सूचक नहीं होता।

संयोजक दो पदोंका सम्बन्ध मात्र दिखाता है; अपने आपमें वह उद्देश्य या विधेयके अस्तित्वके बारेमें न विधान करता है और न निषेध। वह उद्देश्य और विधेयकी संगति या असगति मात्रका सूचक है। इस प्रकार, जब हम कहते हैं कि 'सोना पीला है' तो हम सोनेंके अस्तित्वके बारेमें कुछ नहीं कहना चाहते—हम केवल सोना और पीला का सम्बन्ध बताते हैं। जब हम 'नृसिह एक काल्पनिक प्राणी है', 'सोने का पहाड़ गप्प है' इत्यादि वाक्योंका विचार करते हैं तब यह बात स्पष्ट हो जाती है। इस बारेमें जो भ्रम है उसका कारण यह है कि 'होना' क्रियाका अर्थ कभी-कभी 'अस्तित्व होना' होता है। उदाहरणार्थ, 'पाप है' का अर्थ है 'पापका अस्तित्व है'। इस तरहके वाक्यमें 'है' के अन्दर संयोजक और विधेय दोनों शामिल होते हैं और इसे पूरी तरह व्यक्त करनेके लिये हमें कहना चाहिए 'पाप अस्तित्ववान् है'। अतः संयोजक को कभी भी विशेष्यबोधक क्रिया (substantive verb) समझने का भ्रम नहीं करना चाहिए।

टिप्पणी. व्याकरणका वाक्य और तर्कवाक्य.

तथ्यसूचक वाक्य तर्कवाक्यका सबसे निकटवर्ती होता है।

जिसे तर्कशास्त्रमें वाक्य कहते हैं वह व्याकरणके वाक्यसे कुछ-कुछ सादृश्य रखता है। हरेक तर्कवाक्य व्याकरणका वाक्य होता है लेकिन हरेक व्याकरणका वाक्य तर्कवाक्य नहीं होता। व्याकरणके वाक्य कई प्रकारके होते हैं और ये तर्कवाक्योंसे भिन्न होते हैं। व्याकरणमें प्रश्न-वाचक वाक्य होते हैं, इच्छा प्रकट करनेवाले, आदेश देनेवाले और आश्चर्य प्रकट करनेवाले वाक्य होते हैं। तर्कवाक्यका सबसे नजदीकी वाक्य व्याकरणमें तथ्यसूचक (indicative) वाक्य होता है और व्याकरणके अन्य वाक्योंका विचार तर्कशास्त्रमें केवल उसी हालतमें हो सकता है जब उनको तथ्यसूचक वाक्यके रूपमें रख दिया जाता है। तर्कवाक्यके उद्देश्य, विधेय और संयोजक, ये तीन भाग होते हैं और

तथ्यसूचक वाक्यको भी ठीक तार्किक रूपमें रखनेके लिये नये सिरेसे लिखना पड़ता है।

भाग २. तर्कवाक्योंके भेद.

(अ) सरल और जटिल (Simple and Compound)

तर्कवाक्य दो पदोंके बीच किसी सम्बन्धका कथन करता है। अगर ऐसा कथन केवल एक है तो वाक्य सरल कहलाता है, जैसे, सब मनुष्य मरणशील हैं, कोई मनुष्य पूर्ण नहीं है। लेकिन अगर इस तरह के कथन एकसे अधिक हैं तो वाक्य जटिल या मिश्र कहलाता है, जैसे, नेपोलियन एक महान् विजेता और एक महान् राजनीतिज्ञ था; यह मिश्र वाक्य वास्तवमें दो वाक्योंके बराबर है: नेपोलियन एक महान् विजेता था और नेपोलियन एक महान् राजनीतिज्ञ था। इसी तरह, मनुष्य न तो अमर है और न पूर्ण है, यह वाक्य दो वाक्योंमें तोड़ा जा सकता है: मनुष्य अमर नहीं है और मनुष्य पूर्ण नहीं है। अतः जटिल या मिश्र वाक्य एकसे अधिक वाक्योंके बराबर होता है।

सरल वाक्यका मतलब है एक वाक्य और मिश्र वाक्यका मतलब है एक से अधिक वाक्य।

मिश्र वाक्योंको सन्निकृष्ट (copulative) और विप्रकृष्ट (remotive), इन दो उपविभागोंमें बांटा जा सकता है। **सन्निकृष्ट वाक्य** वह मिश्र वाक्य है जिसमें एकसे अधिक विधानात्मक वाक्य होते हैं, जबकि **विप्रकृष्ट वाक्य** वह मिश्र वाक्य होता है जिसमें एकसे अधिक निषेधात्मक वाक्य होते हैं।

सन्निकृष्ट और विप्रकृष्ट वाक्य।

(ब) सम्बन्धकी दृष्टिसे वाक्योंका विभाजन : निरपेक्ष (Categorical) और सापेक्ष (Conditional)

सम्बन्धके अनुसार अर्थात् विधान या निषेधके स्वरूपके अनुसार वाक्योंको निरपेक्ष और सापेक्षमें विभाजित किया गया है। **निरपेक्ष वाक्य वह है जिसमें उद्देश्य और विधेयके बीचका सम्बन्ध किसी हेतु पर निर्भर नहीं होता, जिसमें विधेयका उद्देश्यके बारेमें विधान या निषेध अहेतुक या किसी प्रतिबन्धके बिना होता है,** जैसे, सब मनुष्य

निरपेक्ष = अहेतुक या निष्प्रतिबन्ध।

मरणशील हैं; कोई मनुष्य पूर्ण नहीं है; कुछ विद्यार्थी बुद्धिमान् हैं; कुछ विद्यार्थी चतुर नहीं हैं इत्यादि। इन सभी उदाहरणोंमें उद्देश्य और विधेयका सम्बन्ध किसी हेतुके अधीन नहीं है। **दूसरी ओर, सापेक्ष वाक्य वह है जिसमें उद्देश्य और विधेयके सम्बन्धका विधान या निषेध किसी शर्तके साथ किया जाता है अर्थात् वह सहेतुक या सप्रतिबन्ध होता है**, जैसे, अगर वह आयेगा तो मैं जाऊंगा; यदि मैं धनी होता तो सुखी रहता; वह या तो कालेज जायेगा या घर रहेगा इत्यादि। इन सब उदाहरणोंमें सम्बन्धका कथन किसी शर्त पर निर्भर है, कथनके लागू होनेके पहिले जिसका पूरा होना ज़रूरी है।

सापेक्ष = सहेतुक या सप्रतिबन्ध।

दो प्रकारके सापेक्ष वाक्य :

सापेक्ष वाक्य दो प्रकारके होते हैं : हेतुफलाश्रित (hypothetical) वाक्य और वैकल्पिक (disjunctive) वाक्य।

हेतुफलाश्रित "अगर··तो"।

हेतुफलाश्रित वाक्य वह सापेक्ष वाक्य है जिसमें हेतु, प्रतिबन्ध या शर्तका उल्लेख "यदि" या इसके किसी समानार्थक शब्दके द्वारा किया जाता है, जैसे, यदि वह आता है तो मैं जाता हूं; अगर वर्षा होती है तो वह नहीं आवेगा; जब लोहे पर ज़ंग लगता है तब वह आसानीसे टूट सकता है; जहां इच्छा है वहां राह है; अगर वह मुझे मिलता तो मुझे जान जाता; अगर मैं उसकी जगह होता तो ऐसा न करता; अगर वह आ गया होता तो मैं चला गया होता इत्यादि। हेतुफलाश्रित वाक्यके दो भाग होते हैं: हेतु (antecedent) और फल (consequent)। हेतुफलाश्रित वाक्यका **हेतु** उसका वह भाग है जिसमें शर्तका उल्लेख रहता है और उसका **फल** वह भाग है जिसमें सम्बन्ध का कथन रहता है। पहिले तीन दिये हुए उदाहरणोंमें यदि वह आता है, अगर वर्षा होती है, जब लोहे पर ज़ंग लगता है, ये हेतु हैं, जबकि, मैं जाता हूं, वह नहीं आवेगा और वह आसानीसे टूट सकता है, ये इनके फल हैं। जब हेतुफलाश्रित वाक्य ठीक तार्किक रूप में रखे जाते हैं तब वह भाग जो हेतु कहलाता है उस भागसे पहिले आता है जिसे फल कहते हैं, जैसा कि उपर्युक्त उदाहरणोंमें किया गया

है। इस कारण हेतुको पूर्ववर्ती और फलको अनुवर्ती भी कहते हैं। इस प्रकार, 'मैं जाऊंगा अगर वह आयेगा,' यह वाक्य ठीक तार्किक रूपमें नहीं है क्योंकि इसमें हेतु फलके बाद रखा गया है। तार्किक रूप में रखे जाने पर कहा जायगा: 'अगर वह आयेगा तो मैं जाऊंगा'।

वैकल्पिक वाक्य वह सापेक्ष वाक्य है जिसमें विकल्प रहते हैं और जिसका रूप 'या यह या वह' इस तरहका होता है, जैसे, या तो वह आवेगा या मैं जाऊंगा; या तो वह साधु है या दुष्ट; या तो वह मूर्ख है या धूर्त। वैकल्पिक वाक्य: 'या यह या वह'।

(स) गुण (Quality) के अनुसार विभाजन: विधानात्मक (Affirmative) और निषेधात्मक (Negative)

गुणके अनुसार वाक्य विधानात्मक होते हैं या निषेधात्मक। **विधानात्मक वाक्य वह है जिसमें विधेयका उद्देश्यके बारेमें विधान किया जाता है**, जैसे, 'मनुष्य मरणशील है'। **निषेधात्मक वाक्य वह है जिसमें विधेयका उद्देश्यके बारेमें निषेध किया जाता है**, जैसे, 'मनुष्य पूर्ण नहीं है।' विधानात्मक और निषेधात्मक वाक्य।

विधानात्मक वाक्यमें संयोजक विधानात्मक होता है अर्थात् उसके साथ निषेधका सूचक नहीं रहता, जबकि निषेधात्मक वाक्यमें संयोजक के साथ निषेधका सूचक रहता है। 'सब मनुष्य मरणशील हैं' में संयोजक विधानात्मक है और 'कुछ मनुष्य चतुर नहीं हैं' में संयोजक निषेधात्मक है। जब निषेधात्मक निरपेक्ष वाक्य परिमाण (quantity) की दृष्टिसे सामान्य होता है तो उसको इस रूपमें रखा जाता है—"कोई उ वि नहीं है", "कोई मनुष्य पूर्ण नहीं है।"

कुछ तर्कशास्त्रियोंने सब निषेधात्मक वाक्योंको विधानात्मक रूपमें रखनेकी कोशिश की है और इसके लिये निषेधको विधेयका हिस्सा माना है। इस प्रकार, "कोई मनुष्य पूर्ण नहीं है" यह कहनेके बजाय वे कहेंगे "सब मनुष्य अ-पूर्ण हैं।" इस तरह निषेधके चिह्न को विधेयमें स्थानान्तरित कर दिया जाता है। इस तरहके वाक्योंको क्या निषेधात्मक वाक्योंको विधानात्मक रूप दिया जा सकता है?

अपरिमित (infinite) वाक्य कहते हैं। अपरिमित वाक्योंका संयोजक विधानात्मक होता है और इस तरह उनका विधानात्मक रूप होता है यद्यपि उनका अर्थ निषेधात्मक होता है। लेकिन जैसा कि हम देख चुके हैं विधान और निषेधमें मौलिक भेद होता है और इसलिए इस भेदको मिटाना नहीं चाहिए।

टिप्पणी १. हेतुफलाश्रित वाक्योंका गुण.

हेतुफलाश्रित वाक्यका गुण फलके गुण पर निर्भर रहता है।

हेतुफलाश्रित वाक्योंका गुण उनके फलके गुण पर निर्भर रहता है, हेतुके गुण पर नहीं, क्योंकि हेतुमें केवल शर्तका उल्लेख रहता है सम्बन्धका कथन नहीं। इस प्रकार, अगर फल विधानात्मक है तो हेतुफलाश्रित वाक्य विधानात्मक होगा और अगर फल निषेधात्मक है तो वह निषेधात्मक होगा। उदाहरणार्थ:

विधानात्मक हेतुफलाश्रित वाक्य—

(१) अगर अ ब है तो स द है।
(२) अगर अ ब नहीं है तो स द है।
(३) अगर वह आता है तो मैं जाऊंगा।
(४) अगर वर्षा नहीं होती तो मैं जाऊंगा।

निषेधात्मक हेतुफलाश्रित वाक्य—

(१) अगर अ ब है तो स द नहीं है।
(२) अगर अ ब नहीं है तो स द नहीं है।
(३) अगर वह आता है तो मैं नहीं जाऊंगा।
(४) अगर वर्षा नहीं होती तो ज़मीन नहीं भीगेगी।

कुछ तर्कशास्त्री ऐसे हैं जो सब हेतुफलाश्रित वाक्योंको विधानात्मक मानते हैं। उनके मतानुसार हेतुफलाश्रित वाक्य हेतु और फलके बीच निर्भरताका सम्बन्ध प्रकट करते हैं। लेकिन इस मतसे अनावश्यक उलझनें पैदा हो जाती हैं।

टिप्पणी २. वैकल्पिक वाक्योंका गुण.

वैकल्पिक वाक्योंमें गुणका भेद नहीं होता, क्योंकि उनका निषेधात्मक रूप नहीं होता। **सब वैकल्पिक वाक्य विधानात्मक होते हैं।** "अ न ब है न स" यह वाक्य वैकल्पिक नहीं है क्योंकि इसमें विकल्प है ही नहीं, केवल दो निषेध हैं: 'अ ब नहीं है' और 'अ स नहीं है'। यह एक मिश्र निरपेक्ष वाक्य है जिसे विप्रकृष्ट वाक्य कहते हैं। वैकल्पिक वाक्यमें गुण-भेद नहीं होगा।

(ब) परिमाणके अनुसार विभाजन: सामान्य (Universal) और विशेष (Particular)

परिमाणके अनुसार वाक्य सामान्य होते हैं या विशेष। **सामान्य वाक्य वह है जिसमें विधेयका सम्पूर्ण उद्देश्यके बारेमें विधान या निषेध किया जाता है,** जैसे, 'सब मनुष्य मरणशील हैं', 'कोई मनुष्य पूर्ण नहीं है'। **विशेष वाक्य वह है जिसमें विधेयका उद्देश्यके एक अंशके बारेमें विधान या निषेध किया जाता है,** जैसे, 'कुछ मनुष्य चतुर हैं', 'कुछ मनुष्य ईमानदार नहीं हैं।' सामान्य और विशेष वाक्य।

तर्कशास्त्रमें सामान्य वाक्यका परिमाण दिखानेवाले शब्द आम तौर पर **सब, कोई भी, प्रत्येक, जो कोई** हैं और विशेष वाक्यका परिमाण दिखानेवाला शब्द है **कुछ**। परिमाणके सूचक।

'कुछ' शब्दका तार्किक अर्थ इसके लौकिक यानी साधारण अर्थसे दो बातों में भिन्न है :— तर्कशास्त्रमें 'कुछ' शब्दका अर्थ।

(१) साधारण रूपमें हम 'कुछ' शब्दका इस्तेमाल किसी वर्गके एक अपेक्षाकृत छोटे भागके लिये करते हैं। लेकिन तर्कशास्त्रमें 'कुछ' का अर्थ है कोई भी अनिश्चित परिमाण। इस प्रकार, अगर किसी कक्षा में १०० छात्र हैं और केवल दो या तीन छात्रोंने अपना सबक़ तैयार किया है तो तर्कशास्त्रमें हम कहेंगे कि "कुछ छात्रोंने अपना सबक़ तैयार किया है।" अगर ९९ छात्रोंने भी अपना सबक़ तैयार किया है तो तर्कशास्त्रमें इस बातको व्यक्त करनेके लिये भी हम यही कहेंगे कि

"कुछ छात्रोंने अपना सबक़ तैयार किया है।" इस प्रकार, **तर्कशास्त्रमें 'कुछ' का अर्थ है कमसे कम एक।**

'कुछ' का अर्थ है 'कम-से-कम कुछ'।

(२) आगे ध्यान देनेकी बात यह है कि तर्कशास्त्रमें 'कुछ' शब्दका इस्तेमाल करनेमें 'सबके' बारेमें कुछ भी निश्चित नहीं होता। साधारण प्रयोगमें जब हम किसी वर्गके कुछ सदस्योंके बारेमें कोई कथन करते हैं तब यह छिपा रहता है कि बाक़ी सदस्योंके बारेमें उसका विपरीत कथन लागू होता है। उदाहरणके लिये, जब हम साधारणतया कहते हैं कि "कुछ छात्रोंने अपना सबक़ तैयार कर लिया है" तब हमारे कहनेका मतलब यह भी होता है कि "शेष छात्रोंने अपना सबक़ तैयार नहीं किया है।" लेकिन तर्कशास्त्रमें इस तरहका कोई मतलब नहीं होता है। "कुछ" के बारेमें कोई कथन करनेमें शेषके बारेमें कोई सुझाव साधारणतया छिपा हुआ नहीं होता। साधारण प्रयोगमें "कुछ" का मतलब है "केवल कुछ", लेकिन **तर्कशास्त्रमें "कुछ" का मतलब होता है "कमसे कम कुछ"** और इसका मतलब सब भी हो सकता है और सब नहीं भी। इस प्रकार तर्कशास्त्रमें "कुछ" का "सब" का व्यावर्तक होना आवश्यक नहीं है।

निरपेक्ष वाक्यका परिमाण उद्देश्यके परिमाण पर निर्भर होता है।

निरपेक्ष वाक्योंका परिमाण उद्देश्यके परिमाणसे प्रकट होता है। अगर उद्देश्य अपने सम्पूर्ण निर्देशमें प्रयुक्त हुआ है तो वाक्य सामान्य है, जबकि अगर उद्देश्य अपने निर्देशके एक अंशमें इस्तेमाल हुआ है तो वाक्य विशेष है। इस प्रकार सामान्य वाक्यका उद्देश्य व्याप्त (distributive) होता है और विशेष वाक्यका उद्देश्य अव्याप्त (undistributive)।

अव्यक्त-परिमाण और व्यक्त-परिमाण वाक्य।

साधारण भाषामें हम वाक्यके परिमाणको हमेशा व्यक्त नहीं करते। जब वाक्यका परिमाण अव्यक्त होता है या अनिश्चित होता है तब वाक्यको अनिश्चित या **अव्यक्तपरिमाण (indesignate)** वाक्य कहते हैं, जैसे, "मनुष्य कमज़ोर है", "पुस्तकें उपयोगी हैं" इत्यादि। जिन वाक्योंका परिमाण प्रकट रहता है उन्हें **व्यक्तपरिमाण (pre-**

designate) वाक्य कहते हैं। अव्यक्तपरिमाण वाक्योंका तर्कशास्त्रमें कोई स्थान नहीं है क्योंकि तर्कशास्त्रमें वाक्योंको अस्पष्ट नहीं होना चाहिए बल्कि उनका अर्थ बिल्कुल स्पष्ट होना चाहिए। इस दृष्टिसे तर्कशास्त्रमें अव्यक्तपरिमाण वाक्योंको विशेष माननेका नियम है।

टिप्पणी १. एकवाचक वाक्य.

जब वाक्यका उद्देश्य एकवाचक पद होता है तब उसे एकवाचक (singular) वाक्य कहते हैं। कुछ तर्कशास्त्री इसे परिमाणकी दृष्टिसे एक तीसरे प्रकारका वाक्य मानते हैं यानी सामान्य और विशेष से भिन्न समझते हैं। लेकिन यह अनावश्यक है। जब एकवाचक वाक्यका उद्देश्य कोई निश्चित व्यक्ति या व्यक्तियोंका निश्चित समूह होता है तब उसे सामान्य समझना चाहिए, जैसे, "प्लैटो एक बड़ा दार्शनिक है", "यह व्यक्ति विद्वान् है" इत्यादि। ये वाक्य सामान्य हैं क्योंकि इनके उद्देश्य अपने सम्पूर्ण निर्देशमें प्रयुक्त हुए हैं और विधेयोंका पूरे उद्देश्योंके बारे में विधान हुआ है। इसके विपरीत, अगर उद्देश्य पद एकवाचक वाक्यमें किसी निश्चित व्यक्ति या व्यक्तियोंके समूहको नहीं बताता तो वाक्य विशेष है, जैसे, "एक आदमी यहां है", "एक धातु तरल होती है।"

एकवाचक वाक्य सामान्य या विशेष होते हैं यदि उद्देश्य निश्चित एकवाचक पद है या अनिश्चित एकवाचक पद है।

टिप्पणी २. सामान्य वाक्य.

हम देख चुके हैं कि वाक्य सामान्य तब होता है जब उसका उद्देश्य पूरे निर्देशमें इस्तेमाल होता है। जब उद्देश्य जातिवाचक पद होता है तब हम उसमें इस्तेमाल होनेवाले "सब" इत्यादि शब्दोंसे जान लेते हैं कि वह सम्पूर्ण निर्देशमें ग्रहण किया गया है; लेकिन अगर उद्देश्य एकवाचक पद है तो उसे निश्चित बना देनेसे वह अपने पूरे निर्देशमें इस्तेमाल हो जाता है। इस प्रकार सामान्य वाक्योंके उदाहरण ये हैं:—

सामान्य विधानात्मक	सामान्य विषेधात्मक
१. सब मनुष्य मरणशील हैं।	१. कोई मनुष्य अमर नहीं है।
२. प्लैटो एक दार्शनिक है।	२. प्लैटो रोमन नहीं है।
३. यह आदमी विद्वान् है।	३. यह आदमी मूर्ख नहीं है।

टिप्पणी ३. हेतुफलाश्रित वाक्योंका परिमाण.

हेतुफलाश्रित वाक्यका परिमाण उसके हेतु पर निर्भर होता है।

हेतुफलाश्रित वाक्योंका परिमाण उनके हेतुओंके परिमाण पर निर्भर होता है। हेतुफलाश्रित वाक्य तब सामान्य होता है जब हेतुके बाद हमेशा या हर दृष्टान्तमें फल होता है, जैसे, "अगर अ ब है तो स द है," या (यह अधिक स्पष्ट है) "प्रत्येक दृष्टान्तमें अगर अ ब है तो स द है"। हेतुफलाश्रित वाक्य विशेष तब होता है जब फल हेतुका अनुसरण कुछ दृष्टान्तोंमें या कमसे कम एक दृष्टान्तमें करता है, जैसे, "अगर कुछ दृष्टान्तोंमें अ ब है तो स द है"। हेतुफलाश्रित वाक्यके हेतुके पहिले किसी परिमाणसूचक शब्दके न रहनेसे उसे सामान्य मान लिया जाता है।

टिप्पणी ४. वैकल्पिक वाक्यका परिमाण.

वैकल्पिक वाक्य।

वैकल्पिक वाक्य सामान्य या विशेष हो सकते हैं, जैसे "प्रत्येक अ या तो ब है या स" (सामान्य), "कुछ अ या तो ब है या स" (विशेष)। लेकिन तर्कशास्त्रमें विशेष वैकल्पिक वाक्य बेकार ही होते हैं।

(य) विधि (Modality) के अनुसार विभाजन : आवश्यक (Necessary), सम्प्रज्ञात (Assertory) और सन्दिग्ध (Problematic) वाक्य

विधि = सम्भावनाकी मात्रा।

किसी वाक्यकी विधि निश्चय या सम्भावना की वह मात्रा है जिसके साथ विधेयका उद्देश्यके बारेमें विधान या निषेध किया जाता है। विधिके अनुसार वाक्योंके तीन वर्ग होते हैं: आवश्यक, सम्प्रज्ञात और सन्दिग्ध।

वाक्य आवश्यक तब होता है जब उद्देश्य और विधेयका सम्बन्ध उनके स्वभाव पर आधारित होता है अर्थात् जब यह सम्बन्ध सर्वत्र अनिवार्यतः सत्य होता है, जैसे, "अ को अनिवार्यतः ब होना चाहिए," "त्रिभुजके तीनों कोणोंका योग दो समकोण होना ही चाहिए" इत्यादि। जब उद्देश्य और विधेयका सम्बन्ध ऐसा होता है कि वह अनुभव पर आधारित होता है और अनुभवके दायरेके अन्दर सत्य होता है लेकिन उसे अवश्यक नहीं कहा जा सकता, तब वाक्य सम्प्रज्ञात होता है, जैसे, "अ ब है", "सब कौवे काले होते हैं" इत्यादि। अन्तमें, सन्दिग्ध वाक्य वह होता है जिसमें उद्देश्य और विधेयका सम्बन्ध सम्भावित मात्र होता है अर्थात् कुछ परिस्थितियोंमें सत्य होता है और अन्य परिस्थितियों में सत्य नहीं होता, जैसे, "अ ब हो सकता है", "वह सम्भवतः कल आवेगा" इत्यादि।

आवश्यक : अ को ब होना ही चाहिए।

सम्प्रज्ञात : अ ब है।

सन्दिग्ध : अ ब हो सकता है।

(फ) तात्पर्य (Import) के अनुसार विभाजन : शाब्दिक (Verbal) और वास्तविक (Real) वाक्य

शाब्दिक या विश्लेषणात्मक (analytical) वाक्य वह है जिसमें विधेय उद्देश्यके स्वभाव या स्वभावके एक अंश मात्रका कथन करता है, जैसे, "सब मनुष्य बुद्धिमान् हैं", यहां विधेय उसी बातको स्पष्ट करता है जो उद्देश्यमें छिपी हुई है। अतः शाब्दिक या विश्लेषणात्मक वाक्य कोई नई सूचना नहीं देता। इसे विश्लेषणात्मक इसलिए कहते हैं कि इसमें केवल उद्देश्यके स्वभावका विश्लेषण होता है।

शाब्दिक वाक्य।

वास्तविक या संश्लेषणात्मक वाक्य वह होता है जिसमें विधेय एक ऐसे अतिरिक्त तथ्यका कथन करता है जो उद्देश्यके स्वभावके विश्लेषण से प्रकट नहीं होता। वास्तविक वाक्य उद्देश्यके बारेमें कोई नई बात बताता है जो कि उसके स्वभावमें शामिल नहीं होती। 'मनुष्य हंसनेवाला प्राणी है', 'कुत्ता पालतू जानवर है' इत्यादि वास्तविक वाक्य हैं।

वास्तविक वाक्य।

शाब्दिक वाक्यमें विधेय उद्देश्यकी जाति होता है या व्यावर्तक गुण। उदाहरणार्थ, "सब मनुष्य प्राणी हैं" इस वाक्यमें विधेय उद्देश्य

वाच्यधर्मोंका इस वर्गीकरण से सम्बन्ध।

की जाति है और "सब मनुष्य बुद्धिमान् हैं" इस वाक्यमें विधेय उद्देश्य का व्यावर्तक गुण है।

वास्तविक वाक्यमें विधेय उद्देश्यका सहज गुण होता है या आकस्मिक गुण। उदाहरणार्थ, "मनुष्य एक चतुर प्राणी है" इस वाक्य में विधेय सहज गुण है और "मनुष्य हंसनेवाला प्राणी है" इसमें आकस्मिक गुण।

अगला सवाल है: जब विधेय उद्देश्यकी उपजाति होता है तब वाक्य शाब्दिक होगा या वास्तविक? यह ध्यान रखना चाहिए कि अगर वाक्य सामान्य है तो विधेय उद्देश्यकी उपजाति नहीं हो सकता; लेकिन अगर वाक्य विशेष है तो विधेय उद्देश्यकी उपजाति हो सकता है, जैसे, "कुछ प्राणी मनुष्य हैं" इस वाक्यमें। लेकिन **वेल्टन** इस सवालको इस तरह लेता है: वह कहता है: "अगर सही-सही कहा जाय तो उपजाति केवल व्यक्तिका ही विधेय बन सकती है।" यहां उपजातिको जातिके सापेक्षके अर्थमें नहीं समझा गया है बल्कि उसे व्यक्तिका प्रतियोगी माना गया है। इस अर्थमें लेने पर दो सम्भावनाएं होती हैं। या तो व्यक्ति व्यक्तिवाचक नामसे निर्दिष्ट है या सार्थक एकवाचक नामसे। अगर वह व्यक्तिवाचक नामसे निर्दिष्ट है तो वाक्य वास्तविक है, जैसे, सुकरात मरणशील है, एवरेस्ट एक पहाड़ है। चूंकि व्यक्तिवाचक नामका कोई स्वभाव नहीं होता इसलिए उपर्युक्त उदाहरणोंमें विधेय उद्देश्यके बारे में नई बात बताता है। अगर व्यक्ति सार्थक एकवाचक पदके द्वारा निर्दिष्ट है तो वाक्य प्रायः शाब्दिक होता है, जैसे, यह महान् यूनानी दार्शनिक एक मनुष्य है, दुनिया का सबसे ऊंचा पहाड़ एक पहाड़ है। इन उदाहरणोंमें विधेय पद 'मनुष्य' और 'पहाड़' उद्देश्योंके स्वभावमें शामिल हैं अर्थात् क्रमशः 'दार्शनिक' और 'सबसे ऊंचा पहाड़' में।

भाग ३. वाक्योंका सरलीकरण.

गुण और परिमाणके अनुसार वाक्योंके रूप:

आ (A), ए (E), ई (I), ओ (O)

गुण और परिमाणके अनुसार संयुक्त विभाजन।

परिमाण के अनुसार वाक्य दो प्रकार के होते हैं, सामान्य और विशेष। गुण के अनुसार इनमें से प्रत्येक दो प्रकार का होता है विधानात्मक और निषेधात्मक। इस प्रकार:—

- वाक्य
  - सामान्य
    - विधानात्मक, जैसे, 'सब उ वि हैं', 'सब मनुष्य मरणशील हैं।'
    - निषेधात्मक, जैसे, 'कुछ उ वि नहीं हैं', 'कोई मनुष्य पूर्ण नहीं है'।
  - विशेष
    - विधानात्मक, जैसे, कुछ उ वि है' 'कुछ मनुष्य ईमानदार हैं।'
    - निषेधात्मक, जैसे, 'कोई उ वि नहीं है', 'कुछ मनुष्य ईमानदार नहीं हैं'

सामान्य विधानात्मक वाक्यका प्रतीक "आ" (A) है; सामान्य निषेधात्मक वाक्यका प्रतीक "ए" (E) है; विशेष विधानात्मक वाक्य का प्रतीक "ई" (I) है; और विशेष निषेधात्मक वाक्यका प्रतीक "ओ" (O) है।

भाग ४. साधारण वाक्योंको तर्कवाक्योंके रूपमें रखना.

हम देख चुके हैं कि आ, ए, ई, ओ वाक्योंके चार प्ररूप तर्कशास्त्र में माने गये हैं और अगर कोई वाक्य ठीक तार्किक रूपमें नहीं है तो तर्कशास्त्रमें उसका विचार करनेके पहिले उसे उपर्युक्त चार प्ररूपोंमें से किसी एकमें रखना पड़ता है। अब हम साधारण वाक्योंके कुछ अनियमित रूपोंकी जांच करेंगे और देखेंगे कि उन्हें तार्किक रूपमें कैसे रखना चाहिए। यह कह देना ठीक होगा कि ऐसा करनेमें हमेशा वाक्योंके अर्थ पर ध्यान दिया जाता है, उनके आकार पर नहीं।

१. संयोजक—अनियमित वाक्यको तार्किक रूपमें रखनेमें सबसे पहिले हमें वाक्यका संयोजक ढूंढ़ना चाहिए। जैसा कि हम जानते हैं, संयोजक 'होना' क्रियाका कोई वर्तमानकालिक रूप होता है और निषेधका सूचक 'नहीं' उसके साथ हो भी सकता है और नहीं भी। प्राय: देखा जाता है कि संयोजक अलग दिया हुआ नहीं होता बल्कि मुख्य क्रियाके साथ जुड़ा होता है जोकि वाक्यके विधेयका अंग होती है। ऐसे दृष्टान्तोंमें हमें संयोजकको अलग कर देना चाहिए और ऐसा करनेमें सच्चे उद्देश्य और विधेय भी अलग हो जाते हैं और तत्पश्चात् वाक्यका गुण और परिमाण मालूम करना आसान हो जाता है। उदाहरणार्थ, "सभी परिश्रमी छात्रोंको सफलता मिलनी चाहिए" वाक्य "सब परिश्रमी छात्र वे व्यक्ति हैं जिन्हें सफलता मिलनी चाहिए" वाक्यके तुल्य है।

१. संयोजक को अलग करना चाहिए।

संयोजकके सम्बन्धमें एक और बात भी ध्यान देने योग्य है। हम जानते हैं कि निषेधका चिह्न संयोजकके साथ रहता है। अत: जिस वाक्यको तार्किक रूपमें रखना है उसमें अगर निषेधका चिह्न हो तो उसे विधेयके साथ कभी नहीं रखना चाहिए। इस प्रकार:—

"उसे सफलता नहीं मिलनी चाहिए" इस वाक्यका तार्किक रूप है, "वह वह व्यक्ति नहीं है जिसे सफलता मिलनी चाहिए।" यह 'ए' वाक्य है।

२. कभी-कभी ज़ोर देनेके लिये, खास तौरसे काव्यमें, विधेयको पहिले रखा जाता है, उदाहरणके लिये, 'सौभाग्यशाली हैं वे जो ग़रीब हैं।' तार्किक रूपमें रखने पर ऐसे वाक्योंके उद्देश्यको पहिले रखना चाहिए, जैसे, उपर्युक्त वाक्यका तार्किक रूप होगा: 'सब ग़रीब मनुष्य सौभाग्यशाली हैं।' इसी तरह 'महान् था वह आन्दोलन' इस वाक्यका तार्किक रूप होगा: 'वह आन्दोलन ऐसी चीज है जो महान् थी।' यह ध्यान रखना चाहिए कि विशेषण वाक्योंके उद्देश्य कभी नहीं बनते।

२. उद्देश्यको पहिले रखना चाहिए।

३. कभी-कभी जब उद्देश्यकी विशेषता बतानेवाला और किसी

सम्बन्धवाचक सर्वनामसे शुरू होनेवाला कोई वाक्यांश वाक्यके अन्तमें आता है तब उसके उद्देश्यके विधेय होनेका भ्रम उत्पन्न हो जाता है, उदाहरणार्थ, 'वह घात्रोंका मज़ाक उड़ाता है जिसे कभी घाव नहीं लगा' इस वाक्य में। इसमें वाक्यांश 'जिसे कभी घाव नहीं लगा' 'वह' की विशेषता बताता है जोकि उद्देश्य है। तार्किक रूपमें यह इस प्रकार रखा जायेगा: "सब व्यक्ति जिन्हें कभी घाव नहीं लगा, वे व्यक्ति हैं जो घावोंका मज़ाक उड़ाते हैं।" यह आ वाक्य है।

३. उद्देश्य की विशेषता बतानेवाले वाक्यांशको विधेय नहीं समझना चाहिए।

४. (अ) ऐसे सभी वाक्य जिनमें **'सब'**, **'प्रत्येक'**, **'हरेक'**, **'कोई'** शब्द आते हैं और निषेधका चिंह्न नहीं होता, आ अर्थात् सामान्य विधानात्मक होते हैं।

४. निषेधके चिह्नसे रहित सब इत्यादि—आ।

उदाहरण :—

(१) प्रत्येक आदमी ग़लती करता है—आ. सब आदमी वे हैं जो ग़लती करते हैं।

(२) हरेक अपराधीने आक्रमणमें भाग लिया—आ. सब अपराधी वे व्यक्ति हैं जिन्होंने आक्रमण में भाग लिया।

(३) कोई भी मकान तूफ़ानके समय बन्दरगाह होता है—आ. सब मकान तूफ़ानके समय बन्दरगाह हैं।

(ब) ऐसे सभी वाक्य जिनमें 'सब', 'प्रत्येक', हरेक', 'कोई' शब्द आते हैं और जिनमें निषेधका चिह्न भी होता है ओ अर्थात् विशेष निषेधात्मक होते हैं।

निषेधके चिह्न के सहित सब इत्यादि—ओ।

उदारहण :—

(१) सब चमकनेवाली चीजें सोना नहीं हैं—ओ. कुछ चमकने वाली चीज़ें सोना नहीं हैं।

(२) प्रत्येक रोग घातक नहीं होता—ओ. कुछ रोग घातक नहीं हैं।

(३) हर कोई आदमी नेता नहीं हो सकता—ओ. कुछ आदमी नेता नहीं हैं।

५. जिन वाक्यों में **'अधिकतर'**, **'थोड़ेसे'**, **'कुछ'**, **'बहुत-से'**,

अधिकतर = कुछ।

'करीब-करीब सब', **'एकको छोड़कर सब'**, **'कई'** इत्यादि शब्द आते हैं उनको विशेष समझना चाहिए। जब उनमें निषेधका चिह्न नहीं होता तब वे विशेष विधानात्मक और जब निषेधका चिह्न होता है तब विशेष निषेधात्मक होते हैं। साधारण प्रयोग में **'अधिकतर'** या **'अधिकांश'** का मतलब होता है 'आधेसे अधिक', लेकिन तर्कशास्त्रमें केवल सामान्य और विशेष वाक्य माने जाते हैं और इसलिए किसी भी अनिश्चित संख्याको 'कुछ' शब्दसे व्यक्त किया जाता है। उदाहरण :—

(१) अधिकांश सभासदोंने प्रस्तावके पक्षमें मत दिया—ई. कुछ सभासद वे व्यक्ति हैं जिन्होंने प्रस्तावके पक्षमें मत दिया।

(२) थोड़ेसे विद्यार्थी कक्षामें उपस्थित हैं—ई. कुछ विद्यार्थी कक्षामें उपस्थित हैं।

(३) कुछ स्वार्थी व्यक्तियोंने झगड़ा पैदा किया है—ई. कुछ स्वार्थी व्यक्ति वे हैं जिन्होंने झगड़ा पैदा किया है।

(४) बहुतसे नागरिक सम्मेलनमें उपस्थित हैं—ई. कुछ नागरिक सम्मेलनमें उपस्थित हैं।

(५) कई उम्मीदवारोंको छात्रवृत्ति मिलेगी—ई. कुछ उम्मीदवार वे व्यक्ति हैं जिन्हें छात्रवृत्ति मिलेगी।

अधिकांशतः इत्यादि = कुछ।

६. जिन वाक्योंमें **'अधिकांशतः'**, **'प्रायः'**, **'सामान्यतया'**, **'बहुधा'** **'आमतौर पर'**, **'शायद'**, **'लगभग हमेशा'**, **'कभी-कभी'**, इत्यादि शब्द आते हैं उन्हें विशेष समझना चाहिए; अगर उनमें निषेधका चिह्न हो तो वे ओ वाक्य होते हैं और अगर निषेधका चिह्न न हो तो ई होते हैं। इस प्रकार :—

(१) नीली आंखोंवाली सफ़ेद बिल्लियां प्रायः बहरी होती हैं—ई. कुछ नीली आंखोंवाली सफ़ेद बिल्लियां बहरी हैं।

(२) भारतीय विद्यार्थी सामान्यतया अपने अध्यापकोंका असम्मान नहीं करते—ओ. कुछ भारतीय विद्यार्थी वे

व्यक्ति नहीं हैं जो अपने अध्यापकोंका असम्मान करते हैं।

(३) विद्यार्थी कभी-कभी ग़लतियां करते हैं—ई. कुछ विद्यार्थी वे व्यक्ति हैं जो ग़लतियां करते हैं।

(४) धार्मिक व्यक्ति बहुधा सुखी होते हैं—ई. कुछ धार्मिक व्यक्ति सुखी हैं।

(५) नबी अधिकांशतः पूर्व से आते हैं—ई. कुछ नबी वे व्यक्ति हैं जो पूर्वसे आते हैं।

७. साधारण भाषामें **'कम ही,' 'बिरले ही,'** शब्दोंका अर्थ होता है 'क़रीब-क़रीब कोई भी नहीं' और इस प्रकार इनमें निषेधात्मकता रहती है। अतः इनका तार्किक रूप है 'कुछ नहीं'। अगर कोई वाक्य 'कम ही' या 'बिरले ही' से शुरू होता है और उसमें निषेधका चिह्न नहीं होता तो उसे ओ वाक्य समझना चाहिए और अगर उसमें निषेधका चिह्न भी है तो उसे ई वाक्य समझना चाहिए, क्योंकि दो निषेधोंका अर्थ विधान होता है। उदाहरण :— कम ही, बिरले ही = कुछ नहीं।

(१) कम ही या बिरले ही प्रलोभनसे बच सकते हैं—ओ. कुछ व्यक्ति प्रलोभनसे बच सकनेवाले नहीं हैं।

(२) कम ही या बिरले ही स्वार्थी नहीं होते—ई. कुछ व्यक्ति स्वार्थी हैं।

८. **'मुश्किलसे', 'शायद ही कोई या कभी'** ये शब्द निषेधात्मक बल रखते हैं और जब ये ऐसे वाक्योंमें आते हैं जिनमें निषेधका चिह्न नहीं है तो वे वाक्य ओ होते हैं, लेकिन जब निषेधका चिह्न भी होता है तब वाक्य ई होते हैं। इस प्रकार :— शायद ही, मुश्किलसे = निषेधात्मक।

(१) लोग मुश्किलसे ही दूसरोंकी दिक़्क़तें समझते हैं—ओ. कुछ व्यक्ति वे नहीं हैं जो दूसरोंकी दिक़्क़तें समझते हैं।

(२) शायद ही सम्पन्न व्यापारी ईमानदार न होते हों—ई. कुछ सम्पन्न व्यापारी ईमानदार हैं।

ऐकान्तिक वाक्य।

९. ऐकान्तिक (**Exclusive**) **वाक्य.** ऐसे वाक्य जिनमें उद्देश्यके साथ 'केवल', 'सिर्फ़', 'अकेले', 'के अलावा कोई नहीं', इत्यादि शब्द रहते हैं ऐकान्तिक वाक्य कहलाते हैं। इनको तार्किक रूपमें रखनेके अलग-अलग तरीक़े हैं।

ऐकान्तिक या अनन्यग्राहक वाक्योंको तार्किक रूपमें रखनेका एक तरीक़ा यह है कि दिये हुए वाक्यके उद्देश्य और विधेयको परस्पर बदल दिया जाता है और उसे आ वाक्य बना दिया जाता है। उदाहरणके लिये : "केवल मैट्रिक पास इस विद्यालयके छात्र हैं" इस वाक्यका तार्किक रूप है, "सब इस विद्यालयके छात्र मैट्रिक पास हैं" (आ)।

इस प्रसंगमें यह ध्यान देनेकी बात है कि वाक्यका अर्थ नहीं बदला जाता। दिये हुए वाक्यका अर्थ यह नहीं है कि 'सब मैट्रिक पास इस विद्यालयके छात्र हैं'; स्पष्ट है कि जिन मैट्रिक पासों ने अन्य विद्यालयोंमें नाम लिखाया है और जिन्होंने पढ़ाई आगे जारी नहीं रखी वे इस विद्यालयके छात्र नहीं हैं। लेकिन जिन छात्रोंने वास्तवमें इस विद्यालयमें नाम लिखाया है वे सभी मैट्रिक पास ही हैं। इस प्रकार किसी ऐकान्तिक वाक्यको तार्किक रूपमें रखनेमें उद्देश्य और विधेयका स्थान परस्पर बदल दिया जाता है और इस तरहसे आ वाक्य प्राप्त होता है।

कुछ तर्कशास्त्री इस प्रकारके रूपान्तरका विरोध करते हैं क्योंकि तार्किक रूप देनेमें किसी वाक्यके उद्देश्य और विधेयकी स्थिति नहीं बदलनी चाहिए। उनके मतसे यह रूपान्तर मात्र नहीं है बल्कि एक तरहका अनुमान है जिसे परिवर्तन (conversion) कहते हैं। फिर भी इस रूपान्तरका ही अधिक प्रचार है।

दूसरा तरीक़ा यह है कि दिये हुए उद्देश्यका व्याघातक पद उद्देश्य बना दिया जाता है, विधेय वही रखा जाता है और इस प्रकार दिये हुए वाक्यको ए वाक्यके रूपमें रख दिया जाता है। इस तरीक़ेसे ऊपर दिये हुए वाक्यका तार्किक रूप हुआ "कोई भी अ-मैट्रिक पास इस विद्यालय का छात्र नहीं है।"

एक तीसरा तरीक़ा भी है जिसमें ऐकान्तिक वाक्यका तार्किक रूप ई वाक्य होता है। इस प्रकार ऊपर दिये हुए वाक्यका तार्किक रूप हुआ "कुछ मैट्रिक पास इस विद्यालयके छात्र हैं।" दो अन्य रूप जो कि सामान्य हैं इस विशेष रूपसे ज्यादा पसन्द किये जाते है।

अन्य उदाहरण :—

(१) केवल धार्मिक व्यक्ति ही सुखी हैं। इसके तार्किक रूप निम्नलिखित हैं :—

(अ) सब सुखी व्यक्ति धार्मिक हैं—आ।

(ब) कोई अ-धार्मिक व्यक्ति सुखी नहीं है—ए।

(स) कुछ धार्मिक व्यक्ति सुखी हैं—ई।

(२) बहादुरोंके अलावा कोई भी विजयी नहीं होता। इसके तार्किक रूप :—

(अ) सब विजयी व्यक्ति बहादुर हैं—आ।

(ब) कोई अ-बहादुर व्यक्ति विजयी नहीं है—ए।

(स) कुछ बहादुर व्यक्ति विजयी हैं—ई।

(३) अकेले ईमानदार आदमी दूसरोंका विश्वास प्राप्त करते हैं।

इसके तार्किक रूप :—

(अ) सब दूसरोंका विश्वास प्राप्त करनेवाले व्यक्ति ईमानदार हैं—आ।

(ब) कोई अ—ईमानदार व्यक्ति दूसरोंका विश्वास प्राप्त करनेवाले नहीं हैं—ए।

(स) कुछ ईमानदार व्यक्ति दूसरोंका विश्वास प्राप्त करनेवाले हैं—ई।

१०. अपवादात्मक (Exceptive) वाक्य. ऐसे वाक्य जिनमें कुछ अपवाद बताते हुए सारे उद्देश्यके बारेमें विधेयका विधान होता है, अपवादात्मक वाक्य कहलाते हैं। निश्चित और अनिश्चित अपवाद।

जिन अपवादात्मक वाक्योंमें अपवाद निश्चित होते हैं उन्हें सामान्य मानना चाहिए और जिनमें अपवाद निश्चित नहीं हैं उन्हें विशेष मानना चाहिए।

उदाहरण :—

पारेके अलावा सब धातुएं ठोस होती हैं।

यह आ वाक्य है क्योंकि अपवादके निश्चित होनेसे उद्देश्य अपने सम्पूर्ण निर्देशमें लिया गया है। लेकिन,

'एकके अलावा सब धातुएं ठोस हैं' इस वाक्यमें अपवाद अनिश्चित है और इसलिए यह ई वाक्य है जिसका तार्किक रूप है 'कुछ धातुएं ठोस हैं'।

एकवाचक वाक्य।

११. एकवाचक वाक्य. जिन एकवाचक वाक्योंके उद्देश्य निश्चित एकवाचक पद होते हैं वे सामान्य होते हैं और जिनके उद्देश्य अनिश्चित एकवाचक पद होते हैं वे वाक्य विशेष होते हैं। उनका विधानात्मक या निषेधात्मक होना संयोजकके साथ निषेधके चिह्नके न होने या होने पर निर्भर होता है। उदाहरण :—

(१) सिकन्दर महान् एक महान् विजेता था (आ)।

(२) सिकन्दर महान् रोमन नहीं था (ए)।

(३) एक यूनानी ने भारतको विजय किया। इसका तार्किक रूप है 'कोई यूनानी भारत का विजेता है' (ई)।

(४) एक धातु ठोस नहीं है। यह ओ वाक्य है।

प्रश्नवाचक वाक्य।

१२. प्रश्नवाचक वाक्य. कभी-कभी प्रश्नवाचक वाक्य स्वयं ही अपने उत्तरका सुझाव दे देते हैं और तब उनको आसानीसे तार्किक रूपमें रखा जा सकता है।

उदाहरणार्थ :—

'क्या इतनी मरी हुई आत्मावाला व्यक्ति ज़िन्दा है?' इसमें स्पष्टतः यह छिपा हुआ है कि ऐसा व्यक्ति ज़िन्दा नहीं हो सकता। अतः इसका तार्किक रूप है 'कोई भी व्यक्ति जिसकी आत्मा इतनी मरी हुई हो ऐसा नहीं है जो ज़िन्दा हो' (ए)।

अन्तमें यह कहा जा सकता है कि सभी अनन्त प्रकारके अनियमित वाक्योंको तार्किक रूपमें रखनेके लिये नपे-तुले नियम नहीं बनाये जा सकते, फिर भी यह कहना पर्याप्त है कि तार्किक रूपमें रखनेमें किसी दिये हुए वाक्यके अर्थको नहीं बदलना चाहिए।

भाग ५. पदोंकी व्याप्ति (Distribution of Terms).

व्याप्ति

कोई पद व्याप्त तब कहा जाता है जब उसका प्रयोग पूरे निर्देश या विस्तारमें हो और वह अव्याप्त तब होता है जब उसके निर्देशके केवल एक अंशका ही विचार किया गया हो। इस प्रकार किसी पदकी व्याप्तिसे हमारा मतलब यह है कि उसको सामान्य रूपमें ग्रहण किया गया है।

अब हम वाक्योंके आ, ए, ई, ओ में वर्गीकरणको लेकर देखेंगे कि इनमें कौनसे पद व्याप्त होते हैं।

आ वाक्यमें केवल उद्देश्य व्याप्त रहता है।

आ अर्थात् सामान्य विधानात्मक वाक्यका रूप यह होता है: सब उ वि है; सब मनुष्य मरणशील हैं। इसमें स्पष्ट है कि उद्देश्य पद अपने पूरे निर्देश्यमें ग्रहण किया गया है अर्थात् व्याप्त है, लेकिन विधेय पदका पूरे निर्देशमें ग्रहण किया जाना स्पष्ट नहीं है। अत: आ वाक्यमें उद्देश्य व्याप्त रहता है और विधेय अव्याप्त।

ए वाक्यके उद्देश्य और विधेय दोनों व्याप्त होते हैं।

ए वाक्य अर्थात् सामान्य निषेधात्मक वाक्यका रूप यह होता है: कोई उ वि नहीं है; कोई मनुष्य पूर्ण नहीं है। इसमें उद्देश्य और विधेय दोनों अपने सम्पूर्ण निर्देशमें ग्रहण किये जाते हैं और इस वाक्यका अर्थ यह होता है कि उद्देश्य और विधेयके द्वारा निर्दिष्ट वर्ग परस्पर व्यावर्तक हैं। इस प्रकार ऊपर दिये हुए ठोस उदाहरणमें 'मनुष्यों' और 'पूर्ण प्राणियों' के वर्ग परस्पर बिल्कुल भिन्न हैं और इसलिए दोनों ही व्याप्त हैं। अत: ए वाक्यके उद्देश्य और विधेय दोनों व्याप्त होते हैं।

ई वाक्यके उद्देश्य और विधेय दोनों अव्याप्त होते हैं।

ई अर्थात् विशेष विधानात्मक वाक्यका रूप यह होता है: कुछ उ वि है; कुछ मनुष्य चतुर हैं। इसमें उद्देश्यका अपने पूरे विस्तारमें न लिया जाना तो स्पष्ट ही है लेकिन विधेयके परिमाणको स्पष्टतया व्यक्त

नहीं किया गया है। इस प्रकार ई वाक्यके उद्देश्य और विधेय दोनों अव्याप्त होते हैं।

ओ वाक्यका केवल विधेय व्याप्त होता है।

ओ अर्थात् विशेष निषेधात्मक वाक्यका रूप यह होता है : कुछ उ वि नहीं है; कुछ मनुष्य ईमानदार नहीं हैं। इसमें उद्देश्य तो स्पष्टतः अव्याप्त है ही। लेकिन जब हम विधेयको देखते हैं तो उसे व्याप्त पाते हैं। निषेधात्मक वाक्यका मतलब यह है कि विधेयका उद्देश्यके बारेमें निषेध किया जाता है। विधेयका सम्पूर्ण उद्देश्यके बारेमें निषेध किया जा सकता है जैसे ए वाक्यमें, या उद्देश्यके एक अंशके बारेमें जैसे ओ वाक्यमें, लेकिन दोनों ही दशाओंमें जहां तक विधेयका सवाल है उसका सम्पूर्ण रूपमें ही निषेध किया जाना चाहिए, अन्यथा निषेधका कोई मतलब ही नहीं रह जाता। इस प्रकार ओ वाक्यका उद्देश्य अव्याप्त होता है और विधेय व्याप्त।

निष्कर्ष संक्षेपमें ये हैं :—

सामान्य वाक्यों (आ और ए) के उद्देश्य व्याप्त होते हैं लेकिन विशेष वाक्यों (ई और ओ) के नहीं।

निषेधात्मक वाक्यों (ए और ओ) के विधेय व्याप्त होते हैं लेकिन विधानात्मक वाक्यों (आ और ई) के नहीं।

अतः आ का केवल उद्देश्य,
ए का उद्देश्य और विधेय दोनों,
ई का न उद्देश्य और न विधेय
और ओ का केवल विधेय, व्याप्त होता है।

टिप्पणी. विधेयका परिमाण व्यक्त करना.

यह देखा जा सकता है कि उपर्युक्त वाक्योंमें केवल उद्देश्यका परिमाण स्पष्टतया बताया गया है लेकिन विधेयका नहीं। कुछ तर्कशास्त्री (जैसे, **हैमिल्टन**) ऐसे भी हैं जो विधेयका परिमाण भी स्पष्टतया बताते हैं और परिमाणके अनुसार आठ प्रकारके वाक्य मानते हैं :—

U सब उ सब वि हैं।
A सब उ कुछ वि हैं।
Y कुछ उ सब वि हैं।
I कुछ उ कुछ वि हैं।
E कोई उ कोई वि नहीं हैं।
π कोई उ कुछ वि नहीं हैं।
O कुछ उ कोई वि नहीं हैं।
ω कुछ उ कुछ वि नहीं हैं।

लेकिन अनावश्यक रूपसे जटिल होनेके कारण इस मतको आम तौर पर नहीं माना जाता।

भाग ६. आकृतियोंके द्वारा चार प्रकारके वाक्योंको दिखाना : यूलर (**Euler**) के वृत्त.

अठारहवीं शताब्दीके एक प्रसिद्ध स्विट्ज़रलैंड के निवासी तर्कशास्त्री **यूलर** ने चार प्रकारके वाक्योंको आकृतियोंके द्वारा समझाने की एक योजना बनाई। इस योजनामें उसने उद्देश्य और विधेय पदोंके सम्बन्धोंको निर्देशकी दृष्टिसे वृत्तोंके द्वारा इस प्रकार दिखाया :—

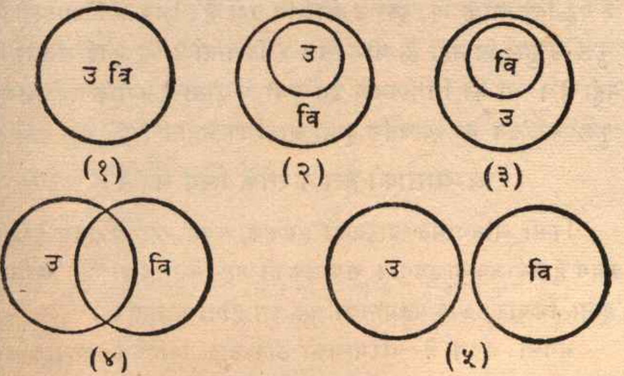

इस योजनामें उ उद्देश्यके लिये है और वि विधेयके लिये और दोनों

ही को निर्देशके अर्थमें ग्रहण किया गया है। अब हम देखते हैं कि इस योजनामें वाक्योंका चतुरंगी वर्गीकरण कैसे बैठता है।

आ (१ और २) आ वाक्य आकृति १ और २ में चित्रित किया गया है। 'सब उ वि है' का अर्थ कभी यह हो सकता है कि उ का निर्देश वही है जो वि का है जैसा कि चित्र १ में दिखाया गया है, अथवा यह कि उ का निर्देश वि के निर्देशके अन्तर्गत है जैसा कि चित्र २ में दिखाया गया है।

ए (५) ए वाक्य आकृति ५ में चित्रित किया गया है। 'कोई उ वि नहीं है' का अर्थ है कि उ और वि नामके वृत्त एक-दूसरेके बिल्कुल बाहर हैं।

ई (१, २, ३, ४) ई वाक्य आकृति १, २, ३, ४ में चित्रित किया गया है। हम जानते हैं कि तर्कशास्त्रमें 'कुछ' के बारेमें कथन करनेसे 'सब' के बारेमें कुछ भी निश्चित नहीं होता। अत: 'कुछ उ वि है।' चित्र १ के द्वारा दिखाया जा सकता है जिसमें 'सब उ सब वि है' ; चित्र २ के द्वारा भी दिखाया जा सकता है जिसमें 'सब उ कुछ वि है' ; चित्र ३ के द्वारा भी जिसमें 'कुछ उ सब वि है' ; और चित्र ४ के द्वारा भी जिसमें 'कुछ उ कुछ वि है।'

ओ (३, ४, ५) ओ वाक्यको आकृति ३, ४ और ५ में चित्रित किया गया है। चित्र ३ यह दिखाता है कि 'कुछ उ कोई वि नहीं है', चित्र ४ दिखाता है कि 'कुछ उ कुछ वि नहीं है, और चित्र ५ दिखाता है कि 'कोई उ कोई वि नहीं है'। ओ का चित्रीकरण इन सभी में होता है क्योंकि तर्कशास्त्रमें 'कुछ' का 'सब' का व्यावर्तक होना आवश्यक नहीं है।

अभ्यासोंको हल करनेके लिये संकेत

किसी अनियमित वाक्यको तार्किक रूपमें रखनेमें सबसे पहिला क़दम है संयोजकको ढूंढ़ना। संयोजकको 'नहीं' के साथ या 'नहीं' के बिना 'होना' क्रियाका कोई वर्तमानकालिक रूप होना चाहिए।

अगला क़दम है परिमाणको ठीक-ठीक निश्चित करना। इस अध्यायमें वाक्योंके साधारण भाषामें पाये जानेवाले रूपोंका परिमाण निश्चित किस तरह करना चाहिए, इस बात पर विचार कर लिया गया है।

अन्तमे गुण निश्चित करना होता है। निरपेक्ष वाक्योंमें संयोजकका गुण ही वाक्यका गुण होता है।

यह ध्यान देनेकी बात है कि भाषामें वाक्योंके जो अनन्त रूप मिलते हैं उनसे विचारोंके प्रकाशनमें स्पष्टता, सुन्दरता और बल आता है। लेकिन तर्कशास्त्रमें भाषाके अनन्त वाक्योंको सरल बनाकर चार प्रकारके वाक्योंके रूपमें ही रखना चाहिए। इस प्रकार तार्किक रूपोंका इस्तेमाल करनेमें भाषाका सौन्दर्य बहुत-कुछ जाता रहता है और यह स्वाभाविक ही है। सरलीकरणसे जितना लाभ होता है उतनी ही अभिव्यक्तिकी स्पष्टता और सौन्दर्यकी हानि होती है। इस बातको एक उपमाके द्वारा समझाया जा सकता है। प्राचीन यूनानमें एक डाकू प्रोक्रुस्टीज़ नामका था। उसको अपने शिकारको पकड़कर ज़बर्दस्ती चारपाई पर लिटानेका शौक़ था। कोई भी शिकार चारपाईमें पूरा नहीं आता था। इस तरह अगर वह चारपाईसे अधिक लम्बा होता था तो डाकू उसका सिर काटकर उसे चारपाईके बराबर बना देता था। अगर वह छोटा होता था तो डाकू उसको इतना खींचता था कि वह मर जाता था। तार्किक वाक्योंके जो चार रूप हैं उनकी उस डाकूकी चारपाईसे तुलना की जा सकती है। भाषामें जो अनन्त प्रकारके वाक्य होते हैं उनको इस चारपाईमें ठीक बैठाना पड़ता है, तभी तर्कशास्त्रमें उनका विचार किया जा सकता है। इसमें कोई आश्चर्य नहीं है कि तार्किक रूप इतने सूखे और नीरस होते हैं। रूपान्तरकी प्रक्रियामें अर्थकी बारीकियां खत्म हो जाती हैं यद्यपि मुख्य अर्थ वही रहता है।

हल किये हुए प्रश्न

१. नीचे लिखे वाक्योंका परिमाण क्या है और क्यों ?

(१) कोई भी आदमी ऐसा नहीं है जो स्वभावतया अच्छा न हो।

यह आ वाक्य है और इसका तार्किक रूप है 'सब मनुष्य स्वभावतया अच्छे हैं,' क्योंकि दो निषेधोंका विधानात्मक बल होता है।

(२) नदीको पार करनेमें कई आदमी डूब गये।

यह ई वाक्य है और इसका तार्किक रूप है, 'कुछ मनुष्य ऐसे हैं जो नदीको पार करनेमें डूब गये।'

(३) कुछको छोड़कर सब बन्दी बना लिये गये।

यह ई वाक्य है क्योंकि अपवाद निश्चित नहीं है। इसका तार्किक रूप है 'कुछ मनुष्य वे हैं जो बन्दी बना लिये गये।'

(४) कोई भी ऐसा कर सकता है।

इसका अर्थ है 'सब मनुष्य वे हैं जो ऐसा कर सकते हैं।' यह आ वाक्य है।

२. नीचे लिखे वाक्योंको सरलसे सरल तार्किक रूपमें रखिए और उनका परिमाण और गुण बताइये:—

(क) पृथ्वी ही एकमात्र ऐसा ग्रह है जिसके चारों ओर वायुमण्डल है।

यह तार्किक रूपमें है और आ वाक्य है। यह ध्यान रखना चाहिए कि इसका उद्देश्य और विधेय दोनों ही व्याप्त हैं।

(ख) आगे न बढ़ना पीछे हटना है।

तार्किक रूप: आगे न बढ़नेके सब दृष्टान्त पीछे हटनेके दृष्टान्त हैं (आ)।

(ग) जब भिखारी मरते हैं तब तारे नहीं टूटते।

यह हेतुफलाश्रित वाक्य है और इसका तार्किक रूप है, 'अगर भिखारी मरते हैं तो तारे नहीं टूटते।' यह ए वाक्य है क्योंकि हेतुफलाश्रित वाक्य का परिमाण हेतुके परिमाण पर और उसका गुण फलके गुण पर निर्भर होता है:

(घ) सभी हंस सफ़ेद नहीं होते।

यह ओ वाक्य है और इसका अर्थ है 'कुछ हंस सफ़ेद नहीं हैं।'

३. नीचे लिखे वाक्योंको तार्किक रूपमें रखकर उनके परिमाण और गुण बताइये:—

(क) हरेक पदका स्वभाव नहीं होता।

यह ओ वाक्य है और इसका तार्किक रूप है 'कुछ पद ऐसे नहीं हैं जिनका स्वभाव हो।'

(ख) केवल मूर्ख ही जादूमें विश्वास करते हैं।

यह ऐकान्तिक वाक्य है और इसके तार्किक रूप हैं:—

आ. सब जादूमें विश्वास करनेवाले व्यक्ति मूर्ख हैं।

ए. कोई अ-मूर्ख जादूमें विश्वास करनेवाला नहीं है।

ई. कुछ मूर्ख जादूमें विश्वास करनेवाले व्यक्ति हैं।

(ग) निष्कर्षको आधार वाक्योंसे निगमित होना ही चाहिए।

इसका तार्किक रूप है 'सब निष्कर्ष वे वाक्य हैं जो आधारवाक्योंसे निगमित होते हैं' (आ)।

४. नीचे लिखे वाक्योंका गुण और परिमाण बताइये और उन्हें तार्किक रूपमें भी रखिए:—

(क) मूर्खोंके अलावा कोई भी मूर्खोंको महान् नहीं समझता।

यह ऐकान्तिक वाक्य है और इसके तार्किक रूप ये हैं:—

आ. सब मूर्खोंको महान् समझनेवाले व्यक्ति मूर्ख हैं।

ए. कोई अ-मूर्ख वे व्यक्ति नहीं हैं जो मूर्खोंको महान् समझते हैं।

ई. कुछ मूर्ख वे व्यक्ति हैं जो मूर्खोंको महान् समझते हैं।

(ख) चीजें ऐसी नहीं हैं जैसी दिखाई देती हैं।

तार्किक रूप: कुछ चीजें ऐसी नहीं हैं जैसी दिखाई देती हैं। यह ओ वाक्य है।

(ग) आपमें से कम-से-कम एकको इस सवालका जवाब देना चाहिए।

तार्किक रूप आपमें से कम-से-कम एक ऐसा है जिसे इस सवालका जवाब देना चहिए। यह ई वाक्य है।

५. नीचे लिखे वाक्योंमें से प्रत्येकका गुण और परिमाण बताइये:—

(क) केवल अज्ञ ऐसा मत रखते हैं।

यह ऐकान्तिक वाक्य है। इसके तार्किक रूप ये हैं:—

आ. सब ऐसा मत रखनेवाले अज्ञ हैं।

ए. कोई ज्ञानवान् ऐसा मत रखनेवाला नहीं हैं।

ई. कुछ अज्ञ ऐसा मत रखनेवाले हैं।

(ख) थोड़े ही व्यक्ति प्रलोभनों से बच सकते हैं।

तार्किक रूप: कुछ व्यक्ति वे नहीं हैं जो प्रलोभनोंसे बच सकते हैं। यह ओ वाक्य है। थोड़े ही = कुछ नहीं।

(ग) फ़ासफ़ोरस पानीमें नहीं घुलता।

तार्किक रूप: फ़ासफ़ोरस वह पदार्थ नहीं है जो पानीमें घुलता है। यह ए वाक्य है।

(घ) अनेक योग्य व्यक्ति भाग्यहीन होते हैं।

तार्किक रूप: कुछ योग्य व्यक्ति भाग्यहीन हैं (ई)।

६. नीचे लिखे वाक्योंको तार्किक रूपमें रखिए:—

(क) आलोचना हमेशा दोषदर्शी नहीं होती।

तार्किक रूप: आलोचनाके कुछ दृष्टान्त दोषदर्शनके दृष्टान्त नहीं हैं (ओ)।

(ख) सभी जो दोस्त होनेका दम भरते हैं दोस्त नहीं होते।

तार्किक रूप: कुछ दोस्त होनेका दम भरनेवाले व्यक्ति दोस्त नहीं हैं (ओ)।

७. नीचे लिखे वाक्योंमें कौनसे पद व्याप्त हैं?

(क) कुछ महत्त्वपूर्ण पुस्तकें शायद ही पढ़ी जाती हों।

तार्किक रूप: कुछ महत्त्वपूर्ण पुस्तकें वे नहीं हैं जो पढ़ी जाती हैं (ओ)। इसका विधेय व्याप्त है।

(ख) हरेक अपराध दण्डनीय नहीं है।

तार्किक रूप: कुछ अपराध दण्डनीय नहीं हैं (ओ)। इसका विधेय व्याप्त है।

८. नीचे लिखे वाक्योंको तार्किक रूपमें रखिए:—

(क) सभी वकील दुष्ट नहीं होते।

तार्किक रूप: कुछ वकील दुष्ट नहीं हैं (ओ)।

(ख) स्नातकोंके अतिरिक्त कोई नहीं चुना जायगा।

तार्किक रूप:—

आ. सब व्यक्ति जो चुने जावेंगे स्नातक हैं।

ए. कोई अ-स्नातक ऐसे व्यक्ति नहीं हैं जो चुने जावेंगे।

ई. कुछ स्नातक वे व्यक्ति हैं जो चुने जावेंगे।

(ग) जलते हुए जहाज़से कप्तानको छोड़कर सब भाग गये।

यह अपवादात्मक वाक्य है और अपवाद निश्चित है। इसलिए यह आ वाक्य है।

तार्किक रूप: कप्तानको छोड़कर सब व्यक्ति वे हैं जो जहाज़को छोड़कर भाग गये।

९. नीचे लिखे वाक्योंको तार्किक रूपमें रखिए:—

(क) कहते हैं कि वह दिवालिया है।

'कहते हैं' का मतलब है 'आम लोग कहते हैं।' अतः इसका तार्किक रूप होगा 'कुछ लोग वे हैं जो कहते हैं कि वह दिवालिया है' (ई)।

(ख) वर्षा हो रही है।

तार्किक रूप :—
यह वर्षाका मौसम है (आ)

अभ्यासार्थ प्रश्न ७

१. निर्णय, तर्कवाक्य और व्याकरणके वाक्यमें अन्तर बताइये। क्या प्रत्येक निर्णयके तीन भाग होने चाहिए? तर्कवाक्योंके वर्गीकरणके कौन-कौन तरीक़े हैं? प्रत्येक वर्गको उदाहरण देकर समझाइये।

२. वैकल्पिक वाक्यका ठीक अर्थ आपके मतसे क्या है और क्यों? वाक्योंके परिमाणके बारेमें आप क्या जानते हैं?

३. गुण और परिमाणकी दृष्टिसे वाक्योंका वर्गीकरण कीजिये और चित्रोंकी मददसे उनको समझाइये।

४. तर्कशास्त्रमें वाक्यसे क्या मतलब है? उसके कौन-कौन भाग होते हैं और उन भागोंमें परस्पर क्या सम्बन्ध होता है? नीचे लिखे वाक्य सामान्य हैं या विशेष?

(क) जला हुआ बच्चा आगसे डरता है।
(ख) अपनी सभी ग़लतियोंके लिये हम उत्तरदायी नहीं हैं।
(ग) मुश्किलसे ही कोई राष्ट्र आर्थिक संकटसे मुक्त हो।
(घ) कम-से-कम एक छात्र उपस्थित नहीं है।
(ङ) प्राय: तूफ़ानसे पहिले बैरोमीटरका पारा गिर जाता है।

५. पद और वाक्यका अन्तर समझाइये।

६. आ, ए, ई और ओ वाक्योंको चित्रों द्वारा दिखाइये। वाक्योंमें पदोंकी व्याप्तिके बारेमें सामान्य नियम क्या हैं?

७. पदोंकी व्याप्तिके सामान्य नियम बताइये और नीचे दिये हुए वाक्योंमें व्याप्त पद बताइये :—

(क) पुस्तकें प्राय: उपयोगी होती हैं।
(ख) पृथ्वी सूर्यकी परिक्रमा करती है।

८. नीचे दिये हुए वाक्योंका गुण और परिमाण बताइये :—

(क) केवल स्नातक ही मतदानके अधिकारी हैं।
(ख) वर्षाकी दो-चार बूंदोंका ज़्यादा असर नहीं होता।
(ग) बलि चाह्यो आकाशको प्रभु पठ्यों पाताल।
(घ) थोड़ेसे आदमी इस मेज़को नहीं हिला सकते।

९. निरपेक्ष वाक्यमें पद-व्याप्तिसे क्या मतलब है? यह दिखाइये कि विधेयकी व्याप्ति वाक्यके गुण पर निर्भर करती है।

१०. उदाहरण देते हुए सहज गुण और आकस्मिक गुणका अन्तर समझाइये। विश्लेषणात्मक और संश्लेषणात्मक वाक्योंके भेदको समझानेमें इसका उपयोग कीजिये।

११. उदाहरण देते हुए शाब्दिक और वास्तविक वाक्योंका अन्तर स्पष्ट कीजिये। 'किसी वर्गके बारेमें जो कुछ विधान या निषेध किया जाता है वह उसके प्रत्येक सदस्य पर लागू होता है।' यह वाक्य शाब्दिक है या वास्तविक?

१२. शाब्दिक और वास्तविक वाक्योंके भेदसे वाच्यधर्मोंका कोई सम्बन्ध है या नहीं?

१३. एकवाचक वाक्य सामान्य क्यों होते हैं? 'कुछ', 'कोई', 'सब', 'कम ही', 'बहुत', 'अधिकांश' शब्दोंकी अनेकार्थकताको स्पष्ट कीजिये।

१४. नीचे लिखे वाक्यको तार्किक रूपमें रखिए और उसमें व्याप्त पद बताइये :—

वह प्रेमी नहीं है जो शौक़ीन नहीं है।

१५. निम्न प्रकारके वाक्योंको उदाहरण देकर समझाइयेः—

(क) हेतुफलाश्रित, (ख) वैकल्पिक, (ग) ऐकान्तिक, (घ) अपवादात्मक, (ङ) विश्लेषणात्मक और संश्लेषणात्मक, (च) अव्यक्त परिमाण, (छ) आवश्यक और सम्प्रज्ञात।

१६. अन्तर बताइयेः—

(क) तर्कवाक्य और व्याकरणके वाक्यमें।
(ख) सरल और मिश्र वाक्योंमें।
(ग) निरपेक्ष और सापेक्ष वाक्यों में।
(घ) वाक्यों के आकार और द्रव्यमें।

१७. उदाहरण देते हुए अन्तर समझाइये :—

(क) निर्णय और वाक्यमें।
(ख) निरपेक्ष और सापेक्ष वाक्यमें।
(ग) हेतुफलाश्रित और वैकल्पिक वाक्यमें।
(घ) शुद्ध और विधियुक्त वाक्यमें।

१८. नीचे लिखे वाक्योंको तार्किक रूपमें रखिए :—

(१) सभी अच्छे लेखक अच्छे वक्ता नहीं होते।
(२) जो सफल होना चाहता है उसे काम करना चाहिए।
(३) सबसे अच्छे छात्रके अलावा बाक़ी सब असफल रहे।
(४) इस पाठशालामें केवल स्लेट पर लिखा जाता है।

(५) बिरले ही लोग ख़तरेकी उपेक्षा करते हैं।
(६) क़रीब-क़रीब नगरके सभी आदमी बीमारीके शिकार हुए।
(७) केवल बच्चे ही बिना टिकट प्रवेश कर सकते हैं।
(८) सभी प्रशंसक मित्र नहीं होते।
(९) हरेक जवाब अच्छा जवाब नहीं होता।
(१०) थोड़े ही लोग अपने कामकी ज़िम्मेदारी लेते हैं।
(११) सभी आदमी कभी-कभी ग़लती करते हैं।
(१२) इस आसान सवालका जवाब सब छात्र दे सकते हैं।
(१३) दीवारोंसे जेल नहीं बनती।
(१४) केवल दार्शनिकोंको ही इस बातमें कठिनाई होती है।
(१५) एकके अतिरिक्त मेरे सब उत्तर ठीक थे।
(१६) थोड़े ही लोग दु:ख से बचे हैं।
(१७) केवल थोड़ेसे लोग प्रसिद्धि पाते हैं।
(१८) जो भावनाओं को वश में करता है वह वीर है।
(१९) केवल सत्य ही स्थायी है।
(२०) कोई समाचार अच्छा नहीं है।
(२१) काउंसिल के दो सदस्य भारतीय हैं।
(२२) स्वायत्त शासन अनिवार्यत: अच्छा शासन नहीं होता।

१९. सापेक्ष वाक्योंका स्वरूप समझाइये।
२०. सम्बन्ध और विधिके अनुसार वाक्योंका वर्गीकरण कीजिये।
२१. हेतुफलाश्रित वाक्योंकी विधि क्या होती है?
२२. विधेयका परिमाण बतानेवाले मतकी आलोचना कीजिये।

८

निरपेक्ष वाक्यों का तात्पर्य और विधान के सिद्धान्त

यहां सवाल यह है—विधानका सच्चा स्वरूप क्या है? दूसरे शब्दों में, जब हम विधान करते हैं तब वह क्या चीज़ है जो हम वस्तुतः करते हैं? इन प्रश्नोंका अलग-अलग तर्कशास्त्रियोंने अलग-अलग उत्तर दिया है। इस प्रसंगमें दो समस्याओंका विचार करना है और दोनों ही समस्याओंके बारेमें तर्कशास्त्रियोंमें मतभेद है। पहिली समस्या यह है: वाक्य उद्देश्य और विधेयके बीच किस प्रकारके सम्बन्धको प्रकट करता है? दूसरी है: समग्र वाक्यका संकेत मूलतः किस चीज़की ओर होता है, वास्तविक वस्तुओंसे या नामोंसे या विचारोंसे? अब हम इन समस्याओं पर विस्तारसे विचार करेंगे।

भाग १. विधानके सिद्धान्त (Theories of Predication).

यहां सवाल है—उद्देश्यका क्या अर्थ है? विधेयका क्या अर्थ है? और तार्किक वाक्यके उद्देश्य और विधेयमें जो सम्बन्ध होता है उसका क्या अर्थ है?

तर्कशास्त्रियोंमें इन सवालोंके बारेमें बहुत मतभेद रहा है और उनके अलग-अलग मत ही विधानके विभिन्न सिद्धान्त हैं।

१. विधानवाद (The Predicative View).

विधानवादके अनुसार, जोकि साधारण लोक-मत है, वाक्यका उद्देश्य निर्देशमें ग्रहण किया जाना चाहिए और विधेय स्वभावमें तथा

वाक्यका अर्थ यह होता है कि विधेयका स्वभाव जिन गुणोंसे बनता है उनका उद्देश्यके द्वारा निर्दिष्ट वस्तुओं या व्यक्तियोंके बारेमें या तो विधान होता है या निषेध। उदाहरणके लिये: 'सब मनुष्य मरणशील हैं' वाक्यका अर्थ यह है कि मरणशीलता नामक गुण सब मनुष्योंमें पाया जाता है। इसी तरह, 'कोई मनुष्य पूर्ण नहीं है' वाक्यका अर्थ यह है कि सब मनुष्य पूर्णता नामक गुणसे रहित हैं। यह मत **मार्टिन्यू** (**Martineau**) और **वेन** (**Venn**) ने माना है।

१. विधान-वाद : उद्देश्य निर्देश में और विधेय स्वभाव में।

२. निर्देशवाद (The Denotative View).

निर्देशवादके अनुसार उद्देश्य और विधेय दोनोंको निर्देशके अर्थमें ग्रहण करना चाहिए और तब वाक्यका अर्थ यह होता है कि उद्देश्यके द्वारा निर्दिष्ट वर्ग विधेयके द्वारा निर्दिष्ट वर्गके या तो अन्दर है या बाहर। उदाहरणके लिये: इस मतके अनुसार 'सब मनुष्य मरणशील हैं' वाक्यका अर्थ यह है कि 'मनुष्यों' का वर्ग 'मरणशील प्राणियों' के वर्गके अन्दर है, और 'कोई मनुष्य पूर्ण नहीं है' वाक्यका अर्थ यह है कि 'मनुष्यों' का वर्ग 'पूर्ण प्राणियों' के वर्गसे बाहर है।

२. निर्देश-वाद : उद्देश्य और विधेय दोनों निर्देशके अर्थमें।

३. स्वभाववाद (The Connotative View).

स्वभाववादके अनुसार उद्देश्य और विधेय दोनों स्वभावके अर्थमें ग्रहण किये जाने चाहिए और वाक्यका प्रयोजन उद्देश्य और विधेयके द्वारा व्यक्त गुणोंमें कोई सम्बन्ध प्रकट करना होता है। इस दृष्टिकोण से 'सब मनुष्य मरणशील हैं' वाक्यका अर्थ यह होगा कि 'मरणशीलता' का गुण 'मनुष्यता' के गुणके साथ रहता है तथा 'कोई मनुष्य पूर्ण नहीं है' वाक्यका अर्थ यह होगा कि 'पूर्णता' का गुण 'मनुष्यता' के गुणके साथ बिल्कुल नहीं रहता। यह **मिल** का मत है।

३. स्वभाव-वाद : उद्देश्य और विधेय दोनों स्वभावके अर्थमें।

४. निर्देश-स्वभाववाद (Denotative-Connotative View).

यह मत दूसरे और तीसरे मतका संयुक्त रूप है। निर्देश-स्वभाव-

४. निर्देश-स्वभाववाद : उद्देश्य और विधेय, निर्देशके अर्थमें या स्वभावके अर्थमें।

वादके अनुसार वाक्यके उद्देश्य और विधेयको या तो निर्देशके अर्थमें ग्रहण किया जा सकता है या स्वभावके अर्थमें। जब वे दोनों निर्देश के अर्थमें लिये जाते हैं तब उद्देश्य विधेयके अन्दर रहता है या बाहर, और जब दोनों स्वभावके अर्थमें लिये जाते हैं तब विधेय उद्देश्यके अन्दर रहता है या बाहर। यह कोई नया सिद्धान्त नहीं है बल्कि निर्देशवाद और स्वभाववादका ही संयुक्त रूप है। यह **हैमिलटन** का मत है और समन्वयवाद (comprehensive view) भी कहलाता है।

ऊपर जिन चार मतोंका उल्लेख हुआ है उनमें विधानवाद सबसे सन्तोषजनक मालूम पड़ता है। निरपेक्ष वाक्यमें उद्देश्यके साथ परिमाण-सूचक चिह्न भी जुड़ा रहता है और उसे निर्देशके अर्थमें लेना स्वाभाविक ही मालूम पड़ता है। इसके अलावा वाक्योंके चतुरंगी वर्गीकरणके यह मत बिल्कुल अनुकूल है; क्योंकि अगर विधेय कोई गुण बताता है और उद्देश्य कुछ वस्तुएं बताता है तो हमें विधेयका उद्देश्यके बारेमें विधान या निषेध करना चाहिए और प्रत्येक दशामें व्यक्तियोंकी एक निश्चित या अनिश्चित संख्याका कथन होना चाहिए।

भाग २. वाक्योंके तात्पर्यके बारेमें नामवादी, प्रत्ययवादी और वस्तुवादी सिद्धान्त.

यहां समस्या है—समग्र वाक्यका संकेत मूलतः किस ओर होता है? इस बारेमें तीन मत पेश किये गये हैं : वाक्य नामोंकी ओर, विचारोंकी ओर या वास्तविक चीजोंकी ओर संकेत करते हैं।

(१) नामवाद.

यह **हॉब्स** का मत है। इस मतके अनुसार वाक्य दो नामोंका सम्बन्ध बताता है। हॉब्स कहता है कि वाक्यका तात्पर्य कहनेवालेका यह विश्वास है कि विधेय उस वस्तुका नाम है जिसका उद्देश्य भी नाम है।

यह मत सन्तोषप्रद नहीं है क्योंकि इसमें यह गर्भित है कि सत्यता आकारविषयक मात्र है, कि सत्यता शब्दोंका संवाद या संगति मात्र है, जबकि सत्यता आकारविषयक मात्र नहीं होती बल्कि द्रव्यविषयक भी होती है।

(२) **प्रत्ययवाद.**

इस मतको **लॉक** (Locke) मानता है और इसके अनुसार वाक्य दो प्रत्ययों या विचारोंका सम्बन्ध प्रकट करता है अर्थात् वाक्य दो विचारोंकी संगति या असंगतिका कथन करता है।

यह मत असन्तोषजनक है। यह इस बातको स्वीकार नहीं करता कि विचार किसी चीज़का विचार होता है, कि खाली विचार नामकी कोई चीज नहीं हो सकती और इसलिए वाक्यका संकेत खाली विचार की ओर नहीं हो सकता।

(३) **वस्तुवाद.**

इस मतके अनुसार वाक्यका संकेत विचार या नामोंकी ओर नहीं होता बल्कि वस्तुओंकी ओर होता है।

सही मत प्रत्ययवाद और वस्तुवादका मिला-जुला रूप मालूम पड़ता है। यह **ब्रेडले** (Bradley) का मत है। यह सही है कि वाक्यमें विचार या प्रत्यय होता है लेकिन यह विचार या प्रत्यय किसी वास्तविक सत्ताकी ओर संकेत करता है। अतः वाक्य न केवल विचारकी ओर संकेत करता है बल्कि उस वस्तुकी ओर भी जिसका वह विचार है।

अभ्यासार्थ प्रश्न ८

१. 'वाक्योंका तात्पर्य' का अर्थ स्पष्ट कीजिये और तर्कशास्त्रियों ने इस विषयमें जो मुख्य सिद्धान्त पेश किये हैं उनको बताइये। इनमें से प्रत्येकके अनुसार 'सब मनुष्य मरणशील हैं' वाक्यका अर्थ बताइये।

२. वाक्योंके तात्पर्यके बारेमें विधानवाद और निर्देशवादको

समझाइये और हरेकका उदाहरण भी दीजिये। आप वाक्योंके तात्पर्य के बारेमें कौन-सा मत सही मानते हैं और क्यों ?

३. विधानके सिद्धान्तसे आप क्या समझते हैं ? ठोस उदाहरण देकर विभिन्न सिद्धान्तोंको समझाइये।

४. वाक्योंके तात्पर्यके बारेमें प्रमुख मतोंको संक्षेपमें समझाइये और उनमेंसे किसी एक पर विस्तारसे विचार कीजिये। आप उनमें से किसे मानते हैं और क्यों ?

६

वाक्यों का विरोध

भाग १. विरोधके विभिन्न रूप (Different Forms of Opposition).

वाक्योंके विरोधका मतलब है वह सम्बन्ध जो दो ऐसे वाक्योंके मध्य होता है जिनके उद्देश्य भी और विधेय भी एक ही हों लेकिन जिनके केवल गुणमें या केवल परिमाणमें या गुण और परिमाण दोनोंमें अन्तर हो। विरोध चार प्रकारका होता है: उपाश्रितता (subalternation), विपरीतता (contrariety), अनुविपरीतता (sub-contrariety) और व्याघातकता (contradiction)। — विरोध क्या है? विरोधके चार प्रकार।

(क) उपाश्रितता.

उपाश्रितता वह सम्बन्ध है जो दो ऐसे वाक्योंमें रहता है जिनके उद्देश्य और विधेय एक ही हों तथा गुण भी एक हो लेकिन केवल परिमाण भिन्न हों। इस प्रकार यह सम्बन्ध एक ही गुणवाले सामान्य और विशेष वाक्योंमें अर्थात् आ और ई, तथा ए और ओ में होता है। — उपाश्रितता—केवल परिमाणमें अन्तर।

'सब मनुष्य अपूर्ण हैं' तथा 'कुछ मनुष्य अपूर्ण हैं' इन दो वाक्योंमें उपाश्रितता है और इसी तरह 'कोई मनुष्य अमर नहीं है' और 'कुछ मनुष्य अमर नहीं हैं' इन वाक्योंमें भी।

टिप्पणी. क्या उपाश्रितता विरोधका प्रकार है?

साधारण व्यवहारमें "विरोध" शब्दके अर्थमें यह बात छिपी रहती है कि दो विरोधी बातें एक साथ सत्य नहीं हो सकतीं। इस प्रकार

विरोधी केवल उन्हीं वाक्योंको कहा जा सकता है जो एक साथ सत्य नहीं हो सकते। इस दृष्टिसे उपाश्रितताको विरोधका रूप नहीं कहा जा सकता, क्योंकि उपाश्रित वाक्योंकी परस्पर असंगति तो होती ही नहीं बल्कि साथ ही सामान्य वाक्यकी सत्यतामें अनिवार्यतः विशेष वाक्यकी सत्यता भी छिपी रहती है। इस प्रकार 'सब मनुष्य मरणशील हैं' और 'कुछ मनुष्य मरणशील हैं' ये वाक्य एक साथ सत्य हैं और सामान्य वाक्यकी सत्यतामें विशेष वाक्यकी सत्यता शामिल है। उपाश्रिततामें गुणका विरोध नहीं होता बल्कि दो वाक्योंके केवल परिमाणमें अन्तर होता है।*

फिर भी तर्कशास्त्री "विरोध" शब्दका प्रयोग एक विशिष्ट अर्थमें करते हैं जिससे गुणका विरोध न रहते हुए भी परिमाणका अन्तर इसमें शामिल कर लिया जाता है। यह बिल्कुल साफ़ है कि इस विशिष्ट अर्थमें उपाश्रितताको विरोधका ही एक रूप मानना चाहिए। इस प्रकार उपाश्रितताका विरोधका रूप होना या न होना "विरोध" शब्दके अर्थ पर निर्भर करता है।

(ख) विपरीतता.

विपरीतता— दो केवल गुणमें भिन्न सामान्य वाक्य।

विपरीतता दो ऐसे सामान्य वाक्योंका सम्बन्ध है जिनके उद्देश्य और विधेय एक ही होते हैं लेकिन जिनके गुणमें अन्तर होता है। यह विरोध आ और ए वाक्योंमें होता है। 'सब मनुष्य अपूर्ण हैं' और 'कोई मनुष्य अपूर्ण नहीं है' ये दो परस्पर विपरीत वाक्य हैं।

(ग) अनुविपरीतता.

अनुविपरीतता दो ऐसे विशेष वाक्योंका सम्बन्ध है जिनके उद्देश्य

---

* अगर हम कहें कि दो वाक्योंको परस्पर विरुद्ध तब नहीं कहा जा सकता जब वे साथ-साथ सत्य होते हैं, तो अनुविपरीतता भी विरोधका प्रकार नहीं हो सकती (देखिए भाग २)।

और विधेय एक होते हैं लेकिन गुणमें अन्तर होता है। यह ई और ओ वाक्यों के बीच होता है। 'कुछ मनुष्य चतुर हैं' और कुछ मनुष्य चतुर नहीं हैं' ये दो अनुविपरीत वाक्य हैं।

अनुविपरीतता—दो केवल गुणमें भिन्न विशेष वाक्य।

(घ) व्याघातकता.

व्याघातकता उन दो वाक्योंका सम्बन्ध है जिनके उद्देश्य और विधेय एक हों लेकिन गुण और परिमाण दोनों ही भिन्न हों। व्याघातकोंके दो जोड़े हैं, एक आ और ओ का, दूसरा ए और ई का।

व्याघातकता—गुण और परिमाणमें अन्तर।

व्याघातकता विरोधका पूर्ण रूप है क्योंकि इसमें गुण और परिमाण दोनों भिन्न होते हैं। आ अर्थात् सामान्य विधानात्मकका व्याघातक ओ अर्थात् विशेष निषेधात्मक है और ए अर्थात् सामान्य निषेधात्मक का व्याघातक ई अर्थात् विशेष विधानात्मक है।

संक्षेप में: 'विरोध' शब्दका एक व्यापक अर्थमें और एक संकुचित अर्थमें प्रयोग हुआ है। व्यापक अर्थमें विरोधके चार प्रकार हैं जिनमें से एक उपाश्रितता भी है। संकुचित अर्थमें विरोध केवल तीन प्रकार का होता है: विपरीत, अनुविपरीत और व्याघातक।

विरोधका सम्बन्ध केवल ऐसे ही वाक्योंमें हो सकता है जिनके उद्देश्य और विधेय एक हों। उपाश्रिततामें केवल परिमाणका अन्तर होता है; विपरीततामें दो सामान्य वाक्य गुणमें भिन्न होते हैं; अनुविपरीततामें दो विशेष वाक्य गुणमें भिन्न होते हैं; और व्याघातकता में गुण और परिमाण दोनों भिन्न होते हैं। आ-ई और ए-ओ उपाश्रित हैं; आ-ए विपरीत हैं; ई-ओ अनुविपरीत हैं; और आ-ओ तथा ए-ई व्याघातक है।

भाग २. विरोध-प्रदर्शक वर्ग (Square of Opposition).

विरोध-प्रदर्शक वर्ग विरोधके नियमको याद रखनेमें मदद करने वाली एक आकृति है और इस तरह है:—

विरोध-प्रदर्शक वर्ग।

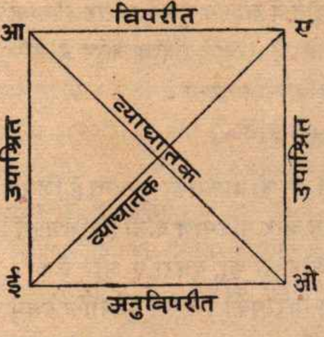

इस आकृतिमें सामान्य वाक्य सबसे ऊपर हैं और विशेष वाक्य नीचे हैं, विधानात्मक वाक्य बाईं ओर हैं और निषेधात्मक दाहिनी ओर।

अरस्तू के अनुसार विरोध-प्रदर्शक वर्ग यह है :—

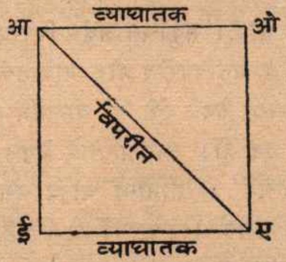

पहिलेके वर्गसे अरस्तू के वर्गमें ये विशेषताएं हैं :—

(१) उपाश्रितताको विरोधका प्रकार नहीं माना गया है।

(२) अनुविपरीतताको भी विरोधका प्रकार नहीं माना गया है क्योंकि कभी-कभी ई और ओ वाक्य एक साथ सत्य हो सकते हैं, जैसे, 'कुछ मनुष्य ईमानदार हैं' और 'कुछ मनुष्य ईमानदार नहीं हैं' ये वाक्य। इस प्रकार अरस्तू के अनुसार विरोधका मतलब यह है कि दो वाक्य एक साथ सत्य नहीं हो सकते।

(३) अरस्तू केवल विपरीतता और व्याघातकताको ही मानता है। अरस्तू के वर्गमें विपरीतताको एक कर्णके द्वारा दिखाया गया है और व्याघातकताको ऊपर और नीचेकी रेखाओंके द्वारा।

अभ्यासार्थ प्रश्न ९

१. वाक्योंके विरोधसे आप क्या समझते हैं? अगर नीचे लिखा वाक्य असत्य हो तो कौनसे वाक्य सत्य, असत्य, और संदिग्ध होंगे?

कुछ सुखी मनुष्य असन्तुष्ट हैं।

२. सब चमकदार चीजें सोना नहीं होतीं। इस वाक्यकी सत्यतासे इसके विरोधियोंके बारेमें आप क्या अनुमान करेंगे? क्या उपाश्रितता विरोधका एक रूप है?

३. विरोधका वर्ग खींचिए और उसको समझाइये। अरस्तू के वर्गसे यह किस बातमें भिन्न है?

४. 'तर्कशास्त्रके कुछ विद्यार्थी तर्कशास्त्र नहीं जानते' इस वाक्यको असत्य मानकर इसके विरोधियोंके बारेमें आप क्या कहेंगे?

५. विरोधके विभिन्न रूपोंको समझाइये और दैनिक व्यवहारमें उनका उपयोग बताइये।

६. (अ) विपरीतता और (ब) अनुविपरीततामें अनुमानके नियम क्या हैं?

७. उपाश्रितता और अनुविपरीततामें अन्तर बताइये।

(क) अच्छे मनुष्य विवेकी होते हैं।
(ख) अविवेकी मनुष्य अच्छे नहीं होते।
(ग) कुछ अविवेकी मनुष्य अच्छे होते हैं।
(घ) कोई अच्छे मनुष्य अविवेकी नहीं होते।

उपर्युक्त वाक्योंका तार्किक सम्बन्ध बताइये।

१०

अनन्तरानुमान या अव्यवहित अनुमान

(Immediate Inference)

भाग १. अनुमान-प्रकरण—निगमनात्मक और आगमनात्मक अनुमान; अव्यवहित अनुमान या अनन्तरानुमान और व्यवहित अनुमान या सान्तरानुमान.

भाषामें प्रकट अनुमान युक्ति कहलाता है।

अनुमान या तर्क वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा एक या अधिक तर्कवाक्योंसे एक सही निष्कर्ष निकाला जाता है। अतः अनुमानमें एक से अधिक तर्कवाक्योंको होना चाहिए। जब अनुमान भाषामें प्रकट कर दिया जाता है तब उसे **युक्ति** (**argument**) कहते हैं। इसलिए युक्तिमें एकसे अधिक तर्कवाक्य होते हैं।

युक्तिमें आधारवाक्य और निष्कर्ष होते हैं।

युक्तिमें हम एक या अधिक दिये हुए तर्कवाक्योंसे एक नये तर्कवाक्य पर पहुंचते हैं। ज्ञात या दिया हुआ तर्कवाक्य **आधारवाक्य** (**premise**) कहलाता है और जो तर्कवाक्य उससे ज्ञात किया जाता है उसे **निष्कर्ष** (**conclusion**) कहते हैं। अतः अनुमान या युक्तिमें दिये हुए तर्कवाक्य या तर्कवाक्योंके आधार पर एक-दूसरे ऐसे तर्कवाक्य पर पहुँचते हैं जो हमारे लिये नया होता है, हालांकि यह नया तर्कवाक्य दिये हुए तर्कवाक्य या तर्कवाक्योंका अनिवार्य फल होता है।

अनुमान मुख्य रूपसे निगमनात्मक और आगमनात्मक दो प्रकारका होता है।

मुख्य रूपसे अनुमानको **निगमनात्मक** (**deductive**) और **आगमनात्मक** (**inductive**) दो प्रकारोंमें विभाजित किया गया है। निगमनमें निष्कर्ष आधारवाक्योंसे अधिक सामान्य नहीं हो सकता, किन्तु आगमनमें निष्कर्ष आधारवाक्योंसे आवश्यक रूपसे अधिक सामान्य होना चाहिए।

निगमनको अनन्तरानुमान (**immediate inference**) और सान्तरानुमान (**mediate inference**) दो प्रकारोंमें बांटा गया है।

अनन्तरानुमान या अव्यवहित अनुमान निगमनका वह प्रकार है जिसमें निष्कर्ष केवल एक ही आधारवाक्यसे निकाला जाता है। अनन्तरानुमानमें केवल एक तर्कवाक्यके छिपे हुए अर्थको प्रकट किया जाता है। निगमनका एक उपभेद होनेके कारण इसमें निष्कर्ष दिये हुए तर्कवाक्यसे अधिक सामान्य नहीं हो सकता। **दूसरी ओर, सान्तरानुमान या व्यवहित अनुमान (mediate inference) में निष्कर्ष एक-से अधिक तर्कवाक्योंसे निकलता है।** जिस सान्तरानुमानमें आधारवाक्य केवल दो होते हैं और निष्कर्ष उन दोनोंका सम्मिलित फल होता है उसे न्याय (**syllogism**) कहते हैं।

एक या अधिक आधारवाक्यों के अनुसार निगमनात्मक अनुमानको क्रमश: अनन्तरानुमान और सान्तरानुमान में बांटा गया है।

क्या अनन्तरानुमान अनुमान है?

क्या अनन्तरानुमान अनुमान है?

कुछ तर्कशास्त्रियों जैसे **मिल, बेन** इत्यादिका कथन है कि अनन्तरानुमान बिल्कुल अनुमान नहीं है। मिल ने कहा है कि यह ऐसा अनुमान है जिसे अनुमान कहना अनुचित है। उनका कहना है कि "इन अवस्थाओंमें अनुमान-प्रक्रिया बिल्कुल होती ही नहीं क्योंकि निष्कर्षमें कोई नवीन सत्य होता ही नहीं। जो कुछ आधारवाक्यमें कथित है वही निष्कर्षमें भी कह दिया जाता है। ......निष्कर्षमें जिस तथ्यका उल्लेख होता है वह आधारवाक्यमें उल्लिखित तथ्य ही होता है या उसका एक अंश होता है।" बेन महोदयका कथन है कि ऐसे अनुमानोंमें सच्चा अनुमान नहीं होता अर्थात् इनमें एक दिये हुए तथ्यसे किसी नये तथ्यका ज्ञान नहीं होता। इनमें केवल शब्दोंके हेरफेरसे वही बात फिर कह दी जाती है। उदाहरणके लिये, प्रतिवर्तन (obversion) का एक दृष्टान्त लीजिए। जब "सब मनुष्य मरणशील हैं" तर्कवाक्यका प्रतिवर्तन किया जाता है तो तर्कवाक्य "कोई मनुष्य अमर नहीं है" प्राप्त होता है। इसमें निष्कर्ष स्पष्टत: आधारवाक्यका ही प्रकारान्तरसे कथन है।

यह सत्य है कि अनन्तरानुमानमें आधारवाक्यसे निष्कर्ष तक पहुंचने का प्रयास बहुत हल्का है, किन्तु यह कहना कि यह प्रयास ही नहीं है सत्य नहीं मालूम पड़ता। वास्तवमें अनुमानका कार्य यह है कि जो कुछ दिये हुए वाक्यमें अन्तर्निहित या छिपा हुआ है उसको प्रकट कर दिया जाय अर्थात् जो आधारवाक्यमें छिपा हुआ है उसे खोलकर रख दिया जाय। हो सकता है कि मूल वाक्यको हम जानते हों किन्तु उसके पूर्ण अर्थको न जानते हों। इस दृष्टिसे अनन्तरानुमान अवश्य कुछ दी हुई चीज़ोंसे कुछ नई और अज्ञात चीज़ोंका ज्ञात कराता है।

अनेक प्रकार।

अनन्तरानुमान कई प्रकारके हो सकते हैं; जैसे, **परिवर्तन (conversion)**, **प्रतिवर्तन (obversion)**, **परिवर्तित प्रतिवर्तन (contraposition)**, **विपर्यय (inversion)**, **विरोध (opposition)**, **विध्यानुकूल अनुमान (modal consequence)**, **सम्बन्धका रूपान्तर (change of relation)**, **विशेषण-संयोजनात्मक अनुमान (inference by added determinants)**, **मिश्र-विचाराश्रित अनुमान (inference by complex conception)**। इनमें से प्रथम चार प्रकारके अनन्तरानुमान अर्थात् परिवर्तन, प्रतिवर्तन, परिवर्तित प्रतिवर्तन तथा विपर्यय **निष्कर्षण (eduction)** कहलाते हैं। निष्कर्षणकी परिभाषा यह हो सकती है—निष्कर्षण अनन्तरानुमानके वे रूप हैं जिनमें दिये हुए वाक्यको सत्य मानते हुए ऐसे अन्य वाक्य निकाले जाते हैं जो उसमें अन्तर्भूत होते हैं, हालांकि उद्देश्य या विधेय या दोनोंकी दृष्टिसे ये मूल वाक्यसे भिन्न होते हैं।

भाग २. परिवर्तन (Conversion).

परिवतनकी परिभाषा।

परिवर्तन एक प्रकारका अनन्तरानुमान है जिसमें किसी वाक्यके उद्देश्य और विधेयका स्थान परस्पर बदल दिया जाता है।

दिया हुआ वाक्य जिसका परिवर्तन किया जाता है **परिवर्त्य**

(**convertend**) कहलाता है और वह वाक्य जिसका दिये हुए वाक्यसे अनुमान किया जाता है **परिवर्तित** (**converse**) कहलाता है।

परिवर्तनके नियम।

परिवर्तनमें नीचे लिखे नियमोंका पालन करना चाहिए :—

(१) परिवर्त्यका उद्देश्य परिवर्तितका विधेय बन जाता है।

(२) परिवर्त्यका विधेय परिवर्तितका उद्देश्य बन जाता है।

(३) परिवर्तितका गुण वही रहता है जो परिवर्त्यका होता है अर्थात् यदि परिवर्त्य विधानात्मक है तो परिवर्तित भी विधानात्मक होगा और यदि परिवर्त्य निषेधात्मक है तो परिवर्तित भी निषेधात्मक होगा।

(४) परिवर्तितमें कोई भी पद व्याप्त नहीं हो सकता जब तक कि वह परिवर्त्यमें भी व्याप्त न हो।

अब इन नियमोंका प्रयोग चारों प्रकारके वाक्योंमें करके देखना चाहिए।

आ—ई

(१) **आ का परिवर्तन.** आ वाक्यका परिवर्तित रूप ई वाक्य है। उपर्युक्त नियमोंके अनुसार परिवर्तितका भी वही गुण होना चाहिए जो परिवर्त्यका है। अतः आ वाक्यका परिवर्तित रूप विधानात्मक होना चाहिए अर्थात् या तो आ या ई। आ का परिवर्तित आ नहीं हो सकता क्योंकि उस दशामें परिवर्त्यका विधेय जो कि उसमें व्याप्त नहीं है परिवर्तितमें व्याप्त हो जायगा। अतः परिवर्तित ई वाक्य होना चाहिए—

परिवर्त्य—सब उ वि है। सब मनुष्य मरणशील हैं।
∴ परिवर्तित—कुछ वि उ है। कुछ मरणशील प्राणी मनुष्य हैं।

ए—ए

(२) **ए वाक्यका परिवर्तन.** ए वाक्यका परिवर्तित रूप ए वाक्य ही है। ए वाक्य निषेधात्मक है। अतः इसका परिवर्तित रूप निषेधात्मक ही होना चाहिए। यदि ए वाक्यसे ए वाक्य बनाया जाय तो पद-व्याप्तिका दोष नहीं होगा क्योंकि परिवर्त्यमें उद्देश्य और विधेय दोनों व्याप्त हैं और इसलिए परिवर्तितमें भी व्याप्त हो सकते हैं। यथा—

परिवर्त्य—कोई उ वि नहीं है। कोई मनुष्य पूर्ण नहीं है।
∴ परिवर्तित—कोई वि उ नहीं है। कोई पूर्ण प्राणी मनुष्य नहीं है।

ई—ई

(३) **ई वाक्यका परिवर्तन.** ई वाक्यका परिवर्तित रूप ई है। ई वाक्य विधानात्मक है। अतः इसका परिवर्तित रूप भी विधानात्मक होगा। चूंकि ई वाक्यमें न तो उद्देश्य व्याप्त होता है और न विधेय, इसलिए परिवर्तितमें भी कोई पद व्याप्त नहीं होगा। इस प्रकार ई का परिवर्तन ई में होगा—जैसे

परिवर्त्य—कुछ उ वि हैं। कुछ मनुष्य चतुर हैं।
∴ परिवर्तित—कुछ वि उ हैं। कुछ चतुर प्राणी मनुष्य हैं।

ओ का परिवर्तन नहीं हो सकता।

(४) **ओ वाक्यका परिवर्तन.** ओ वाक्यका परिवर्तन नहीं हो सकता। ओ वाक्य निषेधात्मक है, इसलिए इसका परिवर्तित वाक्य अगर होगा तो निषेधात्मक ही होगा और इस प्रकार उसका विधेय व्याप्त होगा। परिवर्तितका विधेय किसी भी प्रकार व्याप्त नहीं हो सकता क्योंकि परिवर्त्यमें वही उद्देश्य होनेके कारण अव्याप्त है। अतः यदि परिवर्त्य ओ वाक्य है तो कोई निष्कर्ष नहीं निकल सकता।

संक्षेपमें: आ का परिवर्तन ई में, ए का ए में, और ई का ई में होता है, किन्तु ओ का परिवर्तन नहीं हो सकता।

दो प्रकारके परिवर्तन।

परिवर्तन दो प्रकारके होते हैं: **साधारण (simple) परिवर्तन** और **परिमित परिवर्तन (conversion per accidens** or **conversion by limitation)**। साधारण परिवर्तनमें परिवर्तितका परिमाण वही रहता है जो परिवर्त्यका है अर्थात् यदि परिवर्त्य सामान्य है तो परिवर्तित भी सामान्य होगा और यदि परिवर्त्य विशेष है तो परिवर्तित भी विशेष होगा। अतः केवल ए और ई वाक्योंका ही साधारण परिवर्तन होता है।

परिमित परिवर्तनमें परिवर्तितका परिमाण परिवर्त्यके परिमाणसे भिन्न होता है अर्थात् परिवर्त्य तो सामान्य होता है किन्तु परिवर्तित विशेष। अतः आ वाक्यका ई वाक्यमें परिवर्तन परिमित होता है।

टिप्पणी १. क्या आ वाक्यका साधारण परिवर्तन हो सकता है ?

साधारण परिवर्तनमें परिवर्तितका परिमाण वही रहता है जो परिवर्त्यका है। अतः आ वाक्यका साधारण परिवर्तन तभी हो सकता है जब आ वाक्यसे आ वाक्य ही निष्कर्ष निकले। सामान्यतया यह सम्भव नहीं है क्योंकि यदि परिवर्तित आ वाक्य होगा तो इसका उद्देश्य व्याप्त हो जायगा यद्यपि वही पद परिवर्त्यमें विधेय होनेसे अव्याप्त है। अतः साधारण अवस्थामें आ वाक्यका साधारण परिवर्तन नहीं हो सकता।

सामान्यतः आ वाक्यका साधारण परिवर्तन नहीं होता, किन्तु यदि उद्देश्य और विधेयका निर्देश एक ही हो तो आ वाक्यका साधारण परिवर्तन हो सकता है।

किन्तु थोड़ेसे आ वाक्य ऐसे भी होते हैं जिनमें उद्देश्य और विधेय दोनोंका निर्देश एक ही होता है। ऐसी अवस्थामें आ का साधारण परिवर्तन सम्भव है। अतः आ वाक्यका साधारण परिवर्तन उसी दशा में सम्भव है जब उद्देश्य और विधेय दोनों **निश्चित एकवाचक पद** हों या जब वाक्य कोई **परिभाषा** हो या जब वाक्यका **विधेय उद्देश्यका पर्याय** हो। जैसे—

(१) आ. एवरेस्ट सबसे ऊंचा पहाड़ है।
∴ (परिवर्तित) आ. सबसे ऊंचा पहाड़ एवरेस्ट है।

(२) आ. सब मनुष्य समझदार प्राणी हैं।
∴ (परिवर्तित) आ. सब समझदार प्राणी मनुष्य हैं।

(३) आ. सब मनुष्य मानव हैं।
∴ (परिवर्तित) आ. सब मानव हैं।

इन सभी आ वाक्योंकी परीक्षा करने पर पता चलता है कि इनके उद्देश्य और विधेय समान निर्देशवाले हैं। यह उल्लेखनीय है कि **हैमिल्टन** ने अपने विधेयके निर्देशके सिद्धान्तमें इन सभी आ वाक्योंको U वाक्य कहा है। अतः यह कहा जा सकता है कि आ वाक्यका नहीं बल्कि U वाक्यका साधारण परिवर्तन हो सकता है।

टिप्पणी २. निषेधके द्वारा परिवर्तन (Conversion by Negation)—ओ वाक्यका परिवर्तन.

ओ वाक्यका परिवर्तन निषेधके चिह्न को विधेयगत मान लेनेसे हो सकता है।

ओ वाक्यका परिवर्तन करनेसे पद-व्याप्तिका नियम भंग होता है। अतः कुछ तर्कशास्त्री ओ वाक्यका परिवर्तन करनेके लिये पहिले उसे ई वाक्य बना लेते हैं अर्थात् निषेधके चिन्हको विधेयगत मान लेते हैं और फिर उद्देश्य और विधेयके परस्पर स्थान बदल देते हैं। जैसे:—

ओ. कुछ उ वि नहीं है। कुछ मनुष्य सत्यप्रिय नहीं हैं।
ई. कुछ उ अ-वि है। कुछ मनुष्य अ-सत्यप्रिय हैं।
∴ ई. कुछ अ-वि उ है। कुछ अ-सत्यप्रिय जीव मनुष्य हैं।

परिवर्तनका यह रूप परिवर्तन बिल्कुल नहीं कहा जा सकता क्योंकि, पहिले, निष्कर्षका गुण दिये हुए वाक्यके गुणसे भिन्न है और, दूसरे, निष्कर्षका उद्देश्य आधारवाक्यका विधेय नहीं है बल्कि उसका व्याघातक पद है।

टिप्पणी ३. परिवर्तित सम्बन्धके द्वारा अनुमान (Inference by Converse Relation).

जब उद्देश्य और विधेय सापेक्ष पद होते हैं।

इस प्रकारका परिवर्तन उस समय सम्भव है जब दिये हुए वाक्यके उद्देश्य और विधेय सापेक्ष पद होते हैं। जैसे:—

सुकरात जौन्र्थयी का पति था।
∴ जौन्र्थयी सुकरात की पत्नी थी।

इस उदाहरणमें पति और पत्नी सापेक्ष पद हैं। इसी कारण उद्देश्य और विधेयका स्थान बदल दिया गया है और उनका सम्बन्ध बताने वाले पदके स्थान पर उसका सापेक्ष पद रख दिया गया है।

भाग ३. प्रतिवर्तन (Obversion).

प्रतिवर्तन एक प्रकारका अनन्तरानुमान है जिसमें दिये हुए वाक्यका

गुण बदल दिया जाता है किन्तु उसका अर्थ नहीं बदलता। दूसरे शब्दोंमें कहा जा सकता है कि प्रतिवर्तन वह प्रक्रिया है जिसमें हम एक विधानात्मक वाक्यका समानार्थक निषेधात्मक वाक्य निष्कर्ष निकालते हैं या एक निषेधात्मक वाक्यका समानार्थक विधानात्मक वाक्य निष्कर्ष निकालते हैं। प्रतिवर्तनकी परिभाषा।

दिये हुए वाक्यको जिसका कि प्रतिवर्तन किया जाता है प्रतिवर्त्य (obvertend) और निष्कर्षको प्रतिवर्तित (obverse) कहते हैं।

प्रतिवर्तनके निम्नलिखित नियम हैं:—

(१) प्रतिवर्तितका उद्देश्य वही रहता है जो प्रतिवर्त्यका है। नियम।

(२) प्रतिवर्तितका विधेय प्रतिवर्त्यके विधेयका व्याघातक पद होता है।

(३) प्रतिवर्तितका गुण प्रतिवर्त्यके गुणसे भिन्न होता है अर्थात् यदि प्रतिवर्त्य विधानात्मक है तो प्रतिवर्तित निषेधात्मक होगा और यदि प्रतिवर्त्य निषेधात्मक है तो प्रतिवर्तित विधानात्मक होगा।

(४) प्रतिवर्तितका परिमाण वही होता है जो प्रतिवर्त्यका है अर्थात् यदि प्रतिवर्त्य सामान्य है तो प्रतिवर्तित भी सामान्य होगा और यदि प्रतिवर्त्य विशेष है तो प्रतिवर्तित भी विशेष होगा।

(क) आ वाक्यका प्रतिवर्तन.

आ का प्रतिवर्तित ए है। जैसे— आ—ए

प्रतिवर्त्य (आ)—सब उ वि है। सब मनुष्य मरणशील हैं।
∴ प्रतिवर्तित (ए)—कोई उ अवि नहीं है। कोई मनुष्य अमर नहीं है।

यहां हम देखते हैं कि प्रतिवर्त्य विधानात्मक है किन्तु प्रतिवर्तित निषेधात्मक है, दिये हुए वाक्यके विधेयका व्याघातक विधेय है जबकि उद्देश्य वही है, और परिमाण नहीं बदला है।

(ख) ए वाक्यका प्रतिवर्तन.

ए—आ

ए का प्रतिवर्तित आ है। जैसे—

प्रतिवर्त्य (ए)—कोई उ वि नहीं है। कोई मनुष्य पूर्ण नहीं है।
∴ प्रतिवर्तित (आ)—सब उ अवि है। सब मनुष्य अपूर्ण हैं।

(ग) ई वाक्यका प्रतिवर्तन.

ई—ओ

ई का प्रतिवर्तित वाक्य ओ है। जैसे—

प्रतिवर्त्य (ई)—कुछ उ वि है। कुछ मनुष्य चतुर हैं।
∴ प्रतिवर्तित (ओ)—कुछ उ अवि नहीं है। कुछ मनुष्य अचतुर नहीं हैं।

(घ) ओ वाक्यका प्रतिवर्तन.

ओ—ई

ओ का प्रतिवर्तित ई है। जैसे—

प्रतिवर्त्य (ओ) कुछ उ वि नहीं है। कुछ मनुष्य सत्यप्रिय नहीं हैं।
∴ प्रतिवर्तित (ई) कुछ उ अवि है। कुछ मनुष्य असत्यप्रिय हैं।

संक्षेपमें: आ का प्रतिवर्तन ए में, ए का आ में, ई का ओ में और ओ का ई में होता है।

भौतिक प्रतिवर्तन अनुमानकी आकार-विषयक प्रक्रिया नहीं है। वह केवल अनुभव पर आधारित होता है।

टिप्पणी. भौतिक प्रतिवर्तन (Material Obversion).

बेन महोदयका विचार है कि ऊपर जिस आकारविषयक प्रक्रिया का वर्णन किया गया है उसके अलावा "ऐसे प्रतिवर्तित अनुमान भी होते हैं जिनकी सत्यता मूल तर्कवाक्यके द्रव्यकी जांचसे ही सिद्ध होती है।" जैसे:

(१) उष्णत्व अच्छा लगता है।
∴ ठंडक बुरी लगती है।

(२) युद्धसे बुराइयां फैलती हैं।
∴ शान्तिसे अच्छाइयां फैलती हैं।

(३) सीधा मंत्री जनताका विश्वासपात्र होता है।
∴ कपटी मंत्री जनताका विश्वास खो देता है।

(४) ज्ञान अच्छा है।
∴ अज्ञान बुरा है।

(५) सत्पुरुषका दर्शन आनन्ददायक होता है।
∴ असत्पुरुषका दर्शन दुःखदायक होता है।

बेन ने स्वयं इस बातको माना है कि ये अनुमान आकारविषयक प्रतिवर्तनसे सर्वथा भिन्न हैं। इनमें प्रतिवर्तनके किसी भी नियमका पालन नहीं किया गया है। प्रतिवर्तनमें प्रतिवर्तितका उद्देश्य वही रहता है जो प्रतिवर्त्यका होता है जबकि यहां वह उसका विरोधी पद है। प्रतिवर्तनमें प्रतिवर्त्यके विधेयका व्याघातक पद निष्कर्षका विधेय होता है जबकि यहां विधेय विपरीत भी है और व्याघातक भी। यहां गुण एक ही हैं, किन्तु प्रतिवर्तनमें निष्कर्षका गुण प्रतिवर्त्यके गुणसे भिन्न होता है। अतः ये अनुमान आकारविषयक अनुमान नहीं हैं बल्कि द्रव्य-विषयक अनुमान हैं जिनका आधार अनुभव और अर्जित ज्ञान है। अतः ये निगमनके क्षेत्रमें नहीं आते।

भाग ४. परिवर्तित प्रतिवर्तन (Contraposition).

परिवर्तित-प्रतिवर्तनकी परिभाषा।

परिवर्तित प्रतिवर्तन एक प्रकारका अनन्तरानुमान है जिसमें एक दिये हुए वाक्यसे अनुमान करते हैं जिसका उद्देश्य दिये हुए वाक्यके विधेयका व्याघातक पद होता है।

परिवर्तित प्रतिवर्तनके निम्नलिखित नियम हैं:—

नियम

(क) निष्कर्षका उद्देश्य दिये हुए वाक्यके विधेयका व्याघातक पद होता है।

(ख) दिये हुए वाक्यका उद्देश्य निष्कर्षका विधेय होता है।

(ग) गुण बदल जाता है अर्थात् यदि दिया हुआ वाक्य विधानात्मक है तो निष्कर्ष निषेधात्मक होगा और यदि दिया हुआ वाक्य निषेधात्मक है तो निष्कर्ष विधानात्मक होगा।

(घ) निष्कर्षमें कोई पद व्याप्त नहीं हो सकता यदि वह दिये हुए वाक्यमें व्याप्त नहीं है।

पहले प्रतिवर्तन और फिर परिवतन कीजिए।

परिवर्तित प्रतिवर्तन अनन्तरानुमानका मिश्रित रूप है जिसमें परिवर्तन और प्रतिवर्तन दोनों मिले हुए रहते हैं। असलमें इसका आसान नियम है:—

"पहिले प्रतिवर्तन कीजिये, फिर परिवर्तन कर दीजिये।"

(१) आ का परिर्वातत प्रतिवर्तन.

आ—ए

आ वाक्यका प्रतिवर्तन करनेसे ए वाक्य मिलता है और जब ए का परिवर्तन किया जाता है तब ए मिलता है। अतः आ का परिर्वातत प्रतिवर्तन ए में होता है:—

आ. सब उ वि है।
∴ प्रतिवर्तन—ए. कोई उ अवि नहीं है।
∴ परिवर्तन—ए. कोई अवि उ नहीं है।
(आ का परिर्वातत प्रतिवर्तन)

(२) ए वाक्यका परिर्वातत प्रतिवर्तन.

ए—ई

ए का प्रतिवर्तन करने पर आ मिलता है और आ का परिवर्तन करनेपर ई मिलता है। अतः ए का परिर्वातत प्रतिवर्तन ई में होता है:—

ए. कोई उ वि नहीं है।
∴ प्रतिवर्तन—आ. सब उ अवि है।
∴ परिवर्तन— ई. कुछ अवि उ है।
(ए का परिर्वातत प्रतिवर्तन)

यहां दिया हुआ तर्कवाक्य सामान्य है जबकि परिर्वातत प्रतिर्वातत

विशेष है। यदि हम निष्कर्षमें सामान्य वाक्य निकालना चाहें तो हमें उद्देश्य अवि को व्याप्त मानना पड़ेगा जो कि दूसरे वाक्यमें अव्याप्त है।

(३) ई का परिवर्तित प्रतिवर्तन.

ई वाक्यका जब प्रतिवर्तन किया जाता है तब ओ वाक्य मिलता है, किन्तु ओ वाक्यका परिवर्तन नहीं होता। अतः ई वाक्यका परिवर्तित प्रतिवर्तन नहीं होता। ई का परिवर्तित प्रतिवर्तन नहीं होता।

(४) ओ वाक्यका परिवर्तित प्रतिवर्तन.

जब ओ का प्रतिवर्तन किया जाता है तब ई मिलता है और जब ई का परिवर्तन किया जाता है तब ई ही मिलता है। अतः ओ वाक्यका परिवर्तित प्रतिवर्तन ई में होता है:— ओ—ई

ओ. कुछ उ वि नहीं है।
∴ प्रति० ई. कुछ उ अवि है।
∴ परि० ई. कुछ अवि उ है।
(ओ का परि० प्रति०)

संक्षेपमें : आ का परिवर्तित प्रतिवर्तन ए में, ए का ई में और ओ का ई में होता है, किन्तु ई का परिवर्तित प्रतिवर्तन नहीं होता।

टिप्पणी १. परिवर्तित प्रतिवर्तन अनुमानकी मिश्रित प्रक्रिया है.

किसी भी वाक्यके परिवर्तित प्रतिवर्तन तक पहुंचनेके लिये पहिले हमें दिये हुए वाक्यका प्रतिवर्तन कर लेना चाहिए और फिर प्रतिवर्तित का परिवर्तन कर लेना चाहिए।

यहां यह देखना उचित होगा कि क्या ऊपर दी हुई परिवर्तित प्रतिवर्तनकी परिभाषासे सीधे परिवर्तित-प्रतिवर्तित तक पहुंचा जा सकता है या नहीं ?

पहिले आ और ओ वाक्योंको लीजिये :—

आ. सब उ वि है। ओ. कुछ उ वि नहीं है।
∴ ए. कोई अवि उ नहीं है। ∴ ई. कुछ अवि उ है।

इन दोनोंमें परिबर्तित प्रतिवर्तनके नियमोंको सीधे लागू करके निष्कर्ष निकाला गया है। अतः (१) निष्कर्षका उद्देश्य दिये हुए वाक्य के विधेयका व्याघातक पद है; (२) निष्कर्षका विधेय दिये हुए वाक्य का उद्देश्य है; (३) गुण बदल गया है; (४) कोई भी पद जो दिये हुए वाक्यमें अव्याप्त है निष्कर्षमें व्याप्त नहीं है। यहां यह ध्यान देने योग्य है—आ के परिवर्तित प्रतिवर्तितमें हमें अवि मिलता है जो निष्कर्षका उद्देश्य है और व्याप्त पदके रूपमें ग्रहण किया गया है। किन्तु चूंकि यह पद दिये हुए वाक्यमें नहीं है, अतः निष्कर्षमें हम इसको पद-व्याप्तिके नियमका अपवाद नहीं मान सकते।

अब यहां ए वाक्यमें सीधे परिवर्तित प्रतिवर्तनके नियमोंको लागू करके देखते हैं:—

ए. कोई उ वि नहीं है।
∴ आ. सब अवि उ है।

निष्कर्षमें अवि व्याप्त है, किन्तु यह दिये हुए वाक्यमें नहीं आया है। अतः यह नहीं कहा जा सकता कि यहां अनुचित पद-व्याप्ति हुई है। फिर भी यह निष्कर्ष ठीक नहीं हैं जैसा कि पहिले प्रतिवर्तन और फिर परिवर्तन करनेसे पता चलेगा।

ए. कोई उ वि नहीं है। (१)
प्रति० आ. सब उ अवि है। (२)
परि० ई. कुछ अवि उ है।

यहां यह स्पष्ट है कि यदि हम 'सब अवि उ है' निष्कर्ष निकालें तो अनुचित पद-व्याप्ति होगी क्योंकि परिवर्तनके नियमोंके अनुसार ऐसा होना सम्भव नहीं है। इससे यही मालूम होता है कि परिवर्तित-प्रतिवर्तनके नियमोंको सीधे लागू करनेसे ए वाक्यसे ठीक निष्कर्ष नहीं निकलता। इससे सिद्ध है कि परिवर्तित प्रतिवर्तन परिवर्तन और प्रति-

वर्तनकी भांति अनन्तरानुमानकी साधारण प्रक्रिया नहीं है। यह अनन्तरानुमानका मिश्रित रूप है जिसमें ठीक निष्कर्ष पहिले दिये हुए वाक्यका प्रतिवर्तन करके और फिर प्रतिवर्तितका परिवर्तन करके ही प्राप्त हो सकता है।

टिप्पणी २. परिवर्तित प्रतिवर्तन प्रतिवर्तित परिवर्तनसे भिन्न है.

परिवर्तित प्रतिवर्तन प्रतिवर्तित परिवर्तनसे भिन्न है। परिवर्तित प्रतिवर्तनमें पहिले हम प्रतिवर्तन करते हैं और फिर परिवर्तन किन्तु प्रतिवर्तित परिवर्तनमें पहिले परिवर्तन होता है और फिर प्रतिवर्तन। जैसे :— परिवर्तित प्रतिवर्तन प्रतिवर्तित परिवर्तनसे भिन्न है।

आ. सब उ वि है।
परि॰ ई. कुछ वि उ है।
प्रति॰ ओ. कुछ वि अउ नहीं है।
(प्रतिवर्तित परिवर्तन)

लेकिन 'सब उ वि है' का परिवर्तित प्रतिवर्तन है 'कोई अवि उ नहीं है' (ए)।

भाग ५. विपर्यय (Inversion).

विपर्यय एक प्रकारका अनन्तरानुमान है जिसमें एक दिये हुए वाक्यसे ऐसा वाक्य निष्कर्षके रूपमें निकाला जाता है जिसका उद्देश्य दिये हुए वाक्यके उद्देश्यका व्याघातक पद होता है। विपर्यय।

जिस वाक्यसे इस प्रकारका अनुमान निकालते हैं उसे विपर्येय (invertend) तथा निष्कर्षको विपर्यस्त (inverse) कहते हैं।

विपर्यय दो प्रकारका होता है—पूर्ण (complete) और अपूर्ण या आंशिक (partial)। पूर्ण विपर्ययमें विपर्यस्तका विधेय विपर्येयके पूर्ण और अपूर्ण।

विधेयका व्याघातक पद होता है, किन्तु अपूर्ण विपर्ययमें विपर्यस्तका विधेय वही होता है जो विपर्ययेका है।

विपर्ययमें निम्नलिखित नियमोंका पालन करना चाहिए:—

नियम। (क) विपर्यस्तका उद्देश्य विपर्ययेके उद्देश्यका व्याघातक पद होता है।

(ख) पूर्ण विपर्ययमें विपर्यस्तका विधेय विपर्ययेके विधेयका व्याघातक पद होता है किन्तु अपूर्ण विपर्ययमें विपर्यस्तका विधेय वही होता है जो विपर्ययेका है।

(ग) विपर्ययेका परिमाण सामान्य होता है किन्तु विपर्यस्तका विशेष। अत: केवल सामान्य वाक्योंका ही विपर्यय हो सकता है। साथ ही विपर्यस्तको हमेशा विशेष वाक्य होना चाहिए।

(घ) पूर्ण विपर्ययमें विपर्यस्तका गुण वही होता है जो विपर्यये का है, किन्तु अपूर्ण विपर्ययमें गुण बदल जाता है।

परिवर्तित प्रतिवर्तनकी भांति विपर्यय भी अनन्तरानुमानका मिश्रित रूप है। इसमें परिवर्तन और प्रतिवर्तन दोनों प्रक्रियाओंका प्रयोग होता है। परिवर्तित प्रतिवर्तनमें हम पहिले प्रतिवर्तन करते हैं और फिर परिवर्तन किन्तु विपर्ययमें इस प्रकारका कोई निश्चित नियम नहीं है। विपर्ययमें हमारा ध्येय केवल इतना ही होता है कि निष्कर्षका उद्देश्य मूल वाक्यके उद्देश्यका व्याघातक पद हो। इसी दृष्टिकोणसे हम प्रतिवर्तन और परिवर्तनकी प्रक्रिया एकके बाद दूसरी तब तक करते रहते हैं जब तक कि वांच्छित निष्कर्ष प्राप्त न हो जाय। यदि प्रतिवर्तनसे शुरू करने पर हम आगे न बढ़ सकें अर्थात् निष्कर्षमें उद्देश्य मूल वाक्य के उद्देश्यका व्याघातक पद न हो सके तो इस प्रक्रियाको वहीं बन्द कर देना चाहिए और फिर परिवर्तनसे शुरू करना चाहिए। यदि परिवर्तनसे शरू करने पर निष्कर्ष प्राप्त न हो सके तो प्रतिवर्तनसे शुरू करना चाहिए।

(१) आ का विपर्यय.

विपर्यय आ. सब उ वि है। (१) आ—ई (पूर्ण)
(१) का प्रतिवर्तित ए. कोई उ अवि नहीं है। (२) —ओ (अपूर्ण)
(२) का परि० ए. कोई अवि उ नहीं है। (३)
(३) का प्रति० आ. सब अवि अउ है। (४)
(४) का परि० ई. कुछ अउ अवि है। (५)
(पूर्ण विपर्यस्त)
(५) का प्रति० ओ कुछ अउ वि नहीं है।
(अपूर्ण विपर्यस्त)

यदि यहां हम परिवर्तनसे प्रारम्भ करते तो हमारी प्रक्रिया बीचमें ही रुक गई होती अर्थात् हम विपर्यस्त तक न पहुंच पाये होते। अतः पूर्ण विपर्ययमें आ से ई वाक्य निष्कर्ष निकलता है और अपूर्ण विपर्यय में आ से ओ निष्कर्ष निकलता है। यह ध्यान रखना चाहिए कि अपूर्ण विपर्ययमें वि यानी निष्कर्षका विधेय व्याप्त है यद्यपि यह विपर्ययमें अव्याप्त है। फिर भी परिवर्तन और प्रतिवर्तनकी प्रक्रियाओंमें कोई त्रुटि नहीं है, अतः निष्कर्ष निर्दोष है।

(२) ए का विपर्यय.

विपर्यय ए. कोई उ वि नहीं है। (१) ए—ओ
(१) का परि० ए. कोई वि उ नहीं है। (२) (पूर्ण)
(२) का प्रति० आ. सब वि अउ है। (३) —ई
(३) का परि० ई. कुछ अउ वि है। (४) (अपूर्ण)
(अपूर्ण विपर्यय)
(४) का प्रति० ओ. कुछ अउ अवि नहीं है। (५)
(पूर्ण विपर्यय)

अतः ए वाक्यका पूर्ण विपर्यस्त ओ है और अपूर्ण विपर्यस्त ई है। यहां यदि हमने प्रतिवर्तनसे प्रारम्भ किया होता तो विपर्यस्त तक न पहुंचे होते।

(३) ई वाक्यका विपर्यय.

ई का विपर्यय नहीं हो सकता।

पहिले प्रतिवर्तनसे शुरू करके देखिए।
विपर्येय—ई. कुछ उ वि है। (१)
(१) का प्रति०—ओ. कुछ उ अवि नहीं है। (२)
(२) का परिवर्तन नहीं हो सकता।

अब पहिले परिवर्तन करके देखिए।
विपर्येय—ई. कुछ उ वि है। (१)
(१) का परि०—ई. कुछ वि उ है। (२)
(२) का प्रति०—ओ. कुछ वि अउ नहीं है। (३)
(३) का परिवर्तन नहीं हो सकता।

इस प्रकार हम देखते हैं कि किसी भी अवस्थामें हम विपर्यस्त नहीं प्राप्त कर सकते। अतः ई का विपर्यय नहीं हो सकता।

(४) ओ वाक्यका विपर्यय.

ओ का विपर्यय नहीं होता।

पहिले प्रतिवर्तनसे शुरू कीजिए।
ओ. कुछ उ वि नहीं है। (१)
(१) का प्रति० ई. कुछ उ अवि है। (२)
(२) का परि० ई. कुछ अवि उ है। (३)
(३) का प्रति० ओ. कुछ अवि अउ नहीं है। (४)
(४) का परिवर्तन नहीं हो सकता।
अब परिवर्तनसे शुरू कीजिए।
ओ. कुछ उ वि नहीं है। (१)
(१) का परिवर्तन नहीं हो सकता।

इसलिए किसी भी अवस्थामें ओ का विपर्यय नहीं हो सकता।

संक्षेपमें : आ का पूर्ण विपर्यस्त ई और ए का ओ होता है; आ का अपूर्ण विपर्यस्त ओ और ए का ई होता है; लेकिन ई और ओ का विपर्यय होता ही नहीं।

अनन्तरानुमानके चार विशेष प्रकारोंकी तुलनाकी तालिका

	परिवर्तन	प्रतिवर्तन	परिवर्तित प्रतिवर्तन	अपूर्ण विपर्यय	पूर्ण विपर्यय
निष्कर्ष का उद्देश्य	= आधारवाक्य का विधेय	= आधारवाक्य का उद्देश्य	= आधारवाक्यके विधेयका व्याघातक	= आधारवाक्य के उद्देश्यका व्याघातक	= आधारवाक्यके उद्देश्य का व्याघातक
निष्कर्षका विधेय	= आधारवाक्य का उद्देश्य	= आधारवाक्य के विधेयका व्याघातक	= आधारवाक्य का उद्देश्य	= आधारवाक्य का विधेय	= आधारवाक्यके विधेय का व्याघातक
निष्कर्षका परिमाण	'ए' और 'ई' में वही; 'आ' में भिन्न; ओ— ×	वही	आ और ओ में वही; ए में भिन्न; ई— ×	विपर्यय— सामान्य; विपर्यस्त— विशेष	विपर्यय—सामान्य; विपर्यस्त—विशेष
निष्कर्ष का गुण	वही	विरोधी	विरोधी	विरोधी	वही

संकेत— × चिह्नका मतलब है कोई निष्कर्ष नहीं।

इस तालिकासे पता चलता है कि चारों प्रकारके अनन्तरानुमानोंकी तुलना निम्नलिखित चार बातोंको ध्यानमें रखकर की जा सकती है:

(१) निष्कर्षका उद्देश्य.

परिवर्तनमें निष्कर्षका उद्देश्य आधारवाक्यका विधेय होता है; प्रतिवर्तनमें निष्कर्षका उद्देश्य वही होता है जो आधारवाक्यका है।

परिवर्तित प्रतिवर्तनमें निष्कर्षका उद्देश्य आधारवाक्यके विधेयका व्याघातक पद होता है। विपर्ययमें निष्कर्षका उद्देश्य आधारवाक्यके उद्देश्यका व्याघातक पद होता है।

(२) निष्कर्षका विधेय.

परिवर्तनमें निष्कर्षका विधेय आधारवाक्यका उद्देश्य होता है; प्रतिवर्तनमें निष्कर्षका विधेय आधारवाक्यके विधेयका व्याघातक पद होता है। परिवर्तित प्रतिवर्तनमें निष्कर्षका विधेय आधारवाक्यका उद्देश्य होता है। पूर्ण विपर्ययमें निष्कर्षका विधेय आधारवाक्यके विधेयका व्याघातक पद होता है और अपूर्ण विपर्ययमें निष्कर्षका विधेय वही होता है जो आधारवाक्यका है।

(३) निष्कर्षका परिमाण.

परिवर्तनमें निष्कर्षका परिमाण ए और ई वाक्यमें आधारवाक्यके परिमाणके तुल्य होता है, किन्तु आ में निष्कर्ष विशेष होता है जबकि आधारवाक्य सामान्य होता है। अतः परिमाण कभी तुल्य होता है और कभी भिन्न।

प्रतिवर्तनमें निष्कर्षका वही परिमाण होता है जो आधारवाक्यका है।

परिवर्तित प्रतिवर्तनमें आ और ओ में निष्कर्षका वही परिमाण होता है जो आधारवाक्यका है, किन्तु ए में निष्कर्ष विशेष होता है जबकि आधारवाक्य सामान्य होता है। अतः परिमाण कभी वही होता है और कभी भिन्न।

विपर्ययमें निष्कर्ष हमेशा विशेष होता है जबकि आधारवाक्य

सामान्य होता है। अतः निष्कर्षका परिमाण हमेशा आधारवाक्यके परिमाणसे भिन्न होता है।

(४) **निष्कर्षका गुण.**

परिवर्तनमें निष्कर्षका गुण वही होता है जो आधारवाक्यका होता है। प्रतिवर्तन और परिवर्तित प्रतिवर्तनमें निष्कर्षका गुण आधारवाक्यके गुणका विरोधी होता है। पूर्ण विपर्ययमें निष्कर्षका गुण आधारवाक्यके गुणके समान होता है जबकि अपूर्ण विपर्ययमें वह आधारवाक्यके गुणका विरोधी होता है।

नीचे दी हुई तालिकासे समस्त परिणामोंकी एक झलक मिल जाती है :

दिया हुआ वाक्य	परिवर्तन	प्रतिवर्तन	परिवर्तित प्रतिवर्तन	विपर्यय पूर्ण	विपर्यय अपूर्ण
आ	ई	ए	ए	ई	ओ
ए	ए	आ	ई	ओ	ई
ई	ई	ओ	—	—	—
ओ	—	ई	ई	—	—

भाग ६. विरोध (Opposition).

'विरोध' शब्दका प्रयोग दो अर्थोंमें किया गया है : एक, दो वाक्योंके

विरोध एक प्रकारका अनन्तरा-नुमान है।

एक प्रकारके विशेष सम्बन्धके अर्थमें और दूसरा, एक प्रकारके अनन्तरानुमानके अर्थमें भी। पहिले अर्थमें विरोध चार प्रकारका होता है अर्थात् उपाश्रितता, व्याघताकता, विपरीतता और अनुविपरीतता। अनन्तरानुमानके रूपमें **विरोधका अर्थ है—एक वाक्यके आधार पर दूसरे वाक्यका निष्कर्ष निकालना जो कि इन चार प्रकारके सम्बन्धोंमें से किसी एक सम्बन्धके अनुसार प्राप्त किया जाता हो।** अब हम यहां प्रत्येक प्रकारके विरोधका अलग-अलग अध्ययन करेंगे।

१. उपाश्रितता.

उपाश्रितता

उपाश्रितता वह विरोधसूचक सम्बन्ध है जो दो ऐसे वाक्योंके बीच पाया जाता है जिनके उद्देश्य और बिधेय वही होते हैं लेकिन केवल परिमाणमें भिन्नता रहती है। यह सम्बन्ध आ और ई के बीच तथा ए और ओ के बीच रहता है। उपाश्रिततामें अनुमानके निम्नलिखित नियम हैं:—

(१) सामान्य वाक्यकी सत्यतासे उसी गुणवाले विशेष वाक्यकी सत्यताका अनुमान होता है लेकिन विशेषकी सत्यतासे सामान्यकी सत्यता का नहीं।

(२) विशेषकी असत्यतासे उसी गुणवाले सामान्यकी असत्यताका अनुमान होता है, लेकिन सामान्यकी असत्यतासे विशेषकी असत्यताका नहीं।

(१) यदि सामान्य वाक्य सत्य है तो विशेष वाक्य भी सत्य होता है;

(१) यदि सामान्य सत्य है तो उससे संगत विशेष भी सत्य होगा। यदि आ सत्य है तो ई भी सत्य होगा; यदि ए सत्य है तो ओ भी सत्य होगा। यदि वाक्य 'सब मनुष्य मरणशील हैं' सत्य है तो वाक्य 'कुछ मनुष्य मरणशील हैं' अवश्य सत्य है। इसी प्रकार यदि वाक्य 'कोई मनुष्य पूर्ण नहीं हैं' सत्य है तो वाक्य 'कुछ मनुष्य पूर्ण नहीं हैं' अवश्य सत्य है।

लेकिन इस नियमका उलटा ठीक नहीं है। यदि विशेष वाक्य सत्य है तो सामान्य वाक्य सन्दिग्ध होगा अर्थात् कभी सत्य होगा कभी असत्य।

उदाहरणार्थ, विशेष वाक्य 'कुछ मनुष्य मरणशील हैं' सत्य है और उसका संगत सामान्य वाक्य 'सब मनुष्य मरणशील हैं' भी सत्य है, किन्तु विशेष वाक्य 'कुछ मनुष्य विद्वान् हैं' सत्य है जबकि उसका संगत सामान्य वाक्य 'सब मनुष्य विद्वान् हैं' असत्य है। अतः विशेष वाक्यके सत्य होने पर सामान्य वाक्य सन्दिग्ध होता है। किन्तु इसका उल्टा ठीक नहीं है।

(२) यदि विशेष वाक्य असत्य होता है तो सामान्य भी असत्य होता है। यदि ई असत्य है तो आ अवश्य असत्य होगा। इसी प्रकार यदि ओ असत्य है तो ए अवश्य असत्य होगा। यदि वाक्य 'कुछ मनुष्य पूर्ण हैं' असत्य है तो इसका संगत सामान्य वाक्य 'सब मनुष्य पूर्ण हैं' अवश्य असत्य होगा। इसी प्रकार वाक्य 'कुछ मनुष्य मरणशील नहीं हैं' के असत्य होने पर सामान्य वाक्य 'कोई मनुष्य मरणशील नहीं है' अवश्य असत्य होगा। (२) यदि विशेष असत्य है तो सामान्य भी असत्य होगा;

इसका उल्टा ठीक नहीं है। जैसे, यदि सामान्य असत्य है तो उससे संगत विशेषके विषयमें हम निश्चित रूपसे कोई अनुमान नहीं कर सकते अर्थात् विशेष सत्य भी हो सकता है और असत्य भी। उदाहरणार्थ, सामान्य वाक्य 'सब मनुष्य पूर्ण हैं' असत्य है और उसका संगत विशेष वाक्य 'कुछ मनुष्य पूर्ण हैं' भी असत्य है। किन्तु यद्यपि सामान्य वाक्य 'सब मनुष्य विद्वान् हैं' असत्य है तथापि उसका संगत विशेष 'कुछ मनुष्य विद्वान् हैं' सत्य है। अतः जब सामान्य वाक्य असत्य होता है तब विशेष वाक्य सन्दिग्ध होता है। किन्तु इसका उल्टा ठीक नहीं है।

सारांशमें हम कह सकते हैं कि यदि आ सत्य है तो ई भी सत्य होगा, किन्तु यदि ई सत्य है तो आ सन्दिग्ध होगा। साथ ही यदि ए सत्य है तो ओ भी सत्य होगा, किन्तु यदि ओ सत्य है तो ए सन्दिग्ध होगा। यदि ई असत्य है तो आ भी असत्य होगा और यदि ओ असत्य है तो ए भी असत्य होगा, किन्तु यदि आ असत्य है तो ई सन्दिग्ध होगा और यदि ए असत्य है तो ओ सन्दिग्ध होगा।

२. विपरीतता.

विपरीतता।

विपरीतता दो सामान्य वाक्योंका, जिनके उद्देश्य और विधेय एक ही हों किन्तु गुणमें अन्तर हो, सम्बन्ध होता है। यह सम्बन्ध आ और ए वाक्योंमें होता है। इसमें अनुमानका नियम यह है :—

यदि एक सत्य है तो दूसरा असत्य होगा;

नियम. एककी सत्यता दूसरेको मिथ्या बनाती है किन्तु एकका मिथ्यात्व दूसरेको सत्य नहीं बनाता।

यदि आ सत्य है तो ए असत्य होगा और यदि ए सत्य है तो आ असत्य होगा। यदि वाक्य 'सब मनुष्य मरणशील हैं' सत्य है तो उसका विपरीत वाक्य 'कोई मनुष्य मरणशील नहीं है' असत्य होगा; यदि वाक्य 'कोई मनुष्य पूर्ण नहीं है' सत्य है तो वाक्य 'सब मनुष्य पूर्ण हैं' असत्य होगा।

किन्तु इसका उल्टा ठीक नहीं है।

इसका उल्टा ठीक नहीं है। अर्थात्, एककी असत्यता दूसरेकी सत्यताको सिद्ध नहीं कर सकती, इस प्रकार, आ वाक्य 'सब मनुष्य विद्वान् हैं' असत्य है और उसका विपरीत ए 'कोई मनुष्य विद्वान् नहीं है' भी असत्य है; लेकिन आ वाक्य 'सब मनुष्य पूर्ण हैं' असत्य है फिर भी उसका विपरीत ए 'कोई मनुष्य पूर्ण नहीं है' सत्य है। अत: यदि आ असत्य है तो ए सन्दिग्ध होता है। इसी प्रकार यह समझाया जा सकता है कि यदि ए असत्य है तो आ सन्दिग्ध होता है।

संक्षेपमें : यदि आ सत्य है तो ए असत्य और यदि ए सत्य है तो आ असत्य होगा। किन्तु यदि आ असत्य है तो ए सन्दिग्ध और यदि ए असत्य है तो आ सन्दिग्ध होगा।

३. अनुविपरीतता.

अनुविपरीतता

अनुविपरीतता वह सम्बन्ध है जो दो विशेष वाक्योंमें, जिनके उद्देश्य और विधेय एक ही हों लेकिन गुणमें अन्तर हो, पाया जाता है। अर्थात् यह सम्बन्ध ई और ओ वाक्योंमें होता है। अनुविपरीततामें अनुमानका निम्नलिखित नियम है :—

एककी असत्यता दूसरेकी सत्यताको सिद्ध करती है किन्तु इसका उल्टा नहीं।

नियम : यदि एक असत्य है तो दूसरा सत्य होगा;

यदि ई असत्य है तो ओ सत्य होगा और यदि ओ असत्य है तो ई सत्य होगा। यदि 'कुछ मनुष्य पूर्ण हैं' वाक्य असत्य है तो 'कुछ मनुष्य पूर्ण नहीं हैं' वाक्य सत्य होगा, और यदि 'कुछ मनुष्य मरणशील नहीं हैं' कहना असत्य है तो 'कुछ मनुष्य मरणशील हैं' कहना सत्य होगा।

किन्तु इसका उल्टा ठीक नहीं है।

इसका उल्टा ठीक नहीं है अर्थात् एककी सत्यता दूसरेकी असत्यता को सिद्ध नहीं करती। जैसे, ई वाक्य 'कुछ मनुष्य विद्वान् हैं' के सत्य होते हुए भी उसका अनुविपरीत 'कुछ मनुष्य विद्वान् नहीं हैं' समान रूपसे सत्य है। फिर ई वाक्य 'कुछ मनुष्य मरणशील हैं' सत्य है जबकि इसका अनुविपरीत ओ वाक्य 'कुछ मनुष्य मरणशील नहीं हैं' असत्य है। अतः यदि ई वाक्य सत्य है तो ओ सन्दिग्ध होता है। इसी प्रकार यह भी दिखाया जा सकता है कि यदि ओ सत्य है तो ई सन्दिग्ध होगा।

संक्षेपमें : यदि ई असत्य है तो ओ सत्य होगा और यदि ओ असत्य है तो ई सत्य होगा। किन्तु यदि ई सत्य है तो ओ सन्दिग्ध और यदि ओ सत्य है तो ई सन्दिग्ध होगा।

४. व्याघातकता.

व्याघातकता।

व्याघातकता उन दो वाक्योंका सम्बन्ध है जिनके उद्देश्य और विधेय एक ही होते हैं किन्तु गुण और परिमाण दोनों भिन्न होते हैं। यह सम्बन्ध आ और ओ में तथा ए और ई में होता है। इसमें अनुमानका निम्नलिखित नियम है :—

नियम।

एककी सत्यता दूसरेकी असत्यताको सिद्ध करती है और एककी असत्यता दूसरेकी सत्यताको।

व्याघातकता विरोधका पूर्ण रूप है।

इस नियमसे प्रकट होता है कि दो व्याघातक वाक्योंमें यदि एक सत्य हो तो दूसरा असत्य होगा और यदि एक असत्य हो तो दूसरा सत्य होगा। दोनों न तो सत्य हो सकते हैं और न असत्य ही। उनमेंसे एक

को अवश्य सत्य होना चाहिए और दूसरेको अवश्य असत्य। व्याघात के नियमके अनुसार दो व्याघातक वाक्योंमें से एकको अवश्य असत्य होना चाहिए और मध्यदशा-परिहारके नियमके अनुसार एकको अवश्य सत्य होना चाहिए। इस प्रकार व्याघातकतामें वाक्योंका सम्बन्ध परस्परापेक्ष होता है—एकसे दूसरेका अनुमान किया जा सकता है। किसी भी अन्य प्रकारके विरोधमें सत्यता और असत्यता दोनोंकी दृष्टिसे वाक्य परस्पर विरुद्ध नहीं होते। अतः व्याघातकता तार्किक विरोधका पूर्ण रूप है।

इस प्रकार व्याघातकतामें नीचे लिखे परिणाम निकलते हैं :—

यदि आ सत्य है तो ओ असत्य होगा।
यदि आ असत्य है तो ओ सत्य होगा।
यदि ओ सत्य है तो आ असत्य होगा।
यदि ओ असत्य है तो आ सत्य होगा।
यदि ए सत्य है तो ई असत्य होगा।
यदि ए असत्य है तो ई सत्य होगा।
यदि ई सत्य है तो ए असत्य होगा।
यदि ई असत्य है तो ए सत्य होगा।

निम्नलिखित तालिकामें सभी उपर्युक्त परिणाम इकट्ठे मिलेंगे :—

	दिया हुआ है	आ	ए	ई	ओ
१	आ सत्य	—	असत्य	सत्य	असत्य
२	आ असत्य	—	संदिग्ध	संदिग्ध	सत्य
३	ए सत्य	असत्य	—	असत्य	सत्य
४	ए असत्य	संदिग्ध	—	सत्य	संदिग्ध
५	ई सत्य	संदिग्ध	असत्य	—	संदिग्ध
६	ई असत्य	असत्य	सत्य	—	सत्य
७	ओ सत्य	असत्य	संदिग्ध	संदिग्ध	—
८	ओ असत्य	सत्य	असत्य	सत्य	—

भाग ७. विध्यनुकूल अनुमान.

विधिके अनुसार तर्कवाक्योंको तीन प्रकारोंमें विभाजित किया गया है—आवश्यक, प्रतिज्ञात और सन्दिग्ध। **विध्यनुकूल अनुमान एक प्रकारका अनन्तरानुमान है जिसमें हम एक प्रकारके विधिसूचक वाक्य से दूसरे प्रकारके विधि-सूचक वाक्यका अनुमान करते हैं।** विध्यनुकूल अनुमान।

इसके नियम निम्नलिखित हैं :

१. अधिक निश्चयात्मक वाक्यकी सत्यतामें न्यून निश्चयात्मक वाक्यकी सत्यता शामिल रहती है, लेकिन इसका उल्टा नहीं। नियम।

यदि आवश्यक वाक्य सत्य हो तो प्रतिज्ञात वाक्य और सन्दिग्ध वाक्य भी सत्य होते हैं। जैसे, यदि वाक्य 'अ अवश्य ब है' सत्य है तो वाक्य 'अ ब है' और 'अ ब हो सकता है' अवश्य सत्य होंगे। इसी प्रकार यदि प्रतिज्ञात वाक्य सत्य है तो सन्दिग्ध वाक्य भी सत्य होगा। यदि 'अ ब है' वाक्य सत्य है तो 'अ ब हो सकता है' वाक्य भी सत्य होगा। यहां स्पष्ट है कि इसका उल्टा ठीक नहीं है अर्थात् हम यह अनुमान नहीं कर सकते कि क्योंकि एक न्यून निश्चयात्मक वाक्य सत्य है इसलिए अधिक निश्चयात्मक वाक्य भी सत्य होगा।

२. न्यून निश्चयात्मक वाक्यकी असत्यतामें अधिक निश्चयात्मक वाक्यकी असत्यता अन्तर्निहित रहती है, किन्तु इसका उल्टा ठीक नहीं है।

यदि सन्दिग्ध वाक्य असत्य है तो प्रतिज्ञात और आवश्यक वाक्य भी अवश्य असत्य होंगे। यदि प्रतिज्ञात वाक्य असत्य है तो आवश्यक वाक्य भी असत्य होगा। इसका उल्टा ठीक नहीं है अर्थात् हम यह अनुमान नहीं कर सकते कि क्योंकि अधिक निश्चयात्मक वाक्य असत्य है इसलिए न्यून निश्चयात्मक वाक्य भी असत्य होगा।

भाग ८. सम्बन्धका रूपान्तर.

सम्बन्धकी दृष्टिसे वाक्य **दो प्रकारोंमें बांटे गये हैं :** (१) निरपेक्ष

सम्बन्धका रूपान्तर।

वाक्य और (२) सापेक्ष वाक्य। सापेक्ष वाक्य पुन: दो प्रकारके होते हैं: (१) हेतुफलाश्रित और (२) वैकल्पिक।

सम्बन्धका रूपान्तर अनुमानका वह प्रकार है जिसमें एक सम्बन्धके वाक्यसे किसी अन्य सम्बन्धके वाक्यका अनुमान किया जाता है। अत: इस अनुमानके चार रूप हो सकते हैं:—

(१) निरपेक्षसे हेतुफलाश्रितका अनुमान।
(२) हेतुफलाश्रितसे निरपेक्षका अनुमान।
(३) वैकल्पिकसे हेतुफलाश्रितका अनुमान।
(४) हेतुफलाश्रितसे वैकल्पिकका अनुमान।

अब प्रत्येक पर अलग-अलग विचार करना चाहिए:

निरपेक्ष वाक्यसे हेतुफलाश्रित वाक्यका या हेतुफलाश्रितसे निरपेक्ष वाक्यका अनुमान करते समय निम्नलिखित बातोंका ध्यान रखना चाहिए:

(क) हेतुफलाश्रित वाक्यका हेतु निरपेक्ष वाक्यके उद्देश्यके समान होता है।

(ख) हेतुफलाश्रित वाक्यका फल निरपेक्ष वाक्यके विधेयके समान होता है।

(ग) हेतुफलाश्रित वाक्यका परिमाण उसके हेतुके परिमाण पर निर्भर होता है।

(घ) हेतुफलाश्रित वाक्यका गुण उसके फलके गुण पर निर्भर होता है।

निरपेक्षसे हेतुफलाश्रितका अनुमान।

१. निरपेक्ष वाक्यसे हेतुफलाश्रितका अनुमान: —

	निरपेक्ष	हेतुफलाश्रित
आ.	सब उ वि है।	=यदि उ है तो वि है।
	सब मनुष्य मरणशील हैं।	=यदि मनुष्य है तो मरणशीलता है।
ए.	कोई उ वि नहीं है।	=यदि उ है तो वि नहीं है।

कोई मनुष्य पूर्ण नहीं है।	=यदि मनुष्य है तो पूर्णता नहीं है।
ई. कुछ उ वि है।	=यदि कुछ दशाओंमें उ है तो वि है।
कुछ मनुष्य चतुर हैं।	=यदि कुछ दशाओंमें मनुष्य हैं तो चतुरता है।
ओ. कुछ उ वि नहीं हैं।	=यदि कुछ दशाओंमें उ है तो वि नहीं है।
कुछ मनुष्य चतुर नहीं हैं।	=यदि कुछ दशाओंमें मनुष्य हैं तो चतुरता नहीं है।

२. हेतुफलाश्रितसे निरपेक्ष वाक्यका अनुमान.

हेतुफलाश्रितसे निरपेक्षका अनुमान।

हेतुफलाश्रित	निरपेक्ष
आ. यदि अब है तो स द है।	=सब अ के ब होने की दशाएं स के द होने की दशाएं हैं।
यदि वह आयेगा तो मैं जाऊंगा।	=सब उसके आनेकी अवस्थाएं मेरे जानेकी अवस्थाएं हैं।
ए. यदि अ ब है तो स द नहीं है।	=कोई अ के ब होने की अवस्था स के द होनेकी अवस्था नहीं है।
यदि वर्षा होती है तो मैं बाहर नहीं जाऊंगा।	=कोई वर्षा होनेकी अवस्था मेरे बाहर जानेकी अवस्था नहीं है।
ई. यदि कुछ अवस्थाओंमें अ ब है तो स द है।	=कुछ अ के ब होनेकी अवस्थाएं स के द होनेकी अवस्थाएं हैं।
यदि कुछ अवस्थाओंमें मनुष्य निर्धन है तो उसे सफलता मिलती है।	=कुछ मनुष्योंके निर्धन होनेकी अवस्था उनके सफल होनेकी अवस्था है।
ओ. यदि कुछ अवस्थाओंमें अ ब है तो स द नहीं है।	=कुछ अ के ब होनेकी अवस्थाएं स के द होनेकी अवस्थाएं नहीं हैं।

यदि कुछ अवस्थाओंमें मनुष्य धनी है तो वह प्रसन्न नहीं होता।	= कुछ मनुष्यके धनी होनेकी अवस्थाएं उसके प्रसन्न होनेकी अवस्थाएं नहीं हैं।

वैकल्पिकसे हेतुफलाश्रित का अनुमान।

३. वैकल्पिक वाक्यसे हेतुफलाश्रितका अनुमान.

मिल के अनुसार।

मिल के अनुसार वैकल्पिक वाक्यके एक विकल्पका असत्य होना दूसरे विकल्पकी सत्यताको बताता है, किन्तु इसका उल्टा नहीं। इस मतके अनुसार वैकल्पिक वाक्य 'अ या तो ब है या स' से निम्नलिखित हेतुफलाश्रित वाक्योंका अनुमान किया जा सकता है :—

(१) यदि अ स नहीं है तो अ ब है।
(२) यदि अ ब नहीं है तो अ स है।

यूबरवेग के अनुसार।

यूबरवेग के अनुसार वैकल्पिक वाक्यके एक विकल्पका असत्य होना दूसरे विकल्पकी सत्यताको बताता है और एकका सत्य होना दूसरेकी असत्यता को। अतः इस मतके अनुसार वैकल्पिक वाक्य 'अ या तो ब है या स' से चार हेतुफलाश्रित वाक्योंका अनुमान किया जा सकता है :—

(१) यदि अ स नहीं है तो अ ब है।
(२) यदि अ ब नहीं है तो अ स है।
(३) यदि अ स है तो अ ब नहीं है।
(४) यदि अ ब है तो अ स नहीं है।

इस प्रकार यूबरवेग के अनुसार वैकल्पिक वाक्यके विकल्प दो व्याघातक वाक्योंके सदृश होते हैं, किन्तु मिलके अनुसार वे दो अनु-विपरीत वाक्योंके सदृश होते हैं।

एक ठोस उदाहरण लीजिये : "वह या तो सदाचारी है या असदाचारी"। स्पष्ट है कि इस वाक्यमें दोनों विकल्प, 'वह सदाचारी है' और 'वह असदाचारी है' परस्पर व्यावर्तक हैं। अतः इस वाक्यसे हम निम्नलिखित चार हेतुफलाश्रित वाक्योंका अनुमान कर सकते हैं :—

(१) यदि वह सदाचारी नहीं है तो असदाचारी है।
(२) यदि वह असदाचारी नहीं है तो सदाचारी है।
(३) यदि वह सदाचारी है तो असदाचारी नहीं है।
(४) यदि वह असदाचारी है तो सदाचारी नहीं है।

इस दशामें यूबरवेग का मत ठीक है। लेकिन यदि हम यह उदाहरण लें कि "वह या तो मूर्ख है या धूर्त है" तो देखेंगे कि इसके विकल्प एक दूसरेके व्यावर्तक नहीं हैं। इसलिए यहां यूबरवेग का मत ठीक नहीं मालूम पड़ता। यहां मिल का ही मत ठीक है और तदनुसार इस वैकल्पिक वाक्यसे निम्नलिखित दो हेतुफलाश्रित वाक्योंका अनुमान होगा :—

(१) यदि वह मूर्ख नहीं है तो धूर्त है।
(२) यदि वह धूर्त नहीं है तो मूर्ख है।

यह प्रश्न कि कौन-सा मत ठीक है, इस बात पर निर्भर है कि वास्तवमें दोनों विकल्प एक-दूसरेके व्यावर्तक हैं या नहीं। **यदि वे परस्पर व्यावर्तक हैं तो यूबरवेग का मत ठीक है और यदि नहीं हैं तो मिल का मत ठीक है।** यह कहा जा सकता है कि चूंकि यूबरवेग का मत कुछ ही अवस्थाओंमें सही ठहरता है जबकि मिल का मत हर अवस्थामें सही ठहरता है, इसलिए मिल के मतको ही विशेष रूपसे स्वीकार करना चाहिए।

४. हेतुफलाश्रितसे वैकल्पिक वाक्यका अनुमान.

यह तीसरी प्रक्रियाकी ठीक उल्टी प्रक्रिया है। यहां इस बातको दोहराना बिल्कुल बेकार होगा कि यूबरवेग के अनुसार चार हेतुफलाश्रित वाक्योंसे एक वैकल्पिक वाक्यका अनुमान किया जा सकता है और मिल के अनुसार दो हेतुफलाश्रित वाक्योंसे एक वैकल्पिक वाक्यका अनुमान। हेतुफलाश्रित से वैकल्पिक का अनुमान।

भाग ९. विशेषण-संयोजनात्मक अनुमान.

विशेषण-संयोजनात्मक अनुमान।

विशेषणसे हमारा तात्पर्य किसी विशिष्ट गुणसे है जो पदके प्रयोगको सीमित करता हो। चूंकि विशिष्ट गुण पदके पूरे निर्देशार्थ पर लागू नहीं होता, इसलिए उस पदके अर्थको सीमित या संकुचित कर देता है।

विशेषण-संयोजनात्मक अनुमानमें किसी दिये हुए वाक्यके उद्देश्य और विधेय दोनोंके साथ एक ही विशेषण जोड़कर उनको समान रूपसे सीमित करके न्यूनतर निर्देशार्थवाला एक नया वाक्य प्राप्त किया जाता है, जैसे:—

पुच्छलतारा एक भौतिक पिण्ड है।
∴ दृष्टिगोचर पुच्छलतारा एक दृष्टिगोचर भौतिक पिण्ड है।

उद्देश्य और विधेय दोनों पर एक ही प्रकारका प्रभाव पड़ना चाहिए।

इस प्रकारका अनुमान तभी सही होगा जब विशेषणका प्रयोग उद्देश्य और विधेय दोनोंके विषयमें एक ही प्रकारसे किया जाय। कभी-कभी यह देखा जाता है कि एक ही शब्द जब उद्देश्यके साथ जोड़ा जाता है तब दूसरा अर्थ बताता है और जब वही विधेयके साथ जोड़ा जाता है तब दूसरा अर्थ देता है। ऐसी दशामें अनुमान दोषपूर्ण हो जाता है। जब विशेषण गुणवाचक शब्द होते हैं तब दोषोंका अधिक डर रहता है। जैसे:

चींटी एक जानवर है।
∴ बड़ी चींटी एक बड़ा जानवर है।

यह अनुमान स्पष्टतया दोषयुक्त है क्योंकि विशेषण 'बड़ा' उद्देश्य और विधेयमें अलग-अलग अर्थ पैदा करता है।

सही अनुमानके उदाहरण:—

(१) सभी हब्शी मनुष्य हैं।
∴ सभी ईमानदार हब्शी ईमानदार मनुष्य हैं।

(२) कविता दिमाग़की ख़ूराक है।
∴ अच्छी कविता दिमाग़की अच्छी ख़ूराक है।

(३) सभी धातुएं द्रव्य हैं।

∴ सभी वज़नी धातुएं वज़नी द्रव्य हैं।

(४) गेंद खेलनेकी चीज़ है।

∴ रबरकी गेंद रबरकी खेलनेकी चीज़ है।

(५) कुत्ता एक जानवर है।

∴ स्वामिभक्त कुत्ता एक स्वामिभक्त जानवर है।

दोषयुक्त अनुमानोंके उदाहरण :

(१) संगीतज्ञ मनुष्य है।

∴ बुरा संगीतज्ञ बुरा मनुष्य है।

(२) राजनीतिज्ञ मनुष्य है।

∴ अच्छा राजनीतिज्ञ अच्छा मनुष्य है।

(३) झोपड़ी एक घर है।

∴ बड़ी झोपड़ी एक बड़ा घर है।

(४) हाथी एक जानवर है।

∴ छोटा हाथी एक छोटा जानवर है।

भाग १०. मिश्रविचाराश्रित अनुमान.

मिश्रविचाराश्रित अनुमान।

मिश्रविचाराश्रित अनुमानमें हम किसी भी वाक्यके उद्देश्य और विधेयको किसी मिश्र विचारका अंग बनाकर एक नया निष्कर्ष निकालते हैं किन्तु उनके सम्बन्धमें कोई तबदीली नहीं होने पाती। जैसे :—

घोड़ा एक जानवर है।

∴ घोड़ेका सिर एक जानवरका सिर है।

मिश्रविचाराश्रित और विशेषण-संयोजनात्मक अनुमान।

अनुमानका यह प्रकार विशेषण-संयोजनात्मक अनुमानकी तरह है। किन्तु इन दोनोंमें एक विशेष अन्तर यह है कि विशेषण-संयोजनात्मकमें विशेषण उद्देश्य और विधेय दोनोंमें जोड़ा जाता है जबकि मिश्र-विचाराश्रितमें उद्देश्य और विधेय स्वयं एक तीसरे पदके विशेषणके रूपमें प्रयुक्त किये जाते हैं। पहिलेमें उद्देश्य और विधेयके साथ एक विशेषण जोड़ा जाता है किन्तु दूसरेमें उद्देश्य और विधेय स्वयं ही एक तीसरे पदके विशेषणका काम करते हैं।

यदि नया मिश्र विचार उद्देश्य और विधेयमें अलग-अलग अर्थ रखता

हो तो इस प्रकारके अनुमानमें भी त्रुटि होती है। जैसे:—

सभी न्यायाधीश मनुष्य हैं।
∴ न्यायाधीशों की बड़ी संख्या मनुष्योंकी बड़ी संख्या है।

सही अनुमानके उदाहरण:

(१) संखिया ज़हर है।
∴ संखियाकी एक मात्रा ज़हरकी एक मात्रा है।
(२) ग़रीबी पापका कारण है।
∴ ग़रीबीका अन्त पापके कारणका अन्त है।
(३) घोड़ा एक जानवर है।
∴ घोड़ेका कंकाल एक जानवरका कंकाल है।

दोषयुक्त अनुमानके उदाहरण:

(१) सभी न्यायाधीश वकील हैं।
∴ न्यायाधीशोंका बहुमत वकीलोंका बहुमत है।
(२) सभी प्रोटेस्टैंट इसाई हैं।
∴ प्रोटेस्टैंटोंकी बड़ी संख्या ईसाइयोंकी बड़ी संख्या है।

हल किये हुए प्रश्न

(१) निम्नलिखितकी परीक्षा कीजिये:—
पुस्तकोंसे ज्ञान मिलता है।
∴ हमें ज्ञान अनिवार्यतः पुस्तकोंसे ही मिलता है।

उत्तर. तार्किक रूपमें युक्ति इस प्रकार होगी:
आ. सब पुस्तकें ज्ञानके उद्गम हैं।
∴ सब ज्ञानके उद्गम पुस्तकें हैं।

यह आ वाक्यका साधारण परिवर्तन है। आधारवाक्यमें विधेय अव्याप्त है और वह निष्कर्षमें व्याप्त कर दिया गया है। अतः यह दोषयुक्त अनुमान है। सही निष्कर्ष होना चाहिए—कुछ ज्ञानके उद्गम पुस्तकें हैं (ई)।

(२) यहां हमें किस प्रकारका अनुमान मिलता है?
केवल अज्ञानी ही ज्ञानका तिरस्कार करते हैं।
∴ कुछ ज्ञानका तिरस्कार करनेवाले अज्ञानी हैं।

उत्तर. इस युक्तिका तार्किक रूप यह है:

आ. सब ज्ञानका तिरस्कार करनेवाले मनुष्य अज्ञानी हैं।
∴ कुछ ज्ञानका तिरस्कार करनेवाले मनुष्य अज्ञानी हैं।
यह उपाश्रितताका सही उदाहरण है।

(३) मान लीजिये कि वाक्य 'कुछ पत्थर खनिज पदार्थ नहीं हैं' ग़लत है, तो इसके विरोधी वाक्योंके बारेमें क्या कहा जायेगा?

उत्तर. इसके विरोधी वाक्य निम्नलिखित हैं:—

(क) व्याघातक—सब पत्थर खनिज पदार्थ है (आ)—सत्य।
(ख) अनुविपरीत—कुछ पत्थर खनिज पदार्थ हैं (ई)—सत्य।
(ग) उपाश्रित—कोई पत्थर खनिज पदार्थ नहीं है(ए)-असत्य।

(४) नीचे लिखे वाक्यसे परिवर्तन, प्रतिवर्तन, परिवर्तित प्रतिवर्तन और विपर्ययमें क्या निष्कर्ष निकलेगा:—

सभी मनुष्य कवि नहीं हैं।

उत्तर. इस वाक्यका तार्किक रूप है:

कुछ मनुष्य कवि नहीं हैं (ओ)।

(क) इसका परिवर्तन नहीं हो सकता।
(ख) प्रतिवर्तित वाक्य है: कुछ मनुष्य अकवि हैं (ई)।
(ग) परि० प्रति० है: कुछ अकवि मनुष्य हैं (ई)।
(घ) इसका विपर्यय नहीं हो सकता।

(५) क्या नीचे लिखे वाक्यका परिवर्तन हो सकता है?

कुछ ही मनुष्य प्रलोभनमें नहीं पड़ते।

उत्तर. इसका तार्किक रूप है:

कुछ मनुष्य वे नहीं हैं जो प्रलोभन में पड़ते हैं।
यह ओ वाक्य है जिसका परिवर्तन नहीं हो सकता।

(६) निम्नलिखितका प्रतिवर्तन कीजिये:

(क) केवल अज्ञानियोंका ही यह सिद्धान्त है।

उत्तर. इसका तार्किक रूप है:

सब इस सिद्धान्तको माननेवाले व्यक्ति अज्ञानी हैं।

यह आ वाक्य है जिसका प्रतिवर्तन ए में होता है। इस प्रकार निष्कर्ष हुआ—

कोई इस सिद्धान्तको माननेवाले व्यक्ति ज्ञानी नहीं हैं।

(ख) बहुत-से भाग्यहीन मनुष्य योग्य होते हैं।

उत्तर. इसका तार्किक रूप है:

कुछ भाग्यहीन मनुष्य योग्य हैं (ई)

इसका प्रतिवर्तन ओ में होगा—

कुछ भाग्यहीन मनुष्य अयोग्य नहीं हैं।

(७) निम्नलिखित वाक्यसे निष्कर्ष निकालिए :

केवल परिश्रमी ही सफलता प्राप्त करने योग्य हैं।

उत्तर. इसका तार्किक रूप निम्नलिखित है :—

आ. सब सफलता प्राप्त करने योग्य व्यक्ति परिश्रमी हैं।

इससे नीचे लिखे निष्कर्ष निकल सकते हैं :—

(क) परिवर्तन—ई. कुछ परिश्रमी व्यक्ति सफलता प्राप्त करने योग्य हैं।

(ख) प्रतिवर्तन—ए. कोई सफलता प्राप्त करने योग्य व्यक्ति अपरिश्रमी नहीं हैं।

(ग) परि० प्रति०—ए. कोई अपरिश्रमी व्यक्ति सफलता प्राप्त करने योग्य नहीं हैं।

(घ) विपर्यय—

पूर्ण—ई. कुछ सफलता प्राप्त करनेके अयोग्य व्यक्ति अपरिश्रमी हैं।

अपूर्ण—ओ. कुछ सफलता प्राप्त करनेके अयोग्य व्यक्ति परिश्रमी नहीं हैं।

(८) निम्नलिखित वाक्यका परिवर्तन तथा प्रतिवर्तन कीजिये :—

(क) कोई मनुष्य ऐसा नहीं है जो स्वभावत: अच्छा न हो।

उत्तर. तार्किक रूप :—

सब मनुष्य स्वभावत: अच्छे हैं (आ)।

परिवर्तन—कुछ स्वभावत: अच्छे प्राणी मनुष्य हैं (ई)।

प्रतिवर्तन—कोई मनुष्य स्वभावत: अ-अच्छे नहीं हैं।

(ख) मनुष्य कभी भी खुश नहीं रह सकता यदि वह सदाचारी नहीं है।

उत्तर. तार्किक रूप :

कोई असदाचारी मनुष्य खुश नहीं है (ए)

परिवर्तन—ए. कोई खुश मनुष्य असदाचारी नहीं है।

प्रतिवर्तन—आ. सब असदाचारी मनुष्य अ-खुश हैं।

(९) (क) सभी वकील धूर्त नहीं होते।

(ख) स्नातकके अतिरिक्त कोई वरणीय नहीं है।

उपर्युक्त वाक्योंको तार्किक रूपमें रखकर परिवर्तन तथा परिवर्तित प्रतिवर्तन कीजिये।

उत्तर. (क) तार्किक रूप : कुछ वकील धूर्त नहीं हैं (ओ)।

परिवर्तन—ओ वाक्यका परिवर्तन नहीं हो सकता।

परि० प्रति०—कुछ अधूर्त व्यक्ति वकील हैं (ई)।

(ख) तार्किक रूप: सब वरणीय व्यक्ति स्नातक हैं (आ)।

परिवर्तन—ई. कुछ स्नातक वरणीय हैं।

परि० प्रति०—ए. कोई अस्नातक वरणीय नहीं है।

(१०) क्या निम्नलिखित अनुमान सही हैं:—

(क) यदि अच्छे मनुष्य प्रसन्न हैं तो अप्रसन्नता दोषकी सूचक है।

उत्तर. तार्किक रूप:

सब अच्छे मनुष्य प्रसन्न हैं।

∴ सब अप्रसन्न मनुष्य दोषी हैं।

आधार वाक्य—आ. सब अच्छे मनुष्य प्रसन्न हैं।

प्रतिवर्तन—ए. कोई अच्छा मनुष्य अप्रसन्न नहीं है।

परिवर्तन—ए. कोई अप्रसन्न मनुष्य अच्छा नहीं है।

प्रतिवर्तन—आ. सब अप्रसन्न मनुष्य अ-अच्छे हैं।

इस प्रकार आधारवाक्य 'सभी अच्छे मनुष्य प्रसन्न हैं' से नियमानुसार उपर्युक्त निष्कर्ष निकाला जा सकता है किन्तु जो वस्तुतः निकाला गया है वह है 'सब अप्रसन्न मनुष्य दोषी हैं'। यह निष्कर्ष ठीक नहीं है क्योंकि 'अ-अच्छे' अर्थात् 'वे व्यक्ति जो अच्छे नहीं हैं' और 'दोषी' समानार्थक पद नहीं हैं।

(ख) कोई भी इन्टरमीडिएटका विद्यार्थी मिल के तर्कशास्त्रको नहीं पढ़ता है।

∴ कुछ अन्य विद्यार्थी उसे पढ़ते हैं।

उत्तर. तार्किक रूप:

कोई इन्टरमीडिएटका विद्यार्थी मिल का तर्कशास्त्र पढ़नेवाला व्यक्ति नहीं है।

∴ कुछ व्यक्ति जो इन्टरमीडिएटके विद्यार्थी नहीं हैं, मिल का तर्कशास्त्र पढ़नेवाले व्यक्ति हैं।

इस युक्तिमें हम देखते हैं कि निष्कर्षका उद्देश्य आधारवाक्यके उद्देश्यका व्याघातक पद है और विधेय आधारवाक्यका विधेय है। अतः यह अपूर्ण विपर्यय है। यह युक्ति सही है।

(११) निम्नलिखित अनन्तरानुमानोंकी परीक्षा कीजिये:—

(क) सभी दार्शनिक व्यवहारमें अकुशल नहीं होते हैं।

∴ कुछ व्यवहारमें अकुशल मनुष्य दार्शनिक नहीं होते।

उत्तर. तार्किक रूप:—

ओ. कुछ दार्शनिक व्यवहारमें अकुशल नहीं हैं।

∴ ओ. कुछ व्यवहारमें अकुशल मनुष्य दार्शनिक नहीं हैं।

यहां ओ वाक्यका परिवर्तन करने की कोशिशकी गई है जोकि सम्भव नहीं है।

(ख) अधिकांश दुकानदार ईमानदार होते हैं।

∴ कुछ बेईमान मनुष्य दुकानदार नहीं हैं।

उत्तर. तार्किक रूप :

कुछ दुकानदार ईमानदार हैं (ई)।

∴ कुछ बेईमान मनुष्य दुकानदार नहीं हैं (ओ)।

यहां ई वाक्यका परिवर्तित प्रतिवर्तन करनेकी कोशिश की गई है जोकि नियमानुसार ठीक नहीं है।

(ग) सभी समत्रिबाहु त्रिभुज समानकोण होते हैं।

∴ सभी समानकोण त्रिभुज समत्रिबाहु होते हैं।

यहां आ वाक्यका साधारण परिवर्तन करनेकी कोशिश की गई है जो प्राय: सम्भव नहीं होता। लेकिन यहां साधारण परिवर्तन हो सकता है क्योंकि यहां आधारवाक्यके उद्देश्य और विधेयका समान निर्देश है।

अभ्यासार्थ प्रश्न १०

१. अनुमानका क्या अर्थ है? सान्तरानुमान और अनन्तरानुमानको उदाहरण-सहित समझाइए।

२. क्या एक ही आधारवाक्यसे निष्कर्ष निकालना सम्भव है? यदि है तो किस-किस प्रकार से?

३. अनन्तरानुमान किसे कहते हैं? क्या इसे अनुमान कहना उचित है? साधारण परिवर्तन और परिमित परिवर्तनका अन्तर बताइए। निषेधके द्वारा परिवर्तनका क्या तात्पर्य है?

४. अनुमानकी परिभाषा बताइए। क्या अनन्तरानुमान सच्चा अनुमान है? या शब्दोंका हेरफेर मात्र? उत्तरकी पुष्टि कीजिये।

परिवर्तन कीजिये—जहां इच्छा है वहां रास्ता है।

प्रतिवर्तन कीजिये—कोई सदस्य वहां उपस्थित न था।

परिवर्तित प्रतिवर्तन कीजिये—बिरले ही मनुष्य प्रलोभनसे बचते हैं।

५. अनन्तरानुमानके विभिन्न प्रकार बताइए। नीचे लिखे वाक्यसे जितने निष्कर्ष निकाले जा सकते हों निकालिए: केवल सदाचारी ही प्रसन्न होते हैं।

६. परिवर्तन, प्रतिवर्तन तथा विपर्ययकी व्याख्या कीजिये। आ, ए, ई और ओ वाक्योंमें इन प्रक्रियाओंको लागू कीजिये।

७. "मूर्ख वहीं जाते हैं जहां जानेमें देवता भी हिचकते हैं।" इस वाक्यका परिवर्तन कीजिये।

८. क्या सब वाक्योंका साधारण परिवर्तन सम्भव है? यदि नहीं तो क्यों?

९. निम्नलिखित वाक्योंका परिवर्तन और प्रतिवर्तन कीजिये:—

(१) हाइड्रोजन सबसे हल्की हवा है।

(२) सुकरात मरणशील है।

१०. परिवर्तन, प्रतिवर्तन, परिवर्तित प्रतिवर्तन, और विपर्ययकी व्याख्या कीजिये और उनके अन्तर बताइए। क्या प्रत्येक वाक्यका परिवर्तन और परिवर्तित प्रतिवर्तन सम्भव है?

११. ओ वाक्यका परिवर्तन और ई वाक्यका परिवर्तित प्रतिवर्तन क्यों नहीं हो सकता समझाइए।

१२. उदाहरण देकर अनुमानोंका वर्गीकरण कीजिये। परिवर्तित प्रतिवर्तनको समझाइए। यह अनन्तरानुमान है या सान्तरानुमान?

१३. परिवर्तित प्रतिवर्तन और विपर्ययमें अन्तर बताइए। ये सान्तरानुमानके प्रकार हैं या अनन्तरानुमानके? क्या प्रत्येक वाक्यका विपर्यय या परिवर्तित प्रतिवर्तन हो सकता है? उदाहरण देकर अपने उत्तरकी पुष्टि कीजिये।

१४. उदाहरण देकर समझाइए कि विपरीतता और अनुविपरीतता से किस प्रकार अनुमान किया जाता है?

१५. अनन्तरानुमानके नियमोंको बताइए। विपरीतता और अनुविपरीतताके नियमोंको बताइए। निम्नलिखित अनन्तरानुमानोंकी परीक्षा कीजिये:—

(१) मीठा अच्छा लगता है; अतः कड़ुवा अच्छा नहीं लगता।

(२) वकील मनुष्य होते हैं; अतः अच्छे वकील अच्छे मनुष्य होते हैं।

१६. अनुविपरीतताके नियमों द्वारा सिद्ध कीजिये कि दो विपरीत वाक्य एक साथ सत्य नहीं हो सकते।

१७. निम्नलिखित वाक्योंका परिवर्तन और परिवर्तित प्रतिवर्तन कीजिये:—

(१) केवल पढ़े-लिखे ही मतदानके योग्य हैं।

(२) मनुष्य करना चाहता है परन्तु ईश्वर नहीं होने देता।

(३) थोड़ेसे मनुष्य इस मेज़को नहीं हटा सकते।

१८. (१) व्याघातकताके नियमों द्वारा सिद्ध कीजिये कि दो अनुविपरीत वाक्य एक साथ सत्य नहीं हो सकते।

(२) अनुविपरीतताके नियमों द्वारा सिद्ध कीजिये कि दो विपरीत वाक्य एक साथ असत्य हो सकते हैं।

१९. विपर्यय किसे कहते हैं? इसके कौन-कौनसे प्रकार हैं? उदाहरण देकर समझाइए। "सब मनुष्य मरणशील हैं" का विपर्यस्त निकालिए।

२०. (क) प्रतिवर्तन कीजिये—कोई मनुष्य पूर्ण नहीं हैं।

(ख) परिवर्तित प्रतिवर्तन कीजिये—सब मनुष्य मरणशील हैं।

(ग) कौन-से वाक्य सत्य, असत्य और सन्दिग्ध होते हैं जब (१) आ सत्य होता है और (२) ओ असत्य होता है।

२१. निम्नलिखित अनन्तरानुमानोंकी परीक्षा कीजिये :—

(क) लेखनी तलवारसे मज़बूत है।
∴ तलवारका महत्त्व लेखनीसे कम है।

(ख) प्रोफ़ेसर एक मनुष्य है।
∴ बुरा प्रोफ़ेसर एक बुरा मनुष्य है।

(ग) बिना खर्च दिये हुए किसीकी भर्ती नहीं होती है।
∴ सभी जिनकी भर्ती हुई है खर्च दे चुके हैं।

(घ) सभी आम मीठे नहीं होते हैं।
∴ सभी मीठी चीज़ें आम नहीं हुआ करती हैं।

(ङ) केवल बच्चे ही ऐसा व्यवहार करते हैं।
∴ जो ऐसा व्यवहार करता है वह बच्चा है।

(च) गुणसे प्रसन्नता मिलती है।
∴ प्रसन्नतासे गुण मिलता है।

(छ) ईमानदारी सबसे अच्छी नीति है।
∴ बेईमानी सबसे बुरी नीति है।

(ज) बिना पढ़े लिखे ही ग़लत निर्णय करते हैं।
∴ कोई भी उचित निर्णय अनपढ़ों द्वारा नहीं किया जाता है।

(झ) शक्ति खराब करती है।
∴ पूरी शक्ति पूरा खराब करती है।

(ञ) बहुतसे जो ज्ञानी हैं वे बुद्धिमान् नहीं हैं।
∴ बहुतसे जो बुद्धिमान् हैं वे ज्ञानी नहीं हैं।

(ट) कवि उपदेशक होता है।

∴ बड़ा कवि बड़ा उपदेशक होता है।

(ठ) प्रकाश लाभदायक है।

∴ अन्धकार हानिकारक है।

(ड) अ ब से प्रेम करता है।

∴ ब अ से प्रेम करता है।

(ढ) सभी आलोचनाएं ख़राबी नहीं पैदा करती हैं।

∴ कुछ आलोचनाएं ख़राबी पैदा करती हैं।

११

न्याय-वाक्य
(Syllogism)

भाग १. न्यायवाक्य (अथवा न्याय) की परिभाषा.

परिभाषा।

न्यायवाक्य सान्तरानुमानका वह प्रकार है जिसमें निष्कर्ष दो आधारवाक्योंका सम्मिलित फल होता है। चूंकि यह निगमनात्मक अनुमानका एक रूप है, अतः निष्कर्ष आधारवाक्योंसे अधिक सामान्य नहीं हो सकता। चूंकियह अनुमानका व्यवहित रूप होता है, अत: निष्कर्ष दो आधारवाक्योंसे निकलता है, एक आधारवाक्यसे नहीं, जैसाकि अव्यवहित अनुमानमें होता है। इसका एक उदाहरण लीजिये :—

सब मनुष्य मरणशील हैं।
सब राजा मनुष्य हैं।
∴ सब राजा मरणशील हैं।

न्यायकी विशेषताएं :

इस प्रकार न्यायकी निम्नलिखित विशेषताएं हैं जो उसे अन्य प्रकारके अनुमानोंसे अलग करती हैं :—

(क) निष्कर्ष आधारवाक्यों का सम्मिलित परिणाम होता है।

(क) न्यायमें निष्कर्ष दो वाक्योंको मिलाकर निकाला जाता है न कि उनमें से किसी एक से। निष्कर्ष दोनों वाक्योंका योग नहीं होता बल्कि उनके मेलसे आवश्यक परिणामके रूपमें निकाला जाता है। ऊपर के उदाहरणमें 'सब राजा मरणशील हैं' किसी एक आधारवाक्यसे नहीं निकाला गया है बल्कि दोनों आधारवाक्योंका सम्मिलित परिणाम है।

यह विशेषता न्यायको एक ओर अनन्तरानुमानसे अलग करती है जिसमें निष्कर्ष केवल एक ही आधारवाक्यसे निकलता है, और दूसरी ओर

न्यायमालासे अलग करती है जिसमें दो से अधिक आधारवाक्योंसे निष्कर्ष निकलता है।

(ख) **न्यायका निष्कर्ष आधारवाक्योंसे अधिक सामान्य नहीं हो सकता।** न्याय निगमनात्मक अनुमान है और किसी भी निगमनात्मक अनुमानमें निष्कर्ष आधारवाक्योंसे अधिक सामान्य नहीं हो सकता।

(ख) निष्कर्ष आधारवाक्यों से अधिक सामान्य नहीं हो सकता।

ऊपर दिये हुए उदाहरणमें निष्कर्ष 'सब राजा मरणशील हैं' स्पष्टतया आधारवाक्य 'सब मनुष्य मरणशील हैं' से कम सामान्य है क्योंकि यह कम संख्यावाले व्यक्तियों पर लागू होता है।

यह विशेषता न्यायको (अन्य प्रकारके निगमनात्मक अनुमानोंको भी) आगमनात्मक अनुमानसे अलग करती है क्योंकि आगमनमें निष्कर्ष आधारवाक्योंसे अधिक सामान्य होता है।

(ग) **यदि आधारवाक्य सत्य हैं तो निष्कर्ष भी सत्य होगा।** न्यायवाक्यमें तथा निगमनात्मक अनुमानोंके अन्य रूपोंमें भी यह नहीं देखा जाता कि आधारवाक्य वास्तवमें सत्य हैं या नहीं। हां, इतना अवश्य है कि यदि आधारवाक्य सत्य हैं तो निष्कर्ष भी सत्य होगा। निगमनात्मक अनुमानोंमें आधारवाक्योंकी सत्यता स्वीकार कर ली जाती है। अतः यह स्पष्ट है कि निष्कर्षकी सत्यता आधारवाक्यों पर ही निर्भर है जिनकी सत्यता पहिले ही स्वीकार कर ली गई है। दूसरे शब्दोंमें हम कह सकते हैं कि चूंकि न्याय निगमनात्मक अनुमानका रूप है इसलिए इसमें केवल आकारविषयक सत्यताका ही विचार किया जाता है, द्रव्यविषयक सत्यताका नहीं।

(ग) आधारवाक्योंकी सत्यता स्वीकार कर ली जाती है और यदि आधारवाक्य सत्य हैं तो निष्कर्ष भी सत्य होगा।

भाग २. न्यायवाक्यकी रचना.

न्यायवाक्यमें तीन वाक्य होते हैं—दो दिये हुए वाक्य और तीसरा अनुमानित वाक्य। अनुमानित वाक्यको **निष्कर्ष** कहते हैं और जिन दिये हुए वाक्योंसे निष्कर्ष निकाला जाता है उनको **आधारवाक्य** कहते हैं।

तीन वाक्य।

तीन पद।

प्रत्येक वाक्यमें दो पद होते हैं, अतः पूरे न्यायमें छः पद होने चाहिए क्योंकि उसमें तीन वाक्य होते हैं। न्यायको देखने पर पता चलता है कि उसमें छः अलग-अलग पदोंका प्रयोग नहीं किया जाता बल्कि उसमें तीन ही अलग-अलग पद होते हैं जो पूरे न्यायमें दो-दो बार आते हैं।

ये तीनों पद जो न्यायमें दो-दो बार आते हैं अलग-अलग नामोंसे पुकारे जाते हैं। निष्कर्षके विधेयको **दीर्घ-पद** (**Major term**) कहते हैं और उद्देश्यको **ह्रस्वपद** (**Minor term**) और वह पद जो दोनों आधारवाक्योंमें आता है लेकिन निष्कर्षमें नहीं आता **मध्यमपद** (**Middle term**) कहलाता है। मध्यमपदसे दीर्घ और ह्रस्वपदोंको अलग करनेके लिये इन्हें चरमपद (Extremes) भी कहते हैं।

मध्यमपदका कार्य।

मध्यमपद दोनों आधारवाक्योंमें आता है और दोनोंमें समान होता है। चरमपदोंका सम्बन्ध निष्कर्षमें ही मालूम होता है, अन्यथा दोनों असम्बन्धित रहते हैं। इन दोनोंका सम्बन्ध स्थापित करना मध्यमपदका ही काम है। मध्यमपद एक मध्यस्थ या दलालका काम करता है। जैसे एक दलाल दो अपरिचित व्यापारियोंमें सम्बन्ध स्थापित करके अपने आप अलग हो जाता है वैसे ही मध्यमपद भी। इस प्रकार दीर्घवाक्य (major premise) में दीर्घपदकी तुलना मध्यमपदसे की जाती है और ह्रस्व-वाक्य (minor premise) में ह्रस्वपदकी तुलना मध्यमपदसे की जाती है। इससे निष्कर्षमें दीर्घपद और ह्रस्वपदका सम्बन्ध स्थापित हो जाता है। मध्यमपद मध्यस्थ इसलिए कहा जाता है कि यह दीर्घपद और ह्रस्वपदका सम्बन्ध स्थापित करता है। इसीके बलसे हम आधारवाक्योंसे निष्कर्ष पर पहुंचते हैं। मध्यमपद दोनों पदोंमें सम्बन्ध स्थापित करके निष्कर्षमें अलग हो जाता है। अतः सिद्ध है कि न्यायमें हम निष्कर्ष तक सीधे और तुरन्त नहीं पहुंचते बल्कि मध्यमपदके द्वारा पहुंचते हैं।

आधारवाक्य

जहां तक आधारवाक्यों या दिये हुए वाक्योंका प्रश्न है, वह आधार-

वाक्य जिसमें दीर्घपद आता है दीर्घवाक्य कहलाता है और जिसमें ह्रस्व-पद आता है वह ह्रस्ववाक्य कहलाता है।

सब मनुष्य मरणशील हैं।
सब राजा मनुष्य हैं।
∴ सब राजा मरणशील हैं।

इस न्यायमें 'मरणशील' दीर्घपद है क्योंकि यह निष्कर्षका विधेय है; 'राजा' ह्रस्वपद है क्योंकि यह निष्कर्षका उद्देश्य है; 'मनुष्य' जो कि दोनों आधारवाक्योंमें आया है लेकिन निष्कर्षमें नहीं है मध्यमपद है। पहिला आधारवाक्य 'सब मनुष्य मरणशील हैं' दीर्घवाक्य है क्योंकि इसमें दीर्घपद 'मरणशील' का प्रयोग हुआ है। दूसरा आधारवाक्य 'सब राजा मनुष्य हैं' ह्रस्ववाक्य है क्योंकि इसमें ह्रस्वपद 'राजा' का प्रयोग हुआ है।

दीर्घवाक्य और ह्रस्व-वाक्यको बतानेके भिन्न-भिन्न ढंग।

यहां यह कह देना उचित होगा कि न्यायवाक्यके ठीक तार्किक रूप में दीर्घवाक्य पहिले आना चाहिए और ह्रस्ववाक्य उसके बाद आना चाहिए। सबसे अन्तमें निष्कर्ष होना चाहिए। इस प्रकार दीर्घवाक्यके बारेमें कहा जा सकता है कि

(१) दीर्घवाक्य वह वाक्य है जिसमें दीर्घपदका प्रयोग होता है।
(२) दीर्घवाक्य वह वाक्य है जिसमें दीर्घपदकी मध्यमपदसे तुलना की जाती है।
(३) दीर्घवाक्य वह वाक्य है जो नियमानुसार न्यायमें सबसे पहिले आता है।

इसी प्रकार ह्रस्ववाक्यके बारेमें कहा जा सकता है कि

(१) ह्रस्ववाक्य वह है जिसमें ह्रस्वपदका प्रयोग किया जाता है।
(२) ह्रस्ववाक्य वह है जिसमें ह्रस्वपदकी मध्यमपदसे तुलना की जाती है।
(३) ह्रस्ववाक्य वह है जो नियमानुसार न्यायमें दीर्घवाक्यके बाद आता है।

यहां यह ध्यानमें रखना चाहिए कि भविष्यमें मध्यमपदके लिये **म** अक्षरका प्रयोग और दीर्घपद तथा ह्रस्वपदके लिये क्रमश: **वि** और **उ** अक्षरोंका प्रयोग किया जायेगा।

भाग ३. न्यायके प्रकार.

नीचे दी हुई तालिका न्यायके भिन्न-भिन्न प्रकारोंको बताती है:—

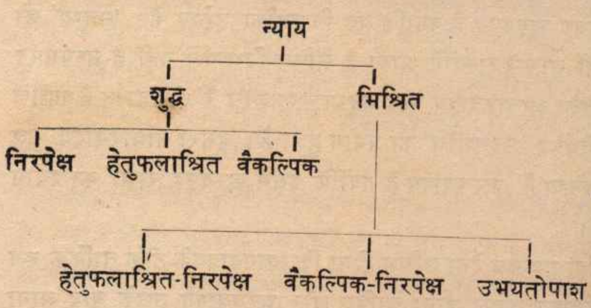

शुद्ध और मिश्रित न्याय।

न्यायको दो प्रकारोंमें विभाजित किया गया है—**शुद्ध** (**pure**) और **मिश्रित** (**mixed**)। शुद्ध न्यायमें सभी वाक्य एकही सम्बन्धके होते हैं। यदि सभी वाक्य **निरपेक्ष** (**categorical**) हैं तो न्याय शुद्ध **निरपेक्ष** है, यदि सभी वाक्य **हेतुफलाश्रित** हैं तो न्याय शुद्ध **हेतुफलाश्रित** है, और यदि सभी वाक्य **वैकल्पिक** हैं तो न्याय शुद्ध **वैकल्पिक** है।

मिश्रित न्यायके तीन उपविभाग।

मिश्रित न्यायमें वाक्य विभिन्न सम्बन्धोंवाले होते हैं। मिश्रित न्याय तीन प्रकारके होते हैं:—

(१) **हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्याय.** इसमें दीर्घवाक्य हेतुफलाश्रित वाक्य होता है और ह्रस्ववाक्य निरपेक्ष तथा निष्कर्ष भी निरपेक्ष होता है।

(२) **वैकल्पिक-निरपेक्ष न्याय.** इसमें दीर्घवाक्य वैकल्पिक होता है और ह्रस्ववाक्य निरपेक्ष तथा निष्कर्ष भी निरपेक्ष होता है।

(३) **उभयतोपाश** (**Dilemma**). इसमें दीर्घवाक्य एक

मिश्रित हेतुफलाश्रित वाक्य होता है और ह्रस्ववाक्य वैकल्पिक होता है तथा निष्कर्ष या तो वैकल्पिक होता है या निरपेक्ष।

भाग ४. शुद्ध निरपेक्ष न्यायकी स्वयंसिद्धियां.

न्याय कुछ मौलिक अथवा सर्वमान्य नियमों पर आधारित होता है जिनके बिना इस प्रकारका अनुमान सम्भव ही नहीं है। यही स्वतः सिद्ध नियम न्यायकी स्वयंसिद्धियां हैं। उनका वर्णन इस प्रकार है :—

स्वयंसिद्धि १. एक तीसरे पदसे अलग-अलग संगति रखनेवाले दो पद आपसमें भी संगति रखते हैं। उदाहरणके लिये, 'सबसे सस्ती धातु' और 'सबसे लाभदायक धातु' इन दोनों पदोंकी संगति 'लोहा' पदके साथ है। अतः इन दोनोंकी आपसमें भी संगति है। इस प्रकार,

लोहा सबसे सस्ती धातु है।
लोहा सबसे लाभदायक धातु है।
∴ सबसे सस्ती धातु सबसे लाभदायक धातु है।

इस उदाहरणमें संगति पूरी-पूरी है किन्तु कहीं-कहीं संगति अधूरी भी हो सकती है। 'सुकरात' 'मनुष्य' है और 'मनुष्य' 'मरणशील' है। यहां 'सुकरात' और 'मरणशील' पदोंकी 'मनुष्य' पदके साथ अलग-अलग संगति है। अतः इनकी आपसमें भी संगति है। इस प्रकार,

सब मनुष्य मरणशील हैं।
सुकरात मनुष्य है।
∴ सुकरात मरणशील है।

स्वयंसिद्धि २. जब दो पदोंमें से एकको एक तीसरे पदसे संगति होती है और उनमें से दूसरेकी उसी तीसरे पदसे संगति नहीं होती, तब उन दो पदोंकी आपसमें संगति नहीं होती।

उदाहरणार्थ, 'सुकरात' पदकी 'मनुष्य' पदसे संगति है किन्तु 'अमर' पदकी 'मनुष्य' पदसे संगति नहीं है; अतः 'सुकरात' पदकी 'अमर' पदसे संगति नहीं है।

कोई मनुष्य अमर नहीं है।
सुकरात मनुष्य है।
∴ सुकरात अमर नहीं है।

इस स्वयंसिद्धिके बाद अरस्तू के "**सब कुछ और कुछ नहीं के सिद्धान्त**" (**Dictum de omni et nullo**) का विचार कर लेना ज़रूरी है।

भाग ५. अरस्तू का सिद्धान्त.

अरस्तू का सिद्धान्त।

अरस्तू के 'सब कुछ और कुछ नहीं' के सिद्धान्तकी व्याख्या निम्नलिखित प्रकारसे हो सकती है:—

'सब कुछ और कुछ नहीं'।

"जिस किसीका भी विधान या निषेध पूरे वर्गके बारेमें किया जाता है उसका विधान या निषेध उसी तरह उस वर्गके भीतर आनेवाली किसी भी चीजके बारेमें किया जा सकता है।"

एक पूरे वर्गके विषयमें जो कुछ सत्य है वह उस वर्गके अन्तर्गत प्रत्येकके विषयमें सत्य होता है और एक पूरे वर्गके विषयमें जो सत्य नहीं है वह उस वर्गके अन्तर्गत किसी भी व्यक्तिके विषयमें सत्य नहीं हो सकता।

उदाहरणार्थ, जो कुछ मनुष्य जातिके विषयमें सत्य है वह सुकरात, अफ़लातून या किसी भी मनुष्यके विषयमें सत्य होगा और जो कुछ मनुष्य जातिके विषयमें सत्य नहीं है वह सुकरात, अफ़लातून या किसी भी मनुष्यके विषयमें सत्य नहीं हो सकता। यदि मरणशीलता मनुष्यमात्रके लिये सत्य है तो यह निश्चित रूपसे सभी विशिष्ट मनुष्यके विषयमें सत्य होगी। दूसरी तरफ़ यदि पूर्णता किसी मनुष्यमें नहीं पाई जाती है तो सुकरात या किसी भी खास मनुष्यमें नहीं पाई जा सकती।

अरस्तू का सिद्धान्त सरलतासे प्रथम आकारमें ही लागू हो सकता है। न्यायकी और किसी भी आकारमें यह सरलतासे लागू नहीं हो सकता है। इसीलिए अरस्तू ने प्रथम आकारको ही पूर्ण आकार माना है, और

अन्य आकारोंको उन्होंने अपूर्ण आकार कहा है। अरस्तू ने केवल प्रथम, द्वितीय और तृतीय आकारोंको ही स्वीकार किया है। चतुर्थ आकारको गैलेन (१३०-२०० ई० पू०) ने बादमें उसमें जोड़ दिया। अरस्तू के सिद्धान्तके अनुसार द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ आकारोंको अपूर्ण आकार कहना चाहिए क्योंकि इन आकारोंमें अरस्तू के सिद्धान्त (Dictum) को सीधेसे लागू नहीं किया जा सकता है।

अरस्तू का सिद्धान्त सीधे-सीधे न्यायकी प्रथम आकार में ही लागू हो सकता है।

भाग ६. लैम्बर्ट के सिद्धान्त.

अरस्तूने प्रथम आकारको ही पूर्ण आकार कहा है, क्योंकि उनका सिद्धान्त (Dictum de omni et nullo) इसमें सीधे-सीधे लागू हो जाता है। दूसरी आकारोंको उन्होंने अपूर्ण आकार कहा है क्योंकि उनका सिद्धान्त सीधे-सीधे इन आकारोंमें लागू नहीं होता है। लेकिन कुछ तर्कशास्त्री (जैसे लैम्बर्ट) ऐसे हैं जिनका कथन है कि सभी आकार समानतः मौलिक हैं और सभी किसी-न-किसी विशेष सिद्धान्त पर आधारित हैं। अरस्तू के सिद्धान्तके अलावा लैम्बर्ट ने तीन सिद्धान्त द्वितीय, तृतीत और चतुर्थ आकारके लिये प्रतिपादित किये हैं जो क्रमशः निम्नलिखित हैं:—

भेदका सिद्धान्त (Dictum de Diverso). "यदि एक पद किसी तीसरेके अन्तर्गत आ जाता है और दूसरा उसके बहिर्गत है तो वे दोनों एक-दूसरेके बहिर्गत होते हैं।"

निदर्शनका सिद्धान्त (Dictum de Exemplo). "यदि दो पदोंमें कोई भाग उभयनिष्ठ हो तो वे आंशिक रूपसे संगति रखते हैं या यदि एकके अन्दर एक अंश पाया जाता हो जो दूसरेके अन्दर नहीं पाया जाता है तो वे अंशतः आपसमें असंगति रखते हैं।"

परस्पर-सम्बन्धका सिद्धान्त (Dictum de Reciproco). वेल्टन ने इसकी व्याख्या नीचे लिखे ढंगसे की है:—

"जिस चीज़के बारेमें किसी विधेयका विधान या सामान्य निषेध

किया जाता है, स्वयं उसी चीज़का किसी भी ऐसी चीज़के बारेमें विशेष (अर्थात् विशेष वाक्यके रूपमें) विधान या निषेध किया जा सकता है जिसका उस विधेयके बारेमें विधान किया गया हो ; तथा जिस चीज़के बारेमें किसी विधेयका सामान्य विधान किया जाता है स्वयं उस चीज़का किसी भी ऐसी चीज़के बारेमें सामान्य निषेध किया जा सकता है जिसका उस विधेयके बारेमें सामान्य निषेध किया गया हो।"

भाग ७. निरपेक्ष न्यायवाक्यके सामान्य नियम और उनके भंग होनेसे उत्पन्न दोष.

नियम १. प्रत्येक न्यायवाक्यमें केवल तीन पद होने चाहिए, न तीनसे कम न तीनसे अधिक।

तीन पद।

वास्तवमें यह न्यायमें अनुमान करनेका नियम नहीं है। यह तो यह निश्चित करनेका नियम है कि कोई युक्ति न्यायवाक्य है या नहीं। न्यायवाक्यमें तीन पद होते हैं—**दीर्घपद, ह्रस्वपद** और **मध्यमपद,** जिनमें से प्रत्येकका दो-दो बार प्रयोग होता है।

टिप्पणी. चतुष्पदी-दोष और भिन्नार्थकता-दोष (Fallacy of Four Terms and the Fallacy of Equivocation).

चतुष्पदी-दोष।

इस नियमका पालन न करनेसे **चतुष्पदी-दोष** होता है। उदाहरण—

(क) सब मनुष्य मरणशील हैं।
सब घोड़े चतुष्पद हैं।

यह स्पष्ट है कि इन दो आधारवाक्योंसे कोई निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता।

(ख) मेरा हाथ कुर्सीको छूता है।
कुर्सी ज़मीनको छूती है।
∴ मेरा हाथ ज़मीनको छूता है।

यहाँ भी चार पद हैं—मेरा हाथ, जो कुर्सीको छूता है, कुर्सी, जो

ज़मीनको छूती है। अतः यहां कोई निष्कर्ष नहीं निकल सकता।

(ग) हम लोग अपनी मोटरकारके आश्रित हैं।
मोटरकार चालककी आश्रित है।
∴ हम लोग चालकके आश्रित हैं।

इस नियमकी सार्थकता यह है कि यह पदोंके विषयमें भिन्नार्थक शब्दोंके प्रयोगको रोकता है। यदि कोई भी पद न्यायके अन्दर अनेक अर्थ रखता हो तो **भिन्नार्थकता-दोष** पैदा हो जाता है। भिन्नार्थक शब्द वास्तवमें उतने पद हैं जितने उसके अर्थ हैं। हरेक अर्थ एक स्वतंत्र पद है। तीनों पद भिन्नार्थक हो सकते हैं और इस तरह वे तीन प्रकारके भिन्न-भिन्न दोषोंको उत्पन्न करेंगे, अर्थात् **भिन्नार्थक दीर्घपद**, **भिन्नार्थक ह्रस्वपद** और **भिन्नार्थक मध्यमपदके दोषों** को। जैसे— भिन्नार्थकता-दोष।

(क) भिन्नार्थक दीर्घपद (Ambiguous Major).

(१) कोई धैर्यवान् पशु भागता नहीं है।
हाथी धैर्यवान् पशु है।
∴ हाथी भागता नहीं है।

यहां दीर्घपद भिन्नार्थक है क्योंकि दीर्घवाक्यमें 'भागना' का अर्थ है डरसे भागना और निष्कर्षमें उसका अर्थ है साधारण तरीक़ेसे भागना अर्थात् दौड़ना।

(२) कन्नौज के रहनेवाले कनौजिया हैं।
रामसिंह क्षत्री कन्नौज का रहनेवाला है।
∴ रामसिंह क्षत्री कनौजिया है।

यहां दीर्घपद 'कनौजिया' का दीर्घवाक्यमें 'कन्नौजका वासी' अर्थ है और निष्कर्षमें अर्थ है 'कान्यकुब्ज ब्राह्मण'।

(ख) भिन्नार्थक ह्रस्वपद (Ambiguous Minor).

कोई मनुष्य उड़नेवाला नहीं है।
सब द्विज मनुष्य हैं।

∴ कोई द्विज उड़नेवाला नहीं है।

यहां 'द्विज' पदके अनेक अर्थ हैं। ह्रस्ववाक्यमें इसका अर्थ है ब्राह्मण और निष्कर्षमें अर्थ है पक्षी। अतः यहां भिन्नार्थक ह्रस्वपद दोष है।

(ग) भिन्नार्थक मध्यमपद (**Ambiguous Middle**).

हरा एक रंग है।
घास हरी है।
∴ घास एक रंग है।

इस उदाहरणमें मध्यमपदका दो अर्थोंमें प्रयोग हुआ है, इसलिए भिन्नार्थक मध्यमपद-दोष है।

तीन वाक्य।

नियम २. प्रत्येक न्यायवाक्यमें केवल तीन ही वाक्य होने चाहिए, न कम न अधिक।

यह नियम भी अनुमानका नहीं है बल्कि यह निर्णय करनेका है कि युक्ति न्यायवाक्य है या नहीं। न्यायकी परिभाषासे ही यह पूर्ण रूपसे स्पष्ट है। अतः इसके विषयमें अधिक कहने की आवश्यकता नहीं है।

नियम ३. आधारवाक्योंमें मध्यमपदको कमसे कम एक बार अवश्य व्याप्त होना चाहिए।

हेतुपद
मध्यमपदको कमसे कम एक बार अवश्य व्याप्त होना चाहिए।

यह ज़रूरी है कि मध्यमपद आधारवाक्योंमें कम-से-कम एक बार व्याप्त हो, अन्यथा हम चरमपदोंमें कोई सम्बन्ध स्थापित नहीं कर पायेंगे। जब तक चरमपदोंका मध्यमपदके उसी भागसे सम्बन्ध न हो तब तक उनमें कोई सम्बन्ध स्थापित नहीं किया जा सकता। मध्यमपद के द्वारा ही सम्बन्ध स्थापित किया जाता है, किन्तु यदि मध्यमपदका एक भाग दीर्घपदसे सम्बन्धित है और दूसरा भाग ह्रस्वपदसे सम्बन्धित है तो कोई निष्कर्ष नहीं निकल सकता; जैसे,

सब मनुष्य मरणशील हैं।
सब कुत्ते मरणशील हैं।

वाक्योंसे कोई निष्कर्ष नहीं निकल सकता।

टिप्पणी. अव्याप्त मध्यमपद-दोष (Fallacy of Undistributed Middle).

इस नियमको भंग करनेसे अव्याप्त मध्यमपदका दोष आ जाता है। उदाहरणार्थ— अव्याप्त मध्यमपद दोष।

(क) सब इस कामको करनेवाले समझदार हैं।
श्याम समझदार है।
∴ श्याम इस कामको करनेवाला है।

इस युक्तिमें अव्याप्त मध्यमपद-दोष है क्योंकि मध्यमपद 'समझदार' आधारवाक्योंमें एक बार भी व्याप्त नहीं है।

(ख) सब शाब्दिक वाक्य स्वतः प्रमाण हैं।
सब स्वयंसिद्धियां स्वतः प्रमाण हैं।
∴ सब स्वयंसिद्धियां शाब्दिक वाक्य हैं।

(ग) सब मनुष्य मरणशील हैं।
सब जानवर मरणशील हैं।
∴ सब जानवर मनुष्य हैं।

(घ) सब घोड़े चतुष्पद हैं।
सब कुत्ते चतुष्पद हैं।
∴ सब कुत्ते घोड़े हैं।

(ङ) सब ईमानदार अपना काम करते हैं।
यह व्यक्ति अपना काम करता है।
∴ यह व्यक्ति ईमानदार है।

(च) सब गुणी सुखी हैं।
सब धनी सुखी हैं।
∴ सब धनी गुणी हैं।

(छ) सब भौतिक पिण्ड बढ़ते हैं।
परछाईं बढ़ती है।
∴ परछाईं भौतिक पिण्ड है।

(ज) कुछ मनुष्य राजा हैं।
सब रसोइये मनुष्य हैं।
∴ सब रसोइये राजा हैं।

(झ) सब ग्रह गोल हैं।
सब चक्र गोल हैं।
∴ सब चक्र ग्रह हैं।

नियम ४. कोई पद जो आधारवाक्योंमें व्याप्त नहीं है निष्कर्षमें व्याप्त नहीं हो सकता।

पदोंकी अनुचित व्याप्ति नहीं होनी चाहिए।

न्याय निगमनात्मक प्रक्रिया है। इसलिए निष्कर्ष आधारवाक्योंसे अधिक सामान्य नहीं हो सकता। अतः कोई भी पद जो आधारवाक्योंमें पूर्ण निर्देशमें नहीं ग्रहण किया गया है, निष्कर्षमें पूर्ण निर्देशमें नहीं ग्रहण किया जा सकता।

टिप्पणी. अनियमित दीर्घपद-दोष और अनियमित ह्रस्वपद-दोष (Fallacies of Illicit Major and Illicit Minor).

दोष।

इस नियमको भंग करनेसे **अनियमित पद-दोष (Illicit Process)** होता है। यदि दीर्घपद दीर्घवाक्यमें व्याप्त नहीं है और निष्कर्षमें व्याप्त है तो **अनियमित दीर्घपद-दोष** होता है और यदि ह्रस्वपद ह्रस्ववाक्यमें व्याप्त नहीं है और निष्कर्षमें व्याप्त है तो **अनियमित ह्रस्वपद-दोष** होता है।

(१) **अनियमित दीर्घपद-दोष.**

अनियमित दीर्घपद।

(क) सब गाय चतुष्पद हैं।
कोई कुत्ता गाय नहीं है।
∴ कोई कुत्ता चतुष्पद नहीं है।

इस युक्तिमें अनियमित दीर्घपद-दोष है क्योंकि 'चतुष्पद' दीर्घवाक्यमें अव्याप्त है लेकिन निष्कर्षमें व्याप्त कर दिया गया है।

(ख) जो सोचता है उसका अस्तित्व है।
जड़ पदार्थ सोचता नहीं है।
∴ जड़ पदार्थका अस्तित्व नहीं है।

(ग) सब हिन्दू आर्य हैं।
कोई पारसी हिन्दू नहीं है।
∴ कोई पारसी आर्य नहीं है।

(घ) सब समझदार कार्यकर्त्ता अपने कामके लिये उत्तरदायी हैं।
कोई पशु समझदार कार्यकर्त्ता नहीं है।
∴ कोई पशु अपने कामके लिये उत्तरदायी नहीं है।

(ङ) सब स्पष्टवक्ता ईमानदार हैं।
सत्यव्रत स्पष्टवक्ता नहीं है।
∴ सत्यव्रत ईमानदार नहीं है।

(२) अनियमित ह्रस्वपद-दोष.

(क) कोई मनुष्य पूर्ण नहीं है।
सब मनुष्य प्राणी हैं।
∴ कोई प्राणी पूर्ण नहीं है।

अनियमित ह्रस्वपद-दोष।

इस युक्तिमें अनियमित ह्रस्वपद-दोष है क्योंकि ह्रस्वपद 'प्राणी' ह्रस्ववाक्यमें अव्याप्त है और निष्कर्षमें व्याप्त।

(ख) सब जड़ पदार्थोंमें भार होता है।
सब जड़ पदार्थोंमें विस्तार होता है।
∴ सब विस्तारवाले पदार्थोंमें भार होता है।

(ग) सब मनुष्य मरणशील हैं।
सब मनुष्य समझदार हैं।
∴ सब समझदार प्राणी मरणशील हैं।

(घ) सब धातु ताप और विद्युत्के चालक हैं।
सब धातु तत्व हैं।
∴ सब तत्व ताप और विद्युत्के चालक हैं।

नियम ५. दो निषेधात्मक वाक्योंसे कोई निष्कर्ष नहीं निकल सकता।

निषेधात्मक वाक्यसे पता चलता है कि विधेयका उद्देश्यके बारेमें निषेध किया गया है। यदि दोनों आधारवाक्य निषेधात्मक हैं तो इसका

दो निषेधात्मक वाक्योंसे निष्कर्ष नहीं निकलता।

मतलब यह है कि दीर्घपद और ह्रस्वपदका मध्यमपदसे कोई सम्बन्ध ही नहीं है। यदि मध्यमपदका दोनोंसे सम्बन्ध नहीं है तो इससे यही अर्थ निकलता है कि दोनों पदों अर्थात् दीर्घपद और ह्रस्वपदमें कोई साधारण सम्बन्ध नहीं है। निष्कर्ष तभी निकल सकता है जब कम-से-कम एक चरमपद मध्यमपदसे सम्बन्धित हो और फिर तभी हम उस सम्बन्धके आधार पर चरमपदोंके आपसमें एक या भिन्न होनेका अनुमान कर सकते हैं। उदाहरणके लिये नीचे लिखे दो निषेधात्मक वाक्यों—

कोई मनुष्य चतुष्पद नहीं है।
कोई चतुष्पद समझदार नहीं है।

से कोई निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता है।

टिप्पणी. निषेधात्मक आधारवाक्योंका दोष.

निषेधात्मक आधारवाक्यों का दोष।

इस नियमको भंग करनेसे **निषेधात्मक आधारवाक्योंका** दोष उत्पन्न होता है। यदि निष्कर्ष निकालना हो तो कम-से-कम एक आधारवाक्य को विधानात्मक होना चाहिए; जैसे—

कोई भी भारतीय स्त्रीके अपमानको नहीं सह सकता।
शंकर स्त्रीके अपमानको नहीं सह सकता।
∴ शंकर भारतीय है। (गलत निष्कर्ष)

यहां निषेधात्मक आधारवाक्योंका दोष है क्योंकि दोनों ही आधारवाक्य निषेधात्मक हैं।

एक आधार-वाक्यके निषेधात्मक होनेसे निषेधात्मक निष्कर्ष निकलता है और

नियम ६. यदि एक आधारवाक्य निषेधात्मक है तो निष्कर्ष अवश्य निषेधात्मक होगा तथा विलोमतः निषेधात्मक निष्कर्ष निकालने के लिये एक आधारवाक्य अवश्य निषेधात्मक होना चाहिए।

पांचवें नियमसे पता चलता है कि दोनों आधारवाक्य निषेधात्मक नहीं हो सकते। अतः कम-से-कम एक आधारवाक्यको विधानात्मक होना चाहिए ताकि निष्कर्ष निकाला जा सके। निषेधात्मक वाक्यसे पता

चलता है कि मध्यमपद और एक चरमपदमें कोई सम्बन्ध नहीं है और विधानात्मक वाक्यसे पता चलता है कि मध्यमपद और दूसरे चरमपद में कोई सम्बन्ध अवश्य है। इससे यही पता चलता है कि दोनों चरमपदोंमें कोई सम्बन्ध नहीं है, अर्थात् निष्कर्ष निषेधात्मक है।

इस नियमका विलोम भी सत्य है।

इसका विलोम भी सत्य है अर्थात् यदि निष्कर्ष निषेधात्मक है तो एक आधारवाक्यको निषेधात्मक होना चाहिए। यदि निष्कर्ष निषेधात्मक है तो इसका मतलब यह है कि चरमपदोंमें आपसमें कोई सम्बन्ध नहीं है। यह तभी सम्भव है जब एक आधारवाक्य निषेधात्मक हो जिसमें मध्यमपदका एक चरमपदसे कोई सम्बन्ध न हो तथा दूसरा आधारवाक्य विधानात्मक हो जिसमें मध्यमपदका दूसरे चरमपदसे सम्बन्ध दिखाया गया हो।

दो विधानात्मक आधारवाक्यों से विधानात्मक निष्कर्ष निकलता है।

नियम ७. यदि दोनों आधारवाक्य विधानात्मक हों तो निष्कर्ष भी विधानात्मक होगा, और विलोमत: यदि निष्कर्ष विधानात्मक है तो दोनों आधारवाक्योंको अवश्य विधानात्मक होना चाहिए।

यदि दोनों आधारवाक्य विधानात्मक हैं तो इसका मतलब यह है कि मध्यमपदका चरमपदोंके साथ सम्बन्ध है और इससे हम केवल यही अनुमान कर सकते हैं कि दोनों चरमपदोंमें आपसमें सम्बन्ध अवश्य है।

इस नियमका विलोम भी सत्य है।

इस नियमका विलोम भी सत्य है, अर्थात् यदि निष्कर्ष विधानात्मक है तो दोनों आधारवाक्योंको अवश्य विधानात्मक होना चाहिए। यदि दोनों विधानात्मक नहीं हैं तो या तो दोनों निषेधात्मक होंगे या एक निषेधात्मक और दूसरा विधानात्मक होगा। यदि दोनों निषेधात्मक हैं तो कोई निष्कर्ष नहीं निकलेगा और यदि दोनोंमें से एक निषेधात्मक है तो निष्कर्ष भी निषेधात्मक होगा। अत: निष्कर्ष तभी विधानात्मक हो सकता है जब दोनों आधारवाक्य विधानात्मक हों।

दो विशेष वाक्योंसे कोई निष्कर्ष नहीं निकलता।

नियम ८. यदि दोनों आधारवाक्य विशेष हों तो कोई निष्कर्ष नहीं निकल सकता।

यह नियम इस प्रकार सिद्ध किया जा सकता है:—

यदि दोनों आधारवाक्य विशेष हैं तो नीचे लिखे संयोग बन सकते हैं—

ईई, ईओ, ओई और ओओ।

ईई आधारवाक्योंसे कोई निष्कर्ष नहीं निकल सकता क्योंकि ई वाक्यका उद्देश्य और विधेय कोई भी व्याप्त नहीं होता। इस प्रकार यदि दोनों आधारवाक्य ई हैं तो कोई भी पद व्याप्त नहीं होगा, किन्तु तीसरे नियमके अनुसार मध्यमपदको कम-से-कम एक बार अवश्य व्याप्त होना चाहिए। अतः यदि दोनों आधारवाक्य ई हैं तो कोई निष्कर्ष नहीं निकल सकता।

अब **ईओ** और **ओई** संयोगोंकी परीक्षा की जाती है। इन संयोगोंमें एक आधारवाक्य निषेधात्मक है। अतः केवल एक पद व्याप्त है और उसे तीसरे नियमके अनुसार मध्यमपद होना चाहिए, अन्यथा अव्याप्त मध्यमपद-दोष हो जायगा। एक आधारवाक्यके निषेधात्मक होनेसे निष्कर्ष भी निषेधात्मक होगा। निष्कर्षके निषेधात्मक होनेसे उसका विधेय अर्थात् दीर्घपद व्याप्त होगा जो कि दीर्घवाक्यमें अव्याप्त है। इस प्रकार यदि हम कोई निष्कर्ष निकालते हैं तो या तो अव्याप्त मध्यमपदका दोष होगा या अनियमित दीर्घपदका। अतः **ईओ** और **ओई** से कोई निष्कर्ष नहीं निकल सकता।

ओओ संयोगसे कोई निष्कर्ष नहीं निकल सकता क्योंकि ये दोनों निषेधात्मक वाक्य हैं और पांचवें नियमके अनुसार इनसे कोई निष्कर्ष नहीं निकल सकता। इससे सिद्ध हुआ कि दो विशेष आधारवाक्योंसे कोई निष्कर्ष नहीं निकल सकता।

एक आधार-वाक्यके विशेष होनेसे निष्कर्ष भी विशेष होता है।

नियम ९. यदि एक आधारवाक्य विशेष है तो निष्कर्ष भी विशेष होगा।

इस नियमको नीचे लिखे तरीक़ेसे सिद्ध किया जा सकता है :—

यदि एक आधारवाक्य विशेष है तो दूसरे आधारवाक्यको अवश्य सामान्य होना चाहिए। इस प्रकार ये संयोग बन सकते हैं: **आई, ईआ,**

ओओ, ओआ, एई, ईए, एओ और ओए। इन आठ संयोगोंमें से एओ और ओए को हम तुरन्त निकाल सकते हैं क्योंकि इनमें दोनों आधारवाक्योंके निषेधात्मक होनेसे कोई निष्कर्ष नहीं निकल सकता। शेषकी परीक्षा हम अलग-अलग करेंगे।

आई और ईआ—

यदि एक आधारवाक्य **आ** है और दूसरा **ई** है तो दोनों आधारवाक्योंमें केवल एक पद व्याप्त होगा जिसे मध्यमपद होना चाहिए, अन्यथा अव्याप्त मध्यमपद-दोष हो जायगा। इस प्रकार निष्कर्षमें किसी भी पदको व्याप्त नहीं होना चाहिए। अतः यदि कोई निष्कर्ष निकल सकता है तो वह केवल **ई** हो सकता है जो कि विशेष वाक्य है। अतः निष्कर्ष विशेष वाक्य है।

आओ और ओआ—

यदि एक आधारवाक्य **आ** है और दूसरा **ओ** तो इस प्रकार हमें केवल दो पद ही व्याप्त मिलते हैं अर्थात् **आ** वाक्यका उद्देश्य और **ओ** वाक्यका विधेय। इनमेंसे एकको मध्यमपद होना चाहिए। अब चूंकि एक आधारवाक्य निषेधात्मक है इसलिए निष्कर्ष भी निषेधात्मक होना चाहिए जिसका विधेय अर्थात् दीर्घपद व्याप्त है। चूंकि आधारवाक्योंमें मध्यमपदके अलावा केवल एक ही पद व्याप्त है, इसलिए निष्कर्षमें केवल एक ही पद व्याप्त हो सकता है और यह व्याप्त पद निष्कर्षका विधेय अर्थात् दीर्घपद होना चाहिए। इसलिए निष्कर्षका उद्देश्य व्याप्त न होनेसे वह विशेष वाक्य अथवा **ओ** है।

एई और ईए—

इन संयोगोंमें केवल दो ही पद व्याप्त हैं—**ए** वाक्यका उद्देश्य और विधेय; और इनमेंसे एकको मध्यमपद होना चाहिए और दूसरेको दीर्घपद क्योंकि निष्कर्षके निषेधात्मक वाक्य होनेसे उसका विधेय व्याप्त होगा जो कि दीर्घपद है। अतः निष्कर्षका उद्देश्य व्याप्त नहीं हो सकता या दूसरे शब्दोंमें हम कह सकते हैं कि निष्कर्ष केवल **ओ** वाक्य ही हो

सकता है जो कि विशेष वाक्य है। (दसवें नियममें हम देखेंगे कि ईए संयोगसे कोई निष्कर्ष नहीं निकल सकता।)

इस नियमसे स्पष्ट है कि यदि निष्कर्ष सामान्य है तो दोनों आधार-वाक्योंको अनिवार्यतः सामान्य होना चाहिए, क्योंकि अगर एक आधार-वाक्य विशेष होगा तो निष्कर्ष अवश्य ही विशेष होगा। अतः सामान्य निष्कर्ष प्राप्त करनेके लिये आधारवाक्योंका सामान्य होना आवश्यक है।

इस नियमका विलोम अर्थात् यदि निष्कर्ष विशेष है तो एक आधार-वाक्यको विशेष होना चाहिए, सत्य नहीं है। दोनों आधारवाक्योंके सामान्य होने पर भी निष्कर्ष विशेष हो सकता है।

अगर दीर्घ-वाक्य विशेष और ह्रस्व-वाक्य निषेधात्मक हों तो कोई निष्कर्ष नहीं निकल सकता।

नियम १०. दीर्घवाक्यके विशेष और ह्रस्ववाक्यके निषेधात्मक होनेसे कोई निष्कर्ष नहीं निकल सकता।

यदि ह्रस्ववाक्य निषेधात्मक है तो दीर्घवाक्यको अवश्य विधानात्मक होना चाहिए और इस प्रकार निष्कर्ष अवश्य निषेधात्मक होगा। चूंकि निष्कर्ष निषेधात्मक है, इसलिए उसमें दीर्घपद व्याप्त होगा, किन्तु दीर्घवाक्यके विशेष विधानात्मक होनेसे दीर्घपद आधारवाक्यमें व्याप्त नहीं है। इस प्रकार यदि हम कोई निष्कर्ष निकालना चाहेंगे तो अनियमित दीर्घपदका दोष हो जायगा।

यह देखा जा सकता है कि अन्तिम चार नियम पहिले छः नियमोंके उपनियम हैं। इनमेंसे किसीका भी उल्लंघन करनेसे पहिले छः नियमोंमें से किसी एकका भी उल्लंघन हो सकता है। पहिले छः नियम **मुख्य नियम** कहलाते हैं और अन्तिम चार नियम **गौण नियम** कहलाते हैं।

संक्षेपमें यह कहा जा सकता है कि पहिले दो नियम **न्यायवाक्यकी रचना** या बनावटसे सम्बन्ध रखते हैं; तीसरा और चौथा नियम **पदोंकी व्याप्ति** से सम्बन्ध रखता है; पांचवां, छठा और सातवां नियम न्यायके **वाक्योंके गुण** से सम्बन्ध रखता है; आठवां और नवां नियम **वाक्योंके परिमाण** से सम्बन्ध रखता है; और दसवां नियम **वाक्योंके गुण** और **परिमाण** दोनोंसे सम्बन्ध रखता है।

भाग ८. न्यायके आकार (Figures).

आकार न्यायवाक्यका वह रूप है जो आधारवाक्योंमें दीर्घ और ह्रस्वपदोंके साथ मध्यमपदकी आपेक्षिक स्थितिसे निर्धारित होता है। मध्यमपद दीर्घ और ह्रस्व दोनों आधारवाक्योंमें आता है, लेकिन इसका स्थान हरेक न्यायवाक्यमें एक ही नहीं होता। आधारवाक्योंमें मध्यमपदकी चार स्थितियां सम्भव हैं। इस कारणसे ही न्यायके **चार** आकार होते हैं।

न्यायका आकार मध्यमपदकी स्थिति पर निर्भर होता है।

(१) प्रथम आकार (First Figure).

प्रथम आकारमें मध्यमपद दीर्घवाक्यमें उद्देश्य और ह्रस्ववाक्यमें विधेय होता है; यथा,

म वि
उ म
∴ उ वि

(२) द्वितीय आकार (Second Figure).

द्वितीय आकारमें मध्यमपद दोनों आधारवाक्योंमें विधेय होता है; यथा,

वि म
उ म
∴ उ वि

(३) तृतीय आकार (Third Figure).

तृतीय आकारमें मध्यमपद दोनों आधारवाक्योंमें उद्देश्य होता है; यथा,

म वि
म उ
∴ उ वि

(४) चतुर्थ आकार (Fourth Figure).

चतुर्थ आकारमें मध्यमपद दीर्घवाक्यमें विधेय और ह्रस्ववाक्यमें उद्देश्य होता है; यथा,

वि म
म उ
∴ उ वि

भाग ९. न्यायवाक्यके संयोग (Moods).

'संयोग' शब्दका अलग-अलग अर्थोंमें प्रयोग हुआ है।

(१) **संयोग न्यायवाक्यके वे रूप हैं जिनका निर्णय आधारवाक्यों के गुण और परिमाणसे किया जाता है।**

यदि केवल आधारवाक्यों का विचार किया जाय तो ६४ संयोग होते हैं।

वाक्य चार प्रकारके होते हैं—**आ, ए, ई और ओ**। प्रत्येक न्यायमें केवल दो आधारवाक्य होते हैं। अतः प्रत्येक आकारमें १६ संयोग सम्भव हैं। जैसे :—

आ आ	**ए आ**	**ई आ**	**ओ आ**
आ ए	**ए ए**	**ई ए**	**ओ ए**
आ ई	**ए ई**	**ई ई**	**ओ ई**
आ ओ	**ए ओ**	**ई ओ**	**ओ ओ**

चूंकि आकार चार होते हैं, इसलिए कुल मिलाकर १६ × ४ = ६४ संयोग सम्भव हैं।

अतः यदि हम केवल आधारवाक्योंके गुण और परिमाणको देखते हैं (निष्कर्षको छोड़कर) तो हमें प्रत्येक आकार में १६ सम्भव संयोग मिलते हैं। इस प्रकार सब आकारोंमें ६४ सम्भव संयोग होते हैं।

तीनों वाक्यों का विचार करने पर कुल २५६ संयोग होते हैं।

(२) 'संयोग' शब्दको विस्तृत अर्थमें लेने पर इसकी परिभाषा यह है : **संयोग न्यायका वह रूप है जिसका निर्णय तीनों वाक्योंके गुण और परिमाणके द्वारा किया जाता है।** विस्तृत अर्थमें, आधारवाक्योंके साथ-साथ निष्कर्षके गुण और परिमाणको भी देखना पड़ता है।

इस अर्थमें ऊपरके ६४ संयोगोंमें से प्रत्येकके चार रूप हो सकते हैं। उदाहरणके लिये प्रथम आकारका **आआ** संयोग चार प्रकारका हो सकता है :—

आ आ आ
आ आ ए
आ आ ई
आ आ ओ

इस प्रकार चारों आकारोंमें कुल मिलाकर ६४ × ४ = २५६ संयोग हो सकते हैं।

केवल आधार-वाक्योंका विचार करने पर ६४ संयोगोंमें से केवल १९ प्रामाणिक हैं।

(३) कुछ तर्कशास्त्री ऐसे हैं जो 'संयोग' शब्दको बहुत ही संकीर्ण अर्थमें लेते हैं। वे संयोगोंमें केवल **प्रामाणिक संयोगों (Valid moods) को ही शामिल करते हैं अर्थात् उन संयोगोंको जिनका निष्कर्ष प्रामाणिक होता है।** इस प्रकार यदि केवल आधारवाक्योंका ही विचार किया जाय तो **चारों आकारोंमें केवल १९ प्रामाणिक संयोग मिलते हैं :—**

आआ, एआ, आई, एई—प्रथम आकारमें ;
एआ, आए, एई आओ—द्वितीय आकारमें ;
आआ, ईआ, आई, एआ, ओआ, एई—तृतीय आकारमें ;
आआ, आए, इआ, एआ, एई—चतुर्थ आकारमें।

यहां इस बातका ध्यान रखना चाहिए कि इन १९ प्रामाणिक संयोगोंमें से **एआ** और **एई** संयोग सभी आकारोंमें पाये जाते हैं। दूसरे शब्दोंमें हम कह सकते हैं कि **एआ और एई संयोगोंसे प्रत्येक आकारमें सही निष्कर्ष निकलता है।**

यदि हम तीनों वाक्योंका विचार करें तो २४ प्रामाणिक संयोग होंगे :—

आआआ, आआई, एआए, एआओ आईई, एईओ,—प्रथम आकार।

एआए, एआओ, आएए, आएओ एईओ, आओओ,—द्वितीय आकार।
आआई, ईआई, आईई, एआओ, ओआओ, एईओ—तृतीय आकार।
आआई, आएए, आएओ ईआई, एआओ, एईओ,—चतुर्थ आकार।

यह ध्यान रखना चाहिए कि एआओ और एईओ सभी आकारोंमें प्रामाणिक हैं।

प्रामाणिक संयोगोंका निर्धारण किस प्रकार किया जाता है, यह अगले भागमें दिखाया जायगा।

भाग १०. प्रामाणिक संयोगोंका निर्धारण.

यदि संयोगसे हमारा तात्पर्य न्यायके उस रूपसे हो जो आधारवाक्योंके गुण और परिमाण पर निर्भर होता है तो प्रत्येक आकारमें नीचे लिखे १६ संयोग होते हैं :—

आआ	एआ	ईआ	ओआ
आए	एए	ईए	ओए
आई	एई	ईई	ओई
आओ	एओ	ईओ	ओओ

प्रत्येक आकार के १६ सम्भव संयोगोंमें से ८ से कोई निष्कर्ष नहीं निकलता।

इन सोलह सम्भव संयोगोंमें से एए, एओ, ओए तथा ओओ से किसी आकारमें कोई निष्कर्ष नहीं निकल सकता क्योंकि दोनों आधारवाक्य निषेधात्मक हैं। फिर ईई, ईओ और ओई संयोगोंसे भी कोई निष्कर्ष नहीं निकल सकता क्योंकि दोनों आधारवाक्य विशेष हैं। नियम १० के अनुसार ईए संयोगसे जिसका दीर्घवाक्य विशेष और ह्रस्ववाक्य निषेधात्मक है, किसी भी आकारमें कोई निष्कर्ष नहीं निकल सकता। इस प्रकार १६ सम्भव संयोगोंमें से ८ संयोगोंमें कोई निष्कर्ष नहीं निकल सकता।

अब देखना चाहिए कि शेष संयोगों अर्थात् आआ, आए, आई, आओ,

एआ, एई, ईआ और ओआ में से प्रत्येक आकारमें किस-किससे सही निष्कर्ष निकल सकता है।

१. प्रथम आकारके प्रामाणिक संयोग.

प्रथम आकार।

प्रथम आकारमें दीर्घवाक्यमें मध्यमपद उद्देश्य होता है और ह्रस्ववाक्यमें विधेय होता है।

आआआ (बारबारा)

(१) आआआ. आ. सब म वि है। सब मनुष्य मरणशील हैं।
आ. सब उ म है। सब राजा मनुष्य हैं।
∴ आ. सब उ वि है। ∴ सब राजा मरणशील हैं।

यहां दोनों आधारवाक्य विधानात्मक हैं। अतः यदि कोई निष्कर्ष निकल सकता है तो वह भी विधानात्मक होगा। मध्यमपद दीर्घवाक्यमें व्याप्त है। यदि हम आ निष्कर्ष निकालें तो न्यायका कोई भी नियम भंग नहीं होगा क्योंकि ह्रस्वपद, जो निष्कर्षमें व्याप्त है, ह्रस्ववाक्यमें भी व्याप्त है। अतः आआ से प्रथम आकारमें आ निष्कर्ष निकलता है। इस संयोगको बारबारा (**Barbara**) कहते हैं।

(२) आए. आ. सब म वि है।
ए. कोई उ म नहीं है।

आए (कोई निष्कर्ष नहीं)

इस संयोगसे कोई निष्कर्ष नहीं निकलता क्योंकि यदि कोई निष्कर्ष निकाला भी जायगा तो वह निषेधात्मक वाक्य होगा। इस प्रकार **वि** जो कि दीर्घवाक्यमें व्याप्त नहीं है निष्कर्षमें व्याप्त हो जायगा। अतः आए संयोग प्रथम आकारमें प्रामाणिक नहीं है।

आईई (दारीई)

(३) आई. आ. सब म वि है। सब मनुष्य बुद्धिमान् हैं।
ई. कुछ उ म है। कुछ प्राणी मनुष्य हैं।
∴ ई. कुछ उ वि है। ∴ कुछ प्राणी बुद्धिमान् हैं।

यहां दोनों आधारवाक्य विधानात्मक हैं और एक वाक्य विशेष है। इसलिए निष्कर्ष विशेष विधानात्मक होगा अर्थात् ई वाक्य होगा। मध्यमपद दीर्घवाक्यमें व्याप्त है। कोई भी पद निष्कर्षमें व्याप्त नहीं

है। इसलिए **आई** से प्रथम आकारमें **ई** निष्कर्ष निकलता है। इस प्रामाणिक संयोगको **दारीई (Darii)** कहते हैं।

आओ (कोई निष्कर्ष नहीं)

(४) **आओ.** आ. सब म वि है।
ओ. कुछ उ म नहीं है।

इस संयोगसे प्रथम आकारमें कोई निष्कर्ष नहीं निकलता। चूंकि एक आधारवाक्य निषेधात्मक है, इसलिए निष्कर्ष निषेधात्मक होगा। यदि निष्कर्ष निषेधात्मक होगा तो उसका विधेय जो कि दीर्घपद है व्याप्त होगा, किन्तु दीर्घवाक्यमें वह व्याप्त नहीं है। इसलिए **आओ** प्रथम आकारमें प्रामाणिक संयोग नहीं है।

एआए (सिलारेन्ट)

(५) **एआ.**	ए. कोई म वि नहीं है।	कोई प्राणी अमर नहीं है।
	आ. सब उ म है।	सब मनुष्य प्राणी हैं।
	∴ आ. कोई उ वि नहीं है।	∴ कोई मनुष्य अमर नहीं है।

इस संयोगमें एक आधारवाक्यके निषेधात्मक होनेसे निष्कर्षको भी निषेधात्मक होना चाहिए। यदि हम निष्कर्ष **ए** वाक्य निकालें तो कोई नियम भंग नहीं होगा, क्योंकि मध्यमपद दीर्घवाक्यमें व्याप्त है और दीर्घ तथा ह्रस्वपद जो निष्कर्षमें व्याप्त हैं, आधारवाक्योंमें भी व्याप्त हैं। इसलिए **एआ** से प्रथम आकारमें **ए** निष्कर्ष निकलता है। इस प्रामाणिक संयोगको **सिलारेन्ट (Celarent)** कहते हैं।

एईओ (फेरीओ)

(६) **एई.**	ए. कोई म वि नहीं है।	कोई चतुष्पद मनुष्य नहीं है।
	ई. कुछ उ म है।	कुछ प्राणी चतुष्पद हैं।
	∴ ओ. कुछ उ वि नहीं है।	∴ कुछ प्राणी मनुष्य नहीं हैं।

चूंकि एक आधारवाक्य निषेधात्मक है और दूसरा विशेष वाक्य है, इसलिए यदि कोई निष्कर्ष निकल सकता है तो वह निषेधात्मक विशेष वाक्य यानी **ओ** होगा। **ओ** के निष्कर्ष होनेसे न्यायके किसी नियमका

उल्लंघन नहीं होता क्योंकि मध्यमपद दीर्घवाक्यमें व्याप्त है और दीर्घपद जो निष्कर्षमें व्याप्त है दीर्घवाक्यमें भी व्याप्त है। इस प्रकार एई से पहिले आकारमें ओ निष्कर्ष निकलता है। इस प्रामाणिक संयोग का नाम **फेरिओ** है।

(७) **ईआ.** ई. कुछ म वि है। — ईआ (कोई निष्कर्ष नहीं)
आ. सब उ म है।

इससे कोई भी निष्कर्ष नहीं निकलता, क्योंकि मध्यमपद किसी भी आधारवाक्यमें व्याप्त नहीं है। अतः **ओआ** प्रथम आकारमें प्रामाणिक संयोग नहीं है।

(८) **ओआ.** ओ. कुछ म वि नहीं है। — ओआ (कोई निष्कर्ष नहीं)
आ. सब उ म है।

इससे भी कोई निष्कर्ष नहीं निकलता, क्योंकि मध्यमपद किसी भी आधारवाक्यमें व्याप्त नहीं है। अतः **ओआ** प्रथम आकारमें प्रामाणिक संयोग नहीं है।

इस प्रकार प्रथम आकारमें केवल चार ही संयोग प्रामाणिक हैं: **आआ** (बारबारा), **ईए** (सिलारेन्ट), **आई** (दारीई) और **एई** (फेरीओ)।

टिप्पणी १. प्रथम आकारके विशेष नियम.

प्रथम आकारके विशेष नियम ये हैं:—

१. दीर्घवाक्यको सामान्य होना चाहिए।
२. ह्रस्ववाक्यको विधानात्मक होना चाहिए।

नियम १. दीर्घवाक्यको सामान्य होना चाहिए।

यदि दीर्घवाक्य सामान्य नहीं है तो वह विशेष होगा। प्रथम आकारमें मध्यमपद दीर्घवाक्यमें उद्देश्य और ह्रस्ववाक्यमें विधेय होता है। मध्यमपदको कम-से-कम एक बार व्याप्त होना चाहिए। दीर्घवाक्य के विशेष होनेसे वह उसमें व्याप्त नहीं है। इसलिए उसे ह्रस्ववाक्यमें व्याप्त होना चाहिए। ह्रस्ववाक्यमें मध्यमपद विधेय है और यदि वह

व्याप्त है तो स्पष्ट है कि ह्रस्ववाक्य निषेधात्मक होगा क्योंकि केवल निषेधात्मक वाक्योंके ही विधेय व्याप्त होते हैं। यदि ह्रस्ववाक्य निषेधात्मक है तो निष्कर्ष निषेधात्मक वाक्य होगा और दीर्घवाक्य विधानात्मक होगा।

हमने मान लिया कि दीर्घवाक्य विशेष है और अब ज्ञात हुआ कि वह विधानात्मक भी है। अतः उसमें दीर्घपद व्याप्त नहीं है यद्यपि निष्कर्षके निषेधात्मक होनेसे निष्कर्षमें वह व्याप्त है। इस प्रकार हम देखते हैं कि यदि दीर्घवाक्य विशेष होता है तो अनियमित दीर्घपदका दोष पैदा होता है। अतः दीर्घवाक्यको अनिवार्यतः सामान्य वाक्य होना चाहिए।

नियम २. ह्रस्ववाक्यको विधानात्मक होना चाहिए।

यदि ह्रस्ववाक्य विधानात्मक नहीं है तो वह निषेधात्मक होगा। यदि ह्रस्ववाक्य निषेधात्मक है तो निष्कर्ष निषेधात्मक और दीर्घवाक्य विधानात्मक होगा। प्रथम आकारमें दीर्घपद दीर्घवाक्यमें विधेय है जो दीर्घवाक्यके विधानात्मक होनेसे अव्याप्त है। किन्तु, चूंकि निष्कर्ष निषेधात्मक है, इसलिए उसमें दीर्घपद व्याप्त हो जाता है। इस प्रकार यह माननेसे कि ह्रस्ववाक्य निषेधात्मक है, अनियमित दीर्घपदका दोष पैदा हो जाता है। अतः ह्रस्ववाक्यको अनिवार्यतः विधानात्मक होना चाहिए।

टिप्पणी २. प्रथम आकारकी मुख्य विशेषताएं.

(१) अरस्तू का "सब और कुछ नहीं" का जो सिद्धान्त है वह केवल इसी आकारमें सीधा लाग होता है।

(२) केवल प्रथम आकारमें ही आ वाक्य निष्कर्ष होता है, अन्य किसी आकारमें नहीं।

(३) केवल प्रथम आकारमें ही आ, ए, ई और ओ ये चारों वाक्य निष्कर्ष होते हैं।

(४) प्रथम आकारमें दीर्घ और ह्रस्व पदोंमें से किसीका भी स्थान नहीं बदलता। ह्रस्वपद आधारवाक्य और निष्कर्ष दोनोंमें उद्देश्य रहता है और दीर्घपद भी दोनोंमें विधेय रहता है।

२. द्वितीय आकारके प्रामाणिक संयोग.

द्वितीय आकार।

द्वितीय आकारमें मध्यमपद दोनों आधारवाक्योंमें विधेय होता है। अब हम आठों संयोगोंमें से प्रत्येकको परीक्षा करेंगे।

आआ (कोई निष्कर्ष नहीं)

(१) **आआ.** आ. सब वि म है।
आ. सब उ म है।

इस संयोगसे कोई निष्कर्ष नहीं निकलता क्योंकि मध्यमपद कहीं भी व्याप्त नहीं है। अतः **आआ** द्वितीय आकारमें प्रामाणिक संयोग नहीं है।

आएए (कामेस्ट्रेस)

(२) **आए.** आ. सब वि म है।
ए. कोई उ म नहीं है।
∴ ए. कोई उ वि नहीं है।
सब धातु तत्व हैं।
कोई यौगिक तत्व नहीं है।
∴ कोई यौगिक धातु नहीं है।

चूंकि एक आधारवाक्य निषेधात्मक है, इसलिए निष्कर्ष भी निषेधात्मक होना चाहिए। यदि हम **ए** वाक्य निष्कर्ष निकालें तो न्यायके किसी भी नियमका उल्लंघन नहीं होता क्योंकि मध्यमपद ह्रस्ववाक्यमें व्याप्त है और दीर्घपद तथा ह्रस्वपद जो कि निष्कर्षमें व्याप्त हैं, आधारवाक्योंमें भी अपने-अपने स्थान पर व्याप्त हैं। अतः **आए** से ए वाक्य निष्कर्ष निकलता है। इस प्रामाणिक संयोगको **कामेस्ट्रेस** (**Camestres**) कहते हैं।

आई (कोई निष्कर्ष नहीं)

(३) **आई.** आ. सब वि म है।
ई. कुछ उ म है।

इस संयोगसे कोई निष्कर्ष नहीं निकलता क्योंकि मध्यमपद दोनों

आधारवाक्योंमें अव्याप्त है। अतः आई द्वितीय आकारमें प्रामाणिक संयोग नहीं है।

आओओ (बारोको)

(४) **आओ.** आ. सब वि म है। सब घोड़े चतुष्पद हैं।
ओ. कुछ उ म नहीं है। कुछ जानवर चतुष्पद नहीं हैं।
∴ ओ. कुछ उ वि नहीं है। ∴ कुछ जानवर घोड़े नहीं हैं।

चूंकि एक आधारवाक्य विशेष निषेधात्मक है, इसलिए यदि कोई निष्कर्ष निकल सकता है तो वह विशेष निषेधात्मक अर्थात् **ओ** ही हो सकता है। **ओ** वाक्यके निष्कर्ष होनेसे न्यायका कोई नियम भंग नहीं होता, क्योंकि मध्यमपद ह्रस्ववाक्यमें व्याप्त है और दीर्घपद जो कि निष्कर्षमें व्याप्त है, दीर्घवाक्यमें भी व्याप्त है। अतः **आओ** से द्वितीय आकारमें **ओ** निष्कर्ष निकलता है। इस प्रामाणिक संयोगको **बारोको** (**Baroco**) कहते हैं।

एआए (सिसारे)

(५) **एआ.** ए. कोई वि म नहीं है।
आ. सब उ म है।
∴ ए. कोई उ वि नहीं है।
कोई पूर्ण प्राणी मरणशील नहीं है।
सब मनुष्य मरणशील हैं।
∴ कोई मनुष्य पूर्ण प्राणी नहीं है।

यहां निष्कर्ष निषेधात्मक होगा क्योंकि एक आधारवाक्य निषेधात्मक है। **ए** को निष्कर्ष बनानेमें हम किसी भी नियमको नहीं तोड़ते, क्योंकि मध्यमपद दीर्घवाक्यमें व्याप्त है और दीर्घ तथा ह्रस्वपद जो कि निष्कर्ष में व्याप्त हैं, आधारवाक्योंमें भी अपने-अपने स्थानों पर व्याप्त हैं। इस प्रकार **एआ** संयोगसे द्वितीय आकारमें **ए** वाक्य निष्कर्ष निकलता है। इस प्रामाणिक संयोगको **सिसारे** (**Cesare**) कहते हैं।

एइओ (फेस्तीनो)

(६) **एई.** ए. कोई वि म नहीं है। कोई मनुष्य पूर्ण नहीं है।
ई. कुछ उ म है। कुछ प्राणी पूर्ण हैं।
∴ ओ. कुछ उ वि नहीं है। ∴ कुछ प्राणी मनुष्य नहीं हैं।

एक आधारवाक्य निषेधात्मक है और दूसरा विशेष। इसलिए यदि कोई निष्कर्ष निकल सकता है तो वह विशेष निषेधात्मक यानी ओ होगा। ओ को निष्कर्ष मानकर हम न्यायके किसी भी नियमको भंग नहीं करते, क्योंकि मध्यमपद दीर्घवाक्यमें व्याप्त है, और दीर्घपद जो निष्कर्षमें व्याप्त है आधारवाक्यमें भी व्याप्त है। इसलिए **एई** से द्वितीय आकारमें **ओ** निष्कर्ष निकलता है। इस प्रामाणिक संयोगका नाम **फेस्तीनो (Festino)** है।

(७) **ईआ.** ई. कुछ वि म है।
आ. सब उ म है। ईआ (कोई निष्कर्ष नहीं)

इस संयोगसे कोई निष्कर्ष नहीं निकल सकता, क्योंकि दोनों आधारवाक्योंके विधानात्मक होनेसे मध्यमपद एक बार भी व्याप्त नहीं है।

(८) **ओआ.** ओ. कुछ वि म नहीं है।
आ. सब उ म है। ओआ (कोई निष्कर्ष नहीं)

इस संयोगसे यदि कोई निष्कर्ष निकल सकता है तो वह विशेष निषेधात्मक होगा, क्योंकि एक आधारवाक्य विशेष निषेधात्मक है। इस प्रकार निष्कर्षमें दीर्घपद व्याप्त होगा जबकि आधारवाक्यमें वह व्याप्त नहीं है। अतः **ओआ** से द्वितीय आकारमें कोई निष्कर्ष नहीं निकल सकता।

इस प्रकार द्वितीय आकारमें चार प्रामाणिक संयोग हैं: **एआ (सिसारे), आए (कामेस्ट्रेस), एई (फेस्तीनो) और आओ (बारोको)।**

टिप्पणी. द्वितीय आकारके नीचे लिखे विशेष नियम हैं :—

(१) दीर्घवाक्यको सामान्य होना चाहिए।
(२) एक आधारवाक्य निषेधात्मक होना चाहिए।

नियम १. दीर्घवाक्यको सामान्य होना चाहिए।

यदि दीर्घवाक्य सामान्य नहीं है तो विशेष होगा। द्वितीय आकारमें

दीर्घपद दीर्घवाक्यमें उद्देश्य होता है। चूंकि दीर्घवाक्य विशेष है, इसलिए उसमें दीर्घपद अव्याप्त है और इसे निष्कर्षमें भी अव्याप्त रहना चाहिए। इस प्रकार निष्कर्षको विधानात्मक वाक्य होना चाहिए, क्योंकि केवल विधानात्मक वाक्योंके विधेय ही अव्याप्त होते हैं। चूंकि निष्कर्ष विधानात्मक है, इसलिए दोनों आधारवाक्योंको विधानात्मक होना चाहिए। और चूंकि दोनों आधारवाक्य विधानात्मक हैं, इसलिए उनके विधेय अव्याप्त होंगे। द्वितीय आकारमें मध्यमपद दोनों आधारवाक्योंमें विधेय होता है। इसलिए मध्यमपद दोनोंमें अव्याप्त होगा।

इस प्रकार यदि हम दीर्घवाक्यको विशेष मानते हैं तो इससे अव्याप्त मध्यमपदका दोष पैदा होगा। अत: दीर्घवाक्यको अनिवार्यत: सामान्य होना चाहिए।

नियम २. एक आधारवाक्यको अवश्य निषेधात्मक होना चाहिए।

द्वितीय आकारमें मध्यमपद दोनों आधारवाक्योंमें विधेय होता है। विधानात्मक वाक्यका विधेय व्याप्त नहीं होता है और चूंकि मध्यमपदको कम-से-कम एक बार व्याप्त अवश्य होना चाहिए, इसलिए एक आधारवाक्यको अनिवार्यत: निषेधात्मक होना चाहिए।

३. तृतीय आकारके प्रामाणिक संयोग.

तीसरे आकारमें मध्यमपद दोनों आधारवाक्योंमें उद्देश्य होता है।

आआई (दाराप्ती)	(१) **आआ.**	आ. सब म वि है।	सब मनुष्य समझदार हैं।
		आ. सब म उ है।	सब मनुष्य मरणशील हैं।
		∴ ई. कुछ उ वि है।	∴ कुछ मरणशील प्राणी समझदार हैं।

दोनों आधारवाक्य विधानात्मक हैं। इसलिए निष्कर्ष भी विधानात्मक होगा। यदि निष्कर्ष आ वाक्य हो तो उसमें उद्देश्य अर्थात् ह्रस्वपद व्याप्त हो जायगा जो कि ह्रस्ववाक्यमें व्याप्त नहीं है। अत: आ वाक्य निष्कर्ष नहीं हो सकता। किन्तु यदि ई वाक्य निष्कर्ष हो तो

न्यायके किसी नियमका उल्लंघन नहीं होता, क्योंकि मध्यमपद दोनों आधारवाक्योंमें व्याप्त होगा तथा निष्कर्षमें कोई पद अनियमित रूपसे व्याप्त नहीं होगा। इसलिए आआ संयोगसे ई निष्कर्ष निकल सकता है। इस प्रामाणिक संयोगका नाम दाराप्ती (**Darapti**) है।

(२) **आए.** आ. सब म वि है। आए (कोई निष्कर्ष नहीं)
ए. कोई म उ नहीं है।

यहां कोई निष्कर्ष नहीं निकल सकता, क्योंकि एक आधारवाक्यके निषेधात्मक होनेसे निष्कर्ष भी निषेधात्मक होगा और इस प्रकार उसका विधेय अर्थात् दीर्घपद व्याप्त होगा जो कि दीर्घवाक्यमें व्याप्त नहीं है।

(३) आई.	आ. सब म वि है।	सब रोग दुःखदायी होते हैं।	आईई (दातीसी)
	ई. कुछ म उ है।	कुछ रोग रोकने योग्य होते हैं।	
∴	ई. कुछ उ वि है।	∴ कुछ रोकने योग्य चीजें दुःखदायी होती हैं।	

चूंकि एक आधारवाक्य विशेष है और दोनों आधारवाक्य विधानात्मक हैं, इसलिए यदि कोई निष्कर्ष निकल सकता है तो वह विशेष विधानात्मक अर्थात् ई वाक्य होगा। ई के निष्कर्ष होनेसे न्यायका कोई नियम भंग नहीं होता क्योंकि मध्यमपद दीर्घवाक्यमें व्याप्त है और निष्कर्षमें कोई पद अनियमित रूपसे व्याप्त नहीं है। इसलिए **आई** से तीसरे आकारमें **ई** निष्कर्ष मिलता है। इस प्रामाणिक संयोगको **दातीसी** (**Datisi**) कहते हैं।

(४) **आओ.** आ. सब म वि है। आओ (कोई निष्कर्ष नहीं)
ओ. कुछ म उ नहीं है।

यहां कोई निष्कर्ष नहीं निकल सकता, क्योंकि अगर कोई निष्कर्ष निकलेगा तो वह निषेधात्मक होगा और इस तरह उसका विधेय अर्थात् दीर्घपद व्याप्त होगा जो कि दीर्घवाक्यमें व्याप्त नहीं है।

एआओ
(फेलाप्टोन)

(५) एआ. ए कोई म वि नहीं है। कोई मनुष्य पूर्ण नहीं है।
आ. सब म उ है। सब मनुष्य समझदार हैं।
∴ ओ. कुछ उ वि नहीं है। ∴ कुछ समझदार प्राणी पूर्ण नहीं हैं।

चूंकि एक आधारवाक्य निषेधात्मक है, इसलिए निष्कर्ष भी निषेधात्मक होगा। यदि हम **ए** वाक्य निष्कर्ष निकालें तो निष्कर्षमें उद्देश्य अर्थात् ह्रस्वपद व्याप्त हो जायगा जो कि ह्रस्ववाक्यमें व्याप्त नहीं है। किन्तु अगर हम निष्कर्ष **ओ** वाक्य निकालें तो कोई नियम भंग नहीं होता। मध्यमपद दोनों आधारवाक्योंमें व्याप्त है और दीर्घपद जो कि निष्कर्षमें व्याप्त है, दीर्घवाक्यमें भी व्याप्त है। इसलिए **एआ** से तीसरे आकारमें **ओ** निष्कर्ष मिलता है। इस प्रामाणिक संयोग को **फेलाप्टोन (Felapton)** कहते हैं।

एईओ
(फेरीसोन)

(६) एई. ए. कोई म वि नहीं है। कोई आक्रामक युद्ध न्यायपूर्ण नहीं है।
ई. कुछ म उ है। कुछ आक्रामक युद्ध सफल होते हैं।
∴ ओ. कुछ उ वि नहीं है। ∴ कुछ सफल बातें न्यायपूर्ण नहीं होती हैं।

चूंकि एक आधारवाक्य निषेधात्मक है और दूसरा विशेष है, इसलिए यदि कोई निष्कर्ष निकल सकता है तो वह विशेष निषेधात्मक यानी **ओ** होगा। यदि **ओ** को निष्कर्ष बनाया जाय तो न्यायका कोई नियम भंग नहीं होता, क्योंकि मध्यमपद दीर्घवाक्यमें व्याप्त है और दीर्घपद जो कि निष्कर्षमें व्याप्त है, दीर्घवाक्यमें भी व्याप्त है। इसलिए **एई** से तीसरे आकारमें **ओ** निष्कर्ष निकलता है। इस प्रामाणिक संयोग को **फेरीसोन (Ferison)** कहते हैं।

ईआई
(दीसामीस)

(७) ईआ. ई. कुछ म वि है। कुछ मनुष्य चतुर हैं।
आ. सब म उ है। सब मनुष्य मरणशील हैं।
∴ ई. कुछ उ वि है। ∴ कुछ मरणशील प्राणी चतुर हैं।

चूंकि एक आधारवाक्य विशेष है और दोनों आधारवाक्य विधानात्मक हैं, इसलिए यदि कोई निष्कर्ष निकल सकता है तो वह विशेष विधानात्मक अर्थात् ई वाक्य होगा। ई के निष्कर्ष होनेसे न्यायका कोई नियम नहीं टूटता। इसलिए ईआ से ई निष्कर्ष निकलता है। इस प्रामाणिक संयोगको **दीसामीस (Disamis)** कहते हैं।

(८) **ओआ.**	ओ. कुछ म वि नहीं है।	कुछ मनुष्य चतुर नहीं हैं।	ओआओ
	आ. सब म उ है।	सब मनुष्य मरणशील हैं।	(बोकार्डो)
	∴ओ. कुछ उ वि नहीं है।	∴कुछ मरणशील प्राणी चतुर नहीं हैं।	

चूंकि एक आधारवाक्य विशेष निषेधात्मक है, इसलिए निष्कर्षको भी विशेष निषेधात्मक यानी **ओ** वाक्य होना चाहिए। **ओ** के निष्कर्ष होनेसे न्यायका कोई नियम भंग नहीं होता। इस प्रामाणिक संयोगको **बोकार्डो (Bocardo)** कहते हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि तीसरे आकारमें छः प्रामाणिक संयोग हैं जिनके नाम हैं: **दाराप्ती** (आआ) **दीसामीस** (ईआ), **दातीसी** (आई), **फेलाप्टोन** (एआ), **बोकार्डो** (ओआ) और **फेरीसोन** (एई)।

टिप्पणी. तीसरे आकारके निम्नलिखित विशेष नियम हैं :—

(१) **ह्रस्ववाक्यको विधानात्मक होना चाहिए।**

(२) **निष्कर्षको विशेष होना चाहिए।**

नियम १. ह्रस्ववाक्यको विधानात्मक होना चाहिए।

यदि ह्रस्ववाक्य विधानात्मक नहीं है तो निषेधात्मक होगा। यदि ह्रस्ववाक्य निषेधात्मक है तो दीर्घवाक्य अनिवार्यतः विधानात्मक और निष्कर्ष अनिवार्यतः निषेधात्मक होगा। तीसरे आकारमें दीर्घपद दीर्घवाक्यमें विधेय होता है। चूंकि दीर्घवाक्य विधानात्मक है, इसलिए इसमें दीर्घपद अव्याप्त है। लेकिन निष्कर्षमें दीर्घपद व्याप्त है क्योंकि निष्कर्ष निषेधात्मक है। अतः यदि हम ह्रस्ववाक्यको निषेधात्मक मानते हैं तो

युक्तिमें अनियमित दीर्घपदका दोष पैदा होता है। इसलिए ह्रस्ववाक्य को अवश्य विधानात्मक होना चाहिए।

नियम २. निष्कर्ष विशेष वाक्य होना चाहिए।

तीसरे आकारमें ह्रस्वपद ह्रस्ववाक्यमें विधेय होता है। प्रथम नियमके अनुसार ह्रस्ववाक्य विधानात्मक होना चाहिए। विधानात्मक वाक्यका विधेय अव्याप्त होता है। अतः ह्रस्वपद ह्रस्ववाक्यमें अव्याप्त है और इसे निष्कर्षमें भी अव्याप्त होना चाहिए। ह्रस्वपद निष्कर्षमें उद्देश्य होता है और केवल विशेष वाक्यका ही उद्देश्य अव्याप्त होता है। अतः निष्कर्षको अवश्य ही विशेष वाक्य होना चाहिए, अन्यथा अनियमित ह्रस्वपदका दोष पैदा हो जायगा।

४. चतुर्थ आकारके प्रामाणिक संयोग.

चतुर्थ आकारमें मध्यमपद दीर्घवाक्यमें विधेय और ह्रस्ववाक्यमें उद्देश्य होता है।

आआई (ब्रामान्टीप)

(१) **आआ.**	आ. सब वि म है।	सब मनुष्य प्राणी हैं।
	आ. सब म उ है।	सब प्राणी मरणशील हैं।
	∴ ई. कुछ उ वि है।	∴ कुछ मरणशील मनुष्य हैं।

चूंकि दोनों आधारवाक्य विधानात्मक हैं, इसलिए निष्कष भी विधानात्मक होगा, अर्थात् **आ** होगा या **ई**। अगर निष्कर्ष आ वाक्य हो तो ह्रस्वपद जो कि ह्रस्ववाक्यमें अव्याप्त है, निष्कर्षमें व्याप्त होगा, और अगर निष्कर्ष **ई** वाक्य हो तो न्यायका कोई भी नियम भंग नहीं होगा। अतः **आआ** से चतुर्थ आकारमें **ई** निष्कर्ष निकलता है। इस प्रामाणिक संयोगको **ब्रामान्टीप** (**Bramantip**) कहते हैं।

आएए (कामेनेस)

(२) **आए.**	आ. सब वि म है।	सब मनुष्य मरणशील हैं।
	ए. कोई म उ नहीं है।	कोई मरणशील पूर्ण नहीं है।
	∴ ए. कोई उ वि नहीं है।	∴ कोई पूर्ण प्राणी मनुष्य नहीं है।

चूंकि एक आधारवाक्य निषेधात्मक है, इसलिए निष्कर्ष अवश्य ही

निषेधात्मक होगा। निष्कर्षके ए वाक्य होनेसे न्यायका कोई नियम भंग नहीं होता। अतः आए से चतुर्थ आकारमें ए निष्कर्ष निकलता है। इस प्रामाणिक संयोगको कामेनेस (**Camenes**) कहते हैं।

(३) **आई.** आ. सब वि म है। — आई (कोई निष्कर्ष नहीं)
ई. कुछ म उ है।

चूंकि मध्यमपद दोनों आधारवाक्योंमें अव्याप्त है, इसलिए कोई निष्कर्ष नहीं निकल सकता है।

(४) **आओ.** आ. सब वि म है। — आओ (कोई निष्कर्ष नहीं)
ओ. कुछ म उ नहीं है।

इससे भी कोई निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता क्योंकि मध्यमपद आधारवाक्योंमें एक बार भी व्याप्त नहीं है।

(५) **एआ.** ए. कोई वि म नहीं है। कोई चतुष्पद मनुष्य नहीं है। — एआओ (फेसापो)
आ. सब म उ है। सब मनुष्य प्राणी हैं।
∴ ओ. कुछ उ वि नहीं है। ∴ कुछ प्राणी चतुष्पद नहीं हैं।

चूंकि एक आधारवाक्य निषेधात्मक है, इसलिए यदि कोई निष्कर्ष निकाला जा सकता है तो वह भी निषेधात्मक यानी ए या **ओ** होगा। यदि निष्कर्ष **ए** निकाला जाय तो ह्रस्वपद निष्कर्षमें व्याप्त हो जायगा जो कि ह्रस्ववाक्यमें अव्याप्त है। किन्तु यदि निष्कर्ष **ओ** निकाला जाय तो न्यायका कोई नियम भंग नहीं होगा। अतः **एआ** से **ओ** निष्कर्ष निकलता है। इस प्रामाणिक संयोगको **फेसापो** (**Fesapo**) कहते हैं।

(६) **एई.** ए. कोई वि म नहीं है। कोई मनुष्य पूर्ण नहीं है। — एईओ (फ्रेसीसोन)
ई. कुछ म उ है। कुछ पूर्ण प्राणी विचारवान् हैं।
∴ ओ. कुछ उ वि नहीं है। ∴ कुछ विचारवान् प्राणी मनुष्य नहीं हैं।

चूंकि एक आधारवाक्य निषेधात्मक है और दूसरा विशेष, इसलिए

यदि कोई निष्कर्ष निकल सकता है तो वह भी विशेष निषेधात्मक यानी ओ वाक्य होगा। ओ को निष्कर्ष निकाल कर हम न्यायके किसी भी नियमका उल्लंघन नहीं करते। अत: एई से चतुर्थ आकारमें ओ निष्कर्ष निकलता है। इस प्रामाणिक संयोगको फ्रेसीसोन (**Fresison**) कहते हैं।

ईआई (दीमारीस)

(७) **ईआ.** ई. कुछ वि म है। कुछ प्राणी मनुष्य हैं।
आ. सब म उ है। सब मनुष्य मरणशील हैं।
∴ ई. कुछ उ वि है। ∴ कुछ मरणशील प्राणी हैं।

चूंकि एक आधारवाक्य विशेष है और दोनों आधारवाक्य विधानात्मक हैं, इसलिए यदि कोई निष्कर्ष निकल सकता है तो वह विशेष विधानात्मक यानी ई वाक्य होगा। ई वाक्यके निष्कर्ष होनेसे किसी भी नियमका उल्लंघन नहीं होता। अत: **ईआ** से चतुर्थ आकारमें ई निष्कर्ष निकलता है। इस प्रामाणिक संयोगको **दीमारीस** (**Dimaris**) कहते हैं।

ओआ (कोई निष्कष नहीं)

(८) **ओआ.** ओ. कुछ वि म नहीं है।
आ. सब म उ है।

यहां कोई निष्कर्ष नहीं निकल सकता, क्योंकि एक आधारवाक्यके निषेधात्मक होनेसे निष्कर्ष भी निषेधात्मक होगा और इस तरह उसका विधेय यानी दीर्घपद व्याप्त हो जायगा जो कि दीर्घवाक्यमें अव्याप्त है।

इस प्रकार चतुर्थ आकारमें पांच प्रामाणिक संयोग हैं जो निम्नलिखित हैं:—

आआ (**ब्रामान्टीप**), **आए** (**कामेनेस**), **ईआ** (**दीमारीस**), **एआ** (**फेसापो**), **और एई** (**फ्रेसीसोन**)।

टिप्पणी. चतुर्थ आकारके विशेष नियम ये हैं:—

(१) **यदि दीर्घवाक्य विधानात्मक है तो ह्रस्ववाक्य अवश्य ही सामान्य होना चाहिए।**

(२) यदि ह्रस्ववाक्य विधानात्मक है तो निष्कर्ष अवश्य ही विशेष होगा।

(३) यदि कोई भी आधारवाक्य निषेधात्मक है तो दीर्घवाक्यको अवश्य सामान्य होना चाहिए।

नियम १. यदि दीर्घवाक्य विधानात्मक है तो ह्रस्ववाक्य सामान्य होगा।

चतुर्थ आकारमें मध्यमपद दीर्घवाक्यमें विधेय होता है, इसलिए अगर दीर्घवाक्य विधानात्मक है तो इसमें मध्यमपद व्याप्त नहीं होगा। अतः मध्यमपदको ह्रस्ववाक्यमें व्याप्त होना चाहिए। चतुर्थ आकारमें ह्रस्ववाक्यमें मध्यमपद उद्देश्य होता है। विशेष वाक्यका उद्देश्य व्याप्त नहीं होता। अतः यदि मध्यमपदको ह्रस्ववाक्यमें व्याप्त करना है तो ह्रस्ववाक्यको अवश्य ही सामान्य होना चाहिए।

नियम २. यदि ह्रस्ववाक्य विधानात्मक है तो निष्कर्ष अवश्य विशेष वाक्य होगा।

चतुर्थ आकारमें ह्रस्वपद ह्रस्ववाक्यमें विधेय होता है। यदि ह्रस्ववाक्य विधानात्मक है तो ह्रस्वपद आधारवाक्यमें अव्याप्त होगा और इसलिए निष्कर्षमें भी उसे अव्याप्त होना चाहिए। निष्कर्षमें ह्रस्वपद उद्देश्य है और केवल विशेष वाक्यका ही उद्देश्य अव्याप्त होता है; अतः निष्कर्ष विशेष वाक्य ही होगा।

नियम ३. यदि कोई भी आधारवाक्य निषेधात्मक है तो दीर्घ वाक्यको सामान्य होना चाहिए।

यदि कोई भी आधारवाक्य निषेधात्मक है तो निष्कर्ष भी निषेधात्मक होगा जिसका विधेय अर्थात् दीर्घपद व्याप्त होगा। अतः दीर्घपदको दीर्घवाक्यमें भी व्याप्त होना चाहिए। चतुर्थ आकारमें दीर्घपद दीर्घवाक्यमें उद्देश्य होता है और केवल सामान्य वाक्यका ही उद्देश्य व्याप्त होता है। अतः दीर्घवाक्यको अवश्य ही सामान्य होना चाहिए।

संक्षेपमें, यदि संयोगसे हमारा तात्पर्य यह है कि यह न्यायका वह **संक्षेप**

रूप है जो आधारवाक्योंके गुण और परिमाण पर निर्भर होता है, तो प्रत्येक आकारमें १६ संयोग और चारों आकारोंमें ६४ संयोग सम्भव हैं। इन ६४ संयोगोंमें से केवल १९ ही प्रामाणिक होते हैं जिनमें ४ प्रथम आकारमें, चार द्वितीय आकारमें, ६ तृतीय आकारमें और ५ चतुर्थ आकारमें होते हैं।

भाग ११. रूपान्तरण: अनुलोम और विलोम (Reduction: Direct and Indirect).

रूपान्तरणका अर्थ है अपूर्ण आकारके संयोगोंको पूर्ण आकारके संयोगोंमें बदलना और इस प्रकार उनकी सत्यता सिद्ध करना।

रूपान्तरणका शब्दार्थ है बदलना। कुछ तर्कशास्त्री ऐसे हैं जो 'रूपान्तरण' का प्रयोग एक व्यापक अर्थमें करते हैं। उनके अनुसार रूपान्तरणका अर्थ है किसी **एक आकारके संयोगोंको किसी भी दूसरे आकारके संयोगोंमें बदलना।** इस अर्थमें प्रथम आकारके संयोगोंको दूसरे आकारके संयोगोंमें बदला जा सकता है, द्वितीय आकारके संयोगों को तृतीय आकारके संयोगोंमें और तृतीय आकारके संयोगोंको चतुर्थ आकारके संयोगोंमें बदला जा सकता है। वास्तवमें किसी भी संयोगको किसी भी अन्य संयोगमें बदला जा सकता है। किन्तु 'रूपान्तरण' शब्द का प्रयोग प्रायः एक संकुचित अर्थमें किया जाता है। इसका अर्थ है **द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ आकारके संयोगोंको प्रथम आकारके संयोगों में बदलना।**

अरस्तू के अनुसार केवल प्रथम आकार ही पूर्ण आकार (Perfect figure) है क्योंकि 'सब और कुछ नहीं' का सिद्धान्त इसी आकारमें सीधा लागू होता है। द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ आकारोंमें वह सीधा लागू नहीं होता। अतः ये आकार अपूर्ण आकार (Imperfect figures) कहलाते हैं। अगर किसी प्रकार अपूर्ण आकारके संयोगोंको पूर्ण आकारके संयोगोंमें बदल दिया जाय तो यह सिद्धान्त उनमें भी लागू हो जायगा। इस प्रकार अपूर्ण आकारोंकी अपूर्णता जाती रहेगी। दूसरे शब्दोंमें, यद्यपि अपूर्ण आकारोंके संयोगोंमें अरस्तू का सिद्धान्त सीधे

लागू नहीं होता, तथापि इन संयोगोंके पूर्ण आकारके संयोगोंमें बदले जा सकनेसे यह सिद्ध हो जाता है कि प्रथम आकारके संयोगोंके निष्कर्षोंके समान इन संयोगोंके निष्कर्ष भी सत्य हैं। **इस प्रकार रूपान्तरणका लक्ष्य द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ आकारोंके संयोगोंकी सत्यता सिद्ध करना है।**

अत: रूपान्तरणकी यह परिभाषा दी जा सकती है:—

रूपान्तरण वह प्रक्रिया है जिसमें अपूर्ण आकारोंके संयोगोंको पूर्ण आकारके संयोगोंमें बदल दिया जाता है और इस तरह अपूर्ण आकारों के संयोगोंकी सत्यता सिद्ध की जाती है।

रूपान्तरण दो प्रकारका होता है:—

(१) अनुलोम और (२) विलोम।

अनुलोम रूपान्तरण।

(१) **अनुलोम रूपान्तरण** में किसी अपूर्ण संयोगको परिवर्तन, प्रतिवर्तन, परिवर्तित-प्रतिवर्तनके द्वारा या आधारवाक्योंका परस्पर स्थान बदल कर किसी पूर्ण संयोगमें बदल दिया जाता है। इसे अनुलोम इसलिए कहा जाता है कि इसमें दिया हुआ निष्कर्ष दिये हुए न्यायके आधारवाक्योंसे प्राप्त आधारवाक्योंसे निकाला जाता है।

विलोम रूपान्तरण।

(२) **विलोम रूपान्तरण** में पूर्ण आकारकी सहायतासे यह दिखाया जाता है कि अपूर्ण आकारके संयोगोंके निष्कर्षोंके व्याघातक वाक्य असत्य हैं और इसलिए मूल निष्कर्षको अवश्य सत्य होना चाहिए।

टिप्पणी. क्या रूपान्तरण आवश्यक है?

क्या रूपान्तरण आवश्यक है?

अरस्तू के समयमें रूपान्तरण ही एकमात्र ऐसा उपाय था जो अपूर्ण संयोगोंकी प्रामाणिकताको सिद्ध कर सकता था। इसीलिए यह विधि बहुत ही आवश्यक थी। किन्तु आजकल न्यायकी प्रामाणिकता जांचने के लिये बहुतसे नियम हैं, जैसे न्यायके सामान्य नियम, आकारोंके विशेष नियम इत्यादि। अत: अब रूपान्तरणका उतना महत्त्व नहीं रह गया है जितना अरस्तू के समयमें था। आजकल अपूर्ण आकारोंके संयोगोंकी

प्रामाणिकताको सिद्ध करने की विभिन्न विधियोंमें से एक विधि यह भी हो सकती है। यह मानते हुए कि रूपान्तरणकी महत्ता अधिक अंशमें समाप्त हो गई है, यह नहीं समझना चाहिए कि अब यह बिल्कुल ही व्यर्थ है। वास्तवमें अपूर्ण आकारोंके संयोगोंको पूर्ण आकारके संयोगोंमें बदलनेसे यह सिद्ध होता है कि अलग-अलग आकारोंके संयोग अलग-अलग दिखाई देने पर भी मूलतः एक ही आधारभूत नियमके प्रकाशन हैं। इस प्रकार रूपान्तरणसे न्यायके सभी रूपोंकी आवश्यक एकता प्रकट होती है।

भाग १२. स्मृति सहायक पद्य (The Mnemonic Verses).

१३वीं शताब्दीमें लैटिन स्कूलमेन (Latin Schoolmen) ने सत्य संयोगोंको कंठस्थ करनेके लिये कुछ पद्य तैयार किये थे जिनकी मददसे वे बड़ी आसानीसे याद किये जा सकते हैं। ये पद्य निरर्थक शब्दों के बने हुए हैं जिनके द्वारा हम आसानीसे द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ आकारके संयोगोंको प्रथम आकारके संयोगोंमें बदल सकते हैं। प्रथम आकारमें चार प्रामाणिक संयोग हैं, द्वितीयमें भी चार; तृतीयमें छः और चतुर्थमें पांच हैं। नीचे लिखी हुई पहिली, दूसरी, तीसरी और चौथी पंक्तियां क्रमशः प्रथम, द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ आकारके प्रामाणिक संयोगोंके नाम बताती हैं—

चारों आकारों के प्रामाणिक संयोग

बारबारा, सिलारेन्ट, दारीई, फेरीओ;
सेसारे, कामेस्ट्रेस, फेस्तीनो, बारोको;
दाराप्ती, दीसामीस, दातीसी, फेलाप्टोन, बोकार्डो, फेरीसोन;
ब्रामान्टीप, कामेनेस, दीमारीस, फेसापो, फ्रेसीसोन।

सार्थक अक्षर

प्रत्येक शब्दमें हमें तीन स्वर मिलेंगे। **पहिला स्वर दीर्घवाक्यके लिये, दूसरा ह्रस्ववाक्यके लिये और तीसरा निष्कर्षके लिये है।** इस प्रकार इन शब्दोंके स्वर एक संयोगको बतलाते हैं, जैसे, **बारबारामें** तीन स्वर आ, आ, आ हैं, सिलारेन्टमें तीन स्वर ए, आ, ए हैं।

प्रथम आकारके संयोगोंके चार शुरूके व्यंजन निम्नलिखित हैं :—

१. ब
२. स
३. द
४. फ

यहां सिर्फ **बारोको** और **बोकार्डो** को छोड़कर अपूर्ण आकारोंके **शुरूके व्यंजन** यह बताते हैं कि उनका कोई संयोग पहिले आकारमें उसी व्यंजनसे शुरू होनेवाले संयोगमें बदल सकता है ; जैसे, **ब्रामान्टीप** का शुरूका व्यंजन 'ब' बताता है कि इसका रूपान्तरण **बारबारामें** होगा ; **सेसारे** का क बताता है कि इसका रूपान्तरण **सिलारेन्ट** में होगा, **दाराप्ती** में द बताता है कि इसका रूपान्तरण **दारीई** में होगा, **फेस्तीनों** का फ बताता है कि इसका रूपान्तरण **फेरीओ** में होगा, इत्यादि।

स अपनेसे पहिले आये हुए स्वरके द्वारा प्रकट वाक्यके **साधारण परिवर्तन** को बतलाता है।

प अपनेसे पहिले आये हुए स्वरके द्वारा प्रकट वाक्यके **संकुचित परिवर्तन** को बतलाता है।

जब **स** और **प** तीसरे स्वरके बाद आते हैं तो इसका मतलब यह होता है कि नये न्यायके निष्कर्षका आवश्यकतानुसार साधारण या संकुचित परिवर्तन करना है।

म यह बताता है कि जिस संयोगमें यह होता है उसके आधार-वाक्योंका आपसमें स्थान बदल देना होगा, यानी दिये हुए न्यायका दीर्घवाक्य नवीन न्यायका ह्रस्ववाक्य हो जायगा और दिये हुए न्यायका ह्रस्ववाक्य नये न्यायका दीर्घवाक्य हो जायगा।

क (**K**) अपनेसे पहले वाक्यका प्रतिवर्तन बतलाता है। **क स** का तात्पर्य है पहिले प्रतिवर्तन फिर साधारण परिवर्तन तथा **स क** का अर्थ ठीक इसके विपरीत। यदि **स क** तीसरे स्वरके बाद आवें तो नये न्यायका निष्कर्ष पहले साधारणतया परिवर्तित फिर प्रतिवर्तित होगा।

क (**C**) जब शब्दके बीचमें आता है तब यह बतलाता है कि न्यायका

विलोम रूपान्तरण होगा। **बारोको** और **बोकार्डो** केवल दो ही संयोग ऐसे हैं जिनमें क (C) बीचमें आता है। पुराने तर्कशास्त्री इनका विलोम रूपान्तरण ही कर सकते थे। अब इनका अनुलोम रूपान्तरण भी हो सकता है। अनुलोम रूपान्तरणके लिये इन्हें क्रमशः **फ़ाक्सोको** (**Faksoko**) और **दोक्सामोस्क** (**Doksamosk**) कहते हैं।

शेष व्यंजनोंका प्रयोग निरर्थक है। ये केवल उच्चारणमें सहायता देनेके लिये प्रयुक्त किये गये हैं।

भाग १३. अपूर्ण संयोगोंका अनुलोम रूपान्तरण.

१. दूसरे आकारके संयोग.

सेसारे

(१) सेसारे — सिलारेन्ट

ए. कोई वि म नहीं है। स — ए. कोई म वि नहीं है।
आ. सब उ म है। — आ. सब उ म है।
∴ ए. कोई उ वि नहीं है। — ∴ ए. कोई उ वि नहीं है।

कामेस्ट्रेस

(२) कामेस्ट्रेस — सिलारेन्ट

आ. सब वि म है। — ए. कोई म उ नहीं है।
ए. कोई उ म नहीं है। — आ. सब वि म है।
∴ ए. कोई उ वि नहीं है। — ∴ ए. कोई वि उ नहीं है।
∴ कोई उ वि नहीं है। (परिवर्तनसे)

फेस्तीनो

(३) फेस्तीनो — फेरीओ

ए. कोई वि म नहीं है। स — ए. कोई म वि नहीं है।
ई. कुछ उ म है। — ई. कुछ उ म है।
∴ ओ. कुछ उ वि नहीं है — ∴ ओ. कुछ उवि नहीं है।

बारोको

(४) बारोको = फाक्सोको — फेरीओ

आ. सब वि म है। क स — ए. कोई अ-म वि नहीं है।
ओ. कुछ उ म नहीं है। — ई. कुछ उ अ-म है।
∴ ओ. कुछ उ वि नहीं है। क — ∴ ओ. कुछ उ वि नहीं है।

२. तृतीय आकारके संयोग.

(१) दाराप्ती	दारीई	दाराप्ती
आ. सब म वि है।	प आ. सब म वि है।	
आ. सब म उ है।	ई. कुछ उ म है।	
∴ ई. कुछ उ वि है।	∴ ई. कुछ उ वि है।	
(२) दीसामीस	दारीई	दीसामीस
ई. कुछ म वि है।	आ. सब म उ है।	
आ. सब म उ है।	ई. कुछ वि म है।	
∴ ई. कुछ उ वि है।	∴ ई. कुछ वि उ है।	
	∴ कुछ उ वि है।	
	(परिवर्तन से)	
(३) दातीसी	दारीई	दातीसी
आ. सब म वि है।	स आ. सब म वि है।	
ई. कुछ म उ है।	ई. कुछ उ म है।	
∴ ई. कुछ उ वि है।	∴ ई. कुछ उ वि है।	
(४) फेलाप्टोन	फेरीओ	फेलाप्टोन
ए. कोई म वि नहीं है।	ए. कोई म वि नहीं है।	
आ. सब म उ है।	ई. कुछ उ म है।	
∴ ओ. कुछ उ वि नहीं है।	∴ ओ. कुछ उ वि नहीं है।	
(५) बोकार्डो = दोक्सामोस्क	दारीई	बोकार्डो
ओ. कुछ म वि नहीं है।	आ. सब म उ है।	
आ. सब म उ है।	ई. कुछ अ-वि म है।	
∴ ओ. कुछ उ वि नहीं है।	∴ ई. कुछ अ-वि उ है।	
	(परिवर्तनसे)	
	∴ ई. कुछ उ अ-वि है।	
	(प्रतिवर्तनसे)	
	∴ ओ. कुछ उ वि नहीं है।	
(६) फेरीसोन	फेरीओ	फेरीसोन
ए. कोई म वि नहीं है।	ए. कोई म वि नहीं है।	
ई. कुछ म उ है।	ई. कुछ उ म है।	
∴ ओ. कुछ उ वि नहीं है।	∴ ओ. कुछ उ वि नहीं है।	

३. चतुर्थ आकारके संयोग.

ब्रामान्टीप	(१) ब्रामान्टीप आ. सब वि म है। आ. सब म उ है। ∴ ई. कुछ उ वि है।	बारबारा आ. सब म उ है। आ. सब वि म है। ∴ आ. सब वि उ है। ∴ ई. कुछ उ वि है। (परिवर्तनसे)
कामेनेस	(२) कामेनेस आ. सब वि म है। ए. कोई म उ नहीं है। ∴ ए. कोइ उ वि नहीं है।	सिलारेन्ट ए. कोई म उ नहीं है। आ. सब वि म है। ∴ ए. कोई वि उ नहीं है। ∴ कोई उ वि नहीं है। (परिवर्तनसे)
दीमारी	(३) दीमारीस ई. कुछ वि म है। आ. सब म उ है। ∴ ई. कुछ उ वि है।	दारीई आ. सब म उ है। ई. कुछ वि म है। ∴ ई. कुछ वि उ है। ∴ कुछ उ वि है। (परिवर्तनसे)
फेसापो	(४) फेसापो ए. कोई वि म नहीं है। आ. सब म उ है। ∴ ओ. कुछ उ वि नहीं है।	फेरीओ स ए. कोई म वि नहीं है। प ई. कुछ उ म है। ∴ ओ. कुछ उ वि नहीं है।
फ्रेसीसोन	(५) फ्रेसीसोन ए. कोई वि म नहीं है। ई. कुछ म उ है। ∴ ओ. कुछ उ वि नहीं है।	फेरीओ स ए. कोई म वि नहीं है। स ई. कुछ उ म है। ∴ ओ. कुछ उ वि नहीं है।

भाग १४. अपूर्ण संयोगोंका विलोम रूपान्तरण.

विलोम रूपान्तरण। **विलोम रूपान्तरणमें अपूर्ण संयोगोंके निष्कर्षको किसी पूर्ण संयोग की सहायतासे यह दिखला कर सत्य सिद्ध किया जाता है कि मूल निष्कर्ष का व्याघातक वाक्य असत्य है। अगर मूल निष्कर्षका व्याघातक वाक्य**

असत्य सिद्ध हो जाता है तो मूल निष्कर्ष सत्य सिद्ध हो जाता है। इसको मूर्खतापूर्ण परिवर्तन (Reductio ad Absurdum i.e. Reduction to Absurdity) भी कहा जाता है। क्योंकि इसमें यह मानकर चला जाता है कि दिये हुए निष्कर्षका व्याघातक वाक्य सत्य है और अन्तमें यह मान्यता झूठी सिद्ध होती है। जैसा कि स्मृति-सहायक पद्यके वर्णनमें बताया गया है, विलोम रूपान्तरण केवल **बारोको** और **बोकार्डो** संयोगोंका ही पहिले किया जाता था, किन्तु आजकल हम किसी भी अपूर्ण संयोगका विलोम रूपान्तरण कर सकते हैं। यहां हरेक अपूर्ण संयोगका विलोम रूपान्तरण किया जाता है।

१. द्वितीय आकारके संयोग.

द्वितीय आकार (सेसारे)

(१) **सेसारे.** ए. कोई वि म नहीं है।
आ. सब उ म है।
∴ ए. कोई उ वि नहीं है।

यदि दिया हुआ निष्कर्ष सत्य नहीं है तो उसका व्याघातक 'कुछ उ वि है' (ई) सत्य होगा। इस वाक्यको ह्रस्ववाक्य और मूल दीर्घवाक्य को दीर्घवाक्य मानकर हम पहिले आकारमें एक नया न्याय बनायेंगे:—

ए. कोई वि म नहीं है। (मूल दीर्घवाक्य)
ई. कुछ उ वि है। (दिये हुए निष्कर्षका व्याघातक)
∴ ओ. कुछ उ म नहीं है। (नया निष्कर्ष)

यह पहिले आकारका **फेरीओ** है जो एक प्रामाणिक संयोग है। इसमें वि मध्यमपद है और यह दीर्घवाक्यमें उद्देश्य तथा ह्रस्ववाक्यमें विधेय है।

यहां हम देखते हैं कि नया निष्कर्ष मूल ह्रस्ववाक्य 'सब उ म है' का व्याघातक है, जिसे न्यायके नियमोंके अनुसार सत्य होना चाहिए। अतः इसका व्याघातक नया निष्कर्ष अवश्य ही असत्य होगा। इसके असत्य होनेका क्या कारण है? असत्यता तार्किक प्रक्रियाके कारण नहीं

हो सकती क्योंकि वह तो प्रामाणिक संयोग फेरिओ है, और न दीर्घवाक्य के कारण हो सकती है क्योंकि वह तो वही है जो मूल दीर्घवाक्य है। अतः इसकी असत्यता नये ह्रस्ववाक्यके कारण है, या दूसरे शब्दोंमें कहा जा सकता है कि नया ह्रस्ववाक्य असत्य है। अतः इसका व्याघातक वाक्य अर्थात् मूल निष्कर्ष सत्य है।

टिप्पणी. यहां पर मूल निष्कर्षके व्याघातकको ह्रस्ववाक्य माना गया है तथा दीर्घवाक्य मूल न्याय ही का ले लिया गया है। इसके विपरीत यदि मूल निष्कर्षके व्याघातक को हम दीर्घवाक्य मानते और ह्रस्ववाक्य वही रखते तो यह प्रथम आकारमें प्रामाणिक संयोग नहीं होता। अनुलोम तथा विलोम दोनों प्रकारके रूपान्तरणमें मूल **न्यायको प्रथम आकारके किसी भी संयोगमें परिवर्तित कर देना आवश्यक है।** अतः विलोम रूपान्तरणमें मूल निष्कर्षके व्याघातकको दीर्घवाक्य या ह्रस्ववाक्य कोई भी माना जा सकता है क्योंकि यह तथा मूल न्यायसे लिया हुआ दूसरा आधारवाक्य प्रथम आकारके प्रामाणिक संयोगके आधारवाक्य हैं। कभी-कभी मूल निष्कर्षके व्याघातकको हम इच्छानुसार दीर्घवाक्य या ह्रस्ववाक्य कोई भी मान सकते हैं क्योंकि इन दोनों स्थितियोंमें मूल न्यायसे लिये गये दूसरे आधारवाक्यके सहयोगसे प्रथम आकारका प्रामाणिक संयोग बन जाता है।

कामेस्ट्रेस

(२) **कामेस्ट्रेस.** आ. सब वि म है।
ए. कोई उ म नहीं है।
∴ ए. कोई उ वि नहीं है।

यदि दिया हुआ निष्कर्ष सत्य नहीं है तो उसका व्याघातक 'कुछ उ वि है' अवश्य सत्य होगा। इस वाक्यको ह्रस्ववाक्यके रूपमें लेकर और मूल दीर्घवाक्यको दीर्घवाक्यके रूपमें लेकर पहिले आकारमें एक नया न्याय प्राप्त होता है—

आ. सब वि म है।
ई. कुछ उ वि है।
∴ ई. कुछ उ म है। दारीई के अनुसार (वि मध्यमपद है)

यहां नया निष्कर्ष मूल ह्रस्ववाक्यका व्याघातक है, जिसे अवश्य सत्य होना चाहिए। अतः नया निष्कर्ष असत्य है। यह असत्यता किस कारण है? यह असत्यता तर्क-प्रक्रियाके दूषित होनेके कारण नहीं हो सकती क्योंकि वह तो प्रामाणिक संयोग **दारीई** है, और न नये दीर्घवाक्य के कारण हो सकती है क्योंकि वह तो वही है जो मूल दीर्घवाक्य है। अतः नये निष्कर्षकी असत्यता नये ह्रस्ववाक्यकी असत्यताके कारण होनी चाहिए। अतः जब नया ह्रस्ववाक्य असत्य सिद्ध हो चुका है तो उसके व्याघातक अर्थात् मूल निष्कर्षको अवश्य सत्य होना चाहिए।

(३) **फेस्तीनो**. ए. कोई वि म नहीं है। फेस्तीनो
ई. कुछ उ म है।
∴ ओ. कुछ उ वि नहीं है।

यदि निष्कर्ष सत्य नहीं है तो इसका व्याघातक 'सब उ वि है' अवश्य सत्य होगा। इसे ह्रस्ववाक्य और मूल दीर्घवाक्यको दीर्घवाक्य मानकर निम्नलिखित संयोग प्राप्त होता है—

ए. कोई वि म नहीं है।
आ. सब उ वि है।
∴ ए. कोई उ म नहीं है। सिलारेन्ट के अनुसार (वि मध्यमपद है)

यह नया संयोग प्रथम आकारका प्रामाणिक संयोग **सिलारेन्ट** है। इसका निष्कर्ष 'कोई उ म नहीं है' मूल ह्रस्ववाक्यका व्याघातक है। दो व्याघातक वाक्य एक साथ सत्य नहीं हो सकते और मूल ह्रस्ववाक्य दिये हुए होनेके कारण सत्य माना जायगा। अतः नया निष्कर्ष असत्य है। इसकी असत्यता या तो तर्क-प्रक्रियाके दोषपूर्ण होनेके कारण होगी। या किसी आधारवाक्यके असत्य होनेके कारण होगी। तर्क-प्रक्रिया प्रथम आकारका प्रामाणिक संयोग **सिलारेन्ट** है, अतः दोषपूर्ण नहीं हो सकती। इससे स्पष्ट है कि नये आधारवाक्योंमें से किसी एकको असत्य होना चाहिए। नया दीर्घवाक्य वही है जो मूल दीर्घवाक्य है, इसलिए वह असत्य नहीं हो सकता। अतः नये ह्रस्ववाक्यको असत्य होना चाहिए,

और फलतः उसके व्याघातक वाक्य अर्थात् मूल निष्कर्षको सत्य होना चाहिए।

बारोको

(४) **बारोको.** आ. सब वि म है।
ओ. कुछ उ म नहीं है।
∴ ओ. सब उ वि नहीं है।

यदि निष्कर्ष सत्य नहीं है तो इसका व्याघातक वाक्य 'सब उ वि है' अवश्य सत्य होगा। 'सब उ वि है' को ह्रस्ववाक्य बनाकर और मूल दीर्घवाक्यको दीर्घवाक्य बनाकर एक नया-न्याय तैयार हो सकता है। इस प्रकार—

आ. सब वि म है।
आ. सब उ वि है।
∴ आ. सब उ म है।

यह युक्ति **बारबारा** है क्योंकि मध्यमपद वि है। नया निष्कर्ष असत्य है क्योंकि यह मूल ह्रस्ववाक्यका व्याघातक है। इसकी असत्यता का क्या कारण है? तर्क-प्रक्रिया पहिले आकारके प्रामाणिक संयोग **बारबारामें** होनेके कारण दोष-रहित है और दीर्घवाक्य मूल दीर्घवाक्य होनेके कारण सत्य दिया हुआ है। अतः नये ह्रस्ववाक्यके असत्य होनेके कारण ही नया निष्कर्ष असत्य हो सकता हे। जब इस प्रकार नया ह्रस्ववाक्य असत्य सिद्ध हो गया तो उसका व्याघातक अर्थात् मूल निष्कर्ष अवश्य ही सत्य होगा।

टिप्पणी. विलोम विधिसे दूसरे आकारके संयोगोंका पहिले आकारके संयोगोंमें रूपान्तर करनेमें हमें दिये हुए निष्कर्षका व्याघातक वाक्य पहिले आकारका एक प्रामाणिक संयोग प्राप्त करनेके लिये ह्रस्ववाक्यके रूपमें लेना पड़ता है।

२. तीसरे आकारके संयोग.

तीसरा आकार दाराप्ती

(१) दाराप्ती. आ. सब म वि है।
आ. सब म उ है।
∴ ई. कुछ उ वि है।

यदि दिया हुआ निष्कर्ष सत्य नहीं है तो उसका व्याघातक वाक्य 'कोई उ वि नहीं है' सत्य होगा। इस नये वाक्यको दीर्घवाक्य और मूल ह्रस्ववाक्यको ह्रस्ववाक्यके रूपमें लेकर निम्नलिखित न्याय बनता है :—

ए. कोई उ वि नहीं है।
आ. सब म उ है।
∴ ए. कोई म वि नहीं है। सिलारेन्टके अनुसार (उ मध्यमपद है)

इस नये न्यायका निष्कर्ष मूल दीर्घवाक्यका विपरीत वाक्य है, अतः असत्य है। इसके असत्य होनेका क्या कारण है? तर्क-प्रक्रिया प्रथम आकारके प्रामाणिक संयोग **सिलारेन्टमें** होनेके कारण निर्दोष है और नया ह्रस्ववाक्य मूल ह्रस्ववाक्य ही है। अतः नये दीर्घवाक्यके असत्य होनेके कारण ही नया निष्कर्ष असत्य होगा। जब नया दीर्घवाक्य असत्य सिद्ध हो गया तो उसके व्याघातक वाक्य अर्थात् मूल निष्कर्षको अवश्य ही सत्य होना चाहिए।

(२) **दीसामीस**. ई. कुछ म वि है। दीसामीस
आ. सब म उ है।
∴ ई. कुछ उ वि है।

यदि दिया हुआ निष्कर्ष असत्य है तो उसका व्याघातक वाक्य 'कोई उ वि नहीं है' अवश्य ही सत्य होगा। इस नये वाक्यको दीर्घवाक्य और मूल ह्रस्ववाक्यको ह्रस्ववाक्य मानकर निम्नलिखित न्याय प्राप्त होता है :—

ए. कोई उ वि नहीं है।
आ. सब म उ है।
∴ ए. कोई म वि नहीं है। (उ मध्यमपद है)

चूंकि इस नये न्यायका निष्कर्ष मूल दीर्घवाक्यका व्याघातक है, इसलिए यह असत्य है। इसकी असत्यता तर्क-प्रक्रियाके दोषपूर्ण होनेके कारण नहीं है क्योंकि तर्क-प्रक्रिया पूर्ण संयोग सिलारेन्टमें है। नया ह्रस्ववाक्य वही है जो मूल ह्रस्ववाक्य है, इसलिए वह भी असत्य नहीं हो सकता। अतः नये दीर्घवाक्यको असत्य होना चाहिए और जब यह

असत्य सिद्ध हो गया तो इसका व्याघातक अर्थात् मूल निष्कर्ष अवश्य ही सत्य होगा।

दातीसी

(३) दातीसी. आ. सब म वि है।
ई. कुछ म उ है।
∴ ई. कुछ उ वि है।

यदि दिया हुआ निष्कर्ष असत्य है तो इसका व्याघातक वाक्य 'कोई उ वि नहीं है' अवश्य सत्य होगा। इस नये वाक्यको दीर्घवाक्य और मूल ह्रस्ववाक्यको ह्रस्ववाक्य बनाकर निम्नलिखित न्याय बनता है :—

ए. कोई उ वि नहीं है।
ई. कुछ म उ है।
∴ ओ. कुछ म वि नहीं है। (उ मध्यमपद है)

नया निष्कर्ष मूल दीर्घवाक्यका व्याघातक होनेके कारण असत्य है। अब इसके असत्य होनेकी वजह ढूंढनी चाहिए। तर्क-प्रक्रिया तो पूर्ण संयोग फेरीओमें होनेके कारण निर्दोष है और नया ह्रस्ववाक्य भी सत्य है क्योंकि यह मूल ह्रस्ववाक्य ही है। अतः नया निष्कर्ष नये दीर्घवाक्यके असत्य होनेसे ही असत्य हो सकता है। और जब नया दीर्घवाक्य असत्य सिद्ध हो गया तो उसका व्याघातक अर्थात् मूल निष्कर्ष सत्य सिद्ध हुआ।

फ़ेलाप्टोन

(४) फ़ेलाप्टोन. ए. कोई म वि नहीं है।
आ. सब म उ है।
∴ ओ. कुछ उ वि नहीं है।

यदि निष्कर्ष सत्य नहीं है तो उसका व्याघातक वाक्य 'सब उ वि है' अवश्य सत्य होगा। इस नये वाक्यको दीर्घवाक्य और मूल ह्रस्ववाक्यको ह्रस्ववाक्य बनाकर निम्नलिखित न्याय बनता है :—

आ. सब उ वि है।
आ. सब म उ है।
∴ आ. सब म वि है।

नया निष्कर्ष मूल दीर्घवाक्यका विपरीत वाक्य है इसलिए असत्य है। इसके असत्य होनेका कारण तर्क-प्रक्रिया और नये आधारवाक्योंमें देखना चाहिए। तर्क-प्रक्रिया पूर्ण संयोग बारबारामें होनेके कारण निर्दोष है और नया ह्रस्ववाक्य मूल ह्रस्ववाक्य होनेसे असत्य नहीं हो सकता। अतः नये दीर्घवाक्यको असत्य होना चाहिए और उसके व्याघातक मूल निष्कर्षको सत्य होना चाहिए।

(५) **बोकार्डो.** ओ. कुछ म वि नहीं है। **बोकार्डो**
आ. सब म उ है।
∴ ओ. कुछ उ वि नहीं है।

यदि दिया हुआ निष्कर्ष असत्य है तो इसका व्याघातक वाक्य 'सब उ वि है' सत्य होगा। इस नये वाक्यको दीर्घवाक्य और मूल ह्रस्व-वाक्यको ह्रस्ववाक्य मानकर निम्नलिखित न्याय बनता है :—

आ. सब उ वि है।
आ. सब म उ है।
∴ आ. सब म वि है। (उ मध्यमपद है)

नया निष्कर्ष मूल दीर्घवाक्यका व्याघातक होनेसे असत्य है। इसकी असत्यता तर्क-प्रक्रियाके दूषित होनेसे या किसी आधारवाक्यके असत्य होनेसे होनी चाहिए। लेकिन तर्क-प्रक्रिया पूर्ण संयोग बारबारामें होनेसे दूषित नहीं हो सकती और नया ह्रस्ववाक्य भी असत्य नहीं हो सकता क्योंकि वह मूल ह्रस्ववाक्य ही है। अतः नये दीर्घवाक्यको असत्य होना चाहिए और फलतः उसके व्याघातक वाक्य यानी मूल निष्कर्षको सत्य होना चाहिए।

(६) **फ़ेरीसोन.** ए. कोई म वि नहीं है। **फ़ेरीसोन**
ई. कुछ म उ है।
∴ ओ. कुछ उ वि नहीं है।

यदि निष्कर्ष सत्य नहीं है तो उसका व्याघातक वाक्य 'सब उ वि है' सत्य होगा। इस नये वाक्यको दीर्घवाक्य और मूल ह्रस्ववाक्यको

ह्रस्ववाक्य बनाकर निम्नलिखित संयोग प्राप्त होता है :—

आ. सब उ वि है।
ई. कुछ म उ है।
∴ ई. कुछ म वि है।

नया निष्कर्ष मूल दीर्घवाक्यका व्याघातक है, इसलिए असत्य है। इसकी असत्यता न तो तर्क-प्रक्रियाके ग़लत होनेसे हो सकती है जो कि पूर्ण संयोग दारीईमें है, और न ह्रस्ववाक्यके असत्य होनेसे जो कि मूल ह्रस्ववाक्य ही है। अतः उसके असत्य होनेका कारण नये दीर्घवाक्यका असत्य होना ही होना चाहिए, और मूल निष्कर्षको जो कि नये दीर्घवाक्यका व्याघातक है, सत्य होना चाहिए, न कि असत्य, जैसा कि हम मानकर चले हैं।

टिप्पणी. तीसरे आकारके संयोगोंका विलोम रूपान्तर करनेमें केवल दिये हुए निष्कर्षके व्याघातक वाक्यको नये न्यायका दीर्घवाक्य बना देनेसे पहिले आकारका प्रामाणिक संयोग बन जाता है।

३. चौथे आकारके संयोग.

ब्रामान्टीप

(१) **ब्रामान्टीप.** आ. सब वि म है।
आ. सब म उ है।
∴ ई. कुछ उ वि है।

यदि निष्कर्ष सत्य नहीं है तो उसका व्याघातक वाक्य 'कोई उ वि नहीं है' अवश्य सत्य होगा। इस नये वाक्यको दीर्घवाक्य और मूल ह्रस्ववाक्यको ह्रस्ववाक्य मानकर निम्नलिखित संयोग बनता है :—

ए. कोई उ वि नहीं है।
आ. सब म उ है।
∴ ए. कोई म वि नहीं है। (उ मध्यमपद है)
∴ ए. कोई वि म नहीं है। (परिवर्तनके द्वारा)

चूंकि 'कोई वि म नहीं है' मूल दीर्घवाक्यका विपरीत है, इसलिए असत्य है। इसकी असत्यता परिवर्तनकी प्रक्रियाके दूषित होनेके कारण

हो सकती है या आधारवाक्य अर्थात् नये निष्कर्षके असत्य होनेके कारण। परिवर्तन नियमानुसार होनेसे निर्दोष है, इसलिए नये निष्कर्षको असत्य होना चाहिए।

यदि नया निष्कर्ष असत्य है तो उसके असत्य होनेका क्या कारण हो सकता है? तर्क-प्रक्रिया पूर्ण संयोग सिलारेन्टमें होनेके कारण निर्दोष है और नया ह्रस्ववाक्य मूल ह्रस्ववाक्य ही है। अतः नये निष्कर्षके असत्य होनेका कारण नये दीर्घवाक्यका असत्य होना ही हो सकता है। और जब नया दीर्घवाक्य असत्य है तो उसका व्याघातक वाक्य यानी मूल निष्कर्ष सत्य सिद्ध हुआ।

(२) **कामेनेस.** आ. सब वि म है। कामेनेस
ए. कोई म उ नहीं है।
∴ ए. कोइ उ वि नहीं है।

यदि निष्कर्ष सत्य नहीं है तो उसका व्याघातक वाक्य 'कुछ उ वि है' अवश्य सत्य होगा। इस नये वाक्यको ह्रस्ववाक्य और मूल दीर्घवाक्यको दीर्घवाक्य मानकर निम्नलिखित संयोग प्राप्त होता है:—

आ. सब वि म है।
ई. कुछ उ वि है।
∴ ई. कुछ उ म है। (वि मध्यमपद है)
∴ ई. कुछ म उ है। (परिवर्तनके द्वारा)

यहां 'कुछ म उ है' असत्य है क्योंकि यह वाक्य मूल ह्रस्ववाक्यका व्याघातक है। यह नये निष्कर्षके परिवर्तनसे प्राप्त हुआ है और परिवर्तन नियमके अनुसार ही किया गया है, इसलिए नये निष्कर्षको असत्य होना चाहिए।

नये निष्कर्षकी असत्यताका क्या कारण है? तर्क-प्रक्रिया तो निर्दोष है क्योंकि वह पूर्ण संयोग दारीईमें है। नया दीर्घवाक्य भी असत्य नहीं हो सकता क्योंकि वह मूल दीर्घवाक्य ही है। इसलिए नये निष्कर्षके असत्य होनेका कारण नये ह्रस्ववाक्यका असत्य होना ही हो सकता है।

और जब नया ह्रस्ववाक्य असत्य है तो उसका व्याघातक अर्थात् मूल निष्कर्ष अवश्य ही सत्य होगा।

दीमारीस

(३) **दीमारीस.** ई. कुछ वि म है।
आ. सब म उ है।
∴ ई. कुछ उ वि है।

यदि निष्कर्ष सत्य नहीं है तो उसका व्याघातक 'कोई उ वि नहीं है' अवश्य ही सत्य होगा। इस नये वाक्यको दीर्घवाक्य और मूल ह्रस्ववाक्यको ह्रस्ववाक्य बनाकर निम्नलिखित नया संयोग बनता है :—

ए. कोई उ वि नहीं है।
आ. सब म उ है।
∴ ए. कोई म वि नहीं है। (उ मध्यमपद है)
∴ ए. कोई वि म नहीं है। (परिवर्तनके द्वारा)

'कोई वि म नहीं है' मूल दीर्घवाक्यका व्याघातक होनेसे असत्य है और इसके असत्य होनेसे नया निष्कर्ष, जिसका कि यह परिवर्तित रूप है, असत्य है। नये निष्कर्षके असत्य होनेका कारण नये दीर्घवाक्यका असत्य होना ही हो सकता है, क्योंकि तर्क-प्रक्रिया पूर्ण संयोग सिलारेन्टमें होनेके कारण निर्दोष है और नया ह्रस्ववाक्य वही है जो मूल ह्रस्ववाक्य है। अतः नया दीर्घवाक्य असत्य है और उसका व्याघातक वाक्य अर्थात् मूल निष्कर्ष सत्य है।

फ़ैसापो

(४) **फ़ैसापो.** ए. कोई वि म नहीं है।
आ. सब म उ है।
∴ ओ. कुछ उ वि नहीं है।

यदि निष्कर्ष सत्य नहीं है तो इसका व्याघातक वाक्य 'सब उ वि है' अवश्य सत्य होगा। इस नये वाक्यको दीर्घवाक्य और मूल ह्रस्ववाक्यको ह्रस्ववाक्य बनाकर निम्नलिखित संयोग प्राप्त होता है :—

आ. सब उ वि है।
आ. सब म उ है।
∴ आ. सब म वि है। (उ मध्यमपद है)
∴ ई. कुछ वि म है। (परिवर्तनके द्वारा)

वाक्य 'कुछ वि म है' मूल दीर्घवाक्यका व्याघातक होनेसे असत्य है और इसके असत्य होनेका कारण नये निष्कर्षका असत्य होना ही हो सकता है, क्योंकि नये निष्कर्षका ही परिवर्तित रूप यह है। नया निष्कर्ष केवल तभी असत्य हो सकता है जब नया दीर्घवाक्य असत्य हो, क्योंकि तर्क-प्रक्रिया पूर्ण संयोग बारबारामें होनेसे निर्दोष है और नया ह्रस्ववाक्य भी मूल ह्रस्ववाक्य होनेसे असत्य नहीं है। चूंकि नया दीर्घवाक्य असत्य सिद्ध हो गया है। इसलिए इसका व्याघातक वाक्य अर्थात् मूल निष्कर्ष अवश्य ही सत्य होगा।

टिप्पणी. दिये हुए निष्कर्षके व्याघातक वाक्यको ह्रस्ववाक्य बनाकर भी प्रथम आकारका प्रामाणिक संयोग प्राप्त हो सकता है।

(५) **फ़ेसीसोन.** ए. कोई वि म नहीं है। फ़ेसीसोन
ई. कुछ म उ है।
∴ ओ. कुछ उ वि नहीं है।

यदि निष्कर्ष सत्य नहीं है तो उसका व्याघातक वाक्य 'सब उ वि है' अवश्य सत्य होगा। इस नये वाक्यको दीर्घवाक्य और मूल ह्रस्ववाक्य को ह्रस्ववाक्य बनाकर निम्नलिखित नया संयोग बनता है:—

आ. सब उ वि है।
ई. कुछ म उ है।
∴ ई. कुछ म वि है। (उ मध्यमपद है)
∴ ई. कुछ वि म है। (परिवर्तनके द्वारा)

'कुछ वि म है' वाक्य मूल दीर्घवाक्यका व्याघातक होनेके कारण असत्य है और इसके असत्य होनेसे वह वाक्य भी असत्य हुआ जिसका यह परिवर्तित रूप है, अर्थात् नया निष्कर्ष भी असत्य है। नया निष्कर्ष

तर्क-प्रक्रियाके दूषित होनेसे असत्य नहीं है क्योंकि तर्क-प्रक्रिया पूर्ण संयोग दारीईमें होनेके कारण सत्य है, और न यह नये ह्रस्ववाक्यके असत्य होनेसे असत्य है क्योंकि नया ह्रस्ववाक्य वही है जो मूल ह्रस्ववाक्य है और इसलिए उसे सत्य मानना पड़ेगा। अतः नये दीर्घवाक्यको असत्य होना चाहिए और फलतः इसके व्याघातक वाक्य अर्थात् मूल निष्कर्षको सत्य होना चाहिए।

फ़ेसीसोन को हम दूसरे प्रकारसे भी विलोम-विधिसे सत्य सिद्ध कर सकते हैं। इसके लिये हम दिये हुए निष्कर्षके व्याघातक वाक्यको ह्रस्ववाक्य और मूल दीर्घवाक्यको दीर्घवाक्य बनाकर निम्नलिखित संयोग प्राप्त करते हैं :—

ए. कोई वि म नहीं है।
आ. सब उ वि है।
∴ ए. कोई उ म नहीं है। (वि मध्यमपद है)
∴ ए. कोई म उ नहीं है। (परिवर्तनके द्वारा)

वाक्य 'कोई म उ नहीं है' मूल ह्रस्ववाक्यका व्याघातक होनेसे असत्य है और इसके असत्य होनेसे वह वाक्य भी असत्य है जिसका यह परिवर्तित रूप है यानी नया निष्कर्ष असत्य है। नया निष्कर्ष न तो तर्क-प्रक्रियाके कारण असत्य है और न नये दीर्घवाक्यके कारण क्योंकि तर्क-प्रक्रिया पूर्ण संयोग सिलारेन्टमें होनेसे निर्दोष है और नया दीर्घवाक्य वही है जो मूल दीर्घवाक्य है। अतः नये ह्रस्ववाक्यको असत्य होना चाहिए और फलतः इसके व्याघातक वाक्य यानी मूल निष्कर्षको सत्य होना चाहिए।

इस प्रकार हम देखते हैं कि दिये हुए निष्कर्षका व्याघातक वाक्य लेकर पहिले आकारमें एक नया न्याय बनाया जा सकता है। नये न्यायमें उसे दीर्घवाक्य भी बनाया जा सकता है और ह्रस्ववाक्य भी, क्योंकि दोनों ही तरहसे उसे दिये हुए न्यायके दूसरे आधारवाक्यसे जोड़नेसे पहिले आकारका प्रामाणिक संयोग मिल जाता है।

संक्षेप में :—

(१) दूसरे आकारके संयोगों तथा कामेनेस (चतुर्थ आकार) को विलोम विधिसे रूपान्तरित करनेके लिये दिये हुए निष्कर्षका व्याघातक वाक्य ह्रस्ववाक्यके रूपमें लेना पड़ता है।

(२) तीसरे और चौथे आकारके संयोगोंको (कामेनेसको छोड़कर) विलोम विधिसे रूपान्तरित करनेके लिये दिये हुए निष्कर्षका व्याघातक वाक्य दीर्घवाक्यके रूपमें लेना पड़ता है।

(३) फ्रेसापो और फ्रेसीसोनको विलोम विधिसे रूपान्तरित करने के लिये दिये हुए निष्कर्षका व्याघातक वाक्य दीर्घवाक्य या ह्रस्ववाक्यके रूपमें लिया जा सकता है।

भाग १५. मौलिक, निर्बल और सबल न्याय (Fundamental, Weakened and Strengthened Syllogism).

(क) मौलिक और अमौलिक न्याय.

मौलिक न्याय वह है जिसमें चरमपदोंमें से कोई भी पद किसी भी आधारवाक्यमें व्याप्त न हो जब तक कि वह निष्कर्षमें व्याप्त न हो, और जिसमें मध्यमपद केवल एक ही बार व्याप्त हो, अर्थात् कोई भी पद आधारवाक्योंमें आवश्यकतासे अधिक व्याप्त न हो।

मौलिक न्याय वह है जिसमें कोई भी पद आवश्यकतासे अधिक व्याप्त न हो।

न्यायके नियमानुसार मध्यमपदको न्यायमें कमसे कम एक बार व्याप्त होना चाहिए और किसी भी पदको निष्कर्षमें तब तक व्याप्त न होना चाहिए जब तक वह आधारवाक्योंमें व्याप्त न हो।

इस प्रकार यदि हम न्यायके १९ प्रामाणिक संयोगोंकी जांच करते हैं तो हमें मालूम होता है कि दाराप्ती (तृतीय आकार), फेलाप्टोन (तृ० आ०) और फेसापो (च० आ०) में मध्यमपद दोनों आधारवाक्योंमें व्याप्त है और एक संयोग यानी ब्रामान्टीप (च० आ०) में दीर्घपद दीर्घवाक्यमें व्याप्त है लेकिन निष्कर्षमें व्याप्त नहीं है। अतः हम कह

दाराप्ती, फेलाप्टोन, फेसापो और ब्रामान्टीप मौलिक नहीं है।

सकते हैं कि **दाराप्ती, फेलाप्टोन** और **फेसापो** में मध्यमपद एक बार आवश्यकतासे अधिक व्याप्त है और **ब्रामान्टीप** में दीर्घपद आवश्यकता न होने पर भी दीर्घवाक्यमें व्याप्त है, या दूसरे शब्दोंमें हम कह सकते हैं कि इस प्रकारकी व्याप्ति निष्कर्षको सत्य सिद्ध करनेके लिये आवश्यक नहीं है। यदि दाराप्ती, फेलाप्टोन और फेसापोंमें मध्यमपद एक ही बार व्याप्त होता और ब्रामान्टीपमें दीर्घपद व्याप्त न होता, तो भी निष्कर्ष वही निकलता जो वस्तुतः निकाला गया है।

इस प्रकार १९ प्रामाणिक संयोगोंमें से १५ संयोग मौलिक हैं और ४ संयोग यानी दाराप्ती, फेलाप्टोन,फेसापो और ब्रामान्टीप अमौलिक हैं।

(ख) निर्बल न्याय.

निर्बल न्यायमें निष्कर्ष विशेष वाक्य होता है जबकि आधारवाक्यों से सामान्य वाक्य निष्कर्ष निकाला जा सकता है।

निर्बल न्याय वह है जिसमें विशेष निष्कर्ष निकाला जाता है जबकि आधारवाक्योंके अनुसार सामान्य निष्कर्ष निकलना चाहिए। उदाहरणके लिये, **आआ** के योगसे पहिले आकारमें **आ** निष्कर्ष निकलता है जिसे **बारबारा** कहते हैं। जहां **आ** निष्कर्ष निकल सकता है वहां **ई** निष्कर्ष भी निकल सकता है, क्योंकि सामान्यकी सत्यतामें विशेष की सत्यता गर्भित रहती है। इसी प्रकार जहां निष्कर्ष **ए** होता है वहां **ओ** भी हो सकता है। इसलिए जहां सामान्य निष्कर्ष निकाला जाता है वहां विशेष निष्कर्ष भी निकाला जा सकता है। इसलिए **जहां एक न्यायमें विशेष वाक्य निष्कर्ष निकाला जाता है जब कि सामान्यवाक्य निष्कर्ष निकल सकता है वहां न्यायको निर्बल न्याय या उपाश्रित संयोग (Subaltern Mood) कहते हैं। इस हालतमें निष्कर्ष ही निर्बल होता है।**

पांच निर्बल न्याय हैं।

१९ प्रामाणिक संयोगोंमें से ५ संयोग अर्थात् **बारबारा, सिलारेन्ट, सेसारे, कामेस्ट्रेस** और **कामेनेस** ऐसे हैं जिनके निष्कर्ष सामान्य वाक्य हैं। ये सभी न्याय निर्बल बनाये जा सकते हैं और इन निर्बल न्यायोंको हम **बारबारा** (आ आ ई) **सिलारेन्ट** (ए आ ओ) **सेसारो** (ए आ ओ)। **कामेस्ट्रोस** (आ ए ओ) तथा **कामेनोस** (आ ए ओ) कह सकते हैं।

तीसरे आकारमें सभी निष्कर्ष विशेष हैं, अतः किसी को निर्बल नहीं बनाया जा सकता।

(ग) सबल न्याय.

सबल न्याय वह है जिसमें आधारवाक्योंमें से एक वाक्य आवश्यकता से अधिक सबल होता है यद्यपि निष्कर्ष उससे कम बलवाले वाक्यसे भी निकल सकता है। कहनेका मतलब यह है कि दोनों सामान्य आधारवाक्योंमें से एक वाक्यको विशेषकर देने पर भी निष्कर्ष वही निकलेगा। जैसे, दाराप्तीको लीजिये :—

सबल न्याय में एक आधारवाक्य सामान्य होता है लेकिन उसके विशेष होने पर भी निष्कर्ष वही निकलता है।

दाराप्ती
आ. सब म वि है।
आ. सब म उ है।
∴ ई. कुछ उ वि है।

यदि हम दिये हुए दीर्घवाक्य आ के स्थान पर ई वाक्यको रख दें तो भी वहीं निष्कर्ष निकलेगा। इस प्रकार—

ई. कुछ म वि है।
आ. सब म उ है।
∴ ई. कुछ उ वि है।

इस संयोगको **दीसामीस** कहते हैं।

इसी प्रकार यदि दिये हुए ह्रस्ववाक्यकी जगह पर जो कि सामान्य (आ) है विशेष वाक्य (ई) रख दिया जाय तब भी वही निष्कर्ष निकलेगा। इसे **दातीसी** कहते हैं।

इस तरह हम देखते हैं कि सभी न्याय जो मौलिक नहीं हैं (दाराप्ती, फेलाप्टोन, फेसापो और ब्रामान्टीप) सबल न्याय हैं। हम दाराप्तीकी जांच कर चुके हैं। फेलाप्टोन (तृ० आ०) जिसका दीर्घवाक्य ए है अनावश्यक रूपसे सबल है। यदि ओ दीर्घवाक्य हो तब भी निष्कर्ष वही निकलेगा (बोकार्डो)। ब्रामान्टीप (च० आ०) में

दीर्घवाक्य आ की जगह ई बनाया जा सकता है (दीमारीस) और फेसापो (च० आ०) में ह्रस्ववाक्य आ की जगह ई हो सकता है (फ्रेसीसोन)।

यहां यह बतला देना चाहिए कि इन चार संयोगों (दाराप्ती, फेलाप्टोन, ब्रामान्टीप और फेसापो) के अलावा सभी उपाश्रित संयोग, केवल कामेनोसको छोड़कर सबल न्याय हैं। जहां तक कामेनोसका सम्बन्ध है, हम यह नहीं कह सकते कि कोई आधारवाक्य आवश्यकतासे अधिक सबल है क्योंकि यदि हम किसी आधारवाक्यको विशेष बनाते हैं तो कोई निष्कर्ष नहीं निकलता।

कामेनोस

आ. सब वि म है।
ए. कोई म उ नहीं है
∴ ओ. कुछ उ वि नहीं है।

कामेनोस न मौलिक है और न सबल।

इसमें यदि हम दीर्घवाक्यमें आ के स्थान पर ई रखते हैं या ह्रस्ववाक्यमें ए के स्थान पर ओ रखते हैं तो कोई निष्कष न निकलेगा। इसलिए कामेनोसको सबल न्याय नहीं कहा जा सकता।

यह स्मरण रखना चाहिए कि **कामेनोस** में ह्रस्ववाक्यमें ह्रस्वपद अनावश्यक रूपसे व्याप्त है अर्थात् ह्रस्ववाक्यमें व्याप्त होते हुए भी निष्कर्षमें वह अव्याप्त है। इस प्रकार यह मौलिक न्याय नहीं है किन्तु यह सबल न्याय भी नहीं कहा जा सकता।

शेष चारों उपाश्रित संयोग अर्थात् **बारबारी, सिलारोन्ट, सेसारो** और **कामेस्ट्रोस** सबल न्याय हैं। बारबारीमें ह्रस्ववाक्यको ई करके निर्बल बनाया जा सकता है और फिर भी निष्कर्ष वही निकलेगा अर्थात् पहिले आकारमें दारीई (आ ई ई) संयोग बनेगा। सिलारोन्टमें ह्रस्ववाक्य ई बनाया जा सकता है और फिर भी निष्कर्ष वही निकलेगा (फेरीओ)। सेसारो में ह्रस्ववाक्य ई हो सकता है और फिर भी निष्कर्ष ओ रहेगा (फेस्तीनो)। अन्तमें, कामेस्ट्रोसमें ह्रस्ववाक्य ओ हो सकता है और निष्कर्ष ओ ही रहेगा (बारोको)।

यदि हम उपाश्रित संयोगों यानी निर्बल न्यायोंको भी शामिल कर दें तो सबल न्याय ८ होते हैं :— सबल न्यायों की संख्या ८ है।

प्रथम आकारमें,	बारबारा,	सिलारोन्ट
द्वितीय आकारमें,	सेसारो,	कामेस्ट्रोस
तृतीय आकारमें,	दाराप्ती,	फ़ेलाप्टोन
चतुर्थ आकारमें,	ब्रामान्टीप,	फ़ेसापो

अगर हम निर्बल न्यायोंको भी शामिल कर लें तो अमौलिक संयोग पांच होते हैं—दाराप्ती, फेलाप्टोन, ब्रामान्टीप, फेसापो और कामेनोस।

संक्षेपमें, न्याय सबल तब कहलाता है जब उसका एक आधारवाक्य आवश्यकतासे अधिक सबल होता है तथा न्याय निर्बल तब कहलाता है जब उसका निष्कर्ष निर्बल होता है। सबल न्यायमें दोनों आधारवाक्योंमें से एक निर्बल बनाया जा सकता है और निर्बल न्यायमें निष्कर्ष अधिक बलबान् हो सकता है।

भाग १६. शुद्ध हेतुफलाश्रित तथा शुद्ध वैकल्पिक न्याय.

अब तक हम शुद्ध निरपेक्ष न्यायका ही वर्णन करते रहे जिसमें तीनों वाक्य निरपेक्ष होते हैं। जिस न्यायमें तीनों वाक्य हेतुफलाश्रित होते हैं उसे शुद्ध हेतुफलाश्रित न्याय कहते हैं और जिसमें तीनों वाक्य वैकल्पिक होते हैं उसे शुद्ध वैकल्पिक न्याय कहते हैं।

जहां तक शुद्ध हेतुफलाश्रित न्यायका प्रश्न है, उसमें तीनों वाक्य हेतुफलाश्रित होते हैं। हम देख चुके हैं कि जिस प्रकार निरपेक्ष वाक्योंमें गुण और परिमाणका भेद पाया जाता है उसी प्रकार हेतुफलाश्रित वाक्योंमें भी। अतः निश्चित है कि जितने रूप निरपेक्ष न्यायके होते हैं उतने ही हेतुफलाश्रित न्यायके भी हो सकते हैं। निम्नलिखित हेतुफलाश्रित न्याय बारबारा संयोगमें है :— शुद्ध हेतुफलाश्रित न्याय।

यदि अ ब है तो स द है।
यदि द ए है तो अ ब है।
∴ यदि द ए है तो स द है।

शुद्ध वैकल्पिक न्याय।

जहां तक वैकल्पिक न्यायका प्रश्न है, हमें ध्यान रखना चाहिए कि इसमें सभी वाक्य विधानात्मक होते हैं। अतः जो नियम गुणसे सम्बन्ध रखते हैं उनका यहां बिल्कुल काम नहीं पड़ता। शुद्ध वैकल्पिक न्याय दुर्लभ होता है और इसलिए उसकी विशेष व्याख्याकी आवश्यकता नहीं है।

हल किये हुए प्रश्न

१. सिद्ध कीजिये कि यदि निष्कर्ष सामान्य है तो आधारवाक्योंमें मध्यमपद केवल एक ही बार व्याप्त हो सकता है।

उत्तर. यदि निष्कर्ष सामान्य वाक्य है तो वह आ होगा या ए।

यदि निष्कर्ष आ वाक्य अर्थात् सामान्य विधानात्मक है तो दोनों आधारवाक्योंको सामान्य विधानात्मक यानी आ होना चाहिए। इस प्रकार आधारवाक्योंमें कुल दो पद व्याप्त हुए। चूंकि निष्कर्षमें ह्रस्वपद व्याप्त हैं, इसलिए ह्रस्ववाक्यमें भी उसे व्याप्त होना चाहिए। अतः आधारवाक्योंके दो व्याप्त पदोंमें से एक ह्रस्वपद है। इस प्रकार केवल एक व्याप्तपद शेष बचता है और इसे मध्यमपद होना चाहिए।

यदि निष्कर्ष ए वाक्य अर्थात् सामान्य निषेधात्मक है तो आधारवाक्योंमें से एक विधानात्मक और दूसरा निषेधात्मक होगा तथा दोनों आधारवाक्य सामान्य होंगे। इस प्रकार कुल तीन पद व्याप्त हुए : दोनों आधारवाक्योंके उद्देश्य और निषेधात्मक आधारवाक्यका विधेय। निष्कर्षमें ह्रस्वपद और दीर्घपद दोनों व्याप्त हैं, अतः इनको आधारवाक्यों में भी व्याप्त होना चाहिए। इस प्रकार आधारवाक्योंमें केवल एक ही व्याप्त पद शेष बचता है जिसे मध्यमपद होना चाहिए।

२. सिद्ध कीजिये कि प्रथम आकारमें ओ आधारवाक्य नहीं हो सकता।

उत्तर. प्रथम आकारमें मध्यमपद दीर्घवाक्यका उद्देश्य और ह्रस्ववाक्यका विधेय होता है।

यदि ओ दीर्घवाक्य हो तो ह्रस्ववाक्यको आ होना चाहिए और निष्कर्षको ओ। इस प्रकार दीर्घवाक्यका विधेय व्याप्त है और ह्रस्ववाक्यका उद्देश्य तथा मध्यमपद एक बार भी व्याप्त नहीं है। अतः दीर्घवाक्यके ओ होनेसे कोई निष्कर्ष नहीं निकलता।

यदि ओ ह्रस्ववाक्य हो तो दीर्घवाक्य आ होगा और निष्कर्ष ओ। चूंकि निष्कर्ष ओ वाक्य है, इसलिए दीर्घपद उसमें व्याप्त हुआ, तथा दीर्घवाक्यमें भी उसे व्याप्त होना चाहिए। लेकिन दीर्घवाक्य आ है और

इसलिए उसका विधेय यानी दीर्घपद व्याप्त नहीं है। इस प्रकार अनियमित दीर्घपदका दोष पैदा हो जाता है। इसलिए ओ पहिले आकारमें ह्रस्ववाक्य भी नहीं हो सकता।

३. सिद्ध कीजिये कि ओ दूसरे आकारके अलावा किसी भी आकारमें ह्रस्ववाक्य नहीं हो सकता।

उत्तर. (क) जैसाकि दूसरे प्रश्नके उत्तरमें सिद्ध हो चुका है, ओ को पहिले आकारमें ह्रस्ववाक्य बनानेसे अनियमित दीर्घपदका दोष पैदा हो जाता है।

(ख) यदि तृतीय आकारमें ओ ह्रस्ववाक्य हो तो दीर्घवाक्य आ और निष्कर्ष ओ होगा। इस प्रकार निष्कर्षका विधेय अर्थात् दीर्घपद व्याप्त होगा। चूंकि दीर्घवाक्यमें दीर्घपद तीसरे आकारमें विधेय होता है और दीर्घवाक्य आ है, इसलिए दीर्घपद उसमें अव्याप्त है। इस प्रकार अनियमित दीर्घपदका दोष पैदा हो जाता है।

(ग) यदि चौथे आकारमें ओ ह्रस्ववाक्य हो तो दीर्घवाक्य आ और निष्कर्ष ओ होगा। इस प्रकार दीर्घवाक्यका विधेय और ह्रस्ववाक्यका उद्देश्य अव्याप्त है और चूंकि चौथे आकारमें मध्यमपद दीर्घवाक्यमें विधेय और ह्रस्ववाक्यमें उद्देश्य होता है, इसलिए मध्यमपद एक बार भी व्याप्त नहीं होगा। इस प्रकार ओ को ह्रस्ववाक्य बनानेसे अव्याप्त मध्यमपद-दोष पैदा हो जाता है।

(घ) दूसरे आकारमें ह्रस्ववाक्य ओ हो सकता है। ह्रस्ववाक्यके ओ होनेसे दीर्घवाक्य आ और निष्कर्ष ओ होगा। निष्कर्षमें दीर्घपद व्याप्त है और दीर्घवाक्यमें भी वह व्याप्त है क्योंकि वह सामान्य वाक्य का उद्देश्य है। मध्यमपद दूसरे आकारमें आधारवाक्योंमें विधेय होता है और ह्रस्ववाक्यके निषेधात्मक होनेसे वह कमसे कम एक बार व्याप्त है। इस प्रकार ओ के ह्रस्ववाक्य होनेसे सही निष्कर्ष निकल सकता है।

४. सिद्ध कीजिये कि चौथे आकारमें ओ कोई आधारवाक्य नहीं हो सकता।

उत्तर. चौथे आकारमें मध्यमपद दीर्घवाक्यका विधेय और ह्रस्ववाक्यका उद्देश्य होता है।

यदि ओ दीर्घवाक्य हो तो ह्रस्ववाक्य आ और निष्कर्ष ओ होगा। निष्कर्षके ओ होनेसे दीर्घपद उसमें व्याप्त होगा। लेकिन दीर्घवाक्य विशेष है और दीर्घपद उसमें उद्देश्य है, अतः दीर्घपद उसमें अव्याप्त है। इस प्रकार दीर्घवाक्यके ओ होनेसे अनियमित दीर्घपदका दोष पैदा हो जाता है।

प्रश्न ३ के उत्तर (ग) में हम देख ही चुके हैं कि ह्रस्ववाक्यके ओ होनेसे अव्याप्त मध्यमपदका दोष पैदा होता है।

अतः ओ चौथे आकारमें आधारवाक्य नहीं हो सकता।

५. सिद्ध कीजिये कि ओ केवल तीसरे आकारमें ही दीर्घवाक्य हो सकता है।

उत्तर. (क) ओ पहिले आकारमें दीर्घवाक्य नहीं हो सकता।

यदि दीर्घवाक्य ओ है तो ह्रस्ववाक्य आ और निष्कर्ष ओ होगा। दीर्घवाक्यके ओ होनेसे उसका उद्देश्य यानी मध्यमपद उसमें व्याप्त नहीं है। ह्रस्ववाक्यके आ होनेसे उसका विधेय यानी मध्यमपद व्याप्त नहीं है। इस प्रकार अव्याप्त मध्यमपदका दोष पैदा हो जाता है।

(ख) दूसरे आकारमें ओ दीर्घवाक्य नहीं हो सकता।

यदि ओ दीर्घवाक्य है तो ह्रस्ववाक्य आ और निष्कर्ष ओ होगा। इस प्रकार दीर्घपद निष्कर्षमें व्याप्त होगा। लेकिन दीर्घवाक्यमें वह व्याप्त नहीं है क्योंकि दीर्घवाक्य विशेष है और दीर्घपद उसमें उद्देश्य है। अतः ओ को दीर्घवाक्य बनानेसे अनियमित दीर्घपदका दोष पैदा हो जाता है।

(ग) ओ चौथे आकारमें दीर्घवाक्य नहीं बन सकता।

यदि ओ दीर्घवाक्य है तो ह्रस्ववाक्य आ और निष्कर्ष ओ होगा। निष्कर्षमें दीर्घपद व्याप्त है लेकिन दीर्घवाक्यमें अव्याप्त है। अतः ओ के दीर्घवाक्य होनेसे अनियमित दीर्घपदका दोष पैदा होता है।

(घ) तीसरे आकारमें ओ दीर्घवाक्य हो सकता है।

ओ के दीर्घवाक्य होनेसे ह्रस्ववाक्य आ और निष्कर्ष ओ होगा। मध्यमपद ह्रस्ववाक्यमें व्याप्त है क्योंकि वह सामान्य वाक्यका उद्देश्य है। दीर्घपद निष्कर्षमें व्याप्त है और दीर्घवाक्यमें भी निषेधात्मक वाक्य का विधेय होनेसे व्याप्त है। अतः ओ के दीर्घवाक्य होनेसे कोई दोष नहीं होता।

६. यदि दीर्घवाक्यमें दीर्घपद विधेय है तो ह्रस्ववाक्यके बारेमें आप क्या कहेंगे?

उत्तर. दीर्घपद दीर्घवाक्यमें या तो व्याप्त होगा या अव्याप्त।

यदि दीर्घपद व्याप्त है तो दीर्घवाक्य निषेधात्मक होगा। इसलिए निष्कर्ष सही तभी हो सकता है जब ह्रस्ववाक्य विधानात्मक हो।

यदि दीर्घपद अव्याप्त है तो दीर्घवाक्य विधानात्मक होगा। चूंकि दीर्घपद दीर्घवाक्यमें अव्याप्त है, इसलिए निष्कर्षमें भी उसे अव्याप्त रहना चाहिए अर्थात् निष्कर्षको विधानात्मक होना चाहिए। चूंकि निष्कर्ष

विधानात्मक है, इसलिए दोनों आधारवाक्योंको विधानात्मक होना चाहिए।

अतः दीर्घपदके दीर्घवाक्यमें विधेय होनेसे ह्रस्ववाक्य विधानात्मक होता है।

७. सिद्ध कीजिये कि प्रत्येक आकारमें यदि ह्रस्ववाक्य निषेधात्मक है तो दीर्घवाक्य अवश्य सामान्य होगा।

उत्तर. चूंकि ह्रस्ववाक्य निषेधात्मक है, इसलिए दीर्घवाक्य विधानात्मक और निष्कर्ष निषेधात्मक होगा। निष्कर्षके निषेधात्मक होने से दीर्घपद उसमे व्याप्त है। इसलिए दीर्घवाक्यमें भी उसे व्याप्त होना चाहिए। दीर्घवाक्य के विधानात्मक होनेसे उसका विधेय अव्याप्त है। इसलिए दीर्घपद दीर्घवाक्यका विधेय नहीं हो सकता। अतः उसे दीर्घवाक्यका उद्देश्य होना चाहिए और दीर्घवाक्यको सामान्य होना चाहिए, तभी दीर्घपद व्याप्त हो सकेगा।

८. सिद्ध कीजिये कि यदि निष्कर्ष आ है तो युक्तिको पहिले आकारमें होना चाहिए।

उत्तर. यदि निष्कर्ष आ है तो दोनों आधारवाक्योंको आ होना चाहिए। निष्कर्षके आ होनेसे ह्रस्वपद उसमें व्याप्त होगा। अतः ह्रस्ववाक्यमें भी उसे व्याप्त होना चाहिए। चूंकि ह्रस्ववाक्यका केवल उद्देश्य व्याप्त है, इसलिए ह्रस्वपद उसमें उद्देश्य होगा और मध्यमपद विधेय होगा। चूंकि मध्यमपद ह्रस्ववाक्यमें व्याप्त नहीं है और उसका कमसे कम एक बार व्याप्त होना आवश्यक है, इसलिए दीर्घवाक्यमें उसे व्याप्त होना चाहिए। लेकिन दीर्घवाक्यका केवल उद्देश्य ही व्याप्त है। इसलिए मध्यमपद दीर्घवाक्यका उद्देश्य होना चाहिए। इस प्रकार युक्ति पहिले आकारमें होगी।

९. सिद्ध कीजिये कि यदि निष्कर्ष सामान्य हो तो मध्यमपद केवल एक ही बार व्याप्त होगा।

उत्तर. यदि निष्कर्ष सामान्य है तो दोनों आधारवाक्योंको सामान्य होना चाहिए। निष्कर्ष विधानात्मक हो सकता है या निषेधात्मक। यदि निष्कर्ष विधानात्मक है तो दोनों आधारवाक्य विधानात्मक होंगे। इस प्रकार आधारवाक्योंमें केवल दो पद व्याप्त होंगे और निष्कर्षमें एक पद अर्थात् ह्रस्वपद। आधारवाक्योंके दो व्याप्त पदोंमें से एकको ह्रस्वपद होना चाहिए, अन्यथा अनियमित ह्रस्वपदका दोष पैदा हो जायगा। इस प्रकार केवल एक ही व्याप्त पद बचता है जिसे मध्यमपद होना चाहिए।

यदि निष्कर्ष सामान्य निषेधात्मक है तो आधारवाक्योंमें से एक आ होगा और दूसरा ए। इस प्रकार आधारवाक्योंमें कुल तीन पद व्याप्त होंगे जिनमें से एक को दीर्घपद और एक को ह्रस्वपद होना चाहिए, क्योंकि निष्कर्षमें ये दोनों पद व्याप्त हैं। शेष एक ही व्याप्त पद बचता है जिसे मध्यमपद होना चाहिए।

इस प्रकार मध्यमपद केवल एक बार व्याप्त होगा।

१०. निम्नलिखित दशाओंमें किसी न्यायके बारेमें क्या कहा जा सकता है?

(क) जब केवल एक ही पद और वह भी केवल एक ही बार व्याप्त होता है।

जब केवल एक ही पद व्याप्त होगा तब वह मध्यमपद होगा। अतः कोई भी पद निष्कर्षमें व्याप्त नहीं होगा अर्थात् निष्कर्ष ई वाक्य होगा।

(ख) जब केवल एक पद दो बार व्याप्त होता है।

जब एक ही पद व्याप्त है तब वह मध्यमपद ही होगा चाहे वह एक बार व्याप्त हो चाहे दो बार। इस प्रकार जब कोई भी पद व्याप्त नहीं है तो निष्कर्ष केवल ई वाक्य ही हो सकता है।

(ग) जब केवल दो पद एक-एक बार व्याप्त होते हैं।

दो व्याप्त पदोंमें से एकको मध्यमपद होना चाहिए। दूसरा व्याप्त पद जो भी हो वह निष्कर्षमें व्याप्त नहीं हो सकता, क्योंकि निष्कर्षमें जो पद व्याप्त होगा उसे आधारवाक्योंमें भी व्याप्त होना पड़ेगा और इस प्रकार वह दो बार व्याप्त हो जायेगा जबकि दूसरा पद केवल एक ही बार व्याप्त है। अतः निष्कर्ष ई वाक्य ही हो सकता है।

(घ) जब केवल दो पद दो-दो बार व्याप्त होते हैं।

दो व्याप्त पदोंमें से एकको मध्यमपद होना चाहिए। दूसरा पद एक बार आधारवाक्योंमें और एक बार निष्कर्षमें व्याप्त होगा। यह पद या तो दीर्घपद होगा या ह्रस्वपद।

यदि वह दीर्घपद है तो निष्कर्ष निषेधात्मक होगा अर्थात् ए होगा या ओ। निष्कर्ष ए नहीं हो सकता क्योंकि उस दशामें तो न्यायमें तीन पद व्याप्त हो जायेंगे। अतः निष्कर्षको ओ वाक्य होना चाहिए।

यदि निष्कर्षमें व्याप्त पद ह्रस्वपद है तो निष्कर्ष सामान्य वाक्य अर्थात् आ या ए होगा। निष्कर्ष ए वाक्य नहीं हो सकता, क्योंकि उस दशामें दो के स्थान पर तीन पद न्यायमें व्याप्त हो जायेंगे। यदि निष्कर्ष आ वाक्य है तो दोनों आधारवाक्योंको आ होना चाहिए। इस

प्रकार न्यायमें केवल तीन ही पद व्याप्त होंगे जब कि कुल चार पद (दो पद दो-दो बार) व्याप्त हैं। अत: निष्कर्ष न ए हो सकता है और न आ।

नतीजा यह हुआ कि न्यायमें दो पदोंके दो-दो बार व्याप्त होनेसे निष्कर्ष ओ वाक्य होगा।

११. सिद्ध कीजिये कि यदि मध्यमपद दोनों आधारवाक्योंमें व्याप्त है तो निष्कर्ष सामान्य नहीं हो सकता (प्रश्न १० से तुलना कीजिये)।

उत्तर. यदि निष्कर्ष सामान्य है तो आ या ए वाक्य होगा। यदि निष्कर्ष आ है तो दोनों आधारवाक्य आ होंगे और इस प्रकार आधारवाक्योंमें कुल दो पद व्याप्त होंगे। इन दोनोंको मध्यमपद होना चाहिए, क्योंकि यह दिया हुआ है। लेकिन ह्रस्वपद निष्कर्षमें व्याप्त है जब कि आधारवाक्योंमें अव्याप्त है। अत: निष्कर्ष आ नहीं हो सकता।

यदि निष्कर्ष ए है तो आधारवाक्योंमें से एक को आ और एक को ए होना चाहिए। इस प्रकार आधारवाक्योंमें कुल तीन पद व्याप्त हुए। इनमें से दो तो मध्यमपद हैं, इसलिए तीसरा ह्रस्वपद होगा या दीर्घपद। लेकिन निष्कर्षमें ह्रस्वपद और दीर्घपद दोनों ही व्याप्त हैं। अत: ए वाक्यके निष्कर्ष होनेसे अनियमित ह्रस्वपदका दोष पैदा होगा या अनियमित दीर्घपदका दोष। इस प्रकार निष्कर्ष ए भी नहीं हो सकता और आ भी नहीं अर्थात् निष्कर्ष सामान्य वाक्य नहीं हो सकता।

१२. यदि किसी प्रामाणिक न्यायका दीर्घवाक्य विधानात्मक है और दीर्घपद आधारवाक्य और निष्कर्ष दोनोंमें व्याप्त है जब कि ह्रस्वपद दोनोंमें अव्याप्त है, तो न्यायको मालूम कीजिये।

उत्तर. चूंकि दीर्घवाक्य विधानात्मक है और दीर्घपद उसमें व्याप्त है, इसलिए दीर्घवाक्यको आ वाक्य होना चाहिए और दीर्घपदको उसका उद्देश्य होना चाहिए। चूंकि दीर्घपद निष्कर्षमें भी व्याप्त है, इसलिए निष्कर्षको निषेधात्मक होना चाहिए; और चूंकि ह्रस्वपद इसमें व्याप्त नहीं है, इसलिए इसे विशेष वाक्य होना चाहिए, अर्थात् निष्कर्ष ओ वाक्य हुआ। निष्कर्षके निषेधात्मक होनेसे एक आधारवाक्य भी निषेधात्मक होगा और यह आधारवाक्य ह्रस्ववाक्य होगा क्योंकि दीर्घवाक्य विधानात्मक है। मध्यमपद दीर्घवाक्यमें व्याप्त नहीं है, अत: ह्रस्ववाक्यमें उसे व्याप्त होना चाहिए अर्थात् वह ह्रस्ववाक्यका विधेय होगा। इस प्रकार ह्रस्वपद ह्रस्ववाक्यका उद्देश्य होगा और चूंकि ह्रस्वपद इसमें भी अव्याप्त है, इसलिए वह विशेष वाक्य होगा अर्थात्

ह्रस्ववाक्य ओ होगा। यह संयोग मध्यमपदके दोनों आधारवाक्योंमें विधेय होनेसे द्वितीय आकारमें आ ओ ओ संयोग अर्थात् बारोको है।

अभ्यासार्थ प्रश्न ११

१. न्यायकी व्याख्या कीजिये। न्याय व्यवहित ज्ञान और निगमनात्मक अनुमानका एक रूप है। क्यों?

२. न्यायके ह्रस्वपद, दीर्घपद और मध्यमपद क्या हैं?

३. उदाहरण देकर समझाइये कि यदि आधारवाक्य असत्य हैं तो तर्क-प्रक्रिया असत्य होगी।

४. न्यायकी विशेषताएं बताइये।

५. न्यायमें मध्यमपदका क्या काम है? मध्यमपदको कमसे कम एक बार क्यों व्याप्त होना चाहिए?

६. निरपेक्ष न्यायके अवयव बताइये।

७. अरस्तू के सिद्धान्तको समझाइये और यह बताइये कि पहिले आकारमें यह तर्कका आधार किस प्रकार बनता है? न्यायके पूर्ण आकारसे क्या तात्पर्य है?

८. निम्नलिखित न्याय किस आकारमें प्रामाणिक हैं और किस आकारमें अप्रामाणिक और क्यों?

ए आ ए, ए आ ओ, ए ई ओ, ई ए ई।

९. न्यायके संयोग और आकारकी परिभाषा दीजिये। उपाश्रित संयोग कौन-कौनसे हैं और उन्हें यह नाम क्यों दिया गया है?

१०. सिद्ध कीजिये कि जब एक आधारवाक्य विशेष होता है तब निष्कर्ष भी विशेष होता है।

११. उन संयोगोंका नाम बताइये जिनका निष्कर्ष ओ वाक्य होता है।

१२. निम्नलिखित संयोगोंकी परीक्षा करके बताइये कि वे प्रामाणिक हैं या नहीं, और क्यों?

आ ए ए, ओ आ ए, ओ इ ए।

१३. संक्षेपमें उन नियमोंको बताइये जिनसे प्रामाणिक संयोगों का निश्चय किया जाता है। ई ए क्यों किसी भी आकारमें प्रामाणिक नहीं है और ए ई सभी आकारोंमें क्यों प्रामाणिक है?

१४. यदि दीर्घपद दीर्घवाक्यमें व्याप्त हो और निष्कर्षमें अव्याप्त हो तो कौन-सा आकार और कौन-सा संयोग होगा?

१५. न्यायके नियमोंको संक्षेपमें बताइये।

१६. दूसरे, तीसरे और चौथे आकारमें मध्यमपदका स्थान क्या होता है?

१७. आकारकी व्याख्या कीजिये। अरस्तू ने केवल पहिले आकार को ही क्यों मान्यता दी? पहिले आकारके विशेष नियम क्या हैं?

१८. यह दिखाइये कि दूसरे आकारमें केवल निषेधात्मक निष्कर्ष ही निकल सकता है।

१९. तीसरे आकारमें निष्कर्ष विशेष ही क्यों निकलता है?

२०. सिद्ध कीजिये—

(क) केवल पहिले आकारमें ही निष्कर्ष आ वाक्य हो सकता है।

(ख) पहिले और तीसरे आकारमें ह्रस्ववाक्यको विधानात्मक होना चाहिए।

२१. सिद्ध कीजिये कि दूसरे आकारमें दीर्घवाक्यको सामान्य होना चाहिए।

२२. सिद्ध कीजिये कि—

(क) दो विशेष वाक्योंसे कोई निष्कर्ष नहीं निकल सकता।

(ख) यदि एक आधारवाक्य विशेष है तो निष्कर्ष भी विशेष होगा।

(ग) तीसरे आकारमें निष्कर्ष विशेष वाक्य होना चाहिए।

२३. प्रामाणिक संयोगोंको बताइये और दूसरे आकारके विशेष नियमोंको सिद्ध कीजिये।

२४. चौथे आकारके प्रामाणिक संयोगोंको निर्धारित कीजिये।

२५. पहिले आकारके विशेष नियमोंको समझाइये। क्या उसे पूर्ण आकार कहना ठीक है?

२६. फेसापो और फेलाप्टोनका अनुलोम और विलोम विधिसे रूपान्तरण कीजिये।

२७. दीसामीस, ब्रामान्टीप और बारोकोके ठोस उदाहरण दीजिये और प्रत्येकका अनुलोम और विलोम रूपान्तरण कीजिये।

२८. रूपान्तरणके दो प्रकारोंको समझाइये। कामेनेसका एक ठोस उदाहरण देकर उसका दोनों विधियोंसे रूपान्तरण कीजिये।

२९. अनुलोम और विलोम रूपान्तरणमें अन्तर बताइये।

३०. न्यायको परीक्षा करनेके विभिन्न नियम कौन-से हैं?

३१. दाराप्ती और कामेनेसके ठोस उदाहरण देकर उनका अनलोम और विलोम विधिसे रूपान्तरण कीजिये।

३२. पहिले आकारको पूर्ण आकार क्यों कहते हैं? किसी अपूर्ण आकारके एक संयोगको लेकर अनुलोम और विलोम विधिसे उसको पहिले आकारके किसी संयोगमें रूपान्तरित कीजिये।

३३. तीसरे आकारके किसी संयोगको अनुलोम या विलोम विधिसे रूपान्तरित कीजिये।

३४. बारोकोका ठोस उदाहरण लेकर अनुलोम और विलोम विधिसे रूपान्तरण कीजिये।

३५. रूपान्तरण किसे कहते हैं? क्या रूपान्तरण आवश्यक है? दीसामीस और फेसापोको अनुलोम तथा विलोम विधिसे रूपान्तरित कीजिये।

३६. क्या न्याय और अरस्तू के सिद्धान्तमें कोई सम्बन्ध है?

३७. यह दिखाइये कि चौथे आकारमें आ ए ओ संयोग निर्बल है किन्तु न तो यह मौलिक न्याय है और न सबल न्याय।

३८. अनियमित ह्रस्वपद और अनियमित दीर्घपदके दोषोंको उदाहरण देकर समझाइये।

३९. ए आ ए और आ ए ए संयोगोंकी प्रत्येक आकारमें परीक्षा कीजिये।

४०. निम्नलिखितको बताइये :—

(क) यदि पहिले आकारमें दीर्घवाक्य ई हो तो कौन-सा दोष होगा?

(ख) यदि दूसरे आकारमें दीर्घवाक्य विशेष हो तो कौन-सा दोष होगा?

(ग) यदि किसी न्यायका ह्रस्ववाक्य ओ हो तो वह किस आकार और संयोगमें होगा?

१२

मिश्रित न्याय
(Mixed Syllogism)

मिश्रित न्याय वह है जिसके वाक्य विविध सम्बन्धोंवाले होते हैं। इसके तीन उपभेद होते हैं: (१) हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्याय, (२) वैकल्पिक-निरपेक्ष न्याय और (३) उभयतोपाश। मिश्रित न्यायके तीन प्रकार।

भाग १. हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्याय.

हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्याय वह मिश्रित न्याय है जिसका दीर्घवाक्य हेतुफलाश्रित, ह्रस्ववाक्य निरपेक्ष और निष्कर्ष भी निरपेक्ष वाक्य हो। इसे हेतुफलाश्रित न्याय भी कहते हैं। हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष।

(अ) नियम.

इस प्रकारके अनुमानके निम्नलिखित नियम हैं:— नियम।

(१) यदि ह्रस्ववाक्यमें हेतुका विधान होता है तो निष्कर्षमें फलका विधान होना चाहिए, लेकिन इसका विलोम नहीं।

(२) यदि ह्रस्ववाक्यमें फलका निषेध होता है तो निष्कर्षमें हेतुका निषेध होना चाहिए, किन्तु इसका विलोम नहीं।

जिस न्यायमें पहिले नियमका पालन होता है उसे **विधायक (Constructive or Modus Ponens)** कहते हैं, और जिस न्यायमें दूसरे नियमका पालन होता है उसे **विघातक (Destructive or Modus Tollens)** कहते हैं। विधायक और विघातक।

१. विधायक (Constructive). विधायक

हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्याय विधायक तब कहलाता है जब

ह्रस्ववाक्यमें दीर्घवाक्यके हेतुका विधान किया जाता है और निष्कर्षमें उसके फलका विधान किया जाता है। उदाहरण—

(क) यदि अ ब है तो स द है।	यदि वह आयेगा तो मैं जाऊंगा।
अ ब है।	वह आयेगा।
∴ स द है।	∴ मैं जाऊंगा।
(ख) यदि अ ब है तो स द नहीं है।	यदि वर्षा होगी तो वह नहीं आयेगा।
अ ब है।	वर्षा होगी।
∴ स द नहीं है।	∴ वह नहीं आयेगा।
(ग) यदि अ ब नहीं है तो स द है।	यदि वह नहीं आयेगा तो मैं जाऊंगा।
अ ब नहीं है।	वह नहीं आयेगा।
∴ स द है।	∴ मैं जाऊंगा।
(घ) यदि अ ब नहीं है तो स द नहीं है।	यदि वर्षा नहीं होगी तो फ़सल नहीं होगी।
अब नहीं है।	वर्षा नहीं होगी।
∴ स द नहीं है।	∴ फ़सल नहीं होगी।

विघातक।

२. विघातक (**Destructive**).

हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्याय विघातक तब कहलाता है जब ह्रस्ववाक्य में दीर्घवाक्यके फलका निषेध करता है और निष्कर्ष उसके हेतुका निषेध करता है।

उदाहरण—

(क) यदि अ ब है तो स द है।	यदि वह आयेगा तो मैं जाऊगा।
स द नहीं है।	मैं नहीं जाऊगा।
∴ अ ब नहीं है।	∴ वह नहीं आयेगा।
(ख) यदि अ ब है तो स द नहीं है।	यदि वर्षा होगी तो वह नहीं आयेगा।
स द है।	वह आयेगा।
∴ अ ब नहीं है।	∴ वर्षा नहीं होगी।

(ग) यदि अ ब नहीं है तो स द है।	यदि वह नहीं आयेगा तो मैं जाऊंगा।
स द नहीं है।	मैं नहीं जाऊंगा।
∴ अ ब है।	∴ वह आयेगा।
(घ) यदि अ ब नहीं है तो स द नहीं है।	यदि वर्षा नहीं होगी तो फ़सल नहीं होगी।
स द है।	फ़सल होगी।
∴ अ ब है।	∴ वर्षा होगी।

यहां यह ध्यान रखना चाहिए कि 'विधायक' और 'विघातक' नामों का ह्रस्ववाक्य या निष्कर्षके गुणसे कोई सम्बन्ध नहीं है। हेतु और फल जो कुछ भी हों, विधायक ह्रस्ववाक्यमें दीर्घवाक्यके हेतुका विधान करता है और विघातक ह्रस्ववाक्यमें दीर्घवाक्यके फलका निषेध करता है।

(ब) दोष.

यदि हम उपर्युक्त नियमोंको भंग करते हैं तो फल-विधानका दोष (Fallacy of Affirming the Consequent) अथवा हेतु-निषेधका दोष (Fallacy of Denying the Antecedent) उत्पन्न होता है। दोष।

उदाहरणार्थ—

(१) हेतुका निषेध।

यदि अ ब है तो स द है।	यदि वह आता है तो मैं जाऊंगा।
अ ब नहीं है।	वह नहीं आता है।
∴ स द नहीं है।	∴ मैं नहीं जाऊंगा।

यह युक्ति दोषपूर्ण है। इस दोषको **हेतु-निषेधका** दोष कहते हैं, क्योंकि ह्रस्ववाक्यमें हमने हेतुका निषेध किया है और उसीके बल पर हमने निष्कर्षमें फलका निषेध किया है। यह नियमके विरुद्ध है।

यदि इस युक्तिको शुद्ध निरपेक्ष न्यायका रूप दिया जाय तो यह इस प्रकार होगा—

आ. अ के ब होनेकी सब दशाएं स के द होनेकी दशाएं हैं।
ए. यह अ के ब होनेकी दशा नहीं है।
∴ ए. यह स के द होनेकी दशा नहीं है।

इसमें हम देखते हैं कि दीर्घपद 'स के द होनेकी दशाएं' दीर्घवाक्यमें अव्याप्त होते हुए भी निष्कर्षमें व्याप्त है। अतः इसमें **अनियमित दीर्घपद** का दोष है। इस प्रकार हेतु-निषेधका दोष शुद्ध निरपेक्ष न्याय के अनियमित दीर्घपदके दोषके तुल्य होता है।

(२) फलका विधान।

फिर—

यदि अ ब है तो स द है।	यदि वह आयेगा तो मैं जाऊंगा।
स द है।	मैं जाऊंगा।
∴ अ ब है।	∴ वह आयेगा।

इस युक्तिमें **फल-विधानका दोष** है क्योंकि ह्रस्ववाक्यमें फलका विधान किया गया है और उसीके बल पर निष्कर्षमें हेतुका विधान किया गया है। यह नियम-विरुद्ध है।

यदि हम दीर्घवाक्यको निरपेक्ष वाक्यमें बदलकर इस युक्तिको शुद्ध निरपेक्ष न्यायके रूपमें रखें तो इसका रूप यह होगा—

आ. अ के ब होनेकी सब दशाएं स के द होनेकी दशाएं हैं।
आ. यह स के द होनेकी दशा है।
∴ आ. यह अ के ब होनेकी दशा है।

यहां हम देखते हैं कि मध्यमपद 'स के द होनेकी दशा' दोनों आधारवाक्योंमें एक बार भी व्याप्त नहीं है। इसलिए इसमें **अव्याप्त मध्यमपद** का दोष है। इस प्रकार स्पष्ट है कि फल-विधानका दोष शुद्ध निरपेक्ष न्यायके अव्याप्त मध्यमपद-दोषके तुल्य है।

(स) हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्यायका शुद्ध निरपेक्ष न्यायमें रूपान्तरण.

हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्यायको उसके हेतुफलाश्रित वाक्यको निरपेक्ष वाक्यमें बदलकर शुद्ध निरपेक्ष न्यायमें रूपान्तरित किया जा सकता है, जैसे—

हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष	शुद्ध निरपेक्ष
(१) यदि अ ब है तो स द है।	अ के ब होनेकी सब दशाएं स के द होनेकी दशाएं हैं।
अ ब है।	यह अ के ब होनेकी दशा है।
∴ स द है।	∴ यह स के द होनेकी दशा है।
(२) यदि वह आयेगा तो मैं जाऊंगा।	सब उसके आनेकी दशाएं मेरे जानेकी दशाएं हैं।
वह आयेगा।	यह उसके आनेकी दशा है।
∴ मैं जाऊंगा।	∴ यह मेरे जानेकी दशा है।

भाग २. वैकल्पिक-निरपेक्ष न्याय.

वैकल्पिक निरपेक्ष न्यायमें दीर्घवाक्य वैकल्पिक होता है, ह्रस्व-वाक्य निरपेक्ष और निष्कर्ष भी निरपेक्ष होता है इसे वैकल्पिक न्याय भी कहते हैं। परिभाषा।

नियम. ह्रस्ववाक्यमें एक विकल्पका निषेध करके हम दूसरे विकल्पका विधान करते हैं अर्थात् वैकल्पिक दीर्घवाक्यके किसी भी विकल्पका ह्रस्ववाक्यमें निषेध करनेसे दीर्घवाक्यके दूसरे विकल्पका निष्कर्षमें विधान किया जा सकता है। असलमें एक विकल्पकी असत्यता दूसरे विकल्पकी सत्यताको बतलाती है, जैसे— नियम। एक विकल्प का निषेध करनेके बाद दूसरे का विधान।

(१) या तो अ ब है या स द है।
अ ब नहीं है।
∴ स द है।

(२) या तो अ ब है या स द है।
स द नहीं है।
∴ अ ब है।

कुछ तर्कशास्त्री (जैसे, यूबरवेग) ऐसे हैं जो ऊपर दिये हुए नियम का विलोम भी सही मानते हैं अर्थात् जो यह कहते हैं कि दीर्घवाक्यके एक विकल्पका ह्रस्ववाक्यमें विधान करके हम दूसरे विकल्पका निष्कर्ष में निषेध भी कर सकते हैं, जैसे— कुछ दशाओं में इस नियमका विलोम भी सत्य है।

(३) या तो अ ब है या स द है।
अ ब है।
∴ स द नहीं है।

(४) या तो अ ब है या स द है।
स द है।
∴ अ ब नहीं है।

लेकिन यह बात तभी सत्य है जबकि विकल्प एक-दूसरेके व्यावर्तक (mutually exclusive) होते हैं जैसे कि व्याघातक पद होते हैं। अतः साधारणतः केवल पहले दो रूप (जिनमें एक विकल्पका निषेध करके दूसरे विकल्पका विधान किया गया है) सही हैं, जबकि तीसरा और चौथे रूप भी कभी-कभी सही हो सकते हैं।

भाग ३. उभयतोपाश.

परिभाषा।

उभयतोपाश एक मिश्रित न्याय है जिसमें दीर्घवाक्य एक मिश्रित हेतुफलाश्रित वाक्य होता है, ह्रस्ववाक्य वैकल्पिक होता है (जिसके विकल्प या तो दीर्घवाक्यके हेतुओंका विधान करते हैं या उसके फलों का निषेध) और निष्कर्ष वैकल्पिक वाक्य होता है या निरपेक्ष वाक्य।

(क) दीर्घवाक्य मिश्रित हेतुफलाश्रित वाक्य।

(क) दीर्घवाक्य एक मिश्रित हेतुफलाश्रित वाक्य होता है अर्थात् उसमें दो हेतुफलाश्रित वाक्य होते हैं।

(ख) ह्रस्ववाक्य वैकल्पिक।

(ख) ह्रस्ववाक्य वैकल्पिक वाक्य होता है। हम जानते हैं कि हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्यायके नियमके अनुसार हेतुका ह्रस्ववाक्यमें विधान करके फलका निष्कर्षमें विधान किया जाता है, अथवा फलका ह्रस्ववाक्यमें निषेध करके हेतुका निष्कर्षमें निषेध किया जाता है। उभयतोपाश दो हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्यायोंके अलावा और कुछ नहीं है। अतः वैकल्पिक ह्रस्ववाक्यके दो विकल्प या तो हेतुओंका विधान करते हैं या फलोंका निषेध करते हैं ताकि निष्कर्षमें क्रमशः फलोंका विधान हो सके या हेतुओंका निषेध।

(ग) निष्कर्ष या तो निरपेक्ष होता है या वैकल्पिक।

उभयतोपाशका प्रचलित अर्थ हमें उसके तार्किक गूढ़ार्थको स्पष्ट बता देता है। उभयतोपाशका शाब्दिक अर्थ है 'दोनों तरहसे फंसना'। इसके अंग्रेज़ी पर्याय 'डाइलेमा' (Dilemma) का अर्थ है 'दो सींग'। जब हमारे सामने केवल दो ही मार्ग रहते हैं और दोनोंमें से किसी एक को भी अपनानेसे अनिष्ट ही होता है तब यह कहा जाता है कि हम 'डाइलेमा' अर्थात् दो सींगोंमें या 'उभयतोपाश' अर्थात् दो जालोंमें फंस गये हैं। उस समय हमारी दशा "इधर कुंवां उधर खाई" या "इधर दानव उधर समुद्र" वाली होती है। तर्कशास्त्रमें भी उभयतोपाशकी विशेषता यह होती है कि दो विकल्पोंमें से एक को अपनाना पड़ता है और दोनों ही अवस्थाओंमें सिवाय फंसनेके और कोई रास्ता नहीं रह जाता है, इस प्रकार दोनों विकल्पोंको स्वीकार करना समान रूपसे अप्रिय होता है। (ग) निष्कर्ष या तो वैकल्पिक होता है या निरपेक्ष।

उभयतोपाशके प्रकार.

उभयतोपाश **विधायक** तब कहलाता है जब उसमें वैकल्पिक ह्रस्ववाक्यके विकल्प मिश्रित हेतुफलाश्रित दीर्घवाक्यके हेतुओंका विधान करते हैं। उभयतोपाश **विघातक** तब कहलाता है जब वैकल्पिक ह्रस्ववाक्यके विकल्प मिश्रित हेतुफलाश्रित दीर्घवाक्यके फलोंका निषेध करते हैं। अतः उभयतोपाशका विधायक या विघातक होना उसके ह्रस्ववाक्य पर निर्भर है। विधायक और विघातक।

दोनों विधायक और विघातक उभयतोपाश **सरल (simple)** या **जटिल (complex)** हो सकते हैं। सरल उभयतोपाशमें निष्कर्ष निरपेक्ष वाक्य होता है और जटिल उभयतोपाशमें निष्कर्ष वैकल्पिक वाक्य होता है। अतः उभयतोपाशका सरल और जटिल होना उसके निष्कर्ष पर निर्भर है। इस प्रकार उभयतोपाशके चार प्रकार होते हैं— (१) **सरल विधायक (simple constructive)**, (२) **जटिल विधायक (complex constructive)**, (३) **सरल विघातक** सरल और जटिल। चार प्रकार

(**simple destructive**) और (४) **जटिल विघातक** (**complex destructive**)।

१. सरल विधायक उभयतोपाश.

सरल विधायक।

यदि अ ब है तो स द है; यदि ए फ है तो स द है।
या तो अ ब है या ए फ है।
∴ स द है।

यदि मनुष्य अपनी इच्छानुसार चलता है तो उसकी आलोचना होती है; यदि मनुष्य दूसरेकी इच्छानुसार चलता है तो भी उसकी आलोचना होती है।

या तो मनुष्य अपनी इच्छानुसार चलता है या दूसरेकी इच्छानुसार।
∴ उसकी हमेशा आलोचना होती है।

यह उभयतोपाश **सरल** है क्योंकि इसका निष्कर्ष निरपेक्ष वाक्य है। साथ ही यह **विधायक** है क्योंकि ह्रस्ववाक्यमें दीर्घवाक्यके हेतुओंका विधान हुआ है।

सरल विधायक उभयतोपाशका दूसरा उदाहरण इंगलैंडके राजा हेनरी सप्तम के अन्यायी कर्मचारी इम्पसन ने प्रस्तुत किया है जिसके द्वारा वह अपराधियोंको राजकोषमें अर्थदण्डके रूपमें काफ़ी धन देनेके लिये लाचार किया करता था—

यदि अपराधी कम खर्च करता है तो उसने काफ़ी धन एकत्रित किया होगा और यदि वह खूब खर्च करता है तो इससे सिद्ध है कि वह धनी है।

या तो अपराधी कम खर्च करता है या खूब खर्च करता है।
∴ हर दशामें उसके पास काफ़ी धन है (और इसलिए वह राजकोषमें काफ़ी धन दे सकता है)।

इस तर्कको इम्पसन की दुधारी (Empson's fork) कहते हैं।

२. जटिल विधायक उभयतोपाश.

यदि अ ब है तो स द है; यदि ए फ है तो ज ह है। जटिल विधायक
या तो अ ब है या ए फ है।
∴ या तो स द है या ज ह है।

इस उभयतोपाशका एक प्रसिद्ध उदाहरण मुसलमान सेनापति उमर खलीफ़ा ने प्रस्तुत किया है जिसने अपने तर्कके आधार पर सिकन्दरिया के विख्यात पुस्तकालयको जलवा कर खाक कर दिया था। उसकी युक्ति इस प्रकार थी—

यदि पुस्तकें क़ुरानके अनुकूल हैं तो क़ुरानके रहते हुए अनावश्यक हैं और यदि वे क़ुरानके प्रतिकूल हैं तो अधर्मको फैलानेवाली हैं।

या तो पुस्तकें क़ुरानके अनुकूल हैं या प्रतिकूल।
∴ या तो पुस्तकें अनावश्यक हैं या अधर्मको फैलानेवाली।

३. सरल विघातक उभयतोपाश.

यदि अ ब है तो स द है; यदि अ ब है तो ए फ है। सरल विघातक
या तो स द नहीं है या ए फ नहीं है।
∴ अ ब नहीं है।

यदि मुझे अपनी योजनाको पूरा करना है तो छात्रोंको अपने पास रखना चाहिए और यदि मुझे अपनी योजना पूरी करनी है तो मुझे अपनी पुस्तक लिखनी चाहिए।

या तो मैं छात्रोंको अपने पास नहीं रख सकता या पुस्तक नहीं लिख सकता।
∴ मैं अपनी योजना पूरी नहीं कर सकता।

इसका एक उदाहरण ज़ेनो (Zeno) का प्रसिद्ध उभयतोपाश है जो गतिकी असम्भवताको सिद्ध करनेके लिये पेश किया गया था।

यदि भौतिक पिण्ड चलता है तो उसे या तो वहां चलना चाहिए जहां वह है या वहां जहां वह नहीं है।

किन्तु भौतिक पिण्ड न वहां चल सकता है जहां वह है और न वहां जहां वह नहीं है।

∴ भौतिक पिण्ड चल नहीं सकता है अर्थात् गति असम्भव है।

यहां यह ध्यान रखना चाहिए कि इस उदाहरणमें ह्रस्ववाक्य वैकल्पिक नहीं है। जो कुछ विकल्प हैं वे दीर्घवाक्यके दूसरे भागमें हैं।

४. जटिल विघातक उभयतोपाश.

जटिल विघातक

यदि अ ब है तो स द है; यदि ए फ है तो ज ह है।
या तो स द नहीं है या ज ह नहीं है।
∴ या तो अ ब नहीं है या ए फ नहीं है।

यदि मनुष्य कतव्य पालन करनेवाला है तो वह आज्ञाओंका पालन करेगा और यदि वह बुद्धिमान् है तो वह उन्हें समझेगा।

या तो वह आज्ञाओंका पालन नहीं करेगा या उन्हें नहीं समझेगा।
∴ या तो वह कर्तव्य पालन करनेवाला नहीं है या बुद्धिमान् नहीं है।

एक अन्य उदाहरण—

यदि वह बुद्धिमान् होता तो वह अपने तर्कोंकी व्यर्थताको जान लेता; यदि वह ईमानदार होता तो वह अपने अपराधको स्वीकार कर लेता।

या तो वह अपने तर्कोंकी व्यर्थताको नहीं जानता या अपने अपराध को स्वीकार नहीं करता।
∴ या तो वह बुद्धिमान् नहीं है या ईमानदार नहीं है।

प्रतिक्षेप = प्रत्युभयतो —पाश प्रस्तुत करना।

उभयतोपाशका प्रतिक्षेप (Rebutting a Dilemma).

उभयतोपाशके प्रतिक्षेपका तात्पर्य है किसी उभयतोपाशके विरुद्ध एक ऐसे उभयतोपाशका प्रयोग करना जिससे ठीक उल्टा निष्कर्ष निकले।

उभयतोपाशका प्रतिक्षेप करते समय **उसके दीर्घवाक्यके फलोंको आपसमें बदल देना चाहिए और उनके गुणोंको भी बदल देना चाहिए।** यह नियम केवल जटिल विधायक उभयतोपाश पर लागू होता है।

पहिले हम जटिल विधायक उभयतोपाशके ऊपर दिये हुए सांकेतिक उदाहरणका प्रतिक्षेप करते हैं। सांकेतिक उदाहरण

यदि अ ब है तो स द है; यदि ए फ है तो ज ह है।
या तो अ ब है या ए फ है।
∴ या तो स द है या ज ह है।

इसका प्रतिक्षेप इस प्रकार होगा:—

यदि अ ब है तो ज ह नहीं है; यदि ए फ है तो स द नहीं है।
या तो अ ब है या ए फ है।
∴ या तो ज ह नहीं है या स द नहीं है।

नीचे कुछ ठोस उदाहरणोंका प्रतिक्षेप किया जाता है:— ठोस उदाहरण

(१) यदि पुस्तकें क़ुरानके अनुकूल हैं तो वे बेकार हैं और यदि वे क़ुरानके प्रतिकूल हैं तो हानिकारक हैं।

या तो पुस्तकें क़ुरानके अनुकूल हैं या प्रतिकूल।
∴ या तो वे बेकार हैं या हानिकारक।

इसका प्रतिक्षेप इस प्रकार होगा:—

यदि पुस्तकें क़ुरानके अनुकूल हैं तो हानिकारक नहीं हैं और यदि वे क़ुरानके प्रतिकूल हैं तो बेकार नहीं हैं।

या तो पुस्तकें क़ुरानके अनुकूल हैं या प्रतिकूल।
∴ या तो वे हानिकारक नहीं हैं या बेकार नहीं हैं।

(२) एथेन्स की एक मांका उभयतोपाश—

यदि तुम न्यायपूर्वक काम करोगे तो मनुष्य तुमसे घृणा करेंगे और यदि तुम अन्यायपूर्वक काम करोगे तो देवता तुमसे घृणा करेंगे।

या तो तुम न्यायपूर्वक काम करोगे या अन्यायपूर्वक।
∴ या तो मनुष्य तुमसे घृणा करेंगे या देवता तुमसे घृणा करेंगे।

पुत्रने मांके उभयतोपाशका यों प्रतिक्षेप किया:—

यदि मैं न्यायपूर्वक काम करूंगा तो देवता मुझसे घृणा नहीं करेंगे, और यदि मैं अन्यायपूर्वक काम करूंगा तो मनुष्य मुझसे घृणा नहीं करेंगे।

या तो मैं न्यायपूर्वक काम करूंगा या अन्यायपूर्वक।

∴ या तो देवता मुझसे घृणा नहीं करेंगे या मनुष्य मुझसे घृणा नहीं करेंगे।

(३) दिया हुआ उभयतोपाश—

यदि मनुष्य अकेला है तो उसकी परवाह करनेवाला कोई नहीं है (इसलिए दुःखी है); यदि मनुष्य विवाहित है तो उसे अपनी स्त्रीकी परवाह करनी होगी (इसलिए दुःखी होगा)।

या तो मनुष्य अकेला है या विवाहित।

∴ या तो उसकी परवाह करनेवाला कोई नहीं होगा या उसे अपनी स्त्रीकी परवाह करनी होगी (इसलिए वह दोनों दशाओंमें दुःखी होगा)।

इसका प्रतिक्षेप—

अगर मनुष्य अकेला है तो उसे अपनी स्त्रीकी परवाह नहीं करनी होगी (इसलिए वह सुखी होगा); अगर वह विवाहित है तो उसकी परवाह उसकी स्त्री करेगी (इसलिए सुखी होगा)।

या तो मनुष्य अकेला है या विवाहित।

∴ या तो उसे अपनी स्त्रीकी परवाह नहीं करनी होगी या उसकी परवाह उसकी स्त्री करेगी (इसलिए वह दोनों दशाओंमें सुखी होगा)।

(४) दिया हुआ उभयतोपाश—

इसका एक प्रसिद्ध उदाहरण नीचे दिया जाता है। यह कहा जाता है कि प्रसिद्ध यूनानी दार्शनिक प्रोटेगोरस (Protagoras) ने यूअथलस को वाक्य-चातुर्य सिखलानेके लिये यह शर्त रखी कि आधी फ़ीस उसे तुरन्त देनी होगी और आधी पहिला मुक़दमा जीतने पर। यूअथलस ने जब कोई मुक़दमा अपने हाथमें नहीं लिया और फ़ीस का आधा भाग देनेमें देर की तो प्रोटेगोरस ने उसके ऊपर दावा करके नीचे लिखे उभयतोपाशका प्रयोग किया:—

यदि तुम मुक़दमा हार गये तो न्यायालयके आदेशसे तुम्हें फ़ीस देनी होगी और यदि तुम जीत गये तो तुम्हें शर्तके अनुसार फ़ीस देनी होगी।

इस पर योग्य शिष्यने उभयतोपाशका खण्डन करते हुए उत्तर दिया :—

यदि मैं मुक़दमेमें हार गया तो शर्तके अनुसार फ़ीस नहीं दूंगा और यदि जीत गया तो न्यायालयके आदेशसे फ़ीस नहीं देनी होगी।

उभयतोपाशकी परीक्षा.

किसी भी उभयतोपाशके सत्य होनेके लिये यह आवश्यक है कि वह आकार और द्रव्य दोनोंकी दृष्टिसे सत्य हो। यहां यह भी दिखाना चाहिए कि केवल नियमोंका ही उभयतोपाशमें पालन नहीं किया गया है बल्कि द्रव्यकी दृष्टिसे भी उसके वाक्य सत्य हैं।

उभयतोपाशकी आकारविषयक सत्यता.

उभयतोपाश केवल दो हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्यायोंका योग होता है। इसलिए यह देखनेके लिये कि दिया हुआ उभयतोपाश आकार की दृष्टिसे सत्य है या नहीं, हमें उसे दो हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्यायोंमें तोड़ देना चाहिए और फिर यह देखना चाहिए कि उनमें हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्यायके नियमोंका पालन किया गया है या नहीं। हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्यायका नियम यह है कि ह्रस्ववाक्यमें दीर्घवाक्यके हेतुका विधान या फलका निषेध करनेके पश्चात् निष्कर्षमें फलका विधान या हेतुका निषेध करना चाहिए परन्तु इसका विलोम नहीं। यदि इस नियम का पालन किया गया है तो उभयतोपाश आकारकी दृष्टिसे सत्य है,जैसे—

उभयतोपाश का आकारकी दृष्टिसे सत्य होना हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्यायके नियमोंके पालन पर निर्भर है।

यदि अ ब है तो स द है; यदि ए फ है तो स द है।
या तो अ ब है या ए फ है।
∴ स द है।

हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्यायोंमें तोड़ने पर यह इस प्रकार होगा :—

(१) यदि अ ब है तो स द है। (२) यदि ए फ है तो स द है।
अ ब है। ए फ है।
∴ स द है। ∴ स द है।

यहां ह्रस्ववाक्योंमें हेतुओंका विधान किया गया है और निष्कर्षोंमें फलका विधान। इसलिए यह उभयतोपाश आकारकी दृष्टिसे सत्य है।

एक ठोस उदाहरण लीजिये:—

यदि मनुष्य अपनी इच्छानुसार काम करता है तो लोग उसकी निन्दा करते हैं; और यदि वह दूसरेकी इच्छानुसार काम करता है तो लोग उसकी निन्दा करते हैं।—दीर्घवाक्य

या तो मनुष्य अपनी इच्छानुसार काम करता है या दूसरेकी इच्छानुसार।—ह्रस्ववाक्य

∴ दोनों दशाओंमें उसकी निन्दा की जाती है।—निष्कर्ष

इसमें नीचे लिखे दो हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्याय शामिल हैं:—

(१) यदि मनुष्य अपनी इच्छानुसार काम करता है तो उसकी निन्दा होती है।

मनुष्य अपनी इच्छानुसार काम करता है।
∴ उसकी निन्दा होती है।

(२) यदि मनुष्य दूसरेकी इच्छानुसार काम करता है तो उसकी निन्दा होती है।

मनुष्य दूसरेकी इच्छानुसार काम करता है।
∴ उसकी निन्दा होती है।

इन दोनोंमें ह्रस्ववाक्यमें हेतुओंका विधान करनेके बाद निष्कर्षमें फलका विधान किया गया है। अतः उभयतोपाश आकारकी दृष्टिसे सत्य है।

इसी प्रकार जटिल विधायक, सरल विघातक और जटिल विघातक उभयतोपाशोंकी आकारविषयक सत्यता भी जांची जा सकती है। उपर्युक्त नियमोंका पालन न करनेसे उभयतोपाश असत्य हो जायगा।

अतः आकारविषयक सत्यता जाननेके हेतु उभयतोपाश को उसके हेतुफलाश्रित निरपेक्ष न्यायोंमें तोड़कर यह देखना चाहिये कि उनमें उनके नियमों का पूरा पालन हुआ है या नहीं।

द्रव्यकी दृष्टिसे उभयतोपाशकी सत्यता.

उभयतोपाशका आकारकी दृष्टिसे सत्य होना काफ़ी नहीं है। उसे द्रव्यकी दृष्टिसे भी सत्य होना चाहिए अर्थात् उसके आधारवाक्योंको सत्य होना चाहिए। उभयतोपाश द्रव्यकी दृष्टिसे असत्य होती है क्योंकि उसके ऐसे उदाहरण बहुत कम किलते हैं। जिनमें दोनों विकल्प निःशेषकारी हों अर्थात् उनके बाहर कुछ सम्भावनाएं बच जाती हैं, यद्यपि ऐसा प्रतीत नहीं होता। ऐसे उदाहरणोंकी परीक्षा करने पर उनमें द्रव्यसम्बन्धी दोष दिखाई देते हैं। जब आधारवाक्य द्रव्यकी दृष्टिसे ठीक नहीं होंगे तो वहां द्रव्यविषयक दोष हो ही जायगा। यदि आधारवाक्य द्रव्यकी दृष्टिसे ठीक न हों तो निष्कर्ष भी ठीक नहीं होगा। इसलिए यह देखना आवश्यक है कि उभयतोपाश द्रव्यकी दृष्टिसे सत्य है या नहीं।

द्रव्यकी दृष्टिसे उभयतोपाश की सत्यता।

जेवोन्स का कथन है कि "उभयतोपाश सत्य होनेके बजाय दोषयुक्त ही होते हैं।" इसका एक कारण यह है कि ह्रस्ववाक्यके दो विकल्पोंमें सभी सम्भावनाएं नहीं आ जातीं। उदाहरणके लिये निम्नलिखित उभयतोपाशको लीजिये:—

यदि विद्यार्थी पढ़ना पसन्द करता है तो उसे किसी प्रकारके प्रोत्साहनकी आवश्यकता नहीं है; यदि वह पढ़ना पसन्द नहीं करता तो किसी भी प्रकारका प्रोत्साहन व्यर्थ सिद्ध होगा।

विद्यार्थी या तो पढ़ना पसन्द करता है या नहीं।
∴ प्रोत्साहन या बो अनावश्यक है या व्यर्थ।

इस उभयतोपाशमें यह अनुचित रूपसे मान लिया गया है कि ह्रस्ववाक्यमें केवल दो ही विकल्प हैं अर्थात् (१) पढ़नेको पसन्द करना और (२) पढ़नेको नापसन्द करना। लेकिन ऐसे भी विद्यार्थी हो सकते

हैं जो न तो पढ़ना पसन्द ही करते हैं और न नापसन्द ही। ऐसे लड़कोंको पारितोषिक देकर प्रोत्साहित किया जा सकता है। इसलिए दिया हुआ उभयतोपाश दोषयुक्त है क्योंकि उसका ह्रस्ववाक्य द्रव्यकी दृष्टिसे असत्य है। इसी प्रकार यह भी दिखाया जा सकता है कि उभयतोपाशका दीर्घवाक्य भी प्राय: द्रव्यकी दृष्टिसे असत्य होता है। ऐसा तब होता है जब दीर्घवाक्यके हेतु और फलका सम्बन्ध असत्य होता है।

दो तरीक़े।

उभयतोपाशकी द्रव्यविषयक असत्यता दो तरीक़ोंसे सिद्ध की जा सकती है—

(१) दीर्घवाक्य असत्य हो सकता है।

(१) दीर्घवाक्य द्रव्यकी दृष्टिसे असत्य हो सकता है.

उभयतोपाशके दीर्घवाक्यमें दो हेतुफलाश्रित वाक्य होते हैं। यदि परीक्षा करने पर मालूम हो कि इन हेतुफलाश्रित वाक्योंके फल हेतुसे नहीं निकलते तो दीर्घवाक्य द्रव्यकी दृष्टिसे असत्य सिद्ध होता है और यदि आधारवाक्य असत्य है तो निष्कर्ष अवश्य ही असत्य होगा।

जटिल विधायक उभयतोपाश के पीछे दिये हुए उदाहरणमें फल 'व्यर्थ हैं' हेतु 'यदि पुस्तकें क़ुरान के अनुकूल हैं' से अनिवार्यत: नहीं निकलता, क्योंकि यह दिखाने के लिये कोई कारण नहीं है कि क़ुरानके अनुकूल होने से पुस्तकें व्यर्थ हो जाती हैं। इसी प्रकार दूसरा हेतुफलाश्रित वाक्य 'यदि पुस्तकें क़ुरान के प्रतिकूल हैं तो हानिकारक हैं' भी वस्तुत: असत्य है। हो सकता है कि एक पुस्तक क़ुरान के प्रतिकूल हो और फिर भी हानिकारक न हो। इस तरहसे यह दिखाया जा सकता है कि यह उभयतोपाश असत्य हैं क्योंकि इसका दीर्घवाक्य द्रव्य की दृष्टिसे असत्य है।

उभयतोपाश की एक क्रुद्ध बैल से तुलना की गई है जिसके दो सींग हैं। जिस व्यक्तिके विरुद्ध उभयतोपाश का प्रयोग किया जाता है उसकी तुलना उस व्यक्तिसे की गई है जो क्रुद्ध बैलके सींगोंका शिकार बना हुआ है। ऊपर लिखी रीतिसे उभयतोपाशकी असत्यता सिद्ध करना "उभयतोपाशको उसके सींगोंसे पकड़ना" कहलाता है। वह मनुष्य

जिसके प्रति उभयतोपाशका प्रयोग किया जाता है बैल के सींगको पकड़कर यह सिद्ध कर देता है कि उभयतोपाश रूपी बैलमें कोई शक्ति नहीं है।

(२) ह्रस्ववाक्य द्रव्यकी दृष्टिसे असत्य हो सकता है.

उभयतोपाशका ह्रस्ववाक्य वैकल्पिक होता है। दो विकल्प रखे जाते हैं और यह मान लिया जाता है कि वे विकल्प पूरी तरहसे विरोधी हैं और सभी सम्भावनाओंका उनमें समावेश हो गया है लेकिन यदि यह मालूम हो सके कि अन्य सम्भावनाएं भी हैं जिनकी उपेक्षा कर दी गई है तो ह्रस्ववाक्य द्रव्यकी दृष्टिसे असत्य सिद्ध हो जाता है।

(२) ह्रस्ववाक्य असत्य हो सकता है।

सरल विधायक उभयतोपाशके पहिले दिये हुए उदाहरणमें जो विकल्प ह्रस्ववाक्यमें दिये गये हैं अर्थात् "मनुष्य या तो अपनी इच्छानुसार काम करता है या दूसरेकी इच्छानुसार," वे पूरी तरहसे एक-दूसरेके विरोधी नहीं हैं। यह हो सकता है कि मनुष्यका अपनी इच्छा से किया हुआ काम दूसरोंकी इच्छाके अनुसार भी हो। इसलिए यह कहा जा सकता है कि वैकल्पिक वाक्यमें विकल्पोंका जो विरोध दिखाया गया है वह ठीक नहीं है। उभयतोपाशकी असत्यता सिद्ध करनेका यह तरीक़ा "दोनों सींगोंके बीचसे होते हुए बच निकलनेका तरीक़ा" कहलाता है।

टिप्पणी. प्रतिक्षेपसे उभयतोपाशकी कमज़ोरी प्रकट हो जाती है.

किसी उभयतोपाश की द्रव्यविषयक असत्यता यह दिखाकर सिद्ध की जा सकती है कि उसका दीर्घवाक्य या ह्रस्ववाक्य या दोनों ही असत्य हैं। प्रतिक्षेप यद्यपि उभयतोपाशको असत्य पूरी तरहसे सिद्ध नहीं करता तथापि परोक्ष रूपमें वह दिये हुए उभयतोपाशकी कमज़ोरी प्रकट कर देता है। प्रतिक्षेपमें एक प्रत्युभयतोपाश (counter-dilemma) बनाया जाता है जो कि ठीक उल्टा निष्कर्ष सिद्ध करता

है। जब किसी दिये हुए उभयतोपाशके आधारवाक्योंको थोड़ा बदल कर प्रत्युभयतोपाश बनाया जाता है तब उभयतोपाशका प्रयोग करने वालेके सामने समान रूपसे अप्रिय विकल्प रखना आसानीसे सम्भव हो जाता है जिससे दी हुई युक्तिकी कमज़ोरी तुरन्त प्रकट हो जाती है।

अभ्यासार्थ प्रश्न १२

१. हेतुफलाश्रित न्याय और वैकल्पिक न्यायकी सोदाहरण व्याख्या कीजिये। किसी हेतुफलाश्रित या वैकल्पिक न्यायको शुद्ध निरपेक्ष न्यायमें बदलिये। यह भी दिखाइये कि इससे क्या हानि या लाभ होता है।

२. निम्नलिखित कथनको सिद्ध कीजिये :—

हेतुफलाश्रित न्याय और वैकल्पिक न्यायको निरपेक्ष न्यायमें बदला जा सकता है।

३. वैकल्पिक वाक्य और वैकल्पिक न्यायकी व्याख्या कीजिये। उनके नियमोंको भी समझाइये।

४. हेतुफलाश्रित न्यायके नियमोंको बतलाइये तथा निरपेक्ष न्यायके उन दोषोंकी व्याख्या कीजिये जो हेतुफलाश्रित न्यायमें भी मिलते हैं।

५. मिश्रित न्यायके प्रकार कौन-कौन हैं ? वे शुद्ध न्यायमें बदले जा सकते हैं या नहीं ? ठोस उदाहरणोंके द्वारा समझाइये।

६. वैकल्पिक न्यायकी व्याख्या कीजिये। इसके नियमोंको भी बताइये।

७. शुद्ध और मिश्रित न्यायके प्रकार और अन्तर बताइये। उनकी जांच कैसे की जाती है ?

८. हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्यायके नियमोंको बताइये और उदाहरण द्वारा सिद्ध कीजिये कि इन नियमोंको भंग करनेसे अनियमित दीर्घपद और अव्याप्त मध्यमपदके दोष पैदा होते हैं।

९. मिश्रित न्याय किसे कहते हैं ? इसके विभिन्न प्रकारोंको बताइये। हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्यायके नियम और उनके भंग होनेसे पैदा होनेवाले दोषोंको भी बताइये।

१०. ठोस उदाहरण लेकर वैकल्पिक न्यायकी प्रकृतिको बताइये। इसके विभिन्न प्रकार और नियमोंको भी बताइये।

११. (क) यदि विद्यार्थी परिश्रमी है तो वह परीक्षामें पास हो जायगा।

वह परीक्षामें पास हो जाता है।

∴ वह परिश्रमी है।

(ख) यदि मनुष्य अपराधी है तो उसे दण्ड मिलेगा।

वह अपराधी नहीं है।

∴ उसे दण्ड नहीं मिलेगा।

ऊपर दिये हुए न्यायोंको निरपेक्ष न्यायमें बदलिये और फिर उनकी जांच कीजिये।

१२. उभयतोपाश किसे कहते हैं? उसकी सत्यता किस प्रकार सिद्ध की जाती है? उभयतोपाशका प्रतिक्षेप किस प्रकार किया जाता है?

१३. उभयतोपाशकी व्याख्या कीजिये। इसके कौन-कौनसे प्रकार हैं? उनके ठोस उदाहरण दीजिये।

१४. उभयतोपाशकी परिभाषा दीजिये। उभयतोपाश सत्य होनेके बजाय प्राय: असत्य क्यों होता है? निम्नलिखित उभयतोपाशका प्रतिक्षेप कीजिये—

यदि मैं खेतको पार करता हूं तो बैल मिलता है और यदि सीधे रास्तेसे जाता हूं तो किसान मिलता है।

या तो मुझे खेतको पार करना होगा या सीधे रास्ते जाना होगा।

∴ या तो मुझे बैल मिलेगा या किसान मिलेगा।

[संकेत. प्रत्युभयतोपाश इस प्रकार होगा:—

यदि मैं खेतको पार करता हूं तो किसान नहीं मिलेगा और यदि सीधे रास्तेसे जाता हूं तो बैल नहीं मिलेगा।

या तो मुझे खेत पार करना होगा या सीधे रास्ते जाना होगा।

∴ या तो मुझे किसान नहीं मिलेगा या बैल नहीं मिलेगा।]

१५. विभिन्न प्रकारके उभयतोपाशोंको ठोस उदाहरणोंके द्वारा समझाइये।

१६. एक बादशाहकी प्रतिष्ठा या तो सैनिक चातुर्यके कारण होती है या राजनीतिक कौशलके कारण।

अकबर की प्रतिष्ठा उसके राजनीतिक कौशलके कारण होती थी।

∴ उसमें सैनिक चातुर्य नहीं था।

इस युक्तिकी परीक्षा कीजिये।

१७. किसी द्वीपसमूहके लिये स्थल-सेना आवश्यक नहीं है क्योंकि जब जलसेना ही समुद्रकी रक्षा करती है तो स्थल-सेनाको करनेके लिये

कुछ नहीं रह जाता, और यदि उसकी जलसेना समाप्त कर दी जाय तो उसकी स्थल-सेना कुछ नहीं कर सकती।

इस युक्तिकी परीक्षा कीजिये।

१८. यदि प्रवासी बेकार हैं तो वे उपनिवेशके लिये भार-स्वरूप हैं और यदि वे कारगर हैं तो अन्य जगह जाकर अपने देशकी हानि करते हैं।

या तो वे बेकार हैं या कारगर।

∴ या तो वे उपनिवेशके लिये भार-स्वरूप हैं या अपने देशके लिये हानिकारक।

इस उभयतोपाशका प्रतिक्षेप कीजिये।

१९. इस बातको कि "धन अनावश्यक है" सिद्ध करनेके लिये एक उभयतोपाशकी रचना कीजिये। उभयतोपाश प्रायः असत्य क्यों होते है?

२०. निम्नलिखित उभयतोपाशकी परीक्षा कीजिये :—

यदि विद्यार्थी पढ़ना पसन्द करता है तो उसे किसी प्रोत्साहनकी आवश्यकता नहीं है और यदि वह पढ़ना पसन्द नहीं करता तो कोई भी प्रोत्साहन व्यर्थ होगा।

या तो वह पढ़ना पसन्द करेगा या नहीं।

∴ प्रोत्साहन या तो अनावश्यक है या व्यर्थ।

१३

संक्षिप्त न्यायवाक्य
(Enthymeme)

भाग १. संक्षिप्त न्याय.

संक्षिप्त न्याय वह न्याय है जिसके कुछ वाक्य अप्रकट रहते हैं।

जब न्यायको पूरी तरह व्यक्त किया जाता है तब उसमें तीन वाक्य रहते हैं, दीर्घवाक्य, ह्रस्ववाक्य और निष्कर्ष। साधारणतया न्यायके सभी वाक्योंको व्यक्त नहीं किया जाता। तर्कशास्त्रके बाहर साधारण बोलचालमें हम शायद ही कभी तीनों वाक्योंका कथन करते हों। मनुष्यकी प्रवृत्ति हमेशा सरल रास्ता पकड़नेकी होती है। वह तर्कमें उतने ही वाक्योंका कथन करना चाहता है जितने उसके अभिप्रायको प्रकट करनेके लिये पर्याप्त होते हैं। इस कारण व्यवहारमें न्यायका पूरा रूप नहीं दिखाई देता। इस प्रकार न्याय प्रायः संक्षिप्त रूपमें ही दिखाई देता है जिसमें कुछ वाक्य लुप्त रहते हैं। संक्षिप्त न्यायको **अपूर्ण-न्याय या लुप्तावयव** भी कहते हैं। संक्षिप्त न्याय।

संक्षिप्त न्याय **चार प्रकार** के होते हैं:— चार प्रकार।

(क) **प्रथम श्रेणीका संक्षिप्त न्याय (Enthymeme of the first order) वह होता है जिसका दीर्घवाक्य लुप्त होता है लेकिन ह्रस्ववाक्य और निष्कर्ष व्यक्त रहते हैं**, जैसे— (क) दीर्घ-वाक्य लुप्त

सुकरात मरणशील है, क्योंकि वह मनुष्य है। पूर्ण रूपसे व्यक्त होने पर इसका रूप यह होगा—

सब मनुष्य मरणशील हैं।
सुकरात एक मनुष्य है।
∴ सुकरात मरणशील है।

इस प्रकार ऊपरके न्यायमें दीर्घवाक्य "सब मनुष्य मरणशील हैं" दबा दिया गया है। अतः वह प्रथम श्रेणीका संक्षिप्त न्याय है।

(ख) ह्रस्व-वाक्य लुप्त

(ख) **संक्षिप्त न्याय दूसरी श्रेणीका तब होता है जब उसका केवल ह्रस्ववाक्य लुप्त रहता है,** जैसे—

सुकरात मरणशील है क्योंकि सब मनुष्य मरणशील हैं।

इसमें ह्रस्ववाक्य "सुकरात एक मनुष्य है" लुप्त है।

(ग) निष्कर्ष लुप्त

(ग) **संक्षिप्त न्याय तीसरी श्रेणीका तब कहलाता है जब केवल निष्कर्ष लुप्त रहता है,** जैसे—

मनुष्य मरणशील हैं और सुकरात मनुष्य है।

इसमें निष्कर्ष "सुकरात मरणशील है" दबा हुआ है।

(घ) केवल एक वाक्य प्रकट

(घ) **संक्षिप्त न्याय चौथी श्रेणीका तब कहलाता है जब केवल एक ही वाक्य प्रकट रहता है और उसीसे सारे न्यायका भाव व्यक्त होता है।** कभी-कभी ऐसा होता है कि साधारण बातचीतमें केवल एक ही वाक्य, चाहे वह एक आधारवाक्य हो चाहे निष्कर्ष, प्रकट किया जाता है और युक्तिके दूसरे भाग दबा दिये जाते हैं क्योंकि वे इतने स्पष्ट रहते हैं कि उन्हें केवल प्रसंगसे जान लेना आसान होता है। जैसे, जब शेक्सपियर ने कहा "निर्बलता, तेरा नाम स्त्री है" तो स्पष्टतः उसका इशारा हैमलेट की मां की ओर था। यह एक ही वाक्य पूरे न्याय के रूपमें इस प्रकार रखा जा सकता है:—

सब स्त्रियां निर्बल होती हैं।
जर्ट्रद एक स्त्री है।
∴ जर्ट्रद निर्बल है।

जब किसी मित्रके यहां किसीकी मृत्यु हो जाती है और हम उसे सान्त्वना देनेके लिये कहते हैं "मनुष्य मरणशील ही तो है।" तो इसका स्पष्ट अर्थ है कि मरनेवालेको मरना ही था। इसको आसानी पूरी तरह व्यक्त किया जा सकता है। इसी प्रकार जब न्यायाधीश ग़लती

करता है तो हम कहते हैं—"आखिरकार न्यायाधीश मनुष्य ही तो है" या "ग़लती करना मनुष्यका स्वभाव है।"

अभ्यासार्थ प्रश्न १३

१. संक्षिप्त न्यायसे आप क्या समझते हैं? इसके प्रकार बताइये और प्रत्येकका उदाहरण दीजिये।

१४

संयुक्त न्यायवाक्य या न्यायमाला
(Compound Syllogism or Trains of Reasoning)

अनुलोम (वर्धमान) और विलोम (हीयमान) (Progressive and Regressive)

भाग १. अनुलोम और विलोम न्यायमाला.

न्यायमाला।

न्यायमाला ऐसे दो या अधिक न्यायोंकी श्रृंखलाको कहते हैं जिनका परस्पर सम्बन्ध इस प्रकारका होता है कि अन्तमें उनसे केवल एक ही निष्कर्ष निकलता है, जैसे—

(१) सब ब स है।
सब अ ब है।
∴ सब अ स है।
(२) सब स द है।
सब अ स है।
∴ सब अ द है।
(३) सब द ए है।
सब अ द है।
∴ सब अ ए है।
(४) सब ए फ है।
सब अ ए है।
∴ सब अ फ है।

इस उदाहरणमें चार न्याय इस प्रकार जुड़े हुए हैं कि पहिलेका निष्कर्ष दूसरेका आधारवाक्य बन जाता है, दूसरेका निष्कर्ष तीसरेका

आधारवाक्य, और इसी तरह आगे भी जिससे अन्तमें निष्कर्ष "सब अ फ है" निकलता है। इसे न्यायमाला कहते हैं।

पूर्वन्याय और उत्तरन्याय

न्यायमालामें जिस न्यायका निष्कर्ष दूसरे न्यायमें आधारवाक्य बनता है वह दूसरे न्यायकी तुलनामें **पूर्वन्याय (Prosyllogism)** कहलाता है तथा दूसरे न्यायको पहिले न्यायकी तुलनामें **उत्तरन्याय (Episyllogism)** कहते हैं।

स्पष्ट है कि पूर्वन्याय और उत्तरन्याय सापेक्ष पद हैं। एक ही न्याय एक दृष्टिसे पूर्वन्याय और दूसरी दृष्टिसे उत्तरन्याय कहा जा सकता है। ऊपर दिये हुए उदाहरणमें दूसरा न्याय पहिलेकी तुलनामें उत्तर-न्याय है और वही तीसरे न्यायकी तुलनामें पूर्वन्याय है। इसी प्रकार तीसरा न्याय दूसरेकी तुलनामें उत्तरन्याय और चौथेकी तुलनामें पूर्व-न्याय है।

उत्तरोन्मुखी न्यायमाला।

ऊपरके उदाहरणमें हम देखते हैं कि पहिला न्याय दूसरे न्यायके मुक़ाबलेमें पूर्वन्याय है; दूसरा न्याय तीसरेके मुक़ाबलेमें पूर्वन्याय है और तीसरा चौथेके मुक़ाबलेमें पूर्वन्याय है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि यह न्यायमाला पूर्वन्यायसे उत्तरन्यायकी ओर चलती है। ऐसी न्यायमालाको **अनुलोम, वर्धमान, उत्तरोन्मुखी** या **संश्लेषणात्मक (Synthetic) न्यायमाला** कहते हैं। अतः **उत्तरोन्मुखी न्यायमाला दो या दो से अधिक न्यायोंका योग है जिसमें तर्क पूर्वन्यायसे उत्तरन्यायकी अग्रसर होता है।**

पूर्वोन्मुखी न्यायमाला।

इसके विपरीत जब तर्क उत्तरन्यायसे पूर्वन्यायकी ओर चलता है तब न्यायमाला **विलोम, हीयमान, पूर्वोन्मुखी** या **विश्लेषणात्मक** कहलाती है। ऊपर दिया हुआ उदाहरण उल्टी ओरसे देखने पर विलोम या पूर्वोन्मुखी न्यायमाला बन जाता है :—

(१) सब अ फ है।
∵ सब ए फ है; और
सब अ ए है।

(२) सब अ ए है।
∵ सब द ए है; और
सब अ द है।
(३) सब अ द है।
∵ सब स द है; और
सब अ स है।
(४) सब अ स है।
∵ सब ब स है; और
सब अ ब है।

इस उदाहरणमें पहिला न्याय दूसरेके मुक़ाबलेमें उत्तरन्याय है क्योंकि पहिलेका एक आधारवाक्य "सब अ ए है" दूसरेका निष्कर्ष है। इसी तरह दूसरे और तीसरे न्याय क्रमशः तीसरे और चौथेके मुक़ाबलेमें उत्तरन्याय हैं। इसमें न्यायमाला उत्तरन्यायसे पूर्वन्यायकी ओर चलती है। इस कारण इसे विलोम, पूर्वोन्मुखी या विश्लेषणात्मक न्यायमाला कहते हैं।

अभ्यासार्थ प्रश्न १४

१. न्यायमाला क्या है? उदाहरण देकर समझाइये।

२. न्यायमालासे आप क्या समझते हैं? कोई ठोस उदाहरण दीजिये। सांकेतिक उदाहरण देकर अनुलोम तथा विलोम न्यायमाला को समझाइये।

३. पूर्वन्याय और उत्तरन्यायसे आप क्या समझते हैं?

१५

संक्षिप्त न्यायमाला

संक्षिप्त अनुलोम न्यायमाला: संक्षिप्त विलोम न्यायमाला

(Abridged Progressive Trains of Reasoning–Sorites: Abridged Regressive Trains of Reasoning–Epicheirema)

भाग १. संक्षिप्त अनुलोम न्यायमाला.

संक्षिप्त अनुलोम न्यायमाला वह अनुलोम न्यायमाला है जिसमें सभी पूर्वन्यायोंके निष्कर्ष (और तत्सम्बन्धी उत्तरन्यायोंके आधार-वाक्य) गुप्त रहते हैं। संक्षिप्त अनुलोम न्यायमाला।

संक्षिप्त अनुलोम न्यायमालामें तर्क पूर्वन्यायसे उत्तरन्यायकी ओर चलता है। लेकिन इसमें पूर्वन्याय और उत्तरन्याय पूरी तरहसे व्यक्त नहीं रहते, बल्कि पूर्वन्यायोंके निष्कर्ष और तत्सम्बन्धी उत्तरन्यायोंके आधारवाक्य दबे रहते हैं। इस प्रकार संक्षिप्त अनुलोम न्यायमाला संक्षिप्त न्यायोंकी शृंखला होती है, जैसे—

सब अ ब है।
सब ब स है।
सब स द है।
सब द ए है।
सब ए फ है।
∴ सब अ फ है।

इसका पूरी तरहसे व्यक्त रूप इस प्रकार होगा:—

(१) सब ब स है।
सब अ ब है।
∴ **सब अ स है।**
(२) सब स द है।
सब अ स है।
∴ **सब अ द है।**
(३) सब द ए है।
सब अ द है।
∴ **सब अ ए है।**
(४) सब ए फ है।
सब अ ए है।
∴ सब अ फ है।

इससे स्पष्ट है कि काले अक्षरोंवाले वाक्य जो पूर्वन्यायके निष्कर्ष हैं और तत्सम्बन्धी उत्तरन्यायके आधारवाक्य हैं ऊपर दिये हुए संक्षिप्त अनुलोम न्यायमालाके उदाहरणमें गुप्त हैं।

भाग २. संक्षिप्त अनुलोम न्यायमालाके प्रकार.

संक्षप्ति अनुलोम न्यायमाला दो प्रकारकी होती है—**अरस्तवी (Aristotelian)** और **गोक्लीनी (Goclenian)**।

अरस्तवी संक्षिप्त अनुलोम न्यायमाला।

(१) **अरस्तवी संक्षिप्त अनुलोम न्यायमाला वह है जिसमें पूर्वन्यायोंके दबे हुए निष्कर्ष उत्तरन्यायोंमें ह्रस्ववाक्य बनते हैं,** जैसे—

सांकेतिक उदाहरण	ठोस उदाहरण
सब अ ब है।	बूसेफेलस एक घोड़ा है।
सब ब स है।	घोड़ा चतुष्पद होता है।
सब स द है।	चतुष्पद एक पशु होता है।
सब द ए है।	पशु एक पदार्थ है।
सब ए फ है।	∴ बूसेफेलस एक पदार्थ है।
∴ सब अ फ है।	

यदि हम ऊपरकी संक्षिप्त अनुलोम न्यायमालाको पूरी तरह व्यक्त करें तो देखेंगे कि पूर्वन्यायोंके दबे हुए निष्कर्ष उत्तरन्यायोंके ह्रस्ववाक्य हैं। सांकेतिक उदाहरणको पहिले ही पूरी तरहसे व्यक्त किया जा चुका है। ठोस उदाहरणको पूरी तरहसे व्यक्त करने पर उसका यह रूप होगा:—

(१) सब घोड़े चतुष्पद होते हैं।
बूसेफेलस एक घोड़ा है।
∴ **बूसेफेलस चतुष्पद है।**
(२) सब चतुष्पद पशु हैं।
बूसेफेलस एक चतुष्पद है।
∴ **बूसेफेलस एक पशु है।**
(३) सब पशु पदार्थ है।
बूसेफेलस एक पशु है।
∴ बूसेफेलस एक पदार्थ है।

(२) **गोक्लीनी संक्षिप्त अनुलोम न्यायमाला वह है जिसमें पूर्वन्यायका दबा हुआ निष्कर्ष उत्तरन्यायका दीर्घवाक्य होता है।** यह गोक्लेनियस (**Goclenius,** १५४७—१६२८) के नामसे है।

गोक्लीनी संक्षिप्त अनुलोम न्यायमाला।

उदाहरण—

सांकेतिक	**ठोस**
सब ए फ है।	पशु एक पदार्थ है।
सब द ए है।	चतुष्पद एक पशु है।
सब स द है।	घोड़ा चतुष्पद है।
सब ब स है।	बूसेफेलस एक घोड़ा है।
सब अ ब है।	∴ बूसेफेलस एक पदार्थ है।
∴ सब अ फ है।	

यदि हम इस सांकेतिक उदाहरणको पूरी तरहसे व्यक्त करें तो देखेंगे कि पूर्वन्यायका गुप्त निष्कर्ष उत्तरन्यायका दीर्घवाक्य है:—

(१) सब ए फ है।
सब द ए है।
∴ सब द फ है।
(२) सब द फ है।
सब स द है।
∴ सब स फ है।
(३) सब स फ है।
सब ब स है।
∴ सब ब फ है।
(४) सब ब फ है।
सब अ ब है।
∴ सब अ फ है।

इसी प्रकार ठोस उदाहरणको भी नीचे दिये हुए तरीक़ेसे व्यक्त किया जा सकता है :—

(१) सब पशु पदार्थ हैं।
सब चतुष्पद पशु हैं।
∴ सब चतुष्पद पदार्थ हैं।
(२) सब चतुष्पद पदार्थ हैं।
सब घोड़े चतुष्पद हैं।
∴ सब घोड़े पदार्थ हैं।
(३) सब घोड़े पदार्थ हैं।
बूसेफेलस एक घोड़ा है।
∴ बूसेफेलस एक पदार्थ है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि गोक्लीनी न्यायमालामें पूर्वन्यायका दबा हुआ निष्कर्ष उत्तरन्यायमें दीर्घवाक्य होता है।

अरस्तवी तथा गोक्लीनी न्यायमालाकी तुलना।

यदि हम अरस्तवी और गोक्लीनी न्यायमालाओंकी तुलना करें तो देखेंगे कि दोनोंमें वही आधारवाक्य हैं और वही निष्कर्ष है, फिर भी उनमें निम्नलिखित अन्तर हैं :—

(क) **दीर्घपद.** अरस्तवी न्यायमालामें अन्तिम आधारवाक्यका

विधेय दीर्घपद होता है किन्तु गोक्लीनी न्यायमालामें पहिले आधार-वाक्यका विधेय दीर्घपद होता है।

(ख) **ह्रस्वपद.** अरस्तवी न्यायमालामें पहिला उद्देश्य ह्रस्वपद होता है जबकि गोक्लीनीमें अन्तिम उद्देश्य ह्रस्वपद होता है।

(ग) **गुप्त निष्कर्ष.** अरस्तवी न्यायमालामें पूर्वन्यायका गुप्त निष्कर्ष उत्तरन्यायका ह्रस्ववाक्य होता है जबकि गोक्लीनीमें गुप्त निष्कर्ष उत्तरन्यायका दीर्घवाक्य होता है।

(घ) **आधारवाक्य.** अरस्तवी न्यायमालामें पहिला आधार-वाक्य ह्रस्ववाक्य होता है और बाक़ी सब आधारवाक्य दीर्घवाक्य होते हैं जबकि गोक्लीनीमें पहिला आधारवाक्य दीर्घवाक्य होता है और बाक़ी सब आधारवाक्य ह्रस्ववाक्य होते हैं।

भाग ३. संक्षिप्त अनुलोम न्यायमालाके नियम.

यदि संक्षिप्त अनुलोम न्यायमाला पूर्णरूपसे पहिले आकारमें है अर्थात् यदि उसके सभी अंगीभूत न्याय पहिले आकारमें हैं तो निम्नलिखित नियम दोनों प्रकारकी न्यायमालाओंमें लागू होते हैं :—

नियम :

(१) केवल एक ही आधारवाक्य निषेधात्मक हो सकता है, अरस्तवी में अन्तिम और गोक्लीनीमें प्रथम।

(१) केवल एक आधार-वाक्य निषेधात्मक होगा।

(क) केवल एक ही आधारवाक्य निषेधात्मक हो सकता है।

एक आधारवाक्यके निषेधात्मक होनेसे निष्कर्ष भी निषेधात्मक होता है और इसलिए यदि एकसे अधिक आधारवाक्य निषेधात्मक होंगे तो अन्तमें न्यायमालाके किसी-न-किसी न्यायके दोनों आधारवाक्य निषेधात्मक हो जायेंगे और इस प्रकार कोई निष्कर्ष नहीं निकल सकेगा।

(ख) यदि कोई आधारवाक्य निषेधात्मक है तो वह अरस्तवी न्यायमालामें अन्तिम और गोक्लीनीमें प्रथम होगा।

यदि कोई आधारवाक्य निषेधात्मक है तो अन्तिम निष्कर्ष अवश्य निषेधात्मक होगा। यदि अन्तिम निष्कर्ष निषेधात्मक होगा तो उसका

विधेय व्याप्त होगा। इसलिए वह आधारवाक्य जिसमें निष्कर्षका विधेय विधेय है आवश्यक रूपसे निषेधात्मक होना चाहिए। चूंकि अन्तिम निष्कर्ष का विधेय अरस्तवी न्यायमालामें अन्तिम आधारवाक्यका विधेय होता है और गोक्लीनीमें प्रथम आधारवाक्यका विधेय, इसलिए अरस्तवी का अन्तिम और गोक्लीनीका प्रथम आधारवाक्य ही निषेधात्मक हो सकता है, अन्यथा अनियमित दीर्घपद का दोष हो जायगा।

(२) एक ही आधारवाक्य विशेष हो सकता है।

(२) **केवल एक ही आधारवाक्य विशेष हो सकता है, अरस्तवीमें प्रथम और गोक्लीनीमें अन्तिम।**

(क) **केवल एक ही आधारवाक्य विशेष हो सकता है।**

यदि एक आधारवाक्य विशेष है तो निष्कर्ष भी विशेष होगा। अतः यदि एकसे अधिक आधारवाक्य विशेष हों तो अन्तमें किसी-न-किसी न्यायमें दोनों आधारवाक्य विशेष हो जायेंगे और फिर कोई निष्कर्ष नहीं निकलेगा।

(ख) **यदि कोई आधारवाक्य विशेष हो सकता है तो वह अरस्तवीमें प्रथम और गोक्लीनीमें अन्तिम होगा।**

अरस्तवी न्यायमालामें केवल पहिले आधारवाक्यको छोड़कर सभी आधारवाक्य दीर्घवाक्य होते हैं। ये नियम संक्षिप्त अनुलोम न्यायमालामें केवल तभी लागू होते हैं जब उसके सभी न्याय पहिले आकारमें होते हैं। पहिले आकारके विशेष नियमोंमें एकके अनुसार दीर्घवाक्यको हमेशा सामान्य होना चाहिए। इस प्रकार अरस्तवीं न्यायमालामें केवल पहिला ही आधारवाक्य विशेष हो सकता है क्योंकि वह ह्रस्ववाक्य होता है।

गोक्लीनीमें, यदि अन्तिम वाक्यको छोड़कर कोई अन्य आधारवाक्य विशेष होगा तो उस न्यायका जिसमें वह आधारवाक्य विशेष है, निष्कर्ष भी विशेष ही होगा। लेकिन गोक्लीनी न्यायमालामें एक न्यायका निष्कर्ष दूसरे न्यायका दीर्घवाक्य हो जाता है जबकि पहिले आकारमें दीर्घवाक्यको अवश्य सामान्य होना चाहिए। इसलिए इसमें केवल अन्तिम आधारवाक्य ही विशेष हो सकता है। यदि कोई अन्य

वाक्य विशेष होगा तो **अव्याप्त मध्यमपद** का दोष पैदा हो जायेगा।

भाग ४. संक्षिप्त विलोम न्यायमाला.

संक्षिप्त विलोम न्यायमाला वह विलोम न्यायमाला है जिसमें हरेक पूर्वन्यायका एक आधारवाक्य गुप्त रहता है। इसको संक्षिप्त विश्लेषणात्मक या पूर्वोन्मुखी न्यायमाला भी कहते हैं। इसमें प्रत्येक पूर्वन्यायका एक आधारवाक्य गुप्त रहता है। उत्तरन्याय पूर्णरूपसे व्यक्त रहता है। संक्षिप्त विलोम न्यायमाला।

संक्षिप्त विलोम न्यायमाला दो प्रकारकी होती है **सरल (Simple)** और **जटिल (Complex)**। सरल संक्षिप्त विलोम न्यायमालामें उत्तरन्यायके आधारवाक्य संक्षिप्त न्यायोंके द्वारा सिद्ध किये जाते हैं, किन्तु जटिल संक्षिप्त विलोम न्यायमालामें ये संक्षिप्त न्याय भी अन्य संक्षिप्त न्यायोंके द्वारा सिद्ध किये जाते हैं। प्रकारः (१) सरल और जटिल।

संक्षिप्त विलोम न्यायमालाके दो अन्य प्रकार भी होते हैं जिनके नाम हैं **एकनिष्ठ (Single)** और **उभयनिष्ठ (Double)**। एकनिष्ठ संक्षिप्त विलोम न्यायमालामें उत्तरन्यायका एक आधारवाक्य संक्षिप्त न्यायोंके द्वारा सिद्ध किया जाता है, किन्तु उभयनिष्ठमें उसके दोनों आधारवाक्य संक्षिप्त न्यायोंके द्वारा सिद्ध किये जाते हैं। (२) एकनिष्ठ और उभयनिष्ठ

इस प्रकार संक्षिप्त विलोम न्यायमालाके चार रूप होते हैं—**सरल एकनिष्ठ, सरल उभयनिष्ठ, जटिल एकनिष्ठ और जटिल उभयनिष्ठ।** नीचे इनमेंसे प्रत्येकके उदाहरण दिये जाते हैं :— चार रूप :

(१) सरल एकनिष्ठ.

सब अ ब है; क्योंकि सब क्ष ब है और सब अ क्ष है। सब अक्ष है, क्योंकि सब म ब है। सरल एकनिष्ठ;

इसका पूर्णतया व्यक्त रूप यह है:—

उत्तरन्याय. सब क्ष ब है।
सब अ क्ष है।
∴ सब अ ब है।
पूर्वन्याय. सब म ब है।
सब क्ष म है।
∴ सब क्ष ब है।

यहां पहिले न्यायका एक आधारवाक्य "सब क्ष ब है" दूसरे न्याय का निष्कर्ष है। इस प्रकार युक्ति उत्तरन्यायसे पूर्वन्यायकी ओर चलती है। अर्थात् यह विलोम न्यायमाला है! चूंकि दिये हुए उदाहरण में पूर्वन्यायका एक आधारवाक्य 'सब क्ष म है' दबा हुआ है, इसलिए यह संक्षिप्त विलोम न्यायमाला है।

यहां संक्षिप्त विलोम न्यायमाला सरल है क्योंकि उत्तरन्यायका आधारवाक्य "सब क्ष ब है" संक्षिप्त न्यायके द्वारा सिद्ध किया गया है। यह एकनिष्ठ इसलिए है कि केवल एक ही आधारवाक्यको इस तरह सिद्ध किया गया है।

सरल उभयनिष्ठ;

(२) सरल उभयनिष्ठ.

सब अ ब है, क्योंकि सब क्ष ब है और सब अ क्ष है।
सब क्ष ब है, क्योंकि सब म ब है, और
सब अ क्ष है, क्योंकि सब अ य है।

यह **सरल** है क्योंकि उत्तरन्यायके आधारवाक्य संक्षिप्त न्यायोंके द्वारा सिद्ध किये गये हैं। और यह **उभयनिष्ठ** हैं क्योंकि दोनों आधारवाक्य इस प्रकार सिद्ध किये गये हैं। पहिला संक्षिप्त न्याय दीर्घवाक्य "सब क्ष ब है" को सिद्ध करता है और दूसरा संक्षिप्त न्याय ह्रस्ववाक्य "सब अ क्ष है" को। इसका पूर्णतया व्यक्त रूप यह है:—

उत्तरन्याय. सब क्ष ब है।
सब अ क्ष है।
∴ सब अ ब है।

पूर्वन्याय. I सब म ब है।
सब क्ष म है।
∴ सब क्ष ब है।

II सब य क्ष है।
सब अ य है।
∴ सब अ क्ष है।

इससे स्पष्ट है कि पहिला पूर्वन्याय दीर्घवाक्यको सिद्ध करता है और दूसरा ह्रस्ववाक्यको।

(३) जटिल एकनिष्ठ. जटिल एकनिष्ठ;

सब अ ब है, क्योंकि सब क्ष ब है और सब अ क्ष है।
सब क्ष ब है, क्योंकि सब म ब है, और
सब म ब है, क्योंकि सब न ब है।

यह संक्षिप्त विलोम न्यायमाला **जटिल** है क्योंकि पहिले उत्तरन्याय का एक आधारवाक्य एक संक्षिप्त न्यायके द्वारा सिद्ध किया गया है और फिर उस संक्षिप्त न्यायको भी दूसरे संक्षिप्त न्यायके द्वारा सिद्ध किया गया है। यह **एकनिष्ठ** इसलिए है कि उत्तरन्यायका केवल एक आधारवाक्य सिद्ध किया गया है, दूसरा "सब अ क्ष है" नहीं।

(४) जटिल उभयनिष्ठ. जटिल उभयनिष्ठ।

सब अ ब है, क्योंकि सब क्ष ब है और सब अ क्ष है।
सब क्ष ब है, क्योंकि सब म ब है, और
सब म ब है, क्योंकि सब न ब है।

और फिर

सब अ क्ष है, क्योंकि सब स क्ष है, और
सब स क्ष है क्योंकि सब द क्ष है।

यह संक्षिप्त विलोम न्यायमाला **जटिल** है क्योंकि उत्तरन्यायके आधारवाक्योंको संक्षिप्त न्यायोंके द्वारा और संक्षिप्त न्यायोंको फिर अन्य संक्षिप्त न्यायोंके द्वारा सिद्ध किया गया है। यह उभयनिष्ठ है, क्योंकि उत्तरन्यायके दोनों ही आधारवाक्योंको सिद्ध किया गया है।

टिप्पणी. नीचे दी हुई तालिकामें न्यायमालाओंका वर्गीकरण किया गया है :—

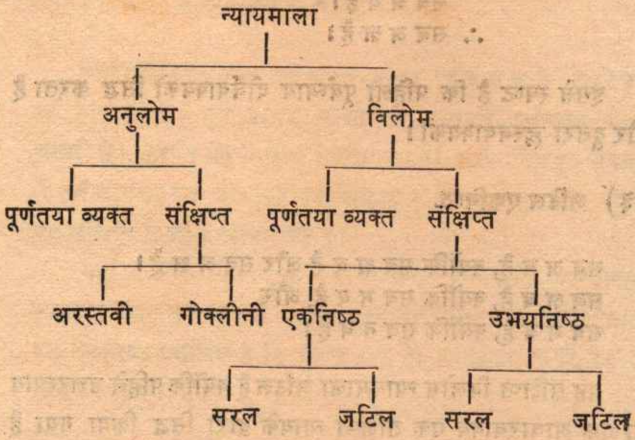

अभ्यासार्थ प्रश्न १५

१. अरस्तवी संक्षिप्त अनुलोम न्यायमालाका एक सांकेतिक रूप उदाहरणके द्वारा स्पष्ट कीजिये। इसे तोड़कर अलग-अलग न्यायोंमें रखिये। यह भी सिद्ध कीजिये कि इसमें पहिले आधारवाक्यको छोड़कर शेष सभी आधारवाक्य सामान्य होने चाहिए।

२. संक्षिप्त विलोम न्यायमाला किसे कहते हैं? उदाहरण देकर इसके विभिन्न प्रकारोंको समझाइये।

३. अन्तर बताइये—

(क) संक्षिप्त अनुलोम और संक्षिप्त विलोम न्यायमालामें।

(ख) अरस्तवी और गोक्लीनी न्यायमालामें।

४. संक्षिप्त अनुलोम न्यायमालाके नियमोंको समझाइये।

५. संक्षिप्त अनुलोम न्यायमालासे आप क्या समझते हैं? इसके दोनों रूपोंका अन्तर बताइये। इसका एक ऐसा उदाहरण दीजिये जिसमें पांच न्याय हों।

६. अरस्तवी और गोक्लीनी न्यायमालाओंका अन्तर बताइये और पहिलीके नियमोंको सिद्ध कीजिये।

७. सिद्ध करो कि संक्षिप्त अनुलोम न्यायमालामें केवल एक ही आधारवाक्य निषेधात्मक हो सकता है, अरस्तवी में अन्तिम और गोक्लीनीमें प्रथम।

८. निम्नलिखित युक्तिकी परीक्षा कीजिये:—

धर्म सच्चा विज्ञान नहीं है; सच्चा विज्ञान प्रयोगसिद्ध होता है; प्रयोगसिद्ध विज्ञान यथार्थ विज्ञान होता है यथार्थ विज्ञान लाभदायक होता है; इसलिए धर्म लाभदायक नहीं है।

[संकेत. यह अरस्तवी न्यायमाला है, लेकिन ग़लत है, क्योंकि पहिला आधारवाक्य निषेधात्मक है।]

१६

न्यायवाक्य पर मिल की आपत्तियां
(Mill's Objections to the Syllogism)

भाग १. मिल की दो आपत्तियां.

मिल की आपत्तियां।

मिल ने न्यायके विरुद्ध दो आपत्तियां की हैं :—

(१) न्याय वह प्रक्रिया नहीं है जिससे हम तर्क करते हैं।

(१) मिल की पहिली आपत्ति यह है कि **न्याय वह प्रक्रिया नहीं है जिसके द्वारा हम तर्क करते हैं।** मिल का कहना है कि "सभी अनुमान विशेषसे विशेषके होते हैं।" सामान्य वाक्य इसी प्रकारके पहिलेसे किये हुए अनुमानोंके संक्षेप मात्र हैं और भविष्यमें भी इसी प्रकार अनुमान करनेमें सहायक सूत्रोंका काम करते हैं। न्यायका दीर्घवाक्य इसी प्रकार का एक सूत्र है और निष्कर्ष इस सूत्रसे निकाला हुआ अनुमान नहीं होता बल्कि **उसके अनुसार** निकाला हुआ अनुमान होता है।

फिर भी मिल ने यह नहीं कहा है कि न्यायकी प्रक्रिया ही तर्कके लिये बेकार है। उसके अनुसार न्यायका मूल्य इतना ही है कि इसके द्वारा हम अपने अनुमानकी जांच कर सकते हैं और देख सकते हैं कि हमारा अनुमान असंगत तो नहीं है। हरशेल (**Herschel**), ह्वीवेल (**Whewell**) और बेन (**Bain**) आदि तर्कशास्त्रियोंने इस मतको स्वीकार किया है।

आलोचना।

आलोचना. कुछ तर्कशास्त्री, जैसे, **मैनसेल** (**Mansel**), **डी मॉर्गन** (**De Morgan**), मार्टिन्यू (**Martineau**), **पी० के० राय** (**P. K. Ray**), **हैमिल्टन** (**Hamilton**) आदि ने मिल के ऊपर दिये हुए मतका विरोध किया है। उनके कथन इस प्रकार हैं—

(क) मिल का यह कहना कि न्याय वह प्रक्रिया नहीं है जिसके द्वारा

हम साधारणतया तर्क करते हैं, सत्य है। किन्तु यह कहना भी उतना ही सत्य है कि हमारे साधारण अनुमान कभी सत्य नहीं हो सकते यदि उनमें न्यायका रूप ग्रहण करनेकी क्षमता न हो। मिल ने मनोविज्ञान और तर्कशास्त्रके कामोंको आपसमें उलझा दिया है। यह तर्कशास्त्रका काम नहीं है कि वह उन सब प्रकारकी प्रक्रियाओंका वर्णन करे जिनके द्वारा लोग शुद्ध या अशुद्ध तर्क करते हैं, किन्तु वह उन सारी प्रक्रियाओंका वर्णन करता है जिनके द्वारा (यदि लोग शुद्ध तर्क करना चाहें) तर्क करना चाहिए। जहां मनोविज्ञान यह बतलाता है कि लोग वास्तवमें तर्क कैसे करते हैं वहां तर्कशास्त्र यह बतलाता है कि तर्क किस प्रकार करना चाहिए। मिल इन दोनोंके अलग-अलग कार्योंको न समझकर दोनोंको ही तर्कशास्त्रका काम बता देता है। अतः यह कथन **कि न्याय तर्ककी सामान्य प्रक्रिया नहीं है**, न्यायके मूल्यको किसी प्रकार भी नहीं घटा सकता तब तक जब तक कि न्याय तर्ककी एक आदर्श प्रक्रिया माना जाता है।

मिल नें तर्कशास्त्र और मनोविज्ञान के कामोंको ठीक-ठीक नहीं समझा है।

(ख) मिल के कथन "सभी अनुमान विशेषसे विशेषकी ओर जाते हैं" के विरुद्ध भी आपत्ति की गई है। यह कहना ठीक है कि ज़्यादातर हम सादृश्य (analogy) द्वारा विशेषसे विशेषका अनुमान करते हैं, किन्तु यह कहना तो बिल्कुल अतिशयोक्तिसे भरा हुआ है कि तर्क-प्रक्रियाका यही एकमात्र सर्वमान्य रूप है। सादृश्यसे प्राप्त ज्ञान तो अधिकतर असत्य होता है, किन्तु जब वह सही होता है तब विशेषोंमें रहनेवाले सामान्य तत्वके कारण ही होता है। हमारा विशेषसे विशेषका अनुमान करना केवल इस कारण उचित है कि दोनोंमें एक तत्व समान होता है—हम दोनोंमें एक सामान्य नियम देखते हैं जो विशेषोंको परस्पर संयुक्त करता है। इसलिए जब हम सादृश्यसे अनुमान करते हैं तब हमारा अनुमान विशेष वस्तुओंमें जो सामान्य गुण होता है उसीके आधार पर चलता है जो स्वयं विशेष नहीं होता। वेल्टन (**Welton**) ने इसी बातको इस प्रकार कहा है—"जिन दृष्टान्तोंमें अनुमान एक या

वस्तुतः हम विशेषसे विशेषका अनुमान केवल इस कारण करते हैं कि उनमें एक सामान्य तत्व होता है।

अधिक विशेष अनुभावों पर आधारित प्रतीत होता है उनमें भी अनुमानका सच्चा आधार विशेष अनुभावोंमें पाया जानेवाला सामान्य तत्व होता है; और इस सामान्य तत्वको हम सामान्य वाक्यके रूपमें व्यक्त कर सकते हैं जो न्यायका दीर्घवाक्य होता है।"

(२) आत्माश्रय-दोष।

(२) मिल की दूसरी आपत्ति यह है कि प्रत्येक न्यायमें एक प्रकारका **आत्माश्रय-दोष या चक्रकदोष** (**Petitio principii**) होता है।

आत्माश्रय-दोष तब होता है जब हम एक आधारवाक्य या आधार-वाक्योंमें निष्कर्षको सम्मिलित कर लेते हैं जैसे, मनुष्य मरणशील है क्योंकि उसकी मृत्यु होती है।

यदि हम कहें कि प्रत्येक न्यायमें आत्माश्रय-दोष होता है तो हम न्यायकी सत्यताको ही समाप्त कर देते हैं। वास्तवमें इस आपत्तिका मतलब यह होना चाहिए कि हरेक न्यायका निष्कर्ष आधारवाक्योंमें से एकके रूपमें पहिले ही मान लिया जाता है; लेकिन इसका साधारण मतलब यह लिया जाता है कि आधारवाक्य स्वयं निष्कर्षकी सत्यता पर निर्भर होते हैं और इसलिए निष्कर्षको सिद्ध करनेके लिये उनकी मदद नहीं ली जा सकती। जैसे, कहते हैं कि "सभी मनुष्य मरणशील हैं; देवदत्त एक मनुष्य है; अतः देवदत्त मरणशील है", इस न्यायमें "देवदत्त मरणशील है", यह निष्कर्ष "सब मनुष्य मरणशील हैं", इस आधार-वाक्यमें मान लिया गया है।

आलोचना।

सामान्य वाक्य विशेष वाक्योंका योग मात्र नहीं होता।

आलोचना. (क) यह मत इस ग़लत मान्यता पर आधारित है कि सामान्य दीर्घवाक्य विशेष दृष्टान्तोंका योग मात्र होता है। लेकिन यदि सामान्य वाक्य विशेष दृष्टान्तोंका संक्षेप ही हो तब तो मिल की आपत्ति ठीक ही है। किन्तु अधिकांशतः सामान्य वाक्य कुछ दृष्टान्तों की जांच करनेसे ही बन जाते हैं। इसके आधार प्रकृतिकी समरूपता और कारणताके नियम (Laws of Uniformity of Nature and Causation) होते हैं। अगर सारे विशेष दृष्टान्तोंकी

परीक्षाके बाद हम सामान्य वाक्य बनाते हैं तो उसे पूर्ण आगमन (Perfect induction) कहते हैं। लेकिन पूर्ण आगमनके अलावा वैज्ञानिक आगमन (Scientific induction) भी होता है जिसमें सब दृष्टान्तोंकी परीक्षा करने पर सामान्य वाक्य नहीं बनाया जाता बल्कि थोड़ेसे दृष्टान्तोंकी परीक्षा कर लेने पर सामान्य वाक्य बना लिया जाता है। जैसे, "सब मनुष्य मरणशील हैं" यह सामान्य वाक्य सब मनुष्योंकी परीक्षा करके नहीं बनाया गया है—कमसे कम वे मनुष्य जो जीवित हैं परीक्षाकी परिधिके बाहर हैं। अतः यदि हम ऊपरके आधारवाक्यसे यह निष्कर्ष निकालें कि "संयुक्त राष्ट्र अमेरिकाका वर्तमान राष्ट्रपति मरणशील है" तो किसी भी तरह हम नहीं कह सकते कि यह निष्कर्ष आधारवाक्यमें निहित था।

(ख) फिर, न्यायमें दो आधारवाक्योंके योगकी आवश्यकता होती है, जो दीर्घवाक्य और ह्रस्ववाक्य कहलाते हैं। लेकिन जिस आपत्ति पर हम विचार कर रहे हैं उसके अनुसार ह्रस्ववाक्य अनावश्यक है। लेकिन तथ्य यह है कि निष्कर्ष दोनों आधारवाक्योंके संयोगसे निकाला जाता है, एक अकेले आधारवाक्यसे नहीं। अतः ह्रस्ववाक्यकी आवश्यकता यह सिद्ध करती है कि न्यायमें आत्माश्रय-दोष नहीं है।

निष्कर्ष दोनों आधारवाक्यों के योगसे निकलता है।

(ग) यदि न्यायमें वस्तुतः आत्माश्रय-दोष होता है तो हमारे ज्ञान में कोई वृद्धि नहीं हो सकती। यह कहा जा सकता है कि न्यायमें निष्कर्षकी सत्यता आधारवाक्योंमें छिपी रहती है, किन्तु निष्कर्षका ज्ञान हमें आधारवाक्योंके ज्ञानके बाद ही होता है। दूसरे शब्दोंमें हम यह कह सकते हैं कि निष्कर्षके आधारवाक्योंमें छिपे रहने पर भी हमें उसका ज्ञान तभी होता है जब हम न्यायकी प्रक्रियासे निष्कर्ष निकालते हैं। ज्ञातसे अज्ञातको मालूम करना वास्तवमें ज्ञानकी वृद्धि है। अतः जब निष्कर्ष निकाला जाता है तब ज्ञानमें वृद्धि होती है।

जो अज्ञात है उसको ज्ञात करना ज्ञान की वृद्धि है।

(घ) अन्तमें, यदि मिल की आपत्ति मान भी ली जाय तब भी वह मनोवैज्ञानिक है तार्किक नहीं। किसी प्रमाणको अप्रमाण हम केवल

मिल की आपत्ति तार्किक आपत्ति नहीं है।

इसलिए नहीं कह सकते कि उसे कुछ लोग जानते हैं। उदाहरणार्थ, यह नहीं कहा जा सकता कि चूंकि एक विशेष व्यक्ति रेखागणितके निष्कर्षोंकी तर्क-प्रक्रियाको समझता है और उसे वह याद है इसलिए रेखागणितके निष्कर्ष अनुमान ही नहीं हैं।

अतः सिद्ध है कि न्यायमें आत्माश्रय-दोष नहीं होता है और कि न्याय एक सही तर्क-प्रक्रिया है। यहां यह जान लेना चाहिए कि कुछ तर्कशास्त्रियों (जैसे, ह्वेटली) का कहना है कि केवल न्याय ही सही तर्क करनेकी प्रक्रिया है। यह विचार अतिशयोक्तिपूर्ण है, क्योंकि न्याय तो केवल उन्हीं वाक्योंसे सम्बन्ध रखता है जो द्रव्य और गुणके सम्बन्धको व्यक्त करते हैं। किन्तु अन्य प्रकारके सम्बन्धोंसे निकाले जानेवाले अनुमान न्यायकी शक्लमें संतोषजनक रीतिसे व्यक्त नहीं किये जा सकते।

अभ्यासार्थ प्रश्न १६

१. मिल के इस मतको समझाकर लिखिए कि न्यायमें आत्माश्रय-दोष होता है।

२. आत्माश्रय-दोषसे आप क्या समझते हैं? उदाहरण देकर समझाइये।

३. सिद्ध कीजिये कि न्याय द्रव्यकी दृष्टिसे आत्माश्रित होता है, आकारकी दृष्टिसे नहीं। क्या प्रत्येक न्यायमें आत्माश्रय-दोष होता है?

४. इस कथनकी परीक्षा कीजिये कि न्याय जिस बातको सिद्ध करनेका बहाना करता है उसे पहिलेसे मान लेता है।

५. क्या सभी अनुमान विशेषसे विशेषके होते हैं?

६. किस दृष्टिसे न्यायमें आत्माश्रय-दोष माना गया है? समझाइये।

७. मिल की न्यायके विरुद्ध क्या आपत्तियां हैं? क्या ये आपत्तियां उचित हैं?

८. इस कथनकी समीक्षा कीजिये कि "न्यायमें जो कुछ सिद्ध करना होता है उसे पहिले ही मान लिया जाता है।"

१७

निगमन के दोष
(Fallacies in Deductive Reasoning)

भाग १. दोषका स्वरूप और वर्गीकरण.

दोषका अर्थ है तर्कशास्त्र के नियमोंका उल्लंघन करना।

दोषका मतलब है ग़लती। कुछ तर्कशास्त्री इसका व्यापक अर्थ लेते हैं और दोषमें सभी तरहकी ग़लतियोंको शामिल करते हैं। किन्तु यहां हम 'दोष' शब्दका प्रयोग केवल तर्कशास्त्रकी मान्यताओं और नियमोंके उल्लंघनके लिये करेंगे। तर्कशास्त्रका सम्बन्ध यथार्थ विचार के व्यवस्थापक नियमोंसे है। अतः जहां भी नियम होगा वहां उसके उल्लंघनकी भी सम्भावना होगी और इससे दोष पैदा होगा। इस प्रकार दोष भी उतनी ही अधिक संख्यामें होंगे जितने कि नियम हैं। नीचे दी हुई तालिकामें दोषोंका वर्गीकरण किया गया है :—

- दोष
  - अनुमान से सम्बन्ध न रखनेवाले
  - अनुमान-सम्बन्धी
    - निगमन-सम्बन्धी
      - आकारविषयक
        - अनन्तरानुमान-सम्बन्धी
        - सान्तरानुमान-सम्बन्धी
      - अर्धतार्किक
        - अनेकार्थकता-दोष
        - आलंकारिकता-दोष
        - उपाधि-भेद-दोष
        - रचना-दोष
        - भ्रामकोच्चारण-दोष
        - विग्रह-दोष
        - संग्रह-दोष
    - आगमन-सम्बन्धी

दोष या तो अनुमानसे सम्बन्धित होंगे या अनुमानसे असम्बन्धित होंगे। अनुमानसे सम्बन्ध न रखनेवाले (Non-inferential) दोष परिभाषा और विभाजनके नियमोंका उल्लंघन करनेसे पैदा होते हैं। **परिभाषाके दोष** निम्नलिखित हैं:

(क) व्यर्थ-कथन,
(ख) आकस्मिक परिभाषा,
(ग) अव्याप्त और अतिव्याप्त परिभाषा,
(घ) दुर्बोध और आलंकारिक परिभाषा,
(ङ) पर्यायोक्ति और
(च) निषेधात्मक परिभाषा।

तार्किक विभाजनके दोष निम्नलिखित हैं:—

(क) भौतिक और आभिधर्मिक विभाजन,
(ख) विभाग-संकरता,
(ग) अव्याप्ति,
(घ) अतिव्याप्ति और
(ङ) साच्छादनता।

इन दोषोंको यथास्थान समझाया जा चुका है। इसलिए यहां इनके बारेमें कुछ नहीं कहा जायगा।

अनुमान दो प्रकारके होते हैं: (१) निगमन-सम्बन्धी और (२) आगमन-सम्बन्धी। इसलिए अनुमानके दोष भी दो प्रकारके होते हैं: (१) निगमन-सम्बन्धी और (२) आगमन-सम्बन्धी। यहां केवल निगमनके दोषोंका ही वर्णन किया जायगा।

भाग २. निगमनके दोष.

निगमनके दोष।

निगमनके दोष दो प्रकारके होते हैं: (क) आकारविषयक (Formal) और अर्धतार्किक (Semi-logical)।

(क) अनुमानके आकारविषयक दोष :—

इनमें अनन्तरानुमान और सान्तरानुमानके दोष शामिल हैं। आकार-विषयक।

(१) अनन्तरानुमानके दोष.

हम नौ प्रकारके अनन्तरानुमान बता चुके हैं: परिवर्तन, प्रतिवर्तन, परिवर्तित प्रतिवर्तन, विपर्यय, विरोध, सम्बन्ध-रूपान्तर, विध्यनुकूल अनुमान, विशेषण-संयोजनात्मक अनुमान और मिश्रविचाराश्रित अनुमान। इनमें से हरेकके अलग-अलग नियम होते हैं। इन नियमोंको भंग करनेसे जो दोष पैदा होते हैं उनका यथास्थान वर्णन किया जा चुका है। अनन्तरानुमान के दोष।

(२) सान्तरानुमानके दोष.

सान्तरानुमानमें शुद्ध और मिश्रित न्याय तथा न्यायमालाएं आती हैं। इनमेंसे प्रत्येक आकारके विशेष नियम होते हैं। जिनका उल्लंघन करनेसे विशेष प्रकारके दोष पैदा होते हैं। इन नियमोंमें न्यायके सामान्य नियम, हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्यायके नियम, उभयतोपाशके नियम, अनुलोम और विलोम न्यायमालाओंके नियम इत्यादि शामिल हैं। सान्तरानुमान के दोष।

इन सभी दोषोंका यथास्थान वर्णन हो चुका है, इसलिए दुबारा वर्णनकी आवश्यकता नहीं है।

(ख) अर्धतार्किक दोष.

ये दोष आकारविषयक दोषोंकी तरह नहीं होते, बल्कि भ्रामक भाषाका प्रयोग करनेसे उत्पन्न होते हैं। इनके प्रकार निम्नलिखित हैं:— अर्धतार्किक दोष।

(१) अनेकार्थकता-दोष (**Fallacy of Equivocation**).

प्रत्येक न्यायमें केवल तीन ही पद होते हैं। इन तीनों पदोंका एक ही अर्थमें प्रयोग करना चाहिए। चूंकि तीन पद होते हैं, इसलिए यदि उनका प्रयोग एक अर्थमें नहीं होगा तो तीन प्रकारके दोष पैदा होंगे—भ्रामक अनेकार्थकता-दोष।

मध्यमपद, भ्रामक दीर्घपद और भ्रामक ह्रस्वपदके दोष। ये दोष चतुष्पदी-दोषके समान हैं जिनका वर्णन यथास्थान हो चुका है।

आलंकारिकता दोष।

(२) आलंकारिकता-दोष (Fallacy of Figure of Speech).

यह शब्दोंके समान रूपके कारण उत्पन्न होता है। यह दोष तब होता है जब हम एक ही धातुसे निकले हुए होनेके कारण रूप-सादृश्य रखनेवाले भिन्नार्थक शब्दोंका प्रयोग एक ही अर्थमें करते हैं, जैसे—

अभिमानी होना अच्छा नहीं है।
शिवाजी स्वाभिमानी थे।
∴ शिवाजी अच्छे नहीं थे।

यहां अभिमानी और स्वाभिमानी शब्द भिन्नार्थक होते हुए भी एक ही अर्थमें प्रयुक्त हुए हैं।

उपाधि-भेद दोष।

(३) उपाधि-भेद दोष (Fallacy of Accident).

यह दोष तब पैदा होता है जब हम मध्यमपदको एक आधारवाक्यमें बिना उपाधि (Condition) के ग्रहण करते हैं और दूसरे आधारवाक्यमें उपाधिके सहित ग्रहण करते हैं, या जब मध्यमपदको दोनों आधारवाक्योंमें अलग-अलग उपाधियोंसे युक्त करते हैं। उदाहरण—

जो मारता है उसे फांसीकी सजा मिलनी चाहिए।
सिपाही अपने शत्रुको मारता है।
∴ सिपाहीको फ़ांसीकी सज़ा मिलनी चाहिए।

इसमें उपाधि-भेद दोष इसलिए है कि दीर्घवाक्यमें मारना शब्द साधारण अर्थमें प्रयुक्त हुआ है जबकि ह्रस्ववाक्यमें उसका अर्थ है युद्धके समय मारना।

पानी तरल पदार्थ है।
बर्फ़ पानी है।
∴ बर्फ़ तरल पदार्थ है।

जो कुछ हम खाते हैं खेतमें पैदा होता है।
हम रोटी, दाल इत्यादि खाते हैं।
∴ रोटी, दाल इत्यादि खेतमें पैदा होते हैं।

जो कुछ बाज़ारसे खरीदा गया खा डाला गया।
कच्चा गोश्त बाज़ारसे खरीदा गया।
∴ कच्चा गोश्त खा डाला गया।

तुम्हें पशु कहना सत्य है।
तुम्हें बन्दर कहना तुम्हें पशु कहना है।
∴ तुम्हें बन्दर कहना सत्य है।

(४) भ्रामक-रचना दोष (Fallacy of Amphibology).

भ्रामक-रचना दोष।

यह दोष वाक्यकी भ्रमपूर्ण रचनाके कारण पैदा होता है। भ्रमपूर्ण वाक्य वह है जो दो तरहसे बनाया जा सकता है और इसलिए जिसके दो अर्थ हो सकते हैं। ऐसे वाक्यका एकसे अधिक अर्थ हो सकता है लेकिन यह स्पष्ट नहीं रहता कि वह किस अर्थमें प्रयुक्त हुआ है। जैसे—

भागो मत जाने दो।

इसका यह भी अर्थ हो सकता है कि 'भागो, मत जाने दो' और यह भी कि 'भागो मत, जाने दो।'

इसी प्रकार दूसरा उदाहरण है—The Duke yet lives that Henry shall depose. इस वाक्यमें that शब्दके प्रयोगसे वाक्यके दो अर्थ हो सकते हैं : एक यह कि वह डयूक जो हेन्री को पदच्युत करेगा अभी जीवित है और दूसरा यह कि वह डयूक जिसे हेन्री पदच्युत करेगा अभी जीवित है।

(५) भ्रामकोच्चारण-दोष (Fallacy of Accent).

भ्राम-कोच्चारण दोष।

यह दोष किसी वाक्यके किसी एक शब्द या शब्दों पर अनुचित ज़ोर देनेके कारण उत्पन्न होता है। जैसे—

"तुम अपने पड़ोसीके विरुद्ध गवाही नहीं दोगे।"

इस वाक्यमें 'पड़ोसी' पर ज़ोर देनेसे इसका अर्थ होगा कि जो

पड़ोसी नहीं है उसके विरुद्ध गवाही दी जा सकती है। 'विरुद्ध' पर जोर देनेसे यह अर्थ होगा कि पड़ोसीके पक्षमें गवाही दे सकते हैं।

विग्रह और संग्रह दोष।

(६) विग्रह और संग्रह दोष (Fallacies of Division and Composition).

पदका पहिले समष्टचर्थमें प्रयोग करनेके बाद व्यष्टचर्थमें प्रयोग करनेसे विग्रह-दोष उत्पन्न होता है। इसका ठीक उल्टा संग्रह-दोष है जो पदके व्यष्टचर्थसे समष्टचर्थमें पहुंच जानेसे पैदा होता है।

उदाहरण—

विग्रह-दोष:

शेक्सपियर की सभी रचनाएं एक दिनमें नहीं पढ़ी जा सकतीं।
हैमलेट नाटक शेक्सपियर की एक रचना है।
∴ हैमलेट नाटक एक दिनमें नहीं पढ़ा जा सकता।

इस देशके रहनेवाले अकालसे पीड़ित हैं।
तुम इस देशके रहनेवाले हो।
∴ तुम अकालसे पीड़ित हो।

भारतीय महिलाएं सभ्य हैं।
उषा एक भारतीय महिला है।
∴ उषा सभ्य है।

मैंने जो कुछ पढ़ा है वह मुझे याद है।
मैंने शकुन्तला नाटककी एक-एक पंक्ति पढ़ी है।
∴ मुझे शकुन्तला नाटककी एक-एक पंक्ति याद है।

तेरह एक संख्या है।
छः और सात तेरह होते हैं।
∴ छः और सात एक संख्या है।

संग्रह-दोष :

क या ख या ग इस मेज़को नहीं उठा सकता।
∴ क, ख और ग इस मेज़को नहीं उठा सकते।

प्रत्येक व्यक्ति अपने सुखकी कामना करता है।
∴ सब व्यक्ति सबके सुखकी कामना करते हैं।

पांच और आठ विषम और सम हैं।
तेरह पांच और आठ है।
∴ तेरह विषम और सम है।

दोष-सम्बन्धी प्रश्नोंको हल करनेके लिये संकेत तथा कुछ हल किये हुए उदाहरण

ठोस युक्तियोंमें यदि कोई दोष हों तो उनको निकालनेके लिये उनकी जांच करना एक ऐसा विषय है जिसमें प्रारम्भिक स्तरके विद्यार्थियोंको अनेक कठिनाइयोंका सामना करना पड़ता है। इसलिए ऐसे प्रश्नोंको हल करनेके लिये कुछ सामान्य बातोंको बता देना यहां अनुचित न होगा।

यह विषय प्रारम्भिक विद्यार्थीको क्यों कठिन लगता है, इस बात का मुख्य कारण यह है कि तर्कशास्त्रके बाहर बिरली ही यक्तियां ठीक तार्किक रूपमें पाई जाती हैं। इसलिए किसी दी हुई युक्तिकी जाच करनेमें पहिला क़दम यह है कि युक्तिके वाक्योंका मुख्य अर्थ बदले बग़ैर उनमें आवश्यक तबदीलियां करके युक्तिको तार्किक रूपमें रखना चाहिए। यहां हम केवल न्यायके विभिन्न दोषोंका ही विचार करेंगे।

किसी न्यायको तार्किक रूपमें रखनेमें नीचे लिखे नियमोंका पालन करना चाहिए:—

१. सबसे पहिले न्यायका निष्कर्ष मालूम कीजिये।

तार्किक रूपमें न्यायका निष्कर्ष तीसरा वाक्य होता है, लेकिन हो सकता है कि दी हुई युक्तिमें वह अपने उचित स्थान पर न हो। निष्कर्षके पहिले 'इसलिए', 'अत:' इत्यादि शब्द होते हैं, जबकि आधारवाक्योंके पहिले 'क्योंकि', 'कारण कि' इत्यादि शब्द होते हैं। जब निष्कर्ष मालूम हो जाय तब उसको तार्किक रूपमें रखना चाहिए और उसके संयोजकको रेखांकित कर देना चाहिए ताकि उसके उद्देश्य और विधेय साफ़-साफ़ प्रकट हो जायं।

२. इसके बाद दीर्घवाक्य और ह्रस्ववाक्यको मालूम कीजिये।

जब निष्कर्ष तार्किक रूपमें हो जाता है तब उसका विधेय दीर्घपद

होता है। अतः जिस वाक्यमें निष्कर्षका विधेय आया हो वह दीर्घवाक्य होगा। पुनः, निष्कर्षका उद्देश्य ह्रस्वपद होता है, इसलिए जिस वाक्यमें निष्कर्षका उद्देश्य हो वह ह्रस्ववाक्य होगा। अब दीर्घवाक्य और ह्रस्ववाक्य दोनोंको तार्किक रूपमें रखिये और साथ ही उनके संयोजकों को रेखांकित कीजिये ताकि उनके उद्देश्य और विधेय स्पष्ट हो जांय

[टिप्पणी. संयोजकको रेखांकित करना अंग्रेजी भाषाकी युक्तियों में सुविधाजनक होता है क्योंकि अंग्रेजीके वाक्योंमें संयोजक उद्देश्य और विधेयके ठीक बीचमें होता है। लेकिन हिन्दीके वाक्योंमें संयोजक अन्तमें आता है। इसलिए हिन्दी भाषाकी युक्तियोंमें संयोजक तथा वाक्यके उद्देश्यको रेखांकित करना चाहिए ; विधेयको इसलिए नहीं कि कभी-कभी उसका एक भाग संयोजकके पहिले और दूसरा संयोजकके बाद होता है। उदाहरणके लिये, 'सब मनुष्य वे हैं जिनको अपने भविष्यकी चिन्ता होनी चाहिए', इस वाक्यमें विधेय 'वे जिनको अपने भविष्यकी चिन्ता होनी चाहिए' है और संयोजक 'हैं' इस पदके बीचमें है।]

३. सबसे अन्तमें, वाक्योंको क्रममें रखिए।

आम तौर पर यह होता है कि दिया हुआ न्याय एक संक्षिप्त न्याय होता है जिसका कोई वाक्य अव्यक्त रहता है। अगर निष्कर्ष व्यक्त है तो यह मालूम करनेमें कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए कि दूसरा वाक्य दीर्घवाक्य है या ह्रस्ववाक्य। अगर दीर्घवाक्य व्यक्त है तो ह्रस्ववाक्य को अपनी ओरसे मिला देना चाहिए और अगर ह्रस्ववाक्य व्यक्त है तो दीर्घवाक्यको अपनी ओरसे मिला देना चाहिए। मान लीजिये कि दीर्घवाक्य व्यक्त है और ह्रस्ववाक्यको अपनी ओरसे मिलाना है। इसके लिये हमको ह्रस्वपद और मध्यमपदकी ज़रूरत होगी। निष्कर्षका उद्देश्य ह्रस्वपद है और व्यक्त दीर्घवाक्यमें जो पद दीर्घपद नहीं है वह मध्यमपद है। जब इस तरह हमको ह्रस्वपद और मध्यमपद मिल जांय। तब हम ह्रस्ववाक्यको आसानीसे बना सकते हैं। अव्यक्त वाक्यके गुण और परिमाणको तथा उसमें मध्यमपदकी स्थितिको हम अपनी इच्छानुसार रख सकते हैं।

दी हुई युक्तिको तार्किक रूपमें रख लेनेके बाद हमें यह देखना है कि उसमें न्यायके नियमोंका पालन हुआ है या नहीं और कि पदोंके प्रयोगमें कोई अनेकार्थकता तो नहीं है। अगर न्यायके नियमोंका पालन नहीं हुआ है तो युक्तिमें अव्याप्त मध्यमपद-दोष, अनियमित पद-दोष इत्यादि दोष होंगे; अगर पद अनेकार्थक हैं तो भिन्नार्थक-पद-दोष इत्यादि होंगे।

जहां तक न्यायके सामान्य नियमोंका सम्बन्ध है, उनमें विशुद्ध आकारकी दृष्टिसे वे नियम महत्त्वपूर्ण हैं जो न्यायके तीन पदोंकी व्याप्तिसे सम्बन्ध रखते हैं (तीसरा और चौथा सामान्य नियम)। अर्धतार्किक दोषोंके दृष्टिकोणसे पहिला सामान्य नियम महत्त्वपूर्ण है जिसके अनुसार न्यायमें केवल तीन ही पद होने चाहिए, न कम न अधिक। इन्हीं नियमोंके उल्लंघनकी अधिक सम्भावना रहती है।

विद्यार्थियोंको ध्यान रखना चाहिए कि परीक्षाके लिये जो उदाहरण दिया जाता है वह हमेशा दोषपूर्ण ही नहीं होता।

अब हम कुछ उदाहरण देकर उनको हल करेंगे। विद्यार्थियोंको ध्यान रखना चाहिए कि दोषका नाम अवश्य बताना चाहिए, लेकिन केवल इतना ही काफ़ी नहीं है; यह भी बताना चाहिए कि दी हुई युक्ति में एक खास दोष क्यों है। दोषका कारण साफ़-साफ़ बतला देना चाहिए।

१. नीचे दी हुई युक्ति की परीक्षा कीजिये:
राम परीक्षा में उत्तीर्ण हो सकता है, क्योंकि वह बुद्धिमान् छात्र है और केवल बुद्धिमान् छात्र ही परीक्षा में उत्तीर्ण हो सकते हैं।

उत्तर. इस युक्तिमें निष्कर्ष है 'राम परीक्षामें उत्तीर्ण हो सकता है।' इसका तार्किक रूप होगा '**राम** वह छात्र **है** जो परीक्षामें उत्तीर्ण हो सकता है।' यह आ वाक्य है क्योंकि यह विधानात्मक है और इसका उद्देश्य एक निश्चित एकवाचक पद है जो अपने पूरे निर्देशमें ग्रहण किया गया है।

यह स्पष्ट है कि निष्कर्षका उद्देश्य 'राम' ह्रस्वपद है; अतः जिस वाक्यमें 'राम' पद होगा वही ह्रस्ववाक्यमें होगा और इस तरह '**वह** (अर्थात् राम) बुद्धिमान् छात्र **है**' ह्रस्ववाक्य हुआ। यह पहिले ही तार्किक रूपमें है और आ वाक्य है।

शेष वाक्य जिसमें कि निष्कर्षका विधेय 'वह छात्र जो परीक्षामें उत्तीर्ण हो सकता है' आता है दीर्घवाक्य होगा। दिया हुआ वाक्य 'केवल बुद्धिमान् छात्र ही परीक्षामें उत्तीर्ण हो सकते हैं' तार्किक रूपमें नहीं है; यह ऐकान्तिक वाक्य है और तार्किक रूपमें रखने पर इसका रूप होगा '**सब छात्र जो परीक्षामें उत्तीर्ण हो सकते हैं** बुद्धिमान् **हैं**', यह **आ** वाक्य है।

इस प्रकार तार्किक रूप देने पर दी हुई युक्तिका यह रूप होगा:—

सब छात्र जो परीक्षामें उत्तीर्ण हो सकते हैं
बुद्धिमान् छात्र हैं।
राम एक बुद्धिमान् छात्र **है**।
∴ **राम** वह छात्र **है** जो परीक्षामें उत्तीर्ण हो सकता है।

इसमें हम देखते हैं कि मध्यमपद 'बुद्धिमान् छात्र' (यह मध्यमपद इसलिए है कि यह दोनों आधारवाक्योंमें मौजूद है और निष्कर्षमें मौजूद नहीं है) आधारवाक्योंमें एक बार भी व्याप्त नहीं है। लेकिन न्यायका एक सामान्य नियम यह है कि मध्यमपदको आधारवाक्योंमें कमसे कम एक बार अवश्य व्याप्त होना चाहिए। चूंकि दी हुई युक्ति में यह नियम भंग हुआ है, इसलिए इसमें **अव्याप्त मध्यमपद** का दोष है।

२. निम्नलिखित युक्तिकी परीक्षा कीजिये :
यह पदार्थ सोना नहीं हो सकता क्योंकि यह पीला नहीं है।

उत्तर. यह एक संक्षिप्त न्याय है क्योंकि तीनके बजाय इसमें केवल दो ही वाक्य हैं।

निष्कर्ष है 'यह पदार्थ सोना नहीं हो सकता' और इसका तार्किक रूप होगा '**यह पदार्थ** वह चीज **नहीं है** जो सोना हो सकती है।' यह ए वाक्य है, क्योंकि निषेधका चिह्न मौजूद है और इसका उद्देश्य निश्चित एकवाचक पद है (विद्यार्थियों को ध्यान रखना चाहिए कि निषेधका चिह्न संयोजकके साथ जुड़ा हुआ है)।

दिया हुआ आधारवाक्य 'यह पीला नहीं है' ह्रस्ववाक्य है क्योंकि निष्कर्षका उद्देश्य 'यह पदार्थ' इसमें 'यह' शब्दके रूपमें मौजूद है। तार्किक रूपमें रखने पर इसका रूप होगा '**यह पदार्थ** पीला **नहीं है**।' यह ए वाक्य है।

अब हमें दीर्घवाक्य चाहिए। दीर्घवाक्यमें दीर्घपद और मध्यमपद होते हैं। इस युक्तिमें दीर्घपद 'सोना' है जो कि निष्कर्षका विधेय है, मध्यमपद 'पीला' है क्योंकि यह पद ह्रस्ववाक्यमें है और ह्रस्वपद नहीं है। अब चूंकि हमें दीर्घपद और मध्यम पद मिल गये हैं, अतः हम कोई भी वाक्य बना सकते हैं जिसमें ये दोनों पद हों। मान लीजिये कि हम 'सोना पीला होता है' वाक्यको दीर्घवाक्य बनाते हैं। तब न्याय इस प्रकार होगा :—

सोना पीला **है**।
यह पदार्थ पीला **नहीं है**।
∴ **यह पदार्थ** सोना **नहीं है**।

यह युक्ति बिल्कुल सही है क्योंकि यह द्वितीय आकारका प्रामाणिक संयोग कामेस्ट्रेस है।

३. **निम्नलिखित युक्तिकी परीक्षा कीजिये :**

जो कोई भी दूसरे व्यक्तिके शरीरके अन्दर इरादेसे चाकू घुसाता है वह क़ानूनके द्वारा दण्डनीय है ; डॉक्टर शल्य-चिकित्सामें ऐसा ही करता है ; इसलिए वह क़ानूनके द्वारा दण्डनीय है।

उत्तर. 'वह क़ानूनके द्वारा दण्डनीय है' वाक्यका निष्कर्ष होना स्पष्ट ही है। सर्वनाम 'वह' का अर्थ है 'शल्य-चिकित्सा करनेवाला डाक्टर'। अतः निष्कर्षका तार्किक रूप हुआ '**सब शल्य-चिकित्सा करनेवाले डॉक्टर** क़ानूनके द्वारा दण्डनीय हैं।'

'डॉक्टर शल्य-चिकित्सामें ऐसा ही करता है' वाक्य ह्रस्ववाक्य है क्योंकि इसमें निष्कर्षका उद्देश्य मौजूद है। इसका तार्किक रूप होगा '**सब शल्य-चिकित्सा करनेवाले डाक्टर** वे व्यक्ति हैं जो दूसरे व्यक्तिके शरीरके अन्दर ईरादेसे चाकू घुसाते हैं।'

बचा हुआ वाक्य दीर्घवाक्य है क्योंकि निष्कर्षका विधेय उसमें मौजूद है। इसका तार्किक रूप होगा '**सब व्यक्ति जो दूसरे व्यक्तिके शरीरके अन्दर इरादेसे चाकू घुसाते हैं** क़ानूनके द्वारा दण्डनीय **हैं**'। अतः इस युक्तिका तार्किक रूप यह होगा :

सब व्यक्ति जो दूसरे व्यक्तिके शरीरके अन्दर इरादेसे चाकू घुसाते हैं कानूनके द्वारा दण्डनीय **हैं**।

सब शल्य-चिकित्सा करनेवाले डाक्टर वे व्यक्ति **हैं** जो दूसरे व्यक्तिके शरीरके अन्दर इरादेसे चाकू घुसाते हैं।

∴ **सब शल्य-चिकित्सा करनेवाले डाक्टर** क़ानूनके द्वारा दण्डनीय **हैं**। इस प्रकार तार्किक रूपमें रखनेके बाद जब हम इस युक्तिकी परीक्षा करते हैं तो हम देखते हैं कि इसमें कोई आकार-सम्बन्धी दोष नहीं है, क्योंकि न्यायके सभी नियमोंका पालन किया गया है। लेकिन इसमें एक अर्ध-तार्किक दोष है जिसे **उपाधि-भेद-दोष** कहते हैं, क्योंकि मध्यमपद 'वे व्यक्ति जो दूसरे व्यक्तिके शरीरके अन्दर इरादेसे चाकू घुसाते हैं' दोनों आधारवाक्योंमें भिन्न-भिन्न दशाओंमें प्रयुक्त हुआ है। दीर्घवाक्यमें हम यह मान लेते हैं कि जो व्यक्ति दूसरे व्यक्तिके शरीरके अन्दर इरादेसे चाकू घुसाता है वह दूसरेको मारनेके उद्देश्यसे ऐसा करता है ; जबकि ह्रस्ववाक्यमें डाक्टर दूसरेको रोगसे बचानेके लिये ऐसा करता है।

४. **निम्नलिखित युक्तिकी परीक्षा कीजिये :**

बिल्लीको कहीं दूर होना चाहिए क्योंकि चूहे खेल रहे हैं, और जब बिल्ली कहीं दूर होती है तब चूहे खेलेंगे ही।

उत्तर. स्पष्टतया 'बिल्लीको कहीं दूर होना चाहिए' वाक्य निष्कर्ष है। बाक़ी दो वाक्य जिनके पहिले 'क्योंकि' शब्द है आधार-वाक्य हैं। 'जब बिल्ली कहीं दूर होती है तब चूहे खेलेंगे ही' इस वाक्य को जांचने पर हम देखते हैं कि यह हेतुफलाश्रित वाक्य है क्योंकि यह 'जब' शब्दसे शुरू होता है जो कि 'यदि' का समानार्थक है। चूंकि दूसरा वाक्य निरपेक्ष है, इसलिए यह युक्ति हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्याय का एक उदाहरण है जिसमें दीर्घवाक्य हेतुफलाश्रित, ह्रस्ववाक्य निरपेक्ष और निष्कर्ष भी निरपेक्ष होता है। इसका तार्किक रूप निम्नलिखित होगा :—

यदि बिल्ली कहीं दूर है तो चूहे खेलेंगे।
चूहे खेल रहे हैं।
∴ बिल्ली कहीं दूर है।

इस युक्तिमें **फल-विधानका दोष** है, क्योंकि हमने ह्रस्ववाक्यमें फलका विधान किया है और उसके बल पर निष्कर्षमें हेतुका विधान किया है, जबकि नियम ऐसा नहीं है।

५. **निम्नलिखित युक्तिकी परीक्षा कीजिये :**

सेनाध्यक्ष सेनाके ऊपर शासन करता है; सेनाध्यक्षकी पत्नी सेनाध्यक्षके ऊपर शासन करती है; इसलिए सेनाध्यक्षकी पत्नी सेना के ऊपर शासन करती है।

उत्तर. तार्किक रूपमें रखने पर यह युक्ति इस प्रकार होगी :—

सेनाध्यक्ष वह व्यक्ति है जो सेनाके ऊपर शासन करता है।
सेनाध्यक्षकी पत्नी वह व्यक्ति है जो सेनाध्यक्षके ऊपर शासन करती है।
∴ **सेनाध्यक्ष की पत्नी** वह व्यक्ति है जो सेनाके ऊपर शासन करती है।

इस युक्तिमें **चतुष्पदी-दोष** है क्योंकि इसमें तीनके बजाय चार पद हैं : (१) सेनाध्यक्ष, (२) वह व्यक्ति जो सेनाके ऊपर शासन करता है, (३) सेनाध्यक्षकी पत्नी और (४) वह व्यक्ति जो सेनाध्यक्ष के ऊपर शासन करता है।

६. **निम्नलिखित युक्तिकी परीक्षा कीजिये :**

जीवनका अन्त उसकी पूर्णता है; मृत्यु जीवनका अन्त है; इसलिए मृत्यु जीवनकी पूर्णता है।

उत्तर. इस युक्तिमें **भिन्नार्थक मध्यमपदका दोष** है क्योंकि 'जीवनका अन्त' पद जो ऊपरसे मध्यमपद प्रतीत होता है, दो अर्थ रखता है। दीर्घवाक्यमें इसका अर्थ है 'जीवनका आदर्श' और ह्रस्व-वाक्यमें इसका अर्थ है 'स्थूल शरीरके अस्तित्वकी समाप्ति'।

✓ ७. **निम्नलिखित युक्तिकी परीक्षा कीजिये :**

सत्यप्रिय व्यक्तिके अतिरिक्त कोई ईमानदार नहीं है; सत्यप्रिय व्यक्तियोंके अतिरिक्त कोई सम्मानके योग्य नहीं हैं; अतः वे सब व्यक्ति जो सम्मानके योग्य हैं ईमानदार हैं।

उत्तर. इस युक्तिका तार्किक रूप निम्नलिखित है :—

आ. **सब ईमानदार व्यक्ति** सत्यप्रिय हैं।

आ. **सब सम्मानके योग्य व्यक्ति** सत्यप्रिय हैं।

∴ आ. सब सम्मानके योग्य व्यक्ति ईमानदार हैं।

इस युक्तिमें **अव्याप्त मध्यमपद** का दोष है क्योंकि मध्यमपद 'सत्यप्रिय' आधारवाक्योंमें एक बार भी व्याप्त नहीं है।

८. **निम्नलिखित युक्तिकी परीक्षा कीजिये :**

केवल भौतिक पिण्ड ही पृथ्वीकी ओर आकर्षित होते हैं, और प्रकाश पृथ्वीकी ओर आकर्षित नहीं होता।

उत्तर. गुप्त निष्कर्षको प्रकट करते हुए इस संक्षिप्त न्यायका तार्किक रूप यह होगा :—

आ. **सब पृथ्वीकी ओर आकर्षित होनेवाले पिण्ड** भौतिक पिण्ड हैं।

ए. **प्रकाश** पृथ्वीकी ओर आकर्षित होनेवाला पिण्ड **नहीं है**।

∴ ए. **प्रकाश** भौतिक पिण्ड **नहीं है**।

इस युक्तिमें **अनियमित दीर्घपद** का दोष है, क्योंकि दीर्घपद 'भौतिक पिण्ड' निष्कर्षमें व्याप्त है और दीर्घवाक्यमें व्याप्त नहीं है।

हल किये हुए प्रश्न

१. निम्नलिखित युक्तियोंको आकार और संयोग बताते हुए लिखिए और यह मालूम कीजिये कि वे सही हैं या नहीं :

(क) विचारका जड़ द्रव्यका व्यापार होना असम्भव है, क्योंकि

जड़ द्रव्यके सब व्यापार गतिके रूप होते हैं और विचार गतिका रूप नहीं है।

उत्तर. इसका तार्किक रूप निम्नलिखित है :—

सब जड़ द्रव्यके व्यापार गतिके रूप हैं।

कोई विचार गतिका रूप **नहीं है**।

∴ **कोई विचार** जड़ द्रव्यका व्यापार **नहीं है**।

यह द्वितीय आकारका प्रामाणिक संयोग कामेस्ट्रेस है।

(ख) भिखमंगे जो सम्पत्तिहीन होते हैं, अन्यायके शिकार नहीं हो सकते, क्योंकि अन्याय सम्पत्तिकी हानिके अलावा और कुछ नहीं है।

उत्तर. इस युक्तिका तार्किक रूप निम्नलिखित है :—

कोई भी व्यक्ति जो सम्पत्तिहीन हैं अन्यायके शिकार **नहीं हैं**।

सब भिखमंगे वे व्यक्ति हैं जो सम्पत्तिहीन हैं।

∴ **कोई भिखमंगे** अन्यायके शिकार **नहीं हैं**।

यह प्रथम आकारका प्रामाणिक संयोग सिलारेन्ट है, अतः आकारकी दृष्टिसे सही है; लेकिन इसका दीर्घवाक्य द्रव्यकी दृष्टिसे ग़लत है क्योंकि न केवल सम्पत्ति बल्कि जीवनकी भी सुरक्षा होनी चाहिए और जहां जीवन सुरक्षित नहीं होगा वहां अन्याय हो सकता है।

(ग) तर्कशास्त्रका अध्ययन व्यर्थ है, क्योंकि अनेक व्यक्ति जिन्होंने तर्कशास्त्र नहीं पढ़ा है सही और सूक्ष्म तर्क कर सकते हैं।

उत्तर. इसका तार्किक रूप निम्नलिखित है :—

दीर्घवाक्य. **सब व्यक्ति जो तर्कशास्त्रका अध्ययन किये बिना सही और सूक्ष्म तर्क कर सकते** हैं ऐसे दृष्टान्त हैं जो यह सिद्ध करते हैं कि तर्कशास्त्रका अध्ययन व्यर्थ है।

ह्रस्ववाक्य. **कुछ दृष्टान्त** ऐसे हैं जिनमें व्यक्ति तर्कशास्त्रका अध्ययन किये बिना सही और सूक्ष्म तर्क कर सकते हैं।

निष्कर्ष. ∴ **कुछ दृष्टान्त** ऐसे दृष्टान्त हैं जो यह सिद्ध करते हैं कि तर्कशास्त्रका अध्ययन व्यर्थ है।

यह प्रथम आकारका प्रामाणिक संयोग दारीई है। लेकिन इसके निष्कर्षका केवल यही अर्थ हो सकता है कि कुछ दृष्टान्तोंमें तर्कशास्त्रका अध्ययन व्यर्थ है, जबकि दिये हुए उदाहरणका असली उद्देश्य यह सिद्ध करना है कि सभी दृष्टान्तोंमें तर्कशास्त्रका अध्ययन व्यर्थ है—जो कि स्पष्ट ही ग़लत है। जब एक आधारवाक्य ई हो तो निष्कर्ष आ नहीं हो सकता।

(घ) गेलीलियो के कुछ समसामयिकोंने यह युक्ति पेश की—गेलीलियो का यह कथन कि बृहस्पति के भी चन्द्रमा हैं, सही नहीं हो सकता, क्योंकि वे मनुष्यके लिये अदृश्य हैं और इसलिए मानवजातिके हितों पर उनका कोई प्रभाव नहीं हो सकता, और इस दुनियामें कोई भी ऐसी चीज़ नहीं हो सकती जिसका मनुष्यसे कोई न कोई सम्बन्ध न हो।

उत्तर. यह एक न्याय-माला है जिसके कुछ वाक्य अप्रकट हैं। पूरी तरहसे व्यक्त करने पर इसका रूप निम्नलिखित होगा:—

पहिला न्याय:—

आ. सब अदृश्य चीज़ें वे चीज़ें हैं जिनका मनुष्य-जातिके हितों पर कोई प्रभाव नहीं हो सकता।

आ. बृहस्पतिके सब कल्पित चन्द्रमा अदृश्य चीज़ें हैं।

∴ आ. बृहस्पतिके सब कल्पित चन्द्रमा वे चीज़ें हैं जिनका मनुष्य-जातिके हितों पर कोई प्रभाव नहीं हो सकता।

दूसरा न्याय:—

ए. कोई चीज़ें जिनका मनुष्यसे सम्बन्ध नहीं है अस्तित्ववान् नहीं हैं।

आ. बृहस्पतिके सब कल्पित चन्द्रमा वे चीज़ें हैं जिनका मनुष्यसे सम्बन्ध नहीं है।

∴ ए. कोई बृहस्पतिके कल्पित चन्द्रमा अस्तित्ववान् नहीं हैं।

पहिला न्याय प्रथम आकारका प्रामाणिक संयोग बारबारा है और दूसरा सिलारेन्ट। इसलिए यह न्यायमाला आकारकी दृष्टिसे सही है।

२. निम्नलिखित युक्तियोंमें से प्रत्येकको तार्किक रूपमें रखकर उसकी परीक्षा कीजिये:—

(क) मौसमकी भविष्यवाणी करनेमें बार-बार जो ग़लतियां दिखाई देती हैं उनसे सिद्ध होता है कि अन्तरिक्षविज्ञान सच्चा विज्ञान नहीं है।

उत्तर. इसका तार्किक रूप निम्नलिखित है:—

यदि अन्तरिक्षविज्ञान सच्चा विज्ञान है तो मौसमकी भविष्यवाणीमें बार-बार ग़लतियां नहीं होंगी।

मौसमकी भविष्यवाणीमें बार-बार ग़लतियां होती हैं।

∴ अन्तरिक्षविज्ञान सच्चा विज्ञान नहीं है।

यह एक हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्याय है जिसमें फलका निषेध करके हेतुका निषेध किया गया है। अतः यह सही है।

(ख) यदि सद्‌गुण ज्ञान होता तो इसे सिखाया जा सकता; लेकिन सद्‌गुणको सिखानेवाले हैं कहां?

उत्तर. इसका तार्किक रूप निम्नलिखित है:—

यदि सद्‌गुण ज्ञान होता तो सद्‌गुणको सिखानेवाले होते।
सद्‌गुणको सिखानेवाले नहीं हैं।
∴ सद्‌गुण ज्ञान नहीं है।

यह एक हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्याय है जिसमें फलका निषेध करके हेतुका निषेध किया गया है। इसलिए यह सही है।

(ग) दुनियामें जो कुछ परिवर्तन हम जानते हैं वे केवल परमाणुओंकी गतियां हैं। अतः दुनियाके सब परिवर्तन परमाणुओंकी गतियां हैं।

उत्तर. 'दुनियामें जो कुछ परिवर्तन हम जानते हैं वे केवल', इस वाक्यांशका अर्थ है 'दुनियाके कुछ परिवर्तन'। इस प्रकार इस युक्तिका तार्किक रूप यह होगा:—

कुछ दुनियाके परिवर्तन परमाणुओंकी गतियां हैं।
∴ सब दुनियाके परिवर्तन परमाणुओंकी गतियां हैं।

निष्कर्ष सही नहीं है। दोनों वाक्योंके उद्देश्य और विधेय एक ही हैं और गुण भी एक ही है, केवल परिमाण भिन्न हैं; एक ई वाक्य है और दूसरा आ। अतः दोनोंमें उपाश्रितताका सम्बन्ध है। इस युक्तिमें ई वाक्यकी सत्यतासे उसके उपाश्रित आ वाक्यकी सत्यताका अनुमान किया गया है जो कि नियम-विरुद्ध है, क्योंकि विशेष-वाक्यके सत्य होने पर उसका उपाश्रित सामान्य वाक्य सन्दिग्ध होता है।

(घ) वह निस्सन्देह एक उच्च-शिक्षा-प्राप्त व्यक्ति है, लेकिन सभी उच्च-शिक्षा-प्राप्त व्यक्ति निरीक्षक बननेकी योग्यता नहीं रखते।

उत्तर. यह एक संक्षिप्त न्याय है जिसमें निष्कर्ष छिपा हुआ है। छिपा हुआ निष्कर्ष है 'वह निरीक्षक बननेकी योग्यता नहीं रखता।' तार्किक रूपमें यह युक्ति इस प्रकार रखी जायगी:—

कुछ उच्च-शिक्षा-प्राप्त व्यक्ति निरीक्षक बननेकी योग्यतावाले नहीं हैं।

वह एक उच्च-शिक्षा-प्राप्त व्यक्ति है।
∴ वह निरीक्षक बननेकी योग्यतावाला नहीं है।

इस युक्तिमें अव्याप्त-मध्यमपदका दोष है, क्योंकि मध्यमपद 'उच्च-शिक्षा-प्राप्त व्यक्ति' दोनों आधारवाक्योंमें एक बार भी व्याप्त नहीं है।

३. नीचे लिखी युक्तियोंको उनके आधारवाक्योंको सरल बनाकर और संयोग तथा आकारके अनुसार उनको क्रममें रखकर न्यायके रूपमें रखिए तथा परीक्षा करनेके बाद यदि उनमें कोई दोष मिलें तो उनको भी बताइये :—

(क) प्राणी वायुमण्डलके बिना जीवित नहीं रह सकते। चन्द्रमामें वायुमण्डल नहीं है। अतः चन्द्रमामें प्राणी नहीं रह सकते।

उत्तर. इसका तार्किक रूप निम्नलिखित है :—

कोई प्राणी ऐसा **नहीं है** जो वायुमण्डलके बिना जीवित रह सके।

चन्द्रमा एक ऐसा स्थान **है** जहां वायुमण्डल नहीं है।

∴ **कोई प्राणी** ऐसा **नहीं है** जो चन्द्रमामें रह सके।

इसमें चतुष्पदी-दोष है। 'ऐसा जो वायुमण्डलके बिना जीवित रह सके' और 'ऐसा स्थान जहां वायुमण्डल नहीं है' दो भिन्न पद हैं।

(ख) आसमानमें बादल हैं, अतः दिन गरम है।

उत्तर. इसका तार्किक रूप यह है :—

सब दिन जिनमें आसमानमें बादल होते हैं गरम हैं।

यह दिन ऐसा दिन **है** जिसमें आसमानमें बादल हैं।

∴ **यह दिन** गरम **है**।

यह प्रथम आकारका प्रामाणिक संयोग बारबारा है।

(ग) जहां भी सामाजिक प्रगति है वहां व्यक्तियोंको आज़ादी होनी चाहिए और जहां भी व्यक्तियोंको आज़ादी है वहां सम्पत्ति और स्थितिमें असमानता होनी चाहिए। अतः असमानता और प्रगति परस्पर अवियोज्य हैं।

उत्तर. इसका तार्किक रूप निम्नलिखित है :—

सब सामाजिक प्रगतिके दृष्टान्त व्यक्तियोंकी आज़ादीके दृष्टान्त हैं।

सब व्यक्तियोंकी आज़ादीके दृष्टान्त सम्पत्ति और स्थितिकी असमानताके दृष्टान्त हैं।

∴ सब सम्पत्ति और स्थितिकी असमानताके दृष्टान्त सामाजिक प्रगतिके दृष्टान्त हैं।

इस युक्तिमें अनियमित ह्रस्वपदका दोष है क्योंकि ह्रस्वपद 'सम्पत्ति और स्थितिकी असमानताके दृष्टान्त' निष्कर्षमें व्याप्त है जबकि ह्रस्ववाक्यमें व्याप्त नहीं है।

(घ) भौतिक पिण्डोंके अतिरिक्त कोई चीज़ पृथ्वीकी ओर आकर्षित नहीं होती ; हवा पृथ्वीकी ओर आकर्षित होती है ; अतः वह भौतिक पिण्ड है।

उत्तर. यह प्रथम आकारका प्रामाणिक संयोग बारबारा है।

४. निम्नलिखित युक्तियोंको सरलसे सरल तार्किक रूपमें रखिए, उनके आकार और संयोग बताइये तथा यदि उनमें कोई दोष हों तो उन्हें भी बताइये :—

(क) वह रंगीन पदार्थ रक्त नहीं हो सकता ; वह बेन्ज़ोलमें घुल सकता है।

उत्तर. यह एक संक्षिप्त न्याय है। छिपे हुए दीर्घवाक्यको प्रकट करनेके बाद इसका तार्किक रूप इस प्रकार होगा :—

ए. कोई बेन्ज़ोलमें घुल सकनेवाला पदार्थ रक्त नहीं है।
आ. यह बेन्ज़ोलमें घुल सकनेवाला पदार्थ है।
∴ ए. यह रक्त नहीं है।

यह प्रथम आकारका प्रामाणिक संयोग सिलारेन्ट है।

(ख) उसने अपनी प्रतिज्ञाको तोड़ा है, जैसा कि ईमानदार आदमी कभी नहीं करता।

उत्तर. यह एक संक्षिप्त न्याय है और छिपे हुए निष्कर्षको प्रकट करने पर इसका तार्किक रूप इस प्रकार होगा :—

ए. **कोई ईमानदार आदमी** वे आदमी **नहीं हैं** जो अपनी प्रतिज्ञा को तोड़ते हैं।
आ. **वह** ऐसा आदमी **है** जिसने अपनी प्रतीज्ञा को तोड़ा है।
∴ ए. **वह** ईमानदार आदमी **नहीं है**।

यह द्वितीय आकारका प्रामाणिक संयोग सिसारे है।

(ग) सब घासोंके पत्ते समानान्तर रेखाओंवाले होते हैं और बांस के पत्ते भी वैसे ही होते हैं।

उत्तर. यह एक संक्षिप्त न्याय है जिसका निष्कर्ष छिपा हुआ है। इसका तार्किक रूप निम्नलिखित है :—

आ. **सब घास** वे पौधे **हैं** जिनके पत्ते समानान्तर रेखाओंवाले होते हैं।
आ. **बांस** वह पौधा **है** जिसके पत्ते समानान्तर रेखाओंवाले होते हैं।
∴ आ. **बांस** एक घास **है**।

इस युक्तिमें अव्याप्त मध्यमपदका दोष है क्योंकि मध्यमपद 'पौधा जिसके पत्ते समानान्तर रेखाओंवाले होते हैं' किसी भी आधारवाक्यमें व्याप्त नहीं है।

(घ) यह मधुमक्खी है; उसे मत छूना; वह काट खायगी।

उत्तर. इसका तार्किक रूप निम्नलिखित है :—

यदि मधुमक्खी को छुआ जाय तो वह काट खाती है।
यह मधुमक्खी छुई जाती है।
∴ यह मधुमक्खी काट खायगी।

यह हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्याय सही है क्योंकि इसमें हेतुका विधान करके फलका विधान किया गया है।

(ङ) तूफ़ानके बाद वायुमंडलमें ओज़ोनकी बहुत मात्रा होनी चाहिए, क्योंकि ओज़ोन विद्युत्‌की चिनगारियोंके वायुमंडलमें से गुज़रनेसे पैदा होती है।

उत्तर. इसका तार्किक रूप निम्नलिखित है :—

विद्युत्‌की चिनगारियां वे चीजें हैं जो ओज़ोनको उत्पन्न करती हैं।
तूफ़ान वह चीज है जो विद्युत्‌की चिनगारियां उत्पन्न करता है।
∴ **तूफ़ान** वह चीज है जो ओज़ोन उत्पन्न करता है।

इसमें चतुष्पदी दोष है।

५. निम्नलिखित युक्तियोंको तार्किक रूपमें रखिए, उनके आकार और संयोग बताइये तथा उनकी सत्यताकी परीक्षा कीजिये :—

(क) क्रिटियाट (kritiat) प्लैटो की कृति नहीं हो सकता, क्योंकि इसका साहित्यिक मूल्य कम है।

उत्तर. छिपे हुए दीर्घवाक्यको प्रकट करनेके बाद इसका तार्किक रूप निम्नलिखित होगा :—

कोई प्लैटो की कृति कम साहित्यिक मूल्यकी कृति नहीं है।
क्रिटियाट कम साहित्यिक मूल्यकी कृति है।
∴ क्रिटियाट प्लैटो की कृति नहीं है।

यह द्वितीय आकारके प्रामाणिक संयोग सिसारे की तरह दिखाई देती है। लेकिन दीर्घवाक्यमें 'प्लैटो की कृति' पद समष्टचर्थमें लिया गया है और इस तरह हम यहां एक पदको समष्टचर्थमें लेकर व्यष्टचर्थ में ले रहे हैं। अतः इस युक्तिमें विग्रह-दोष है।

(ख) अन्तिम वक्ता इस प्रस्तावके विरुद्ध है, किन्तु प्रत्येक बुद्धिमान् व्यक्ति इसको पास कराना चाहता है।

उत्तर. पूरी तरहसे व्यक्त करने पर इसका तार्किक रूप निम्नलिखित होगा :—

आ. **सब बुद्धिमान् व्यक्ति** वे हैं जो इस प्रस्तावको पास कराना चाहते हैं।

ए. **अन्तिम वक्ता** वह व्यक्ति **नहीं** है जो इस प्रस्तावको पास कराना चाहता है।

∴ ए. **अन्तिम वक्ता** बुद्धिमान् व्यक्ति **नहीं** है।

यह द्वितीय आकारका प्रामाणिक संयोग कामेस्ट्रेस है, लेकिन इसमें आत्माश्रय-दोष है क्योंकि निष्कर्षको असलमें पहिले ही दीर्घवाक्यमें मान लिया गया है।

(ग) मुझे दाखिला मिल जायेगा क्योंकि मैंने प्रथम श्रेणीमें परीक्षा पास की है और केवल प्रथम श्रेणीमें परीक्षा पास करनेवालोंको दाखिला मिलेगा।

उत्तर. इसका तार्किक रूप निम्नलिखित है :—

सब व्यक्ति जिनको दाखिला मिलेगा प्रथम श्रेणीमें परीक्षा पास करनेवाले **हैं**।

मैं प्रथम श्रेणीमें परीक्षा पास करनेवाला **हूं**।

∴ **मैं** वह व्यक्ति **हूं** जिसे दाखिला मिलेगा।

इसमें अव्याप्त-मध्यमपदका दोष है।

(घ) किसी चीजकी मात्रा जितनी ही बढ़ेगी उसकी क़ीमत उतनी ही घटेगी ; और चांदीकी मात्रा दिन-प्रति-दिन बढ़ती जा रही है।

उत्तर. इसका तार्किक रूप निम्नलिखित है :—

यदि कोई चीज़ अधिकाधिक बढ़ती है तो उसकी क़ीमत अधिकाधिक घटती है।

चांदी अधिकाधिक बढ़ रही है।

∴ चांदीकी क़ीमत अधिकाधिक घटेगी।

यह हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्याय सही है क्योंकि इसमें हेतुका विधान करनेके बाद फलका विधान किया गया है।

(ङ) मैं परीक्षामें उत्तीर्ण नहीं हो पाऊंगा क्योंकि मैंने मिल का तर्कशास्त्र नहीं पढ़ा है जिसे पढ़कर मैं उत्तीर्ण हो जाता।

उत्तर. इसका तार्किक रूप निम्नलिखित है :—

यदि मैं मिल का तर्कशास्त्र पढ़ता तो परीक्षामें उत्तीर्ण होता।

मैंने मिल का तर्कशास्त्र नहीं पढ़ा है।

∴ मैं परीक्षामें उत्तीर्ण नहीं हूंगा।

यह हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्याय दोषपूर्ण है क्योंकि इसमें ह्रस्ववाक्यमें हेतुका निषेध करके निष्कर्षमें फलका निषेध किया गया है।

६. निम्नलिखित युक्तियोंकी तार्किक रूपमें रखकर परीक्षा कीजिये :—

(क) यह कोई कैसे कह सकता है कि पीड़ा अशुभ है, जब वह यह मानता है कि प्रायश्चित्तमें पीड़ा होती है और फिर भी वह कभी-कभी शुभ होता है?

उत्तर. इसका तार्किक रूप निम्नलिखित है :—

आ. सब प्रायश्चित्तके दृष्टान्त पीड़ाके दृष्टान्त हैं।
ई. कुछ प्रायश्चित्तके दृष्टान्त शुभके दृष्टान्त हैं।
∴ ई. कुछ शुभके दृष्टान्त पीड़ाके दृष्टान्त हैं।
अतः पीड़ा हमेशा अशुभ नहीं हो सकती। यह तृतीय आकारका प्रामाणिक संयोग दातीसी है।

(ख) जहां क़ानून नहीं है वहां न्याय नहीं है।

उत्तर. इसे तार्किक रूपमें रखने पर निम्नलिखित हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्याय प्राप्त होता है :—

यदि क़ानून नहीं है तो न्याय नहीं है।
क़ानून नहीं है।
∴ न्याय नहीं है।

इसमें हमने हेतुका विधान करके फलका विधान किया है। अतः आकारकी दृष्टिसे यह युक्ति सही है। लेकिन अगर यहां क़ानूनका अर्थ वह क़ानून है जो पुस्तकोंमें लिखा हुआ है या जिसे बाक़ायदा विधानसभाओंने पास किया है तो कहा जा सकता है कि दीर्घवाक्य ग़लत है।

(ग) आप सूर्यकी परिभाषा नहीं कर सकते ; क्योंकि परिभाषाको परिभाष्य पदसे अधिक साफ़ होना चाहिए और जो प्रकाशका स्रोत है उससे अधिक साफ़ क्या चीज होगी।

उत्तर. इसका तार्किक रूप निम्नलिखित है :—

सूर्यकी परिभाषा 'सूर्य' पदसे अधिक साफ़ है।
कोई भी चीज़ सूर्यसे अधिक साफ़ नहीं है।
∴ कोई भी चीज़ सूर्यकी परिभाषा नहीं है।

अर्थात् सूर्यकी परिभाषा नहीं हो सकती है। यह स्पष्ट है कि इस युक्तिमें भिन्नार्थक मध्यमपदका दोष है क्योंकि 'अधिक साफ़' पदका दोनों आधार-

वाक्योंमें अलग-अलग अर्थ है। इसके अलावा 'सूर्य' और 'सूर्य' पद ये दो पद भी भिन्न हैं। अतःइस युक्तिमें चतुष्पदी दोष है।

(घ) गिब्बन बहुत प्रतिभावान् नहीं था क्योंकि एक सफल लेखक या तो परिश्रमी होता है या प्रतिभावान् और गिब्बन परिश्रमी था।

उत्तर. यह युक्ति निम्नलिखित वैकल्पिक-निरपेक्ष न्यायके रूपमें रखी जा सकती है:—

दीर्घवाक्य. सफल लेखक या तो परिश्रमी होता है।
या प्रतिभावान् होता है।
ह्रस्ववाक्य. गिब्बन परिश्रमी था।
निष्कर्ष. ∴ गिब्बन प्रतिभावान् नहीं था।

मिल के अनुसार यदि हम किसी वैकल्पिक वाक्यके एक विकल्पका निषेध करते हैं तो दूसरे विकल्पका विधान कर सकते हैं, लेकिन यदि हम एक विकल्पका विधान करते हैं तो दूसरे विकल्पका निषेध नहीं कर सकते। अतः मिल के मतानुसार यह युक्ति ग़लत है। यूबरवेग के अनुसार हम एक विकल्पका विधान करके दूसरेका निषेध और एकका निषेध करके दूसरेका विधान कर सकते हैं। लेकिन यूबरवेग का मत तभी सही होता है जब विकल्प व्याघातक वाक्योंकी तरह परस्पर व्यावर्तक होते हैं। लेकिन दी हुई युक्तिमें यह बात नहीं है क्योंकि एक ही आदमी परिश्रमी और प्रतिभावान् भी हो सकता है। अतः इस दृष्टान्तमें मिल का ही मत सही है और इसलिए युक्ति ग़लत है।

७. निम्नलिखितकी परीक्षा कीजिये:—

(क) बंगाल भारतमें शामिल है; बम्बई बंगालमें शामिल नहीं है; इसलिए बम्बई भारतमें शामिल नहीं है।

उत्तर. इसमें चतुष्पदी-दोष है।

(ख) चोरी अपराध नहीं हो सकता, क्योंकि इसे लाइकर्गस के क़ानूनका प्रोत्साहन प्राप्त था।

उत्तर. इसका तार्किक रूप:—

कोई काम जिसे लाइकर्गस के क़ानूनका प्रोत्साहन प्राप्त है अपराध नहीं है।
चोरी वह काम है जिसे लाइकर्गस के क़ानूनका प्रोत्साहन प्राप्त है।
∴ चोरी अपराध नहीं है।

यह प्रथम आकारका प्रामाणिक संयोग सिलारेन्ट है। अतः आकार

की दृष्टिसे यह सही है। लेकिन दीर्घवाक्य सत्य नहीं है। यह आधार-वाक्यको अनुचित तरीक़ेसे मान लेनेके दोषका एक दृष्टान्त है।

(ग) इस स्टेशन पर एक्सप्रेस गाड़ीके अलावा कोई गाड़ी नहीं ठहरती; और चूंकि पिछली गाड़ी इस पर नहीं रुकी, इसलिए वह एक्सप्रेस गाड़ी नहीं थी।

उत्तर. इसका तार्किक रूप:—

सब इस स्टेशन पर रुकनेवाली गाड़ियां एक्सप्रेस हैं।
पिछली गाड़ी इस स्टेशन पर रुकनेवाली गाड़ी नहीं है।
∴ पिछली गाड़ी एक्सप्रेस नहीं है।

इस युक्तिमें अनियमित दीर्घपदका दोष है।

(घ) थेमिस्टोक्लीज़ का लड़का अपनी मां पर शासन करता था; वह अपने पति पर शासन करती थी; उसका पति एथेन्स पर और एथेन्स यूनान पर शासन करता था; इसलिए थेमिस्टोक्लीज़ का लड़का यूनान पर शासन करता था।

उत्तर. यह एक न्यायमाला प्रतीत होती है जिसमें प्रत्येक न्यायमें चतुष्पदी-दोष है।

(ङ) यदि सभी आदमी ईमानदार होते तो क़ानून अनावश्यक होता; लेकिन चूंकि क़ानून आवश्यक है, इसलिए कोई आदमी ईमानदार नहीं है।

उत्तर. इसका तार्किक रूप:—

यदि सब मनुष्य ईमानदार होते तो क़ानून अनावश्यक होता।
क़ानून आवश्यक है।
∴ कोई मनुष्य ईमानदार नहीं है।

यह एक हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्याय है जिसमें ह्रस्ववाक्यमें फलका निषेध किया गया है और निष्कर्षमें हेतुका निषेध-सा प्रतीत होता है। लेकिन हेतु (सब मनुष्य ईमानदार हैं) का निषेध करके निष्कर्ष 'कुछ मनुष्य ईमानदार नहीं हैं' निकलना चाहिए जो कि हेतुका व्याघातक है। अतः 'कोई मनुष्य ईमानदार नहीं है। यह निष्कर्ष ग़लत है।

८. निम्नलिखितकी परीक्षा कीजिये:—

(क) विटेलियस का भूमि-कर जीवनकी आवश्यकताओं पर खर्च हुआ; क्योंकि उसे गोश्त और शराब पर खर्च किया गया और हर एक यह मानता है कि गोश्त और शराब जीवनकी आवश्यकताएं हैं।

उत्तर. इसका तार्किक रूप:—

सब गोश्त और शराब पर खर्च किया हुआ पैसा जीवनकी आवश्यकताओं पर खर्च किया हुआ पैसा है।

सब विटेलियस का भूमिकर गोश्त और शराब पर खर्च किया हुआ पैसा है।

∴ सब विटेलियस का भूमिकर जीवनकी आवश्यकताओं पर खर्च किया हुआ पैसा है।

इस युक्तिमें उपाधि-भेद-दोष है, क्योंकि मध्यमपद 'गोश्त और शराब पर खर्च किया हुआ पैसा' दोनों आधारवाक्योंमें अलग-अलग उपाधियोंके साथ प्रयुक्त हुआ है। दीर्घवाक्यमें यह 'थोड़ी मात्रामें खर्च किये जाने पर' सत्य है और ह्रस्ववाक्यमें इसमें 'अमितव्ययिता' छिपी हुई है।

(ख) जल्दी करनेसे बरबादी होती है और बरबादीसे अभाव होता है; अतः देर करनेसे कोई हानि नहीं होती।

उत्तर. इसमें चतुष्पदी-दोष है।

(ग) चूंकि केवल धार्मिक लोग ही सुखी हैं, इसलिए उसे धार्मिक होना चाहिए यदि वह सुखी है; और उसे सुखी होना चाहिए यदि वह धार्मिक है।

उत्तर. यहां दो न्याय हैं:—

आ. सब सुखी व्यक्ति धार्मिक हैं।
आ. वह सुखी व्यक्ति है।
∴ आ. वह धार्मिक है।

यह प्रथम आकारका बारबारा संयोग है।

आ. सब सुखी व्यक्ति धार्मिक हैं।
आ. वह धार्मिक है।
∴ आ. वह सुखी व्यक्ति है।

इसमें अव्याप्त मध्यमपदका दोष है।

(घ) प्रत्येक व्यक्तिको बोलनेकी स्वतंत्रता देना राज्यके लिये लाभदायक है, क्योंकि अगर प्रत्येक व्यक्तिको अपनी भावनाओंको व्यक्त करनेकी स्वतंत्रता हो तो इससे समाजका हित होगा।

उत्तर. इस युक्तिमें आत्माश्रय-दोष है क्योंकि 'बोलनेकी स्वतंत्रता' और 'भावनाओंको व्यक्त करनेकी स्वतंत्रता' दोनोंका एक ही अर्थ है।

(ङ) जब मनुष्य निष्पाप हैं तो क़ानून व्यर्थ है; जब मनुष्य पापी हैं तो क़ानून भंग होता है; अतः क़ानून अनावश्यक है।

उत्तर. इस उभयतोपाशका तार्किक रूप निम्नलिखित है:—

यदि मनुष्य निष्पाप हैं तो क़ानून व्यर्थ हैं; और यदि मनुष्य पापी
हैं तो कानून तोड़े जाते हैं।
या तो मनुष्य निष्पाप हैं या पापी हैं।
∴ या तो क़ानून व्यर्थ हैं या वे तोड़े जाते हैं।

यह आकारकी दृष्टिसे सही है, लेकिन द्रव्यकी दृष्टिसे ग़लत है, क्योंकि ह्रस्ववाक्यके विकल्प निःशेषकारी नहीं हैं। ऐसे भी मनुष्य हो सकते हैं जो शुरूमें निष्पाप होते हैं लेकिन यदि क़ानून न हो तो वे पापी हो सकते हैं।

(च) प्रोटेस्टैन्टवाद क्या है? यह सम्राट्के प्रति वफ़ादारी मात्र है। क्या एलिज़बेथ और स्पेन के युद्धमें प्रोटेस्टैन्ट एलिज़बेथ के प्रति वफ़ादार नहीं थे।

उत्तर. 'प्रोटेस्टैन्टवाद क्या है? यह सम्राट्के प्रति वफ़ादारी मात्र है।' इसका अर्थ है 'सब प्रोटेस्टैन्ट अपने सम्राट्के प्रति वफ़ादार होते हैं।' 'क्या प्रोटेस्टैन्ट एलिज़बेथ के प्रति वफ़ादार नहीं थे? इस वाक्यका अर्थ है 'कुछ प्रोटेस्टैन्ट अपने सम्राट्के प्रति वफ़ादार थे।'

इस युक्तिमें 'कुछ प्रोटेस्टैन्ट वफ़ादार हैं'। इस आधारवाक्यसे निष्कर्ष यह निकाला गया है कि 'सब प्रोटेस्टैन्ट वफ़ादार हैं।' लेकिन एक विशेष वाक्यकी सत्यतासे उसके उपाश्रित सामान्य वाक्यकी सत्यता सिद्ध नहीं होती। अतः इस युक्तिमें उपाश्रितताके नियमोंका उल्लंघन हुआ है।

९. निम्नलिखित युक्तियोंकी परीक्षा कीजिये :—

(क) यदि मनुष्य शिक्षित है तो वह अपने हाथसे काम करना पसन्द नहीं करता; फलतः यदि शिक्षा सार्वजनिक हो जायेगी तो उद्योग-धन्धे बन्द हो जायेंगे।

उत्तर. इसका तार्किक रूप:—

यदि सब मनुष्य शिक्षित हों तो वे अपने हाथसे काम
करना पसन्द नहीं करेंगे।
सब मनुष्य शिक्षित हैं।
∴ कोई मनुष्य अपने हाथसे काम करना पसन्द नहीं करते।

यह युक्ति आकारकी दृष्टिसे सही है। यहां निष्कर्ष यह निकाला गया है कि 'उद्योग-धन्धे बन्द हो जायेंगे।' इसका मतलब यह है कि जब सभी मनुष्य अपने हाथसे काम करना छोड़ देंगे तो उद्योग-धन्धे बन्द हो जायेंगे। लेकिन दी हुई युक्ति केवल इतना ही सिद्ध करती है कि मनुष्य

अपने हाथसे काम करना पसन्द नहीं करेंगे। काम न करने और काम करना पसन्द न करनेमें बहुत अन्तर है। अतः यह युक्ति ग़लत है।

(ख) विवेकीके अलावा कोई अच्छा नहीं है; और अच्छेके अलावा कोई सुखी नहीं है; अतः विवेकीके अलावा कोई सुखी नहीं है।

उत्तर. इसका तार्किक रूप:—

सब अच्छे मनुष्य विवेकी हैं।
सब सुखी मनुष्य अच्छे मनुष्य हैं।
∴ सब सुखी मनुष्य विवेकी हैं।

यह प्रथम आकारका प्रामाणिक संयोग बारबारा है।

(ग) हमें तापको द्रव्य समझनेका कोई अधिकार नहीं है, क्योंकि इसको यांत्रिक कार्यमें रूपान्तरित किया जा सकता है जो कि निश्चय ही द्रव्य नहीं है।

उत्तर. इसका तार्किक रूप:—

ए. **कोई भी चीज़ जो कि एक ऐसी चीज़में रूपान्तरित की जा सकती है जो द्रव्य नहीं है द्रव्य नहीं है।**
आ. **ताप** ऐसी चीज़ है जो कि एक ऐसी चीज़में रूपान्तरित की जा सकती है जो द्रव्य नहीं है।
∴ ए. **ताप द्रव्य नहीं है।**

यह प्रथम आकारका प्रामाणिक संयोग सिलारेन्ट है।

(घ) विद्वान् कभी-कभी पागल हो जाते हैं; लेकिन चूंकि वह विद्वान् नहीं है, इसलिए उसके मानसिक स्वास्थ्यके लिये कोई ख़तरा नहीं है।

उत्तर. इसका तार्किक रूप:—

ई. कुछ विद्वान् पागल हैं।
ए. वह विद्वान् नहीं है।
∴ ए. वह पागल नहीं है।

इस युक्तिमें अनियमित दीर्घपदका दोष है।

(ङ) जो लोग समाज में रहते हैं उनका नैतिक पतन हो सकता है; अतः नैतिक शुद्धता प्राप्त करनेके लिये समाजको छोड़ देना चाहिए।

उत्तर. इसका तार्किक रूप:—

समाजमें रहनेवाले मनुष्य नैतिक दृष्टिसे पतित हो सकते हैं।
∴ समाजमें न रहनेवाले नैतिक दृष्टिसे उन्नत हो सकते हैं अर्थात् नैतिक शुद्धता प्राप्त कर सकते हैं।

यह भौतिक प्रतिवर्तनका एक दृष्टान्त है। इसमें आधारवाक्य

के उद्देश्यका व्याघातक पद निष्कर्षका उद्देश्य है और उसके विधेयका विपरीत पद निष्कर्षका विधेय है। दोनोंका गुण एक ही है। यह आकार-विषयक युक्ति नहीं है और इसलिए इसकी सत्यता अनुभव पर निर्भर है।

१०. निम्नलिखित युक्तियोंकी परीक्षा कीजिये :—

(क) यदि प्रश्नपत्र पहिलेसे नहीं मालूम होते हैं तो विश्वविद्यालय का दोष नहीं है; लेकिन प्रश्नपत्र पहिले ही मालूम हो गये हैं; इसलिए विश्वविद्यालय इसके लिये जिम्मेदार है।

उत्तर. इसमें हेतु-निषेधका दोष है।

(ख) आप कैसे कह सकते हैं कि वह सतर्क परीक्षक नहीं है? जैसे सतर्क परीक्षक सख्त होते हैं वैसे ही वह भी है।

उत्तर. तार्किक रूप :—

सब सतर्क परीक्षक सख्त हैं।
वह सख्त है।
∴ वह सतर्क परीक्षक है।

इसमें अव्याप्त मध्यमपदका दोष है।

(ग) स्पष्टवादिता सबके अन्दर होनी चाहिए, अतः युद्धमें गोपनीयता नहीं होनी चाहिए।

उत्तर. इसका तार्किक रूप :—

स्पष्टवादिता अच्छी चीज़ है।
∴ गोपनीयता बुरी चीज है।

यह उस अनुमानका एक दृष्टान्त है जिसे बेन ने भौतिक प्रतिवर्तन कहा है, जिसमें अनुभवके आधार पर कोई निष्कर्ष निकाला जाता है। यह भी कहा जा सकता है कि आधारवाक्यमें किसी एक उपाधिका उल्लेख नहीं है लेकिन निष्कर्षमें एक उपाधिका उल्लेख है और वह उपाधि है 'युद्धमें'। अतः इसमें उपाधि-भेद दोष भी है।

११. निम्नलिखित युक्तियोंकी परीक्षा कीजिये :—

(क) यह आश्चर्यकी बात है कि भारत-जैसे देशमें जिसमें कि हर साल लाखों आदमी प्लेग, हैज़ा, मलेरिया इत्यादि बीमारियोंसे मरते हैं, लोग सेनामें भर्ती होनेसे डरते हैं, जबकि लड़ाईमें मरनेवालोंकी संख्या बीमारियोंसे मरनेवालोंसे कम ही होती है।

उत्तर. इसका तार्किक रूप :—

यदि लड़ाईमें मरनेवालोंकी संख्या रोगसे मरनेवालोंकी संख्या से अधिक नहीं है तो लोगोंके सेनामें भर्ती न होनेका कोई कारण नहीं होना चाहिए।

लड़ाईमें मरनेवालोंकी संख्या रोगसे मरनेवालोंकी संख्यासे अधिक नहीं है।

∴ लोगोंके सेनामें भर्ती न होनेका कोई कारण न होना चाहिए।

यह युक्ति आकारकी दृष्टिसे सही है। लेकिन दीर्घवाक्य ग़लत हो सकता है क्योंकि लोगोंके सेनामें भर्ती न होनेके अन्य कारण हो सकते हैं।

(ख) जो कुछ राम कहता है वह विवेकपूर्ण होना चाहिए क्योंकि वह विधान-सभाका सदस्य है और विधान-सभा निश्चय ही विवेकियों की सभा है।

उत्तर. तार्किक रूप :—

विधान-सभा विवेकियोंकी सभा है।
राम विधान-सभाका सदस्य है।
∴ राम विवेकी है।

यहां विग्रह-दोष है क्योंकि इसमें पदको समष्टचर्थमें लेनेके बाद व्यष्टचर्थमें लिया गया है।

(ग) शंकराचार्य एक महान् धार्मिक सुधारक और उपदेष्टा थे और साथ ही ब्रह्मचारी भी थे; अतः हम कह सकते हैं कि कोई भी एकाकी जीवन बितानेवाला एक महान् धार्मिक सुधारक और उपदेष्टा बन सकता है।

उत्तर. तार्किक रूप :—

शंकराचार्य एक महान् धार्मिक सुधारक और उपदेष्टा हैं।
शंकराचार्य एक ब्रह्मचारी हैं।
∴ सब ब्रह्मचारी महान् धार्मिक सुधारक और उपदेष्टा हैं।

इसमें अनियमित ह्रस्वपदका दोष है।

(घ) सारे परिवारको टीके लगे हैं, फिर भी कुछ चेचकके शिकार हुए। अतः यह स्पष्ट है कि टीकासे बचावट नहीं होती।

उत्तर. तार्किक रूप :—

परिवारके सब सदस्य वे हैं जिन्हें टीके लगे हैं।
परिवारके कुछ सदस्य वे हैं जिन्हें चेचक हुआ है।
∴ कुछ व्यक्ति जिन्हें चेचक हुआ है वे हैं जिन्हें टीके लगे हैं।

यहां निष्कर्ष आकारकी दृष्टिसे ठीक है क्योंकि यह तृतीय आकार का प्रामाणिक संयोग दातीसी है। लेकिन जो निष्कर्ष निकाला गया है

अर्थात् 'टीका बचावट नहीं करता,' वह ग़लत हो सकता है क्योंकि हो सकता है कि टीकेसे सब मामलोंमें न भी हो लेकिन कुछ मामलोंमें बचावट हुई हो।

(ङ) लगभग प्रतिदिन असम्भाव्य घटनाएं होती रहती हैं; लेकिन जो घटना प्रतिदिन होती है वह सम्भाव्य घटना है। अतः असम्भाव्य घटनाएं सम्भाव्य हैं।

उत्तर. तार्किक रूप:—

घटनाएं जो लगभग प्रतिदिन होती हैं, सम्भाव्य हैं।

असम्भाव्य घटनाएं वे घटनाएं हैं जो लगभग प्रतिदिन होती हैं।

∴ असम्भाव्य घटनाएं सम्भव हैं।

इस युक्तिमें विग्रह-दोष कहा जा सकता है क्योंकि ह्रस्वपद 'असम्भाव्य घटनाएं' ह्रस्ववाक्यमें समष्टचर्थमें लिया गया है और नष्कर्षमें व्यष्टचर्थमें।

१२. निम्नलिखितकी परीक्षा कीजिये:—

(क) कलकत्ता विश्वविद्यालयका मानदण्ड निम्न होना चाहिए, क्योंकि उसकी परीक्षाओंमें उत्तीर्ण होनेवालोंका प्रतिशत ऊंचा है, और यह सबको मालूम है कि यह प्रतिशत ऊंचा तब होता है जब मानदण्ड निम्न होता है।

उत्तर. तार्किक रूप:—

यदि परीक्षाका मानदण्ड निम्न है तो उत्तीर्ण लोगोंका प्रतिशत उच्च होता है।

उत्तीर्ण लोगोंका प्रतिशत उच्च है।

∴ परीक्षाका मानदण्ड निम्न है।

इसमें फल-विधानका दोष है।

(ख) स्नातकोत्तर कक्षाएं बन्द कर देनी चाहिए, क्योंकि यदि स्नातकोंको ज्ञानकी सच्ची चाह है तो ऐसी कक्षाओंके न होने पर भी वे अध्ययन जारी रखेंगे; और यदि उनको ऐसी चाह नहीं है तो ऐसी कक्षाओंके होने पर भी वे अध्ययन जारी नहीं रखेंगे।

उत्तर. तार्किक रूप:—

यदि स्नातकोंको ज्ञानकी सच्ची चाह है तो स्नातकोत्तर कक्षाएं अनावश्यक हैं (क्योंकि तब स्नातक अपना अध्ययन स्वयं जारी रखेंगे) और यदि स्नातकोंको ज्ञानकी सच्ची चाह नहीं है तो स्नातकोत्तर कक्षाओंसे कोई लाभ नहीं है।

या तो स्नातकोंको ज्ञानकी सच्ची चाह है या नहीं है।
∴ स्नातकोत्तर कक्षाएं या तो अनावश्यक हैं या उनसे कोई लाभ नहीं है।

यह उभयतोपाश आकारकी दृष्टिसे सत्य है, लेकिन द्रव्यकी दृष्टिसे असत्य है, क्योंकि हेतुओं और फलोंके बीच दीर्घवाक्यमें जो सम्बन्ध माना गया है वह वास्तवमें है नहीं। ह्रस्ववाक्य भी ग़लत है क्योंकि उसके विकल्प निःशेषकारी नहीं हैं; सम्भव है कि स्नातकोत्तर कक्षाओं के रहनेसे उन लोगोंके अन्दर ज्ञानकी चाह पैदा हो जाय जिनमें अभी नहीं है।

(ग) क्या मनुष्य ग़लती नहीं करता? करता है। तब प्रत्येक विधान-सभाका सदस्य ग़लती कर सकता है। अतः इस महत्त्वपूर्ण मामले पर विधान-सभाका निर्णय अविश्वसनीय है।

उत्तर. तार्किक रूप :—

प्रत्येक विधानसभाई ग़लती कर सकता है।
∴ विधान-सभा ग़लती कर सकती है।

इसमें संग्रह-दोष है जिसमें कि पदको व्यष्टचर्थमें लेनेके बाद समष्टचर्थमें लिया जाता है।

(घ) प्रत्येक व्यक्तिको व्यक्तिगत निर्णयका अधिकार है। अतः प्रत्येक परीक्षक अपनी इच्छानुसार कापियां जांचनेके लिये स्वतन्त्र है।

उत्तर. तार्किक रूप :—

सब मनुष्य व्यक्तिगत निर्णयका अधिकार रखनेवाले हैं।
सब परीक्षक मनुष्य हैं।
∴ सब परीक्षक व्यक्तिगत निर्णयका अधिकार रखनेवाले हैं।

यह निष्कर्ष सही है, लेकिन दी हुई युक्तिमें जो निष्कर्ष निकाला गया है वह यह है: 'प्रत्येक परीक्षक अपनी इच्छानुसार कापियां जांचनेमें स्वतन्त्र है।' किन्तु 'व्यक्तिगत निर्णयका अधिकार' तथा 'जैसा जो चाहे वैसा करनेका अधिकार' दो बिल्कुल भिन्न चीज़ें हैं, ये एक दूसरेके पर्याय नहीं हैं।

हम यह भी कह सकते हैं कि इस युक्तिमें उपाधि-भेद दोष है, क्योंकि इसमें हम एक निरूपाधिक नियमसे एक सोपाधिक मामलेमें पहुंच जाते हैं।

१३. निम्नलिखित युक्तियोंकी परीक्षा कीजिये :—

(क) रोमन कैथोलिक मत सम्राट्के प्रति वफ़ादार न होनेका ही

दूसरा नाम है क्योंकि क्या इंगलैंडमें महारानी एलिज़बेथ को अपदस्थ करनेके लिये रोमन कैथोलिकोंने अनेक षड्यंत्र नहीं रचे?

उत्तर. तार्किक रूप :—

कुछ रोमन कैथोलिक किसी एक सम्राट्के वफ़ादार नहीं थे।

∴ कोई रोमन कैथोलिक किसी सम्राट्के वफ़ादार नहीं हैं।

यहां हम एक विशेष निषेधात्मक वाक्यकी सत्यतासे उसके उपाश्रित सामान्य निषेधात्मक वाक्यकी सत्यताका अनुमान कर रहे हैं जो कि उपाश्रितताके नियमोंके विरुद्ध है।

(ख) रूसी साम्यवाद भारत में नहीं है, क्योंकि यदि वह होता तो अब तक उसका अस्तित्व ज्ञात हो गया होता।

उत्तर. तार्किक रूप :—

यदि रूसी साम्यवाद भारत में होता तो उसका अस्तित्व अब तक ज्ञात हो गया होता।

उसका अस्तित्व अब तक ज्ञात नहीं हुआ है।

∴ रूसी साम्यवाद भारत में नहीं है।

इस हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्यायमें फलका निषेध करके हेतुका निषेध किया गया है जो कि बिल्कुल ठीक है।

(ग) शायद भाग्य सिकन्दर के खिलाफ़ था, अन्यथा सारी दुनिया को फ़तह करके भारतमें उसे क्यों मुंहकी खानी पड़ती?

उत्तर. तार्किक रूप :—

यदि दुनियाके विजेताको भारतमें हारना पड़ता है तो यह भाग्यके कारण है।

दुनियाके विजेताको भारतमें हारना पड़ा।

∴ यह भाग्यके कारण है।

यह युक्ति आकारकी दृष्टिसे सत्य है क्योंकि इसमें हेतुका विधान करके फलका विधान हुआ है।

(घ) हमारा विश्वविद्यालय बहुत लोकप्रिय है, जैसा कि विभिन्न परीक्षाओंमें छात्रोंकी बढ़ती हुई संख्यासे प्रकट होता है; अतः विश्वविद्यालयमें सुधारकी आवश्यकता नहीं है।

उत्तर. यह एक न्यायमाला है :—

(१) यदि विभिन्न परीक्षाओंमें बैठनेवालोंकी संख्या बढ़ रही है तो हमारा विश्वविद्यालय लोकप्रिय है।

विभिन्न परीक्षाओंमें बैठनेवालोंकी संख्या बढ़ रही है।

∴ हमारा विश्वविद्यालय लोकप्रिय है।

(२) यदि कोई विश्वविद्यालय लोकप्रिय है तो उसमें सुधारकी आवश्यकता नहीं है।

हमारा विश्वविद्यालय लोकप्रिय है।

∴ इसमें सुधारकी आवश्यकता नहीं है।

यह युक्ति आकारकी दृष्टिसे सत्य है, लेकिन दोनों न्यायोंमें दीर्घ-वाक्य ग़लत हैं क्योंकि जैसा सम्बन्ध हेतुओं और फलोंमें मान लिया गया है वैसा है नहीं।

१४. निम्नलिखितकी परीक्षा कीजिये :

(क) स्वराज्य केवल ग़ुलामीको दूर करके ही प्राप्त हो सकता है। लेकिन चूंकि विश्वविद्यालय युवकोंको शिक्षित बनाकर सरकारी सेवा के लिये योग्य बना रहे हैं, इसलिए स्वराज्यकी प्राप्तिके लिये पहिला क़दम ये कि विश्वविद्यालयोंको नष्ट कर देना चाहिए।

उत्तर. तार्किक रूप :—

ए. स्वराज्यका कोई दृष्टान्त दासताका दृष्टान्त नहीं है।

आ. विश्वविद्यालयकी शिक्षाके सब दृष्टान्त सरकारी सेवा के लिये योग्यताके दृष्टान्त हैं।

∴ ए. विश्वविद्यालयका कोई दृष्टान्त स्वराज्यका दृष्टान्त नहीं है।

इस युक्तिमें पदोंकी भिन्नार्थकताका दोष है। 'दासता' और 'सरकारी सेवा' बिल्कुल भिन्न अर्थ रखते हैं हालांकि ऊपरसे वे समानार्थक प्रतीत होते हैं।

(ख) यदि सभी मनुष्य पूर्ण हो सकते हैं तो कुछ मनुष्य पूर्ण हो चुके होते; लेकिन कोई अभी तक पूर्ण नहीं हुआ है; अतः कोई पूर्ण नहीं हो सकता।

उत्तर. तार्किक रूप :—

यदि सब मनुष्य पूर्ण बन सकते तो कुछ मनुष्य पूर्ण बन गये होते।

कोई मनुष्य पूर्ण नहीं बना है।

∴ कोई मनुष्य पूर्ण नहीं बन सकता।

इस हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्यायमें ऐसा लगता है कि फलका निषेध करके हेतुका निषेध किया गया है। लेकिन हेतु वास्तवमें आ वाक्य है और इसका निषेध करके ओ वाक्य मिलना चाहिए। अतः उचित निष्कर्ष 'कुछ मनुष्य पूर्ण नहीं बन सकते' यह वाक्य होना चाहिए। इसलिए जो निष्कर्ष निकाला गया है वह असत्य है।

(ग) निश्चय ही जो काम एक आदमी कर चुका है वह दूसरा भी कर सकता है। क्या हरकूलीज आदमी नहीं था? था। तब जो उसने किया है उसे हम क्यों न करेंगे?

उत्तर. इस युक्तिमें उपाधि-भेद दोष है। हम हरकूलीज के विशेष दृष्टान्तसे अपने विशेष दृष्टान्तके लिये कोई निष्कर्ष नहीं निकाल सकते।

(घ) आप इस बातसे कैसे इन्कार कर सकते हैं कि राम अपने विषयमें निपुण है? आप देखते हैं कि वह अपने विषयकी सब बातोंकी आलोचना करता है और केवल ऐसे आलोचक ही इस विषयके पूर्ण ज्ञाता कहे जा सकते हैं।

उत्तर. तार्किक रूप :—

सब व्यक्ति जो इस विषयके पूर्ण ज्ञाता हैं वे व्यक्ति हैं जो उससे सम्बन्धित सब बातोंकी आलोचना करते हैं।

वह, वह व्यक्ति है जो उससे सम्बन्धित सब बातोंकी आलोचना करता है।

∴ वह, वह व्यक्ति है जो इस विषयका पूर्ण ज्ञाता है।

इस युक्तिमें अव्याप्त मध्यमपदका दोष है।

(ङ) यदि थोड़ी-सी मितव्ययिता हमारा आधा खर्च बचा देगी तो अधिक मितव्ययिता निश्चय ही सारा खर्च बचा देगी।

उत्तर. तार्किक रूप :—

थोड़ी मितव्ययिता हमारा आधा खर्च बचायेगी।

∴ अधिक मियव्ययिता हमारा पूरा खर्च बचायेगी।

इस युक्तिको विशेषण-संयोजनात्मक अनुमानका एक दोषपूर्ण उदाहरण कहा जा सकता है। परिमाणकी वृद्धिसे उद्देश्य और विधेयके ऊपर तुल्य असर नहीं पड़ा है।

१५. निम्नलिखितकी परीक्षा कीजिये :—

(क) जो एक आदमी कर चुका है वह दूसरा भी कर सकता है। अतः इस आदमी को इंगलिश चैनल पार करने में समर्थ होना चाहिए क्योंकि कैप्टेन वेब ने ऐसा किया था।

उत्तर. इस युक्तिमें उपाधि-भेद दोष है। कैप्टेन वेब के असाधारण उदाहरणसे हम यह तर्क नहीं कर सकते कि यह आदमी भी वैसा ही कर सकेगा। 'जो एक आदमी कर सकता है वह दूसरा भी कर सकता है' यह एक सामान्य कथन है और कुछ सीमाओंके अन्दर ही सत्य है।

(ख) यदि विद्यार्थी अपना काम अच्छी तरहसे करें तो परीक्षाएं आवश्यक न होंगी। लेकिन वास्तवमें हम देखते हैं कि परीक्षाएं आवश्यक हैं। अतः यह स्पष्ट है कि विद्यार्थी अपना काम अच्छी तरहसे कभी नहीं करते।

उत्तर. तार्किक रूप :—

यदि विद्यार्थी अपना काम अच्छी तरहसे करते तो परीक्षाएं आवश्यक न होतीं।

परीक्षाएं आवश्यक हैं।

∴ कोई विद्यार्थी अपना काम अच्छी तरहसे नहीं करते।

इस युक्तिमें फलका निषेध करनेके बाद हेतुका निषेध किया गया है। लेकिन हेतुका व्याघातक 'कोई विद्यार्थी अपना काम अच्छी तरहसे नहीं करता' यह वाक्य नहीं है, बल्कि 'कुछ विद्यार्थी अपना काम अच्छी तरहसे नहीं करते' यह ओ वाक्य है। अतः दी हुई युक्ति ग़लत है।

(ग) यह समाचार इतना शुभ है कि सही नहीं हो सकता।

उत्तर. तार्किक रूप :—

कोई समाचार जो अत्यधिक शुभ हो अच्छा नहीं है।

यह समाचार ऐसा समाचार है जो अत्यधिक शुभ है।

∴ यह समाचार अच्छा नहीं है।

यह प्रथम आकारका प्रामाणिक संयोग सिलारेन्ट है।

(घ) कोई भी जीव अमर नहीं है और कोई भी मरणशील जीव पूर्ण नहीं है।

उत्तर. पहिली दृष्टिमें ऐसा प्रतीत होता है कि इस युक्तिके दोनों वाक्य निषेधात्मक हैं, लेकिन हम देखते हैं कि एक वाक्यमें 'अमर' पद आया है और दूसरेमें 'मरणशील'। इसलिए हम इनमें से एकको, जैसे पहिले वाक्यको प्रतिवर्तनके द्वारा विधानात्मक बना सकते हैं।

ए. कोई जीव अमर नहीं है।

∴ आ. सब जीव मरणशील हैं। (प्रतिवर्तित)

अब हम इस युक्तिको तार्किक रूपमें रखते हैं :—

आ. सब जीव मरणशील हैं।

ए. कोई मरणशील पूर्ण नहीं है।

∴ ए. कोई पूर्ण चीज जीव नहीं है।

यह चतुर्थ आकारका प्रामाणिक संयोग कामेनेस है।

(ङ) दंगेको शान्त करनेके लिये राममूर्त्ति को भेजा जा सकता था, क्योंकि वह सबसे बलवान् आदमीको भी पछाड़ सकता है।

उत्तर. तार्किक रूप :—

रामर्मूति दंगेमें शामिल किसी भी आदमीको पछाड़ सकता है।

∴ रामर्मूत्ति दंगेमें शामिल सब आदमियोंको पछाड़ सकता है।

इस युक्तिमें पहिले एक पद (विधेय) को व्यष्टचर्थमें लेकर बादमें समष्टचर्थमें लिया गया है। इसलिए इसमें संग्रह-दोष है।

१६. निम्नलिखित युक्तियोंकी परीक्षा कीजिये :—

(क) रामको बहुत ही ईमानदार होना चाहिए, क्योंकि वह बुराइयोंकी बड़ी आलोचना करता है और केवल वही जो ऐसा करते हैं ईमानदार होते हैं।

उत्तर. तार्किक रूप :—

सब ईमानदार आदमी बुराइयोंकी बड़ी आलोचना करनेवाले हैं।

राम बुराइयोंकी बड़ी आलोचना करनेवाला है।

∴ राम ईमानदार है।

इस युक्तिमें अव्याप्त मध्यमपदका दोष है।

(ख) क्या सताये हुए की मदद करना धर्म नहीं है? निश्चय ही यह धर्म है। क्या पुलिसकी क़ैदमें ये अपराधी सताये हुए नहीं हैं? हैं। तो अवश्य ही मुझे इन्हें पुलिसकी क़ैदसे मुक्त करना चाहिए।

उत्तर. तार्किक रूप :—

सब सताये हुए व्यक्ति सहायताके योग्य व्यक्ति हैं।

ये पुलिसकी क़ैदमें बन्द अपराधी सताये हुए व्यक्ति हैं।

∴ ये पुलिसकी क़ैदमें बन्द अपराधी सहायताके योग्य व्यक्ति हैं।

इस युक्तिमें दीर्घवाक्यमें मध्यमपद 'सताये हुए व्यक्ति' साधारण अर्थमें प्रयुक्त हुआ है, लेकिन ह्रस्ववाक्यमें उसका अर्थ है 'अपराध करनेके कारण सताये हुए'। अतः इस युक्तिमें उपाधि-भेद दोष है।

१७. निम्नलिखित युक्तियोंकी परीक्षा कीजिये और यदि उनमें कोई दोष छिपा हुआ हो तो उसे बताइये :—

(क) यदि किसी पिण्डको पीछेसे धक्का दिया जाय तो वह चलने लगता है; चूंकि, यह पिण्ड चल रहा है इसलिए इसको पीछेसे धक्का लगा होगा।

उत्तर. इस युक्तिको निम्नलिखित हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्यायके रूपमें रखा जा सकता है :—

यदि किसी पिण्डको पीछेसे धक्का दिया जाय तो वह चलने लगता है।

यह पिण्ड चल रहा है।

∴ इसको पीछेसे धक्का दिया गया है।

इसमें फल विधानका दोष है।

(ख) कभी-कभी जीवित प्राणीको मारना आवश्यक होता है। जीवित प्राणीको मारना हत्या है। अत: कभी-कभी हत्या आवश्यक होती है।

उत्तर. तार्किक रूप :—

जीवित प्राणीको मारनेके कुछ दृष्टान्त अनिवार्य हैं।

हत्या जीवित प्राणीको मारना है।

∴ हत्या अनिवार्य है।

इस युक्तिमें अव्याप्त मध्यमपदका दोष है। इसे उपाधि-भेद दोष का एक उदाहरण भी कहा जा सकता है।

(ग) अरस्तू एक महान् तर्कशास्त्री था, क्योंकि वह एक दार्शनिक था और सब महान् तर्कशास्त्री दार्शनिक होते हैं।

उत्तर. इसमें अव्याप्त मध्यमपदका दोष है।

(घ) उसे ज्वर है क्योंकि उसकी त्वचा गरम है।

उत्तर. तार्किक रूप :—

यदि ज्वर है तो त्वचा गरम होती है।

उसकी त्वचा गरम है।

∴ उसे ज्वर है।

इसमें फल-विधानका दोष है।

(ङ) भारतीय होनेके कारण उसे हिन्दू होना चाहिए, क्योंकि केवल भारतीय ही हिन्दू होते हैं।

उत्तर. इसमें अव्याप्त मध्यमपदका दोष है।

१८. निम्नलिखित युक्तियोंकी परीक्षा कीजिये :—

(क) जो सबसे ज्यादा भूखा होता है वह सबसे ज़्यादा खाता है।

जो सबसे कम खाता है वह सबसे ज्यादा भूखा होता है।

∴ जो सबसे कम खाता है वह सबसे ज़्यादा खाता है।

यह उपाधि-भेद दोषका एक उदाहरण है। मध्यमपद 'सबसे ज़्यादा भूखा' दोनों आधारवाक्योंमें अलग-अलग उपाधियोंसे युक्त है; दीर्घ-

वाक्यमें इसका अर्थ है 'खानेके पहिले सबसे ज्यादा भूखा' और ह्रस्व-वाक्यमें इसका अर्थ है 'खानेके बाद सबसे ज्यादा भूखा'।

(ख) डाक्टर ने रोगीको ज़हर दिया है, क्योंकि उसने शराब दी है और शराब एक तरहका ज़हर है।

उत्तर. तार्किक रूप :—

शराब एक ज़हर है।

डाक्टर ने रोगीको जो चीज़ दी है वह शराब है।

∴ डाक्टर ने रोगीको जो चीज़ दी है वह एक ज़हर है।

इस युक्तिमें उपाधि-भेद दोष है क्योंकि मध्यमपद 'ज़हर' की उपाधियां दोनों आधारवाक्योंमें अलग-अलग हैं।

(ग) सुकरात बुद्धिमान् था और केवल बुद्धिमान् ही सुखी होते हैं। अतः सुकरात सुखी था।

उत्तर. तार्किक रूप :—

सब सुखी व्यक्ति बुद्धिमान् हैं।

सुकरात बुद्धिमान् है।

∴ सुकरात सुखी है।

इसमें अव्याप्त मध्यमपदका दोष है।

(घ) वह अन्धविश्वासी नहीं है क्योंकि सब अज्ञ अन्धविश्वासी होते हैं और वह अज्ञ नहीं है।

उत्तर. तार्किक रूप :—

सब अज्ञ अन्धविश्वासी हैं।

वह अज्ञ नहीं है।

∴ वह अन्धविश्वासी नहीं है।

इसमें अनियमित दीर्घपदका दोष है।

(ङ) सब मनुष्य देवता हैं क्योंकि वे बुद्धिमान् प्राणी हैं जैसे कि देवता होते हैं।

उत्तर. तार्किक रूप :—

सब देवता बुद्धिमान् हैं।

सब मनुष्य बुद्धिमान् हैं।

∴ सब मनुष्य देवता हैं।

इसमें अव्याप्त मध्यमपदका दोष है।

(च) तुमने क़ैदीको दण्ड दिया है क्योंकि तुम उस समितिके सदस्य थे जिसने क़ैदीको दण्ड दिया है।

उत्तर. तार्किक रूप :—

समिति ने क़ैदीको दण्ड दिया है।
तुम समितिके सदस्य हो।
∴ तुमने क़ैदीको दण्ड दिया है।

इस युक्तिमें विग्रह-दोष है क्योंकि यहां एक पदको समष्टचर्थमें लेकर व्यष्टचर्थमें लिया गया है।

१९. निम्नलिखित युक्तियोंकी परीक्षा कीजिये और यदि कोई दोष हो तो उसे बताइये :—

(क) सब धार्मिक व्यक्ति सुखी हैं। वह सुखी है, इसलिए धार्मिक है।

उत्तर. तार्किक रूप :—

सब धार्मिक व्यक्ति सुखी हैं।
वह सुखी है।
∴ वह धार्मिक व्यक्ति है।

इसमें अव्याप्त मध्यमपदका दोष है।

(ख) ईश्वर ने मनुष्यको पैदा किया; मनुष्य ने पापको पैदा किया। इसलिए ईश्वर ने पापको पैदा किया।

उत्तर. इसमें चतुष्पदी-दोष है।

(ग) चमगादड़ोंके पंख नहीं होते, क्योंकि वे पक्षी नहीं हैं और सब पक्षियोंके पंख होते हैं।

उत्तर. तार्किक रूप :—

सब पक्षी पंखवाले हैं।
कोई चमगादड़ पक्षी नहीं है।
∴ कोई चमगादड़ पंखवाले नहीं हैं।

इसमें अनियमित दीर्घपदका दोष है।

(घ) उसे नौकरीके लिये अर्ज़ी देनी चाहिए, क्योंकि वह स्नातक है और केवल स्नातकोंसे ही अर्ज़ी मांगी गई है।

उत्तर. तार्किक रूप :—

सब व्यक्ति जिनसे अर्ज़ी मांगी गई है स्नातक हैं।
वह स्नातक है।
∴ वह वह व्यक्ति है जिससे अर्ज़ी मांगी गई है।

इसमें अव्याप्त मध्यमपदका दोष है।

(ङ) यदि कोई अपराधी है तो वह भयसे कांपता है। अतः यह आदमी अपराधी है। क्या वह भयसे नहीं कांप रहा है?

उत्तर. इसका तार्किक रूप :—

यदि कोई अपराधी है तो वह भयसे कांपता है।
यह व्यक्ति भयसे कांपता है।
∴ यह व्यक्ति अपराधी है।

इसमें फल-विधानका दोष है।

(च) उसने ऐसा काम करके मूर्खता प्रकट की है।

उत्तर. तार्किक रूप:—

आ. सब ऐसा काम करनेवाले मूर्ख हैं।
आ. वह ऐसा काम करनेवाला है।
∴ आ. वह मूर्ख है।

यह युक्ति प्रथम आकारका प्रामाणिक संयोग बारबारा है।

यह स्पष्ट है कि दी हुई युक्तिमें दीर्घवाक्य छिपा हुआ था और यदि उसे हम उपर्युक्त रूपमें प्रकट करें तो युक्ति सही होगी। लेकिन यदि दीर्घवाक्य ऐसा हो जैसा नीचे दिया गया है तो अव्याप्त मध्यमपदका दोष होगा।

आ. सब मूर्ख ऐसा काम करनेवाले हैं।
आ. वह ऐसा काम करनेवाला है।
∴ आ. वह मूर्ख है।

२०. निम्नलिखित युक्तियोंको तार्किक रूपमें रखिये और कारण बताते हुए लिखिये कि वे सही हैं या ग़लत:—

(क) सब देश जो अपना शासन आप करते हैं उन्नतिशील हैं। भारत अपना शासन आप नहीं करता। अत: भारत उन्नतिशील नहीं है।

उत्तर. इसमें अनियमित दीर्घपदका दोष है।

(ख) अनुत्तीर्ण छात्रोंकी विशाल संख्याको देखते हुए कहा जा सकता है कि परीक्षा बहुता सख्त थी।

उत्तर. तार्किक रूप:—

यदि परीक्षा बहुत सख्त है तो अनुत्तीर्ण छात्रोंकी संख्या विशाल होती है।

अनुत्तीर्ण छात्रोंकी संख्या विशाल है।
∴ परीक्षा बहुत सख्त है।

इस युक्तिमें फल-विधानका दोष है।

(ग) भौतिक पिण्ड अदृश्य हैं क्योंकि वे परमाणुओंके अलावा कुछ हैं और परमाणु अदृश्य होते हैं।

उत्तर. तार्किक रूप:—

सब परमाणु अदृश्य हैं।
सब भौतिक पिण्ड परमाणु हैं।
∴ सब भौतिक पिण्ड अदृश्य हैं।

इस युक्तिमें एक पद व्यष्टयर्थमें प्रयुक्त होनेके बाद समष्टयर्थमें प्रयुक्त हुआ है, क्योंकि परमाणु अकेले अदृश्य हो सकते हैं लेकिन समूहमें होने पर वे अदृश्य नहीं होते। अतः इस युक्तिमें संग्रह-दोष है।

२१. निम्नलिखित युक्तियोंको तार्किक रूपमें रखिये और उनकी परीक्षा करके यदि कोई दोष मालूम हो तो उसे बताइये:—

(क) ये सब आदमी इस कामके लिये बिल्कुल पर्याप्त हैं; तुम उनमें से हो और इसलिए तुम इसके लिये बिल्कुल पर्याप्त हो।

उत्तर. इस युक्तिमें विग्रह-दोष है क्योंकि इसमें एक पदका समष्टयर्थमें प्रयोग करनेके बाद व्यष्टयर्थमें प्रयोग किया गया है। 'ये सब आदमी' इकट्ठे उस कामके लिये पर्याप्त हो सकते हैं, लेकिन इससे यह निष्कर्ष नहीं निकल सकता कि एक आदमी अकेला उस कामके लिये पर्याप्त है।

(ख) ईश्वरीय नियम हमें राजाओंका सम्मान करनेका आदेश देता है; लुई चौदहवां एक राजा है; अतः ईश्वरीय नियम हमें लुई चौदहवेंका सम्मान करनेका आदेश देता है।

उत्तर. इस युक्तिमें उपाधि-भेद दोष है क्योंकि इसमें तर्क एक सामान्य नियमसे एक विशिष्ट दृष्टान्तमें पहुंचता है।

(ग) यदि मनुष्य पूर्णतया सुखी है तो वह धार्मिक है; मरा धार्मिक है; अतः वह पूर्णतया सुखी है।

उत्तर. तार्किक रूप:—

यदि मनुष्य पूर्णतया सुखी है तो वह धार्मिक है।
राम धार्मिक है।
∴ राम पूर्णतया सुखी है।

इसमें फल-विधानका दोष है।

(घ) केवल बहादुर ही खतरेका सामना कर सकता है; अतः वह बहादुर नहीं है क्योंकि वह खतरेका सामना नहीं कर सकता।

उत्तर. तार्किक रूप:—

आ. सब खतरेका सामना कर सकनेवाले बहादुर हैं।
ए. वह खतरेका सामना कर सकनेवाला नहीं है।
∴ ए. वह बहादुर नहीं है।

इसमें अनियमित दीर्घपदका दोष है।

(ङ) अगर वह कहता है कि उसने माल नहीं चुराया तो मैं पूछता हूं कि उसने उसे छिपाया क्यों, जैसा कि कोई भी चोर करनेसे नहीं चूकता ?

उत्तर. 'कोई भी चोर चुराया हुआ माल छिपानेसे नहीं चूकता' इस वाक्यका मतलब है 'सब चोर चुराया हुआ माल छिपाते हैं'। इस युक्तिका तार्किक रूप निम्नलिखित है:—

सब चोर माल छिपानेवाले व्यक्ति हैं।
वह माल छिपानेवाला व्यक्ति है।
∴ वह चोर है।

इसमें अव्याप्त मध्यमपदका दोष है।

२२. निम्नलिखित युक्तियोंको तार्किक रूपमें रखिये, उनकी सत्यताकी जांच कीजिये और दोष बताइये :—

(क) कम ही सिपाही वीर कहे जा सकते हैं, क्योंकि जो कोई भयसे अनाक्रान्त रहता है उसे वीर कहना चाहिए, लेकिन कम ही सिपाही भयसे अनाक्रान्त रहते हैं।

उत्तर. तार्किक रूप:—

आ. सब भयसे अनाक्रान्त व्यक्ति वीर हैं।
ओ. कुछ सिपाही भयसे अनाक्रान्त व्यक्ति नहीं हैं।
∴ ओ. कुछ सिपाही वीर नहीं हैं।

इसमें अनियमित दीर्घपदका दोष है।

(ख) राम वस्तुतः उदार है क्योंकि वह गुणी है और केवल गुणी ही वस्तुतः उदार होते हैं।

उत्तर. तार्किक रूप:—

सब उदार गुणी हैं।
राम गुणी है।
∴ राम उदार है।

इसमें अव्याप्त मध्यमपदका दोष है।

(ग) चन्द्रमा पृथ्वीकी परिक्रमा करता है; पृथ्वी सूर्यकी परिक्रमा करती है; अतः चन्द्रमा सूर्यकी परिक्रमा करता है।

उत्तर. तार्किक रूप:—

पृथ्वी सूर्यकी परिक्रमा करनेवाला पिण्ड है।
चन्द्रमा पृथ्वीकी परिक्रमा करनेवाला पिण्ड है।
∴ चन्द्रमा सूर्यकी परिक्रमा करनेवाला पिण्ड है।

इसमें चतुष्पदी-दोष है।

(घ) स्त्री-जाति अभी तक बुद्धिमें पुरुषोंके बराबर नहीं हुई है; अतः वे अवश्य ही कम स्तर की हैं।

उत्तर. इस युक्तिमें एक सम्प्रज्ञात वाक्यसे एक आवश्यक वाक्य निष्कर्ष निकाला गया है, लेकिन विध्यनुकूल अनुमानके नियमोंके अनुसार सम्प्रज्ञात वाक्यकी सत्यतासे आवश्यक वाक्यकी सत्यताका अनुमान नहीं किया जा सकता। अतः युक्ति ग़लत है।

(ङ) गणितशास्त्रका अध्ययन निश्चय ही तर्कशक्तिको बढ़ाता है; लेकिन चूंकि तर्कशास्त्रका अध्ययन गणितशास्त्रका अध्ययन नहीं है, इसलिए हम अनुमान कर सकते हैं कि तर्कशास्त्रका अध्ययन तर्क-शक्तिको नहीं बढ़ाता।

उत्तर. तार्किक रूप:—

गणितशास्त्रका अध्ययन तर्कशक्तिको बढ़ानेवाली चीज़ है।
तर्कशास्त्रका अध्ययन गणितशास्त्रका अध्ययन नहीं है।
∴ तर्कशास्त्रका अध्ययन तर्कशक्तिको बढ़ानेवाली चीज नहीं है।

इस युक्तिमें अनियमित दीर्घपदका दोष है।

(च) वह जो ईश्वरका है मेरे शब्द सुनेगा; अतः तुम उनको नहीं सुनोगे क्योंकि तुम ईश्वरके नहीं हो।

उत्तर. तार्किक रूप:—

सब जो ईश्वरके हैं मेरे शब्द सुननेवाले व्यक्ति हैं।
तुम ईश्वरके नहीं हो।
∴ तुम मेरे शब्द सुननेवाले व्यक्ति नहीं हो।

इस युक्तिमें अनियमित दीर्घपदका दोष है।

(छ) दिन भर खेलना आलस्यका प्रमाण है; अतः इस सितार-वादकको आलसी होना चाहिए।

उत्तर. तार्किक रूप:—

सब दिन भर खेलनेवाले व्यक्ति आलसी हैं।
यह सितार-वादक दिन भर खेलनेवाला व्यक्ति है।
∴ यह सितार-वादक आलसी है।

इस युक्तिमें मध्यमपद 'दिन भर खेलनेवाला व्यक्ति' आधारवाक्यों में अलग-अलग उपाधियोंसे युक्त है। सितार-वादकके लिये 'सितारसे खेलना' रोज़ी है, क्रीड़ा मात्र नहीं, जिस अर्थमें 'खेलना' दीर्घवाक्यमें प्रयुक्त हुआ है। अतः इसमें उपाधि-भेद नामक दोष है।

(ज) सम्पन्नता धर्मका पुरस्कार है और सम्मान ईमानदारीका।

लेकिन राम या तो सम्पन्न है या ईमानदार है। अतः वह या तो परिश्रमी है या ईमानदार।

उत्तर. यह प्रश्न एक परीक्षामें रखा गया था। लेकिन छापेकी भूलोंकी वजहसे सारी युक्ति बिल्कुल निरर्थक बन गई और परीक्षार्थियों को बड़ी झंझट हुई। यदि 'राम या तो सम्पन्न है या ईमानदार' की जगह 'राम या तो धार्मिक है या ईमानदार' यह वाक्य रखा जाय और 'राम परिश्रमी है या ईमानदार' की जगह 'राम या तो सम्पन्न है या सम्मानित' यह वाक्य रखा जाय तो यह युक्ति कुछ सार्थक हो जाती है। इस प्रकार इस युक्तिका तार्किक रूप नीचे लिखा उभयतोपाश होगा :—

यदि राम धार्मिक है तो वह सम्पन्न है; यदि राम ईमानदार है तो वह सम्मानित है।

राम या तो धार्मिक है या ईमानदार।

∴ राम या तो सम्पन्न है या सम्मानित।

यह युक्ति सही है क्योंकि ह्रस्ववाक्यमें दीर्घवाक्यके हेतुओंका विधान हुआ है और निष्कर्षमें उसके फलोंका विधान। लेकिन इसमें उभयतोपाशकी एक विशेषता नहीं है क्योंकि इसका निष्कर्ष अप्रिय नहीं है।

२३. निम्नलिखित युक्तियोंको तार्किक रूपमें रखिये, उनकी सत्यता की परीक्षा कीजिये और दोष बताइये :—

(क) प्रत्येक चीज़ जो नैतिक दृष्टिसे सही है, क़ानून उसकी इजाज़त देता है; क़ानून ऐय्याशीकी इजाज़त देता है; अतः ऐय्याशी नैतिक दृष्तिसे सही है।

उत्तर. तार्किक रूप :—

सब नैतिक दृष्टिसे सही चीज़ें क़ानूनन जायज़ हैं।

ऐय्याशी क़ानूनन जायज़ है।

∴ ऐय्याशी नैतिक दृष्टिसे सही है।

इसमें अव्याप्त मध्यमपदका दोष है।

(ख) ईमानदारोंके अतिरिक्त कोई विश्वसनीय नहीं है; अतः राम ईमानदार नहीं है, क्योंकि वह विश्वसनीय नहीं है।

उत्तर. तार्किक रूप :—

आ. सब विश्वसनीय व्यक्ति ईमानदार हैं।

ए. राम विश्वसनीय व्यक्ति नहीं है।

∴ ए. राम ईमानदार नहीं है।

इसमें अनियमित दीर्घपदका दोष है।

(ग) अगर वह कहता है कि उसने झूठ नहीं कहा तो मैं पूछता हूं कि उसे शर्म क्यों आई, जैसा कि सब झूठ बोलनेवालोंको आती है?

उत्तर. तार्किक रूप:—

सब झूठ बोलनेवाले वे व्यक्ति हैं जिनको शर्म आती है।
वह, वह व्यक्ति है जिसे शर्म आती है।
∴ वह झूठ बोलनेवाला है।

इसमें अव्याप्त मध्यमपदका दोष है।

(घ) अगर सभी मुजरिम निरपराध होते तो वे मुक्त हो गये होते। अतः कोई भी निरपराध नहीं था क्योंकि कोई भी मुक्त नहीं हुआ।

उत्तर. तार्किक रूप:—

यदि सब मुजरिम निरपराध होते तो वे मुक्त हो जाते।
वे मुक्त नहीं हुए।
∴ वे निरपराध नहीं थे।

इस हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्यायमें ह्रस्ववाक्यमें फलका निषेध करके निष्कर्षमें हेतुका निषेध किया गया है। अतः युक्ति सही है।

(ङ) हर एक मुर्ग़ी अंडे से पैदा होती है; हर एक अंडा मुर्ग़ीसे पैदा होता है; अतः हर एक अंडा अंडे से पैदा होता है।

उत्तर. इसमें चतुष्पदी-दोष है।

२४. निम्नलिखित युक्तियोंका विश्लेषण करके परीक्षा कीजिये और दोष बताइये:—

(क) यह 'चीपों-चीपों' करता है; अतः गधा है।

उत्तर. यह एक संक्षिप्त न्याय है और पूरी तरहसे व्यक्त करने पर इसका निम्नलिखित रूप होगा:—

सब गधे चीपों-चीपों करनेवाले हैं।
यह चीपों-चीपों करनेवाला है।
∴ यह गधा है।

इसमें अव्याप्त मध्यमपदका दोष है।

(ख) सब आदमी मेहनती नहीं हैं; लेकिन राम मेहनती है; अतः राम आदमी नहीं है।

उत्तर. इसमें अनियमित दीर्घपदका दोष है।

(ग) कुछ खनिज यौगिक तापसे विश्लिष्ट नहीं होते; अतः कोई

जैविक द्रव्य खनिज यौगिक नहीं हैं; क्योंकि सब जैविक द्रव्य तापसे विश्लिष्ट होते हैं।

उत्तर. तार्किक रूप :—

ओ. कुछ खनिज यौगिक तापसे विश्लिष्ट नहीं हैं।

आ. सब जैविक द्रव्य तापसे विश्लिष्ट हैं।

∴ ए. कोई जैविक द्रव्य खनिज यौगिक नहीं है।

इसमें अनियमित दीर्घपदका दोष है।

(घ) अगर इस दवाका कोई लाभ है तो जो इसे खाते हैं उनका स्वास्थ्य बढ़ेगा। अतः इससे लाभ है क्योंकि मेरे एक मित्रका जो कि इसे खाते रहे स्वास्थ्य बढ़ा है।

उत्तर. तार्किक रूप :—

यदि इस दवाका कोई लाभ है तो इसे खानेवालोंका स्वास्थ्य बढ़ेगा।

मेरे मित्रका जो इसे खानेवाला है स्वास्थ्य बढ़ा है।

∴ इस दवाका लाभ है।

इसमें फल-विधानका दोष है।

(ङ) उसे अंग्रेज़ होना चाहिए, क्योंकि सब अंग्रेजोंका यह मत है।

उत्तर. तार्किक रूप :—

सब अंग्रेज़ इस मतको माननेवाले हैं।

वह इस मतको माननेवाला है।

∴ वह अंग्रेज़ है

इसमें अव्याप्त मध्यमपदका दोष है।

२५. निम्नलिखित युक्तियोंको तार्किक रूपमें रखिये और उनकी परीक्षा करते हुए उनके दोषों (यदि कोई हों) को बताइये :—

(क) अगर तुम मेहनत करोगे तो इनाम पाओगे। अतः तुमने मेहनत की होगी, क्योंकि तुम्हें इनाम मिला है।

उत्तर. तार्किक रूप:—

यदि तुम मेहनत करते हो तो इनाम पाते हो।

तुम इनाम पाये हो।

∴ तुमने मेहनत की है।

इस युक्तिमें फल-विधानका दोष है।

(ख) कुछ विष वनस्पति हैं; कोई विष लाभप्रद दवा नहीं है; अतः कुछ लाभप्रद दवाएं वनस्पति नहीं हैं।

उत्तर. इसमें अनियमित दीर्घपदका दोष है।

(ग) आत्मा हमेशा सोचती है, क्योंकि विचारवान् होने से सोचना इसका स्वभाव है।

उत्तर. तार्किक रूप:—

सब विचारवान् सोचते हैं।
आत्मा विचारवान् है।
∴ आत्मा सोचती है।

यह प्रथम आकारका प्रामाणिक संयोग बारबारा है। लेकिन यह कहा जा सकता है कि इसमें आत्माश्रय-दोष है क्योंकि जिस बातको सिद्ध करनेका बहाना किया गया है उसे पहिले ही मान लिया है। यदि सोचना (विचारना) आत्माका स्वभाव ही है तो निश्चय ही वह हमेशा सोचेगी।

(घ) मैं इन किताबोंको खरीद सकता हूं। मैं इन तस्वीरोंको खरीद सकता हूं। मैं इन मूर्तियोंको खरीद सकता हूं। मैं इस समय इन किताबों, तस्वीरों और मूर्तियोंको ही खरीदना चाहता हूं। अतः मैं जो कुछ चाहूं खरीद सकता हूं।

उत्तर. इस युक्तिमें संग्रह-दोष है क्योंकि इसमें "पुस्तकें, तस्वीरें और मूर्तियां" पद पहिले व्यष्टचर्थमें प्रयुक्त होकर बादमें समष्टचर्थ में प्रयुक्त हुआ है। मैं उनको अलग-अलग खरीद सकता हूं लेकिन इससे यह निष्कर्ष नहीं निकलता कि मैं उनको इकट्ठी खरीद सकता हूं।

(ङ) मैं जानता हूं कि वह एक बोहेमिया-निवासी है क्योंकि वह एक अच्छा संगीतज्ञ है और बोहेमिया-निवासी हमेशा अच्छे संगीतज्ञ होते हैं।

उत्तर. इसमें अव्याप्त मध्यमपदका दोष है।

(च) सब मनुष्योंके अधिकार समान हैं; इसलिए क को दस हजार सालाना लेनेका अधिकार है और वही ख को भी है।

उत्तर. इस युक्तिमें उपाधि-भेद दोष है क्योंकि जो बात सामान्य रूपमें सही है उसे एक विशिष्ट दृष्टान्तमें भी सही माना गया है।

२६. निम्नलिखित युक्तियोंको ठीक तार्किक रूपमें रखिये, उनकी परीक्षा कीजिये और यदि कोई दोष हों तो उन्हें बताइये:—

(क) मैं समाचार पत्रोंके मत नहीं अपनाता, क्योंकि मैं कभी कोई समाचारपत्र पढ़ता ही नहीं।

उत्तर. यह एक संक्षिप्त न्याय है। छिपे हुए दीर्घवाक्यको प्रकट करके इसका तार्किक रूप निम्नलिखित होगा:—

सब समाचारपत्रोंके पाठक समाचारपत्रोंसे मत ग्रहण करने वाले हैं।
मैं समाचारपत्रोंका पाठक नहीं हूं।
∴ मैं समाचारपत्रोंसे मत ग्रहण करनेवाला नहीं हूं।

इस युक्तिमें अनियमित दीर्घपदका दोष है।

(ख) हम जानते हैं कि वह नीति ग़लत थी; अन्यथा वह असफल न हुई होती।

उत्तर. यह एक संक्षिप्त न्याय है। छिपे हुए दीर्घवाक्यको प्रकट करके इसका तार्किक रूप इस प्रकार होगा:—

सब ग़लत नीतियां असफल हैं।
यह नीति असफल है।
∴ यह नीति ग़लत है।

इसमें अव्याप्त मध्यमपदका दोष है।

(ग) यदि यह आरोप मिथ्या है तो आरोप लगानेवाला या तो अज्ञ है या ईर्षालु; लेकिन आरोप सत्य है; अतः वह न अज्ञ है और न ईर्षालु।

उत्तर. तार्किक रूप:—

यदि आरोप मिथ्या है तो आरोप लगानेवाला या तो अज्ञ है या ईर्षालु।
आरोप मिथ्या नहीं (सत्य) है।
∴ आरोप लगानेवाला न अज्ञ है और न ईर्षालु।

इस हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्यायमें हेतु-निषेधका दोष है।

(घ) केवल गर्म देश शराब पैदा करते हैं; स्पेन एक गर्म देश है; अतः स्पेन शराब पैदा करता है।

उत्तर. तार्किक रूप:—

सब शराब पैदा करनेवाले देश गर्म देश हैं।
स्पेन गर्म देश है।
∴ स्पेन शराब पैदा करनेवाला देश है।

इसमें अव्याप्त मध्यमपदका दोष है।

(ङ) वकील ईमानदार नहीं हो सकते, और कोई भी जो बेईमान है विश्वसनीय नहीं हो सकता। अतः कोई भी विश्वसनीय व्यक्ति वकील नहीं मिलेगा।

उत्तर. तार्किक रूप:—

सब वकील बेईमान हैं।
कोई बेईमान व्यक्ति विश्वसनीय नहीं है।
∴ कोई विश्वसनीय व्यक्ति वकील नहीं है।

यह चतुर्थ आकारका प्रामाणिक संयोग कामेनेस है। अतः आकार की दृष्टिसे सही है।

(च) दया हत्या है क्योंकि यह हत्यारोंको क्षमा करना है।

उत्तर. यह एक संक्षिप्त न्याय है। इसका तार्किक रूप इस प्रकार होगा :—

हत्यारोंको क्षमा करनेके सब दृष्टान्त हत्याके दृष्टान्त हैं।
हत्यारोंको क्षमा करनेके सब दृष्टान्त दयाके दृष्टान्त हैं।
∴ सब दयाके दृष्टान्त हत्याके दृष्टान्त हैं।

इस युक्तिमें अनियमित ह्रस्वपदका दोष है।

२७. निम्नलिखित युक्तियोंको ठीक तार्किक रूपमें रखिये और उनकी परीक्षा करके दोष बताइये :—

(क) देखनेसे विश्वास होता है, अतः मैं ईश्वरमें विश्वास नहीं करता।

उत्तर. दिये हुए संक्षिप्त न्यायके छिपे हुए ह्रस्ववाक्यको प्रकट करके उसका तार्किक रूप इस प्रकार होगा :—

सब प्रत्यक्ष दिखाई देनेवाली चीज़ें विश्वासके योग्य हैं।
ईश्वर प्रत्यक्ष दिखाई देनेवाली चीज़ नहीं है।
∴ ईश्वर विश्वासके योग्य नहीं है।

इस युक्तिमें अनियमित दीर्घपदका दोष है, क्योंकि दीर्घपद 'विश्वास के योग्य' निष्कर्षमें व्याप्त है जबकि दीर्घवाक्यमें यह अव्याप्त है।

(ख) यह प्रस्ताव इतना अच्छा है कि इस पर अमल नहीं हो सकता।

उत्तर. इस संक्षिप्त न्यायका तार्किक रूप निम्नलिखित है :—

ए. कोई भी बहुत अच्छी चीज़ व्यवहार्य नहीं है।
आ. यह प्रस्ताव बहुत अच्छी चीज़ है।
∴ ए. यह प्रस्ताव व्यवहार्य नहीं है।

यह प्रथम आकारका प्रामाणिक संयोग सिलारेन्ट होनेसे आकारकी दृष्टिसे सत्य है।

(ग) नवीनता हमेशा चोट होती है क्योंकि वह चीजोंकी वर्तमान अवस्था पर आघात करती है।

उत्तर. छिपे हुए दीर्घवाक्यको प्रकट करके इस संक्षिप्त न्यायका निम्नलिखित रूप होगा :—

सब चीज़ोंकी वर्तमान अवस्था पर आघात करनेवाली बातें चोट हैं।
सब नवीनताएं चीज़ोंकी वर्तमान अवस्था पर आघात करनेवाली बातें हैं।
∴ सब नवीनताएं चोट हैं।

इस युक्तिमें भिन्नार्थक मध्यमपदका दोष है क्योंकि दीर्घवाक्यमें 'आघात करने' का मतलब है 'विरूप करना' और ह्रस्ववाक्यमें इसका मतलब है 'बदलना'।

(घ) उसे पागलपनका डर नहीं होना चाहिए, क्योंकि उसके अन्दर विद्वता नहीं है और विद्वता आदमीको पागल कर देती है।

उत्तर. तार्किक रूप :—

सब विद्वान् पागल हैं।
वह विद्वान् नहीं है।
∴ वह पागल नहीं है।

इस युक्तिमें अनियमित दीर्घपदका दोष है, क्योंकि दीर्घपद 'पागल' निष्कर्ष में व्याप्त है और दीर्घवाक्यमें व्याप्त नहीं है।

(ङ) कालेजके भाषणोंमें उपस्थित होनेकी बाध्यता हास्यजनक है, क्योंकि यदि भाषण महत्त्वपूर्ण हैं तो लड़के बाध्यता न होने पर भी उपस्थित रहेंगे और यदि वे महत्त्वहीन हैं तो उपस्थित होनेकी ज़रूरत ही नहीं है।

उत्तर. यह एक उभयतोपाश है जिसका तार्किक रूप निम्नलिखित है :—

दीर्घवाक्य. यदि भाषण महत्त्वपूर्ण हैं तो बाध्यता न होने पर भी लड़के उपस्थित रहेंगे; और यदि भाषण महत्त्वहीन हैं तो उपस्थित रहना व्यर्थ है।

ह्रस्ववाक्य. भाषण या तो महत्त्वपूर्ण हैं या महत्त्वहीन।

∴ निष्कर्ष. या तो लड़के बाध्यता न होने पर भी उपस्थित रहेंगे या उपस्थित रहना व्यर्थ है।

इसलिए इससे यह अनुमान किया गया है कि उपस्थित रहनेकी बाध्यता हास्यजनक है। आकारकी दृष्टिसे यह उभयतोपाश सही है। लेकिन द्रव्यकी दृष्टिसे उभयतोपाश प्रायः ग़लत होते हैं और इस दृष्टान्तमें हम देखते हैं कि दीर्घवाक्यमें प्रथम हेतुफलाश्रित वाक्यका फल वस्तुतः उसके हेतुसे नहीं निकलता। यह कहना सही नहीं है कि लड़के बाध्यताके बिना ही सब महत्त्वपूर्ण भाषणोंमें उपस्थित रहेंगे। लड़के प्रायः स्वयं अपनी भलाईकी बात भूल जाते हैं और इसलिए थोड़ी बाध्यता

उनकी भलाईके लिये है। अतः यह उभयतोपाश दीर्घवाक्यके असत्य होनेसे असत्य है। किसी उभयतोपाशको इस तरीक़ेसे असत्य सिद्ध करना 'उभयतोपाशके सींग पकड़ना' कहलाता है।

(च) अगर इच्छा स्वतंत्र हो तो लोग अपने कार्योंके लिये उत्तर-दायी हैं; लेकिन इच्छा स्वतंत्र नहीं है; अतः लोग अपने कार्योंके लिये उत्तरदायी नहीं हैं।

उत्तर. इस हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्यायका तार्किक रूप निम्न-लिखित है :—

यदि मनुष्यकी इच्छा स्वतंत्र है तो वह अपने कार्योंके लिये उत्तरदायी है।

मनुष्यकी इच्छा स्वतंत्र नहीं है।

∴ मनुष्य अपने कार्योंके लिये उत्तरदायी नहीं है।

इस युक्तमें हेतु-निषेधका दोष है क्योंकि इसमें ह्रस्ववाक्यमें हेतुका निषेध किया गया है और उसके आधार पर निष्कर्षमें फलका निषेध किया गया है।

२८. निम्नलिखित युक्तियोंको ठीक तार्किक रूपमें रखिए और उनकी परीक्षा करके दोष बताइये :—

(क) केवल एकार्थक भाषा वैज्ञानिक होती है; तर्कशास्त्रकी भाषा एकार्थक होती है; अतः वह वैज्ञानिक है।

उत्तर. इसमें अव्याप्त मध्यमपदका दोष है।

(ख) मूढ़ मनुष्य नहीं हो सकते, क्योंकि मनुष्य बुद्धिमान् होते हैं।

उत्तर. इस संक्षिप्त न्यायका तार्किक रूप :—

सब मनुष्य बुद्धिमान् हैं।

कोई मूढ़ बुद्धिमान् नहीं है।

∴ कोई मूढ़ मनुष्य नहीं है।

इस युक्तिमें भिन्नार्थक मध्यमपदका दोष है, क्योंकि 'बुद्धिमान्' का दीर्घवाक्यमें अर्थ है 'विचार करनेकी शक्ति रखनेवाला' और ह्रस्ववाक्यमें इसका अर्थ है 'वह जिसकी विचारशक्ति औसतसे कम है'।

(ग) मनुष्य पापी हैं; सन्त मनुष्य हैं; अतः सन्त पापी हैं।

उत्तर. 'मनुष्य पापी हैं' यह वाक्य अनिश्चित परिमाणवाला है और इसलिए इसका तार्किक रूप है 'कुछ मनुष्य पापी हैं'। अतः इस युक्तिका तार्किक रूप निम्नलिखित होगा :—

कुछ मनुष्य पापी हैं।
सब सन्त मनुष्य हैं।
∴ सब सन्त पापी हैं।

इसमें अव्याप्त मध्यमपदका दोष है क्योंकि मध्यमपद 'मनुष्य' आधारवाक्योंमें एक बार भी व्याप्त नहीं है।

(घ) कोई जवान चतुर नहीं होता, क्योंकि केवल अनुभव से ही चतुरता आती है और अनुभव केवल आयुके बढ़नेसे आता है।

उत्तर. 'केवल अनुभवसे चतुरता आती है' यह वाक्य 'सब जिससे चतुरता आती है अनुभव है' इस वाक्यके बराबर है। 'अनुभव केवल आयुसे आता है' वाक्य 'सब जिससे अनुभव आता है आयु है' वाक्यके बराबर है। इस प्रकार इन आधारवाक्योंको निम्नलिखित तरीक़ेसे रखा जा सकता है:—

आ. सब जिससे चतुरता आती है अनुभव है।
आ. सब जिससे अनुभव आता है आयु है।

हम देखते हैं कि यहां तीनके बजाय चार पद हैं: (१) 'सब जिससे चतुरता आती है', (२) 'अनुभव', (३) 'सब जिससे अनुभव आता है', (४) 'आयु', अतः इस युक्तिमें चतुष्पदी दोष है और इसलिए कोई निष्कर्ष नहीं निकल सकता।

(ङ) केवल संतोषी ही सुखी हैं; केवल गुणी ही संतोषी हैं; केवल विवेकी ही गुणी हैं; अतः केवल विवेकी ही सुखी हैं।

उत्तर. यह युक्ति दो न्यायोंसे बनी है जो आपसमें इस तरहसे सम्बन्धित हैं कि उनसे एक न्यायमाला बनती है। तार्किक रूपमें रखकर न्यायमाला इस प्रकार होगी:—

सब सुखी सन्तोषी हैं।
सब सन्तोषी गुणी हैं।
सब गुणी विवेकी हैं।
∴ सब सुखी विवेकी हैं।

इस न्यायमालाको तोड़ने पर नीचे लिखे दो न्याय मिलते हैं:—

(१) सब संतोषी गुणी हैं।
सब सुखी संतोषी हैं।
∴ सब सुखी गुणी हैं।

छिपे हुए निष्कर्षको ह्रस्ववाक्य बनाकर न्यायमालाका दूसरा न्याय यह होगा:—

(२) सब गुणी विवेकी हैं।
सब सुखी गुणी हैं।
∴ सब सुखी विवेकी हैं।

यह सही अरस्तवी न्यायमाला है।

(च) नैतिक उपदेश व्यर्थ है, क्योंकि अच्छे मनुष्योंको उनकी ज़रूरत नहीं है और बुरे मनुष्य उन पर कोई ध्यान नहीं देंगे।

उत्तर. तार्किक रूप :—

दीर्घवाक्य. यदि मनुष्य अच्छे हैं तो उन्हें नैतिक उपदेशकी आवश्यकता नहीं है; यदि मनुष्य बुरे हैं तो वे नैतिक उपदेश पर ध्यान नहीं देंगे।

ह्रस्ववाक्य. मनुष्य या तो अच्छे हैं या बुरे।

∴ निष्कर्ष. या तो मनुष्योंको नैतिक उपदेशकी आवश्यकता नहीं है या वे उन पर ध्यान नहीं देंगे।

दूसरे शब्दोंमें, नैतिक उपदेश व्यर्थ है।

यह उभयतोपाश द्रव्यकी दृष्टिसे ग़लत है, क्योंकि दीर्घवाक्य और ह्रस्ववाक्य दोनों ग़लत हैं। यह माननेका कोई कारण नहीं है कि अच्छे मनुष्योंको नैतिक उपदेशकी आवश्यकता नहीं है या बुरे आदमी किसी भी दशामें नैतिक उपदेश पर ध्यान नहीं देंगे। यह बहुत सम्भव है कि अच्छे मनुष्योंको कभी-कभी खास तौरसे द्विविधा या संकटके समय नैतिक उपदेशकी आवश्यकता हो और बुरे मनुष्य भी कभी-कभी उस पर ध्यान देते हैं। इस प्रकार दीर्घवाक्यके दोनों हेतुफलाश्रित वाक्य ग़लत हैं। ह्रस्ववाक्य कहता है कि मनुष्य या तो अच्छे होते हैं या बुरे जब कि अधिक संख्या उन लोगोंकी है जो न तो बिल्कुल अच्छे हैं और न बिल्कुल बुरे बल्कि तटस्थ हैं और इसलिए तरह-तरहके बाहरी प्रभाव ग्रहण कर सकते हैं। ऐसी दशामें नैतिक उपदेशके अत्यधिक उपयोगी होनेकी सम्भावना रहती है। इस प्रकार इस उभयतोपाशको दो तरीक़ोंसे मिथ्या सिद्ध किया जा सकता है: (१) इसके 'सींग पकड़' कर यानी दीर्घवाक्य को ग़लत दिखाकर, और (२) 'सींगोंके बीचसे निकल' कर यानी ह्रस्ववाक्यको ग़लत दिखाकर।

२९. निम्नलिखित युक्तियोंकी सत्यताकी जांच कीजिये और उनमें दोष बताइये :—

(क) लूथर के अनुयायी प्रोटेस्टैन्ट हैं; काल्विन के अनुयायी लूथर के अनुयायी नहीं हैं; इसलिए काल्विन के अनुयायी प्रोटेस्टैन्ट नहीं हैं।

उत्तर. अनियमित दीर्घपदका दोष।

(ख) कर्तव्योंको मनवाना सरकारका काम है। जीव-दया कर्तव्य है। अतः जीव-दयाको मनवाना सरकारका काम है।

उत्तर. तार्किक रूप:—

सब कर्तव्य वे काम हैं जिनको सरकारको मनवाना चाहिए।
जीव-दया एक कर्तव्य है।
∴ जीव-दया वह काम है जिसे सरकारको मनवाना चाहिए।

इस युक्तिमें भिन्नार्थक मध्यमपदका दोष है, क्योंकि दीर्घवाक्यमें 'कर्तव्य' का मतलब है वैधानिक कर्तव्य जब कि ह्रस्ववाक्यमें इसका मतलब है नैतिक कर्तव्य।

(ग) पेरिस ने हेलेन का अपहरण करके कुछ बुरा नहीं किया, क्योंकि हेलेन के पिताने उसे कोई भी पति चुननेके लिये स्वतंत्र कर रखा था।

उत्तर. इसमें अर्थान्तर (Ignoratio Elenchi) का दोष है जो कि एक द्रव्यविषयक दोष है और जिसमें हेतुका साध्यसे कोई सम्बन्ध नहीं होता। हेलेन के पिताने पति चुननेके लिये हेलेन को अवश्य स्वतंत्र कर रखा था। लेकिन हेलेन पेरिस के द्वारा उड़ाये जानेसे पहिले ही पति चुन चुकी थी; अतः हेलेन ने पेरिस को पति नहीं चुना था। इसलिए 'पेरिस ने बुरा नहीं किया' यह निष्कर्ष दिये हुए आधारवाक्यसे सिद्ध नहीं होता।

(घ) दान पर कर लगाना उचित है, क्योंकि इच्छासे जो सम्पत्ति दी जाती है उस पर कर लगाना चाहिए।

उत्तर. इसमें आत्माश्रय-दोष है क्योंकि दानका अर्थ है इच्छासे दी हुई सम्पत्ति और आधारवाक्यमें इसे कर लगाने योग्य मान लिया गया है।

३०. निम्नलिखितकी सत्यताकी परीक्षा कीजिये:—

(क) प्रत्येक सिपाही अपने देशकी सेवा करता है; महिलाएं सिपाही नहीं हैं; इसलिए महिलाएं अपने देशकी सेवा नहीं करतीं।

उत्तर. अनियमित दीर्घपद-दोष।

(ख) सरकारने मूलधन पर तीन प्रतिशत ब्याज देनेका आश्वासन दिया है और नगरपालिकाने दो प्रतिशत का। इसलिए यदि तुम धन देते हो तो तुम्हें पांच प्रतिशत ब्याज मिलेगा।

उत्तर. संग्रह-दोष।

(ग) ध्वनि दृश्य नहीं है। रंग ध्वनि नहीं है। अतः रंग दृश्य नहीं है।

उत्तर. निषेधात्मक आधारवाक्योंका दोष।

(घ) दण्डसे पतन होता है। अतः इससे कोई नैतिक सुधार नहीं हो सकता।

उत्तर. आत्माश्रय-दोष।

(ङ) तुम दण्डके भयके बिना पाप कर सकते हो, क्योंकि या तो ईश्वर अन्यायी है या कोई आदमी नित्य दण्डित नहीं होता।

उत्तर. यह एक उभयतोपाश है जिसका दीर्घवाक्य छिपा हुआ है। पूरी तरहसे व्यक्त करने पर इसका तार्किक रूप निम्नलिखित होगा:—

दीर्घवाक्य. यदि ईश्वर अन्यायी है तो तुम दण्डके भयके बिना पाप कर सकते हो, यदि कोई आदमी नित्य दण्ड नहीं भोगता तो तुम दण्डके भयके बिना पाप कर सकते हो।

ह्रस्ववाक्य. या तो ईश्वर अन्यायी है या कोई मनुष्य नित्य दण्ड नहीं भोगता।

निष्कर्ष. तुम दण्डके भयके बिना पाप कर सकते हो।

इस उभयतोपाशमें द्रव्यविषयक दोष है क्योंकि दीघवाक्यमें दूसरा हेतुफलाश्रित वाक्य ग़लत है। हो सकता है कि किसी आदमीको नित्य दण्ड न भोगना पड़े, लेकिन अगर वह पाप करता है तो उसे कठिन और पर्याप्त दण्ड मिल सकता है।

३१. निम्नलिखित युक्तियोंको ठीक तार्किक रूपमें रखिए, उनकी सत्यताकी परीक्षा कीजिये और यदि कोई दोष हों तो उनको बताइये :—

(क) तुम वह नहीं हो जो मैं हूं; मैं एक मनुष्य हूं, इसलिए तुम मनुष्य नहीं हो।

उत्तर. तार्किक रूप :—

तुम वह नहीं हो जो मैं हूं।
मैं एक मनुष्य हूं।
∴ तुम मनुष्य नहीं हो।

इस युक्तिमें उपाधि-भेदका दोष है, क्योंकि इसमें एक बातको जो कि एक दृष्टिसे सही है अन्य दृष्टियोंसे भी सही माना गया है।

(ख) कोई मज़ाक हमेशा उचित नहीं होता; परीक्षा मज़ाक नहीं है; अतः परीक्षा हमेशा उचित होती है।

उत्तर. निषेधात्मक आधारवाक्योंका दोष।

(ग) यदि राष्ट्र पर शासक अत्याचार करते हैं तो प्रगतिशील नहीं है; भारत प्रगतिशील नहीं है; अतः भारत पर उसके शासक अत्याचार करते हैं।

उत्तर. इस हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्यायमें फल-विधानका दोष है।

(घ) अपने बारेमें भली या बुरी बात कभी नहीं कहनी चाहिए। यदि भली बात कहोगे तो लोग कभी विश्वास नहीं करेंगे; अगर बुरी बात कहोगे तो वे उससे भी अधिक विश्वास कर लेंगे जितना तुम कहोगे।

उत्तर. इस उभयतोपाशका तार्किक रूप :—

दीर्घवाक्य. यदि तुम अपने बारेमें अच्छी बात कहोगे तो लोग विश्वास नहीं करेंगे; यदि तुम अपने बारेमें बुरी बात कहोगे तो लोग तुम्हारे कहे हुए से कहीं अधिक विश्वास करेंगे।

ह्रस्ववाक्य. या तो तुम अपने बारेमें अच्छी बात कहोगे या बुरी।

निष्कर्ष. या तो लोग विश्वास नहीं करेंगे या तुम्हारे कहे हुए से कहीं अधिक विश्वास करेंगे।

इसलिए कहा जाता है कि अपने बारेमें न भली बात कहनी चाहिए न बुरी।

इस उभयतोपाशमें द्रव्यविषयक दोष है क्योंकि दीर्घवाक्यके दोनों हेतुफलाश्रित वाक्य ग़लत हैं। किसीमें भी फल हेतुसे नहीं निकलता।

(ङ) कविताको या तो ग़लत होना चाहिए या सही। अगर वह ग़लत है तो उससे भ्रम फैलता है और अगर वह सही है तो इतिहासका ही वेशान्तर है। इसीलिए कुछ दार्शनिकोंने कविताको जनराज्यके आदर्शमें स्थान नहीं दिया है।

उत्तर. इस उभयतोपाशका तार्किक रूप :—

दीर्घवाक्य. यदि कविता ग़लत है तो वह भ्रामक है; यदि सही है तो इतिहासका वेशान्तर है।

ह्रस्ववाक्य. कविता या तो ग़लत है या सही।

निष्कर्ष. कविता या तो भ्रामक है या इतिहासका वेशान्तर।

यह उभयतोपाश ग़लत है क्योंकि दीर्घवाक्यका दूसरा हेतुफलाश्रित वाक्य ग़लत है। यह आवश्यक नहीं है कि सही कविता इतिहासका ही वेशान्तर हो।

३२. निम्नलिखित युक्तियोंको तार्किक रूपमें रखिए और उनकी परीक्षा करके दोष बताइये :—

(क) उसे जनतंत्रवादी होना चाहिए, क्योंकि सब जनतंत्रवादी प्रतिबन्धहीन व्यापारमें विश्वास करते हैं।

उत्तर. यह एक संक्षिप्त न्याय है। छिपे हुए ह्रस्ववाक्य 'वह प्रतिबन्धहीन व्यापारमें विश्वास करता है' को प्रकट कर देने पर हम देखते हैं कि इसमें अव्याप्त मध्यमपदका दोष है।

(ख) वह सज्जन नहीं हो सकता, क्योंकि कोई सज्जन ऐसा काम नहीं करेगा।

उत्तर. इस संक्षिप्त न्यायमें छिपा हुआ ह्रस्ववाक्य है 'वह ऐसा व्यक्ति है जिसने ऐसा काम किया है।' यह दूसरे आकारका प्रामाणिक संयोग सिसारे है।

(ग) केवल अनधिकृत प्रवेश करनेवाले ही दण्डनीय हैं ; यह अनधिकृत प्रवेश करनेवाला है ; अतः यह दण्डनीय है।

उत्तर. इस युक्तिमें अव्याप्त मध्यमपदका दोष है क्योंकि मध्यमपद 'अनधिकृत प्रवेश करनेवाले' आधारवाक्योंमें एक बार भी व्याप्त नहीं है।

(घ) मैं नहीं जानता कि क आलोचनासे कैसे बच सकता है। अगर उसे ख के आक्रमणका ज्ञान था तो वह दोषी है और अगर नहीं था तो वह असावधान रहा है ; और या तो उसे ज्ञान था या नहीं था।

उत्तर. तार्किक रूप :—

यदि क को ख के हमलेका ज्ञान था तो वह दोषी है और
यदि क को ज्ञान नहीं था तो वह असावधान है।
या तो क को ख के हमलेका ज्ञान था या नहीं था।
∴ या तो क दोषी है या असावधान।

यह उभयतोपाश आकारकी दृष्टिसे सही है लेकिन द्रव्यकी दृष्टिसे यह ग़लत है क्योंकि दीर्घवाक्यके दोनों हेतुफलाश्रित वाक्य ग़लत हैं।

(ङ) यदि मरना मेरे भाग्यमें है तो डाक्टर मुझे बचा नहीं सकते ; यदि जीवित रहना मेरे भाग्यमें है तो डाक्टरोंकी आवश्यकता नहीं है। तो डाक्टरोंको क्यों पैसा दिया जाय ?

उत्तर. यह उभयतोपाश आकारकी दृष्टिसे सही है लेकिन दीर्घवाक्यके दोनों हेतुफलाश्रित वाक्योंके ग़लत होनेसे यह ग़लत है।

३३. निम्नलिखित युक्तियोंको न्यायके रूपमें रखिये और उनकी परीक्षा कीजिये :—

(क) वहां आग नहीं हो सकती, क्योंकि वहां धुवां नहीं है और जहां धुवां होता है वहां आग होती है।

उत्तर. तार्किक रूप:—

यदि धुवां है तो आग है।
वहां धुवां नहीं है।
∴ वहां आग नहीं है।

इस हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्यायमें हेतु-निषेधका दोष है।

(ख) कल रात वर्षा हुई होगी, क्योंकि ज़मीन गीली है।

उत्तर. तार्किक रूप:—

यदि वर्षा होती है तो ज़मीन गीली होती है।
ज़मीन गीली है।
∴ वर्षा हुई है।

इसमें फल-विधानका दोष है।

(ग) उसे बहादुर आदमी होना चाहिए, क्योंकि बहादुरोंके अलावा कोई पुरस्कारके योग्य नहीं हैं।

उत्तर. छिपे हुए ह्रस्ववाक्यको प्रकट करके इस युक्तिका तार्किक रूप यह होगा:—

सब पुरस्कारके योग्य व्यक्ति बहादुर हैं।
वह पुरस्कारके योग्य व्यक्ति है।
∴ वह बहादुर है।

यह प्रथम आकारका प्रामाणिक संयोग बारबारा है। इसलिए आकारकी दृष्टिसे सही है।

(घ) यह चीज़ धातुके अलावा और कुछ नहीं हो सकती, क्योंकि सब धातुएं बजती हैं।

उत्तर. तार्किक रूप:—

सब धातुएं बजनेवाली हैं।
यह चीज बजनेवाली है।
∴ यह चीज धातु है।

इस युक्तिमें अव्याप्त मध्यमपदका दोष है क्योंकि मध्यमपद 'बजनेवाली' आधारवाक्योंमें एक बार भी व्याप्त नहीं है।

(ङ) लड़का या तो परिश्रमी है या बुद्धिमान्, क्योंकि परीक्षामें उसके अच्छे अंक आये हैं।

उत्तर. दीर्घवाक्यको अपनी ओरसे प्रकट करके इस युक्तिको नीचे लिखे हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्यायके रूपमें रखा जा सकता है:—

यदि कोई लड़का परीक्षामें अच्छे अंक पाता है तो वह
या तो परिश्रमी है या बुद्धिमान्।
यह लड़का परीक्षामें अच्छे अंक पाता है।
∴ यह लड़का या तो परिश्रमी है या बुद्धिमान्।

यह युक्ति आकारकी दृष्टिसे तो ठीक है लेकिन इसका दीर्घवाक्य ग़लत हो सकता है।

(च) देवता मनुष्यसे अच्छे नहीं हैं, क्योंकि मनुष्यकी तरह वे भी मरते हैं।

उत्तर. 'देवता मनुष्यसे अच्छे नहीं हैं' इस वाक्यको सरल बनाकर 'देवता मनुष्य हैं' के रूपमें रखा जा सकता है। तब इस युक्तिका तार्किक रूप यह होगा:—

सब मनुष्य मरणशील हैं।
सब देवता मरणशील हैं।
∴ सब देवता मनुष्य हैं।

इसमें अव्याप्त मध्यमपदका दोष है।

(छ) भिखमंगे सवारी नहीं कर सकते, क्योंकि इच्छाएं घोड़े नहीं हैं।

उत्तर. छिपे हुए दीर्घवाक्यको प्रकट करके इसे नीचे लिखे हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्यायके रूपमें रखा जा सकता है:—

यदि इच्छाएं घोड़े होतीं तो भिखमंगे सवारी करते।
इच्छाएं घोड़े नहीं हैं।
∴ भिखमंगे सवारी नहीं कर सकते।

इसमें हेतु-निषेधका दोष है।

३४. नीचे दी हुई युक्तियोंको तार्किक रूपमें रखकर उनकी परीक्षा कीजिये:—

(क) उसे कायर होना चाहिए, क्योंकि वह बेईमान है और सब कायर बेईमान होते हैं। [अव्याप्त मध्यमपद-दोष]

(ख) सभी मनुष्य परिश्रमी नहीं हैं, लेकिन राम परिश्रमी है; अतः वह मनुष्य नहीं है। [अनियमित दीर्घपद]

(ग) यदि वह कुनैन खायेगा तो अच्छा हो जायेगा; लेकिन वह कुनैन नहीं खायेगा और इसलिए अच्छा भी नहीं होगा। [हेतुनिषेध-दोष]

(घ) राम को कालेजमें प्रवेश मिल जायेगा, क्योंकि केवल प्रथम श्रेणीवालोंको प्रवेश मिलता है। [संक्षिप्त न्याय। 'राम प्रथम श्रेणी

वाला है' यह ह्रस्ववाक्य छिपा हुआ है। अव्याप्त मध्यमपदका दोष।]

(ङ) तर्कशास्त्र या तो विज्ञान है या कला; लेकिन यह कला है, इसलिए विज्ञान नहीं है।

[वैकल्पिक-निरपेक्ष न्याय। यह ग़लत है, क्योंकि प्रायः ह्रस्ववाक्य में एक विकल्पका विधान करके निष्कर्षमें दूसरेका निषेध नहीं किया जा सकता।]

(च) कम ही सिपाही बहादुर कहे जा सकते हैं; क्योंकि जिसे भय नहीं होता वह बहादुर है, जबकि कम ही सिपाहियोंको भय नहीं होता। [२२वां प्रश्न देखिए।]

(छ) यदि मरना मेरे भाग्य में है तो दवाई क्या करेगी? यदि जीना मेरे भाग्य में है तो दवाईकी क्या जरूरत है? अतः मुझे दवाई नहीं खानी है। [यह उभयतोपाश आकारकी दृष्टिसे सही है लेकिन द्रव्यकी दृष्टिसे ग़लत है क्योंकि दीर्घवाक्यमें जो हेतुफलाश्रित वाक्य हैं वे दोनों ग़लत हैं। पहिले हेतुफलाश्रित वाक्यमें भाग्यवाद है जिसका आधार अन्धविश्वास है। दूसरा हेतुफलाश्रित वाक्य भी ग़लत है क्योंकि हो सकता है कि उस आदमीके भाग्यमें केवल दवा खाकर रोग-मुक्त होना लिखा हो।]

अभ्यासार्थ प्रश्न १७

१. निम्नलिखित युक्तियों और कथनोंकी सत्यताकी परीक्षा कीजिये और यदि कोई दोष हों तो उन्हें समझाइये:—

(क) विकासवादका सिद्धान्त सही है क्योंकि प्रत्येक जीव-वैज्ञानिक इसे मानता है।

(ख) प्रकृतिके नियमोंका कभी उल्लंघन नहीं किया जा सकता। सामाजिक नियम प्रकृतिके अंग हैं। अतः उनका उल्लंघन नहीं हो सकता।

(ग) लॉटरीका कोई टिकट खरीदनेवाला अवश्य इनाम पायेगा; और चूंकि मैंने कोई टिकट खरीदा है। इसलिए मुझे अवश्य इनाम मिलेगा।

(घ) मैं अब डाक्टरोंका इलाज नहीं कराऊंगा, क्योंकि इस जाड़ेमें जिन्होंने डाक्टरोंका इलाज कराया वे सब मर गये।

(ङ) "एक अफ़सरकी ज़रूरत है जो इटालियन धाराप्रवाह चार या पांच दिन तक बोल सके" (पंचमें प्रकाशित एक विज्ञापन)।

(च) "तुममें से कोई एक ऐसा हो सकता है जो यह याद करके उद्विग्न हो जायेगा कि कैसे उसने आंखोंमें आंसू भरकर अपनी मुक्तिके लिये न्यायाधीशोंसे प्रार्थना की और कैसे वह तुम्हारे हृदयोंको द्रवित करनेके लिये अदालतमें अपने बच्चों और अनेक मित्रोंको लाया; और तब वह जान जायेगा कि मैं इन बातोंमें से एक भी नहीं करूंगा।" (एथेन्सके न्यायाधीशोंके सामने अपने बचावके लिये किस तरहकी युक्ति देनेसे सुकरात इन्कार करता है?)

(छ) वह आदमी इतना अविवेकी था कि अनेक ग़लतियां अवश्य ही करता।

(ज) महिलाओंको मतदानका अधिकार न देना उनकी बुद्धिके प्रति अन्याय करना है; क्योंकि अनेक रानियोंके शासन-काल साहित्यिक कृतियोंके लिये प्रसिद्ध हैं।

(झ) डाक्टरका सुझाव: स्वर्गीय मि० स्मिथ डाक्टरके सुझाव पर अस्पताल जाकर गत बुधवारको मर गये।

(ञ) अगर उनके सिद्धान्त सही होते तो दार्शनिक आपसमें एकमत होते।

(ट) अच्छे आदमी अच्छी किताबें लिखते हैं; यह एक अच्छी किताब है; इसलिए इसका लेखक अच्छा आदमी रहा होगा।

(ठ) कोई आदमी पीड़ा नहीं चाहता; तुम्हारा दोस्त पीड़ा सहन किये बग़ैर चंगा नहीं हो सकता, और इसलिए वह चंगा होना नहीं चाहेगा।

(ड) धड़ाका स्पष्टतया बारूदके कारण हुआ, क्योंकि कोई भी अन्य चीज़ पर्याप्त शक्ति नहीं रखती।

(ढ) सुझाव देनेमें या तो उस बातका सुझाव दिया जाता है जिसे आदमी स्वयं ही करना चाहता है और इस तरह सुझाव व्यर्थ होता है, या उस बातका सुझाव दिया जाता है जिसे न करनेका संकल्प उसने पहिले ही कर लिया है और इस तरह वह सुझावकी उपेक्षा करता है।

(ण) सभी शिक्षित व्यक्ति सही हिज्जे नहीं जानते, क्योंकि हिज्जे की ग़लतियां इन्टरमीडिएटके परीक्षार्थियोंकी कापियोंमें अक्सर मिलती हैं।

(त) यदि भाषा संकेतोंकी मददसे सूचना देना है तो हमें कहना पड़ेगा कि कुत्तेकी दुमका हिलना भाषा है।

(थ) यदि क़ैदीके अपराधका सन्तोषजनक प्रमाण होता तो वह

पेश किया जाता। ऐसा कोई प्रमाण पेश नहीं किया गया, अतः उसे निरपराध होना चाहिए।

(द) थोड़ा ज्ञान खतरनाक चीज़ है; इसलिए मेरा तर्कशास्त्र सीखनेकी कोशिश न करना ही अच्छा है।

(ध) सब सभ्य लोग उन्नतिशील हैं; सब असभ्य लोग अन्ध-विश्वासी होते हैं; अतः कोई अन्धविश्वासी लोग उन्नतिशील नहीं हैं।

(न) जो खाना पका हुआ नहीं है वह स्वास्थ्यकारक नहीं है। यह खाना पका हुआ नहीं है, इसलिए स्वास्थ्यकारक नहीं है।

(प) विश्वविद्यालयके प्राध्यापकोंमें से कुछ शोध-कार्यमें कुशल होते हैं और कुछ अच्छे शिक्षक होते हैं। प्रोफ़ेसर क शोध-कार्यमें कुशल हैं, और इसलिए हम कह सकते हैं कि वे अच्छे शिक्षक नहीं हैं।

(फ) इन्टरमीडिएट बोर्ड ने इन्टरमीडिएट परीक्षाका नियन्त्रण अपने हाथमें ले लिया है। इससे पता चलता है कि इलाहाबाद विश्व-विद्यालय उस परीक्षाको संतोषजनक तरीक़ेसे नहीं चला रहा था।

(ब) प्रतिभावान् व्यक्ति प्रायः झक्की होता है; तुम झक्की हो; अतः तुम प्रतिभावान् हो।

(भ) जिस आदमीको टीका लगता है उसकी प्लेगसे बचावट हो जाती है; मुझे टीका नहीं लगा है; अतः मैं प्लेगसे सुरक्षित नहीं हूं।

(म) यदि जेम्स के भाग्यमें मरना है तो डाक्टर उसे नहीं बचा सकते; यदि उसके भाग्यमें रोगमुक्त होना है तो डाक्टरोंकी ज़रूरत नहीं है। तो वह डाक्टरों पर पैसा बरबाद क्यों करे?

(य) हमारे आलोचक बताते हैं कि हम नगरपालिकाके चुनावमें अशिक्षित उम्मीदवारोंका समर्थन कर रहे हैं। वे सब उम्मीदवार लाखों रुपयोंका व्यवसाय चला रहे हैं। तो नगरपालिकाके मामलोंको वे क्यों न चला सकेंगे?

(र) कुछ विशेष परिस्थितियोंमें राजनीतिक क्रान्ति किसी देश के हितके लिये आवश्यक हो जाती है; चीनमें राजनीतिक क्रान्तियां अक्सर होती हैं; अतः चीन जल्दी-जल्दी तरक्क़ी कर रहा है।

(ल) मेरा भाई और चचेरा भाई परीक्षामें प्रथम श्रेणीमें उत्तीर्ण हुए; इसलिए मैं भी हर हालतमें प्रथम श्रेणीमें उत्तीर्ण होऊंगा।

(व) यदि दो आधारवाक्योंसे निष्कर्ष सही तरीक़ेसे निकाला गया है तो वह अवश्य सत्य है। इस दृष्टान्तमें आधारवाक्य और निष्कर्ष सब सत्य वाक्य हैं। अतः प्रस्तुत न्याय बिल्कुल सत्य है।

(श) अनेक व्यक्ति तर्कशास्त्र पढ़े बिना अच्छी तरह तर्क कर

सकते हैं और अनेक व्यक्ति तर्कशास्त्र पढ़कर भी अच्छा तर्क नहीं करते। तो इस विषयके अध्ययनके लिये क्यों चिन्ता की जाय ?

(ष) सब जो दुष्टताका समर्थन करते हैं स्वयं दुष्ट हैं।

(स) यदि मैं परीक्षासे ठीक एक माह पहिलेसे तर्कशास्त्र पढ़ने लगूं तो मैं अवश्य उसमें उत्तीर्ण हो जाऊंगा; अंग्रेज़ीमें मैं पहिलेसे ही अच्छा हूं, अतः सालके शुरूसे ही पाठ्य पुस्तकें पढ़नेकी कोई ज़रूरत नहीं है। मेरी स्मरणशक्ति अच्छी है, इसलिए परीक्षासे पहिले तीन सप्ताहके अन्दर मैं इतिहासकी पुस्तकें दोहरा लूंगा। अतः मुझे विश्वास है कि उत्तीर्ण होनेके लिये परीक्षासे एक माह पहिले तक मुझे पढ़नेकी कोई ज़रूरत नहीं है।

(ह) अगर भारतको कोई तरक्क़ी करनी है तो हमें नये स्कूल खोलने और शिक्षाको बढ़ानेमें लाखों रुपया ख़र्च करना होगा। खेतीके सुधारमें बहुत रुपयोंकी ज़रूरत है। बड़ी-बड़ी स्थल और जल-सेनाओं को भी रखना होगा जिसमें बहुत रुपया लगेगा। सिंचाई, रेलवे, वाणिज्य और उत्पादनकी भी उपेक्षा नहीं की जा सकती। यदि ये सभी बातें की जायं तो भारत दिवालिया हो जायेगा; अतः शिक्षा और खेती पर हम कोई व्यय नहीं कर सकते।

(क्ष) जॉन पर जेम्स का ऋण है और जेम्स पर मेरा। अतः जॉन पर मेरा ऋण है।

२. निम्नलिखित युक्तियोंका विश्लेषण करके परीक्षा कीजिये और यदि कोई दोष हों तो उन्हें बताइये। दोषका केवल नाम न बताकर कारण देते हुए समझाइये :—

(क) एक प्रदर्शन करनेवालेने विज्ञापन दिया कि दोनों लिंगोंके बच्चे फ़ीस दिये बिना प्रदर्शन देख सकेंगे, लेकिन जब बच्चे प्रदर्शन देखनेके लिये आये तो उसने लड़कों और लड़कियों दोनोंसे फ़ीस ली और कहा कि न तो लड़के दोनों लिंगोंके हैं और न लड़कियां।

(ख) अनेक वकील ऐसे हैं जो अच्छा तर्क कर सकते हैं और बग़ैर तर्कशास्त्र पढ़े तर्कके बल पर मुक़दमा जीत सकते हैं; अतः तर्कशास्त्र पढ़ना बेकार है।

(ग) सब क़ानूनोंका एक सामान्य लक्ष्य समाजके सामूहिक सुख को बढ़ाना है, और ऐसा करनेके लिये उन्हें उन सब बातोंको हटाना पड़ेगा जो दुःख पैदा करती हैं; लेकिन क़ानून दण्ड देता है और दण्ड दुःख पैदा करता है; अतः क़ानून समाजके सुखको घटाता है।

(घ) लोगोंको सम्मति देना व्यर्थ है। यदि जो बात करनेका वे पहिले ही इरादा कर चुके हैं उसे करनेकी सम्मति दी जाती है तो ऐसी सम्मतिकी आवश्यकता नहीं है; जिस बातको करनेका उनका इरादा नहीं है उस बातकी यदि सम्मति दी जाती है तो सम्मतिका कोई प्रभाव नहीं होता।

(ङ) केवल प्रथम श्रेणीमें उत्तीर्ण छात्रोंको प्रिन्सिपल छात्रवृत्ति देता है। मैं प्रथम श्रेणीमें उत्तीर्ण हूं। अतः मुझे छात्रवृत्ति मिलेगी।

(च) यदि आबादी बढ़ती है तो मज़दूरी घट जाती है। उत्तर-प्रदेशमें मज़दूरी कम है। इसलिए वहां आबादी बढ़ी हुई है।

(छ) सब कुप्रबन्ध पूर्ण व्यवसाय लाभहीन हैं। रेलवे सुप्रबन्ध-पूर्ण है। अतः रेलवेमें लाभ है।

(ज) यदि ओ सत्य है तो आ असत्य है, ई असत्य है, और इसलिए ए सत्य है। इस प्रकार ओ की सत्यतामें ए की सत्यता गर्भित है।

(झ) कम्पनीके सात डाइरेक्टरोंमें से पांच देशके राजनीतिक नेता हैं। उसकी अच्छाईका इससे बड़ा प्रमाण क्या होगा?

(ञ) मनुष्य पशु नहीं है; पशु अविचारवान् हैं; सब अविचारवान् प्राणी अनुत्तरदायी हैं; अतः मनुष्य अनुत्तरदायी नहीं हैं।

(ट) आदर्श चरित्रवाला व्यक्ति शुभ कार्यको किये बिना नहीं रह सकता। लेकिन जो बाध्य होकर किया जाता है उसमें चुनावकी गुंजाइश नहीं होती, और जिसे चुनाव करके नहीं किया जाता उसको करनेमें कोई बड़ाई नहीं है। अतः आदर्श चरित्रवाला व्यक्ति कोई ऐसा काम नहीं करता जिसमें बड़ाई हो।

(ठ) यदि अपराध करनेवाले न हों तो पुलिस भी न हो। लेकिन एक सभ्य समाजमें पुलिस आवश्यक होती है। अतः सभ्य समाजमें अपराध करनेवाले आवश्यक हैं।

(ड) इस कथाकी प्रत्येक घटना स्वाभाविक और सम्भावित है; अतः यह कथा स्वयं स्वाभाविक और सम्भावित है।

(ढ) सरकारका काम है कर्तव्योंका पालन करवाना। दान देना कर्तव्य है। इसलिए दान दिलाना सरकारका काम है।

(ण) सब प्रोफ़ेसर स्नातक हैं। कोई प्रोफ़ेसर नगरपालिकाका सदस्य नहीं है। अतः नगरपालिका अबौद्धिक लोगोंका समुदाय है।

(त) परीक्षाएं परीक्षार्थियोंकी योग्यताकी परख नहीं करतीं। कुछ कमजोर लड़के परीक्षामें उत्तीर्ण हो जाते हैं। मैं मानता हूं कि मैं

कमज़ोर हूं, फिर भी प्रार्थना करता हूं कि मुझे मौक़ा दिया जाय। मुझे यक़ीन है कि मैं उत्तीर्ण हो जाऊंगा।

(थ) अच्छे कारीगर अपने औज़ारोंकी शिकायत नहीं करते; मेरे शिष्य अपने औज़ारोंकी शिकायत नहीं करते; अतः मेरे शिष्य अच्छे कारीगर हैं।

(द) सब चोर बेईमान होते हैं; सब बेईमान लोग अनैतिक होते हैं; कुछ अनैतिक व्यक्ति दण्ड नहीं पाते; अतः कुछ चोर दण्ड नहीं पाते।

(ध) सब समझमें आनेवाले वाक्य सत्य होते हैं या असत्य। 'कल कालेज बन्द रहेगा' और 'कल कालेज बन्द नहीं रहेगा' ये दो वाक्य समझमें आनेवाले हैं। अतः ये दोनों सत्य हैं या दोनों असत्य हैं।

(न) जॉन मेरा दोस्त है और जेम्स जॉन का दोस्त है। इसलिए जेम्स मेरा दोस्त है।

(प) जो घटनाएं हमारी रुचिके अनुकूल नहीं हैं उनकी हम चिंता क्यों करें? अगर हम उनको रोक सकते हैं तो हमें उनके विरुद्ध बहादुरी से लड़ना चाहिए; अगर हम उन्हें नहीं रोक सकते तो खुशी-खुशी उनको सहन करना चाहिए।

(फ) जो बात एक समष्टिके लिये कही जा सकती है वह अवश्य ही उस समष्टिके एक भागके लिये भी कही जा सकती है। भारतकी कुल आबादी लगभग ३३ करोड़ है। अतः उत्तर प्रदेशकी आबादी जो कि भारतका एक भाग है ३३ करोड़ है।

(ब) ब्रूटस: यहां इतना दुष्ट कौन है जो अपने देशको प्यार नहीं करता? यदि कोई है तो कहे, क्योंकि मैंने उसे रुष्ट किया है।

नागरिक: कोई नहीं, ब्रूटस, कोई नहीं।

ब्रूटस: तो मैंने किसीको रुष्ट नहीं किया है।

(भ) धमकानेवाले हमेशा कायर होते हैं लेकिन हमेशा झूठे नहीं होते। अतः झूठे हमेशा कायर नहीं होते।

(म) मसूरीके 'हैपी वैली' बग़ीचेमें, नगरपालिकाने एक विज्ञप्ति लगाई है—'फल मत तोड़ो'। मैं नहीं समझता कि माली ने मुझे फूल तोड़नेसे क्यों रोका; नगरपालिकाको तो इसमें कोई आपत्ति नहीं है।

(य) जो प्रत्येक आदमी चाहता है वह वांच्छनीय है; प्रत्येक आदमी अपना सुख चाहता है; इसलिए आदमीका सुख वांच्छनीय है।

(र) नियमके अनुसार न्यायमें यदि आधारवाक्य सत्य हैं तो

निष्कर्ष अवश्य सत्य होगा। अतः ऐसे न्यायमें यदि एक आधारवाक्य या दोनों ही असत्य हैं तो निष्कर्ष असत्य होता है।

(ल) यदि गाड़ीके आनेमें देर है तो मैं बोर्डकी मीटिंगमें इलाहाबाद ठीक समय पर न पहुंच सकूंगा ; यदि गाड़ीके आनेमें देर नहीं है तो मैं गाड़ी नहीं पकड़ सकूंगा। गाड़ी या तो देरमें आयेगी या देरमें नहीं आयेगी। अतः किसी भी दशामें मैं मीटिंगमें उपस्थित न हो सकूंगा।

३. निम्नलिखित युक्तियोंको तार्किक रूपमें रखिए, उनकी परीक्षा कीजिये और यदि कोई दोष हो तो उसे बताइये :—

(क) आदमी अन्नके बिना जीवित रह सकता है, क्योंकि वह रोटी, चावल, आलू या किसी अन्य प्रकारके अन्नके बिना जीवित रह सकता है।

(ख) तुम कहते हो कि यह किताब ग़लत है, लेकिन मैंने समाचारपत्रोंमें इसकी बहुत अच्छी आलोचना देखी है।

(ग) वक्ताकी दलीलके जवाबमें केवल इतना ही कहना काफ़ी है कि कुछ साल पहिले वह स्वयं उस मतका समर्थन करता था जिसका वह अब खण्डन करता है।

(घ) जाड़ा इतना अधिक है कि यह पौधा बढ़ नहीं सकता।

४. निम्नलिखित युक्तियोंको न्यायके रूपमें रखकर उसकी परीक्षा कीजिये और यदि कोई दोष हों तो उनको बताइये :—

(क) सम्मति देना बेकार है ; क्योंकि यदि आदमी चतुर है तो उसे उसकी ज़रूरत नहीं है और यदि वह चतुर नहीं है तो वह अपने ही रास्ते चलेगा।

(ख) क का एकमात्र कारण ख ही हो सकता है। अतः जब हम क को होते हुए देखते हैं तो ख की उपस्थिति अवश्य ही होगी।

(ग) कुछ राजनीतिज्ञ लेखक भी हैं, क्योंकि ग्लैडस्टोन, मैकाले इत्यादि ऐसे हुए हैं।

(घ) यदि अफ़सर शान्त दिमाग़वाला है तभी वह सेनाध्यक्ष हो सकता है। यह अफ़सर सेनाध्यक्ष-पदके योग्य नहीं समझा गया। अतः वह शान्त दिमाग़वाला नहीं है।

(ङ) दस्तेने वीरतापूर्वक लड़ाई लड़ी ; इसलिए उसका प्रत्येक सिपाही वीर होना चाहिए।

(च) वह निश्चय ही अपराधी है, क्योंकि उसने ऐसा व्यवहार किया जैसा एक अपराधी करता है।

५. निम्नलिखित युक्तियोंकी परीक्षा कीजिये और यदि कोई दोष हों तो उन्हें बताइये :—

(क) चूहा एक जानवर है, इसलिए बड़ा चूहा बड़ा जानवर है।

(ख) केवल कुछ ही मनुष्य झूठे होते हैं ; अतः कुछ झूठ बोलने वाले मनुष्य नहीं हैं।

(ग) सच्चे बहादुर कभी धमकाते नहीं ; अतः सब धमकानेवाले कायर हैं।

(घ) क नेपोलियन और सीज़र को बुरा कहता है, लेकिन नेपोलियन और सीज़र बड़े आदमी हैं। इसलिए क बड़े आदमियों को बुरा कहता है।

(ङ) किसी देशके शासकको अपने धार्मिक मतोंको फैलानेके लिये अपने प्रभावका प्रयोग करनेके लिये दोष नहीं देना चाहिए, क्योंकि हर-एक आदमीको अपने मतको फैलानेका अधिकार है।

(च) यह न्याय सत्य है, क्योंकि सब सत्य न्यायोंकी तरह इसके भी तीन पद हैं।

(छ) गलतियां केवल तभी क्षमा की जा सकती हैं जब वे दुर्निवार्य हों, लेकिन वे दुर्निवार्य नहीं हैं, इसलिए वे क्षमा नहीं की जा सकतीं।

(ज) लड़कोंको पेड़ पर चढ़ने देनेमें कोई हानि नहीं है। यदि उनको आत्मविश्वास है तो वे पूर्णतया सुरक्षित हैं और यदि वे डरते हैं तो स्वयं ही इतनी ऊंचाई पर नहीं चढ़ेंगे जिसमें ख़तरा हो।

(झ) आदमी अपनी चीज़से जो चाहे सो कर सकता है। अतः क़ानूनको उन शर्तोंमें कोई हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए जिनके अनुसार वह नौकर रखता है ; या इसलिए उसे अपनी पत्नीको मारनेके लिये स्वतंत्र होना चाहिए। [संकेत. उपाधि-भेद-दोष]

(ञ) खाना जीवनके लिये आवश्यक है, मांस खाना है, इसलिए मांस जीवनके लिये आवश्यक है।

(ट) आदमीकी आत्माको उसके सारे शरीरमें व्याप्त होना चाहिए, क्योंकि वह उसके प्रत्येक हिस्सेको जीवित रखती है।

(ठ) सब चोर बेईमान हैं ; सब बेईमान लोग अनैतिक हैं ; कुछ अनैतिक व्यक्ति दण्डित नहीं होते ; इसलिए कुछ चोर दण्डित नहीं होते।

(ड) संस्कृतका अध्ययन बेकार है, क्योंकि दैनिक जीवनमें इसका कोई उपयोग नहीं है।

(ढ) महान् व्यक्तियोंसे घृणा की जाती है और मुझसे घृणा की जाती है ; इससे सिद्ध होता है कि मेरा सिद्धान्त ठीक है।

(ण) उसे जनतन्त्रवादी होना चाहिए, क्योंकि सब जनतन्त्रवादी वाणिज्य पर प्रतिबन्ध न लगानेमें विश्वास करते हैं।

(त) चोरीका माल पानेवाला दण्डित होना चाहिए; तुम्हें चोरी का माल मिला है; अतः तुम्हें दण्डित होना चाहिए।

(थ) संसदमें वाद-विवाद पर कोई प्रतिबन्ध नहीं होना चाहिए, क्योंकि भाषणकी स्वतन्त्रता एक वैधानिक अधिकार है।

(द) सब प्रशिक्षित तर्कशास्त्री दोष मालूम कर सकते हैं; लेकिन कम ही मतदाता प्रशिक्षित तर्कशास्त्री हैं; इसलिए कम ही मतदाता दोष मालूम कर सकते हैं।

(ध) जो चीज दुर्लभ है वह महंगी होती है; एक रुपयेमें घोड़ा दुर्लभ है; अतः एक रुपयेमें घोड़ा महंगा है।

(न) सात और पांच बराबर हैं आठ और चारके; अतः सात आठके बराबर और पांच चारके बराबर है।

(प) "क्या जो आदमी चल रहा है उसके लिये न चलना सम्भव है?" "हां"। "तो एक आदमीके लिये चले बग़ैर चलना सम्भव है।"

(फ) एक त्रिभुजके सब कोण दो समकोणके बराबर होते हैं; अ ब स एक त्रिभुजका एक कोण है; अतः अ ब स दो समकोणके बराबर है।

(ब) वह जो शिकारमें हत्या करता है क्रूर है; अतः वह जो मांस खाता है क्रूरताको प्रोत्साहन देता है।

(भ) दान कभी नहीं देना चाहिए, क्योंकि पेशेवर भिखमंगोंको दान देनेसे अकर्मण्यता बढ़ती है।

(म) जब कोई बीमार होता है तब चारपाई पर लेटना उसके स्वास्थ्यके लिये अच्छा होता है; अतः यह स्वास्थ्यमें भी उसके लिये अच्छा है।

(य) अगर होमर का कथन सत्य है तो उसके नायकोंने अनेक दुष्कर्म किये और वे देवताओंके पुत्र थे; लेकिन या तो उन्होंने दुष्कर्म नहीं किये या वे देवताओंके पुत्र नहीं थे; अतः होमर का कथन असत्य है।

(र) तुम्हें उसकी कहानी पर विश्वास करना चाहिए, क्योंकि उस कहानीकी प्रत्येक बात स्वाभाविक और सम्भव है।

६. निम्नलिखित युक्तियोंकी परीक्षा कीजिये और उनके दोष बताइये :—

(क) कुछ रीढ़की हड्डीवाले दोपाये हैं;
कुछ दोपाये पक्षी हैं;
∴ कुछ पक्षी रीढ़की हड्डीवाले हैं।

(ख) सब दुर्गुण निन्दनीय हैं;
प्रतिस्पर्धा निन्दनीय नहीं है;
∴ प्रतिस्पर्धा दुर्गुण नहीं है।

(ग) दुनिया पर आर्योंका शासन होगा;
चीनके लोग आर्य नहीं हैं;
∴ दुनिया पर चीनियोंका शासन नहीं होगा।

(घ) कोई मूर्ख ऊंचे पदके योग्य नहीं है; यहां पर उपस्थित सब मूर्ख नहीं हैं; अतः यहां पर उपस्थित सब ऊंचे पदोंके योग्य हैं।

(ङ) वे सरकारें अच्छी हैं जो जनताको समृद्ध बनाती हैं; रूसी सरकार जनताको समृद्ध नहीं बनाती; अतः रूसी सरकार अच्छी नहीं है।

(च) सब अत्याचारी कायर होते हैं; कोई कालेजका आदमी अत्याचारी नहीं है; इसलिए कोई कालेजका आदमी कायर नहीं है।

(छ) कोई बेईमान आदमी ऊंचे पदके योग्य नहीं है; इन्टरके छात्र ईमानदार हैं; अतः वे ऊंचे पदके योग्य हैं

(ज) कुछ उपयोगी धातु दुर्लभ होती जा रही हैं। लोहा एक उपयोगी धातु है। अतः वह दुर्लभ होता जा रहा है।

(झ) कई बेकार लोग अकुशल नहीं हैं, मेरे सब मित्र बेकार हैं, इसलिए उनमें से कोई अकुशल नहीं है।

७. निम्नलिखित संक्षिप्त न्यायोंके छिपे हुए वाक्य प्रकट कीजिये और उनकी परीक्षा करके दोष निकालिए:—

(क) अफ़ीकामें पैदा होनेसे वह जन्मसे ही काला है।

(ख) सम्राट् विन्डसरमें है क्योंकि शाही झण्डा दिखाई दे रहा है।

(ग) कलकत्ता औद्योगिक नगर है और औद्योगिक नगर स्वास्थ्य-लाभके स्थान होते हैं।

(घ) तुम इंजीनियर नहीं हो, इसलिए इस पद पर नहीं लिये जा सकते।

(ङ) ये सब लोग अच्छे नागरिक हैं; क्योंकि केवल अच्छे नागरिक ही क़ानून मानते हैं।

८. निम्नलिखित हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्यायोंकी आकारविषयक सत्यता जांचिए:—

(क) अगर सब छात्र परीक्षाके लिये तैयार होते तो कुछ सफल हुए होते; लेकिन कोई सफल नहीं हुआ।

(ख) यदि कोई वृत्तको वर्ग कर देगा तो वह महान् गणितशास्त्री होगा, लेकिन कोई कर ही नहीं सकता।

(ग) हम जानते हैं कि वह नीति ग़लत है, अन्यथा वह असफल न हुई होती।

(घ) अगर ओस न होती तो मौसम ख़राब होता ; लेकिन ओस है ; इसलिए मौसम अच्छा है।

(ङ) अगर तुम न जाओगे तो मैं तुमसे मिलूंगा। लेकिन तुम जा रहे हो, अत: मैं नहीं मिलूंगा।

(च) यदि देश समृद्ध है तो लोगोंमें वफ़ादारी होगी। इस देशके लोगोंमें वफ़ादारी है। अत: देश समृद्ध है।

(छ) यदि आदमी तरक्क़ी न कर सकता तो वह पशुओंसे भिन्न न होता। लेकिन आदमी पशुओंसे भिन्न है ; अत: वह तरक्क़ी कर सकता है।

(ज) अगर उसने अपना सबक़ पढ़ा होता तो वह उसे सुना सकता। उसने सबक़ सुनाया है ; अत: उसने सबक़ पढ़ा है।

९. निम्नलिखित वैकल्पिक-निरपेक्ष न्यायोंकी परीक्षा कीजिये :—

(क) उसने बी० ए० में संस्कृत नहीं ली, क्योंकि हरेकको संस्कृत लेनी है या फ़ारसी और उसने फ़ारसी ली है।

(ख) सफल व्यक्तिको या तो परिश्रमी होना चाहिए या धनी। लेकिन यह सफल व्यक्ति परिश्रमी है ; अत: वह धनी नहीं है।

१०. आधारवाक्योंके निम्नलिखित जोड़ोंसे निष्कर्ष निकालिए, साथ ही उनके आकार और संयोग भी बताइये :—

(क) सोडियम एक धातु है ;
सोडियम बहुत सघन पदार्थ नहीं है।

(ख) सब शेर मांसाहारी होते हैं ;
कोई मांसाहारी पशु नखहीन नहीं होता।

(ग) जलना एक रासायनिक प्रक्रिया है ;
जलनेके साथ हमेशा गर्मी होती है।

(घ) इस कक्षाके सब छात्र बुद्धिमान् हैं ;
इस कक्षाका कोई छात्र बीस वर्षसे कम नहीं है।

(ङ) केवल शरीफ़ आदमी इस संस्थाके सदस्य हैं ;
इस संस्थाके कुछ सदस्य अफ़सर नहीं हैं।

(च) सब अफ़सर भोजनके लिये निमंत्रित हैं ;
क्लबके सब सदस्य भोजनके लिये निमंत्रित हैं।

११. निम्नलिखित संक्षिप्त न्यायोंमें छिपे हुए आधारवाक्य क्या हैं?

(क) तर्कविज्ञान बहुत उपयोगी है; इससे हम अपने प्रतिद्वन्द्वियोंके दोष निकालते हैं।

(ख) वह अवश्य कलकत्तेमें होगा, क्योंकि वह बम्बईमें नहीं है।

(ग) धन्य हैं वे जो विनीत हैं, क्योंकि पृथ्वी पर उनका राज्य होगा।

१२. निम्नलिखित निष्कर्षोंको सिद्ध या असिद्ध करनेके लिये आधारवाक्य बताइये :—

(क) युद्धमें व्यक्तिगत सम्पत्तिका सम्मान होना चाहिए।

(ख) लिखित परीक्षाएं योग्यताको जांचनेके लिये विश्वसनीय नहीं हैं।

(ग) आमदनीके करको हटा देना चाहिए।

(घ) महिलाओंको मतदानका अधिकार मिलना चाहिए।

(ङ) राजाके प्रति विद्रोहका क़ानून बदलना चाहिए।

१३. यह दिखाइये कि निम्नलिखित अकेले वाक्योंको संक्षिप्त न्याय माना जा सकता है : —

(क) यदि इच्छाएं घोड़े होतीं तो भिखमंगे सवारी करते।

(ख) क्या उस ईमानदार आदमीसे तुम्हें कुछ नहीं लेना है?

(ग) अगर मैं उतना पढ़ता जितना मेरे पड़ोसीने पढ़ा है तो मैं भी उतना ही अज्ञ होता।

परिशिष्ट

भारतीय दर्शन में अनुमान

भारतीय दर्शनकारोंने ज्ञानके स्रोतोंको प्रमाण कहा है और प्रमाणों की अधिकतम संख्या छः मानी है। पाश्चात्य तर्कशास्त्रमें जिसे 'इन्फ़रेन्स' कहते हैं भारतीय दर्शनमें उसे 'अनुमान' कहा गया है। व्युत्पत्तिकी दृष्टिसे 'अनुमान' शब्द [अनु (=पश्चात्)+मान (=ज्ञान)] का अर्थ है पश्चात् ज्ञान अर्थात् एक ज्ञानके बाद होनेवाला ज्ञान। एक उदाहरण लीजिये: हमने बहुत दूर धुवां देखा और तब समझ लिया कि वहां आग है। इसमें पहिले धुएका ज्ञान प्रत्यक्षसे होता है और तब उसके आधार पर आगके अस्तित्वका ज्ञान परोक्षतः होता है। व्युत्पत्ति के अनुसार यह धुएंके ज्ञानके पश्चात् होनेवाला आगका ज्ञान अनुमान है।

उक्त उदाहरणमें धुवां आगके अस्तित्वका सूचक है। जिस प्रकार 'सिग्नल' को झुका देखकर हम समझ लेते हैं कि गाड़ी आनेवाली है, उसी प्रकार धुएंको देखकर हम आगका होना समझ जाते हैं। इसलिए धुवां आगका चिह्न अथवा 'लिंग' कहलाता है और आग जिसका कि धुवां लिंग है 'लिंगी' कहलाती है। इस दृष्टिसे अनुमानकी यह परिभाषा दी गई है—"**मितेर्लिंगेन् लिंगिनोऽर्थस्य पश्चात् मानं अनुमानम्**" अर्थात् लिंगके ज्ञानके पश्चात् लिंगीका जो ज्ञान होता है वही अनुमान है।

लिंग और लिंगीके अन्य प्रचलित नाम भी हैं। 'लिंगी' को 'साध्य' भी कहते हैं क्योंकि उसका अस्तित्व सिद्ध करना अनुमान-क्रियाका लक्ष्य होता है और लिंग जिसकी सहायतासे यह सिद्ध होता है 'साधन' अथवा 'हेतु' कहलाता है। पूर्वोक्त उदाहरणमें आग साध्य और धुवां साधन या हेतु है। जिस स्थान पर हम धुवां देखते हैं और आगके होनेका अनुमान करते हैं उसे 'पक्ष' कहते हैं। जैसे, मान लिया कि हम पहाड़ पर धुवां देखते हैं और उससे आगका अनुमान करते हैं; अतः यहां पहाड़ पक्ष हुआ।

व्याप्ति

अब प्रश्न यह उठता है कि धुएंको देखकर ही आगका ज्ञान क्यों

होता है, अन्य वस्तुको देखकर क्यों नहीं? ऐसा इसलिए होता है कि धुयेंके साथमें आग सर्वत्र दिखाई देती है। हम देखते हैं कि रसोईघरमें, कुम्हारकी भट्टीमें, इन्जनके अन्दर धुवां है और आग भी है। कोई भी स्थान हम ऐसा नहीं देखते जहां धुवां हो और आग न हो। इस प्रकार अनुभवसे हमको एक नियम प्राप्त होता है: जहां-जहां धुवां होता है वहां-वहां आग होती है। इस नियमके आधार पर ही हम धुयेंको देखकर आगका अनुमान करते हैं और यही नियम 'व्याप्ति' कहलाता है। 'तर्कसंग्रह' में व्याप्तिकी परिभाषा इस प्रकार दी हुई है: **"यत्र-यत्र धूमस्तत्रतत्र वह्निः इति साहचर्य-नियमो व्याप्तिः"** अर्थात् जहां-जहां धुवां रहता है वहां-वहां आग रहती है इस प्रकारके साहचर्य-नियम को व्याप्ति कहते हैं। व्याप्ति उन दो वस्तुओंका विशिष्ट सम्बन्ध है जो हमेशा एक साथ रहती हैं। साहचर्य का अर्थ है एक साथ रहना। मछली और पानी एक साथ रहते हैं; अतः उनमें साहचर्यका सम्बन्ध है। लेकिन इस साहचर्यको हम व्याप्ति नहीं कह सकते क्योंकि मछली और पानी नियमपूर्वक अर्थात् सदैव एक साथ नहीं रहते, दूसरे शब्दोंमें इनका साहचर्य नियत नहीं है बल्कि अनियत है। मछली पानीके बिना रह सकती है और पानी मछलीके बिना अर्थात् ये दोनों सहचर एक-दूसरेसे अलग भी रह सकते हैं। इसीका नाम 'व्यभिचार' है। व्याप्ति में व्यभिचार नहीं होता। व्याप्ति अव्यभिचरित सम्बन्ध है अर्थात् जिस साहचर्य-नियममें व्यभिचार यानी अपवाद न हो वही व्याप्ति है। जहां-जहां धुवां है वहां-वहां आग है, इस नियममें व्यभिचार नहीं पाया जाता अर्थात् कोई ऐसा स्थान नहीं है जहां धुवां हो लेकिन आग न हो। इसलिए यह नियम व्याप्ति है।

यदि एक वस्तु ऐसी है जो दूसरी वस्तुके बिना रह ही नहीं सकती तो यह अविनाभाव-सम्बन्ध है। धूम कभी अग्निके बिना नहीं रह सकता। जहां अग्नि नहीं है वहां धूम भी नहीं होगा। इसी अविनाभाव-सम्बन्धको व्याप्ति कहते हैं। इस प्रकार व्याप्तिको नियत साहचर्य, अव्यभिचरित सम्बन्ध, अथवा अविनाभाव कहा जाता है।

अब यहां प्रश्न यह उठता है कि पूर्वोक्त उदाहरणमें किसमें किसकी व्याप्ति है। धूमकी व्याप्ति अग्निमें है या अग्निकी व्याप्ति धूम में।

यह बात प्रयत्क्ष देखनेमें आती है कि धूम अग्निके बिना नहीं पाया जाता है किन्तु अग्नि धूमके बिना भी पाई जाती है। उदाहरणार्थ जलते हुए लोहेमें बिना धूमके अग्नि देखनेमें आती है। अतः एकनिष्ठता धूम में है अग्निमें नहीं अर्थात् धूम अग्निमें सीमित है किन्तु अग्नि धूममें

सीमित नहीं। इसी बातको दूसरे रूपमें यों समझना चाहिए कि सम्पूर्ण धूम अग्निके अन्तर्गत है किन्तु सम्पूर्ण अग्नि धूमके अन्तर्गत नहीं। अर्थात् धूमके प्रत्येक प्रदेशमें अग्नि व्याप्त (फैला) है किन्तु अग्निके प्रत्येक प्रदेशमें धूम व्याप्त नहीं है। अत: धूममें अग्निकी व्याप्ति है, अग्निमें धूम की नहीं। जिसकी व्याप्ति रहती है वह **व्यापक** कहलाता है और जिसमें व्याप्ति रहती है वह **व्याप्य** कहलाता है। उपर्युक्त उदाहरणमें अग्नि **व्यापक** और धूम **व्याप्य** है।

इस प्रसंगमें एक और विचारणीय प्रश्न यह है कि व्याप्तिका ज्ञान होता किस प्रकार है। इसके उत्तरमें नैयायिकोंका कथन है कि—"भूयोदर्शनात्" अर्थात् बारबार दो वस्तुओंका साहचर्य देखनेसे व्याप्ति का बोध होता है। उदाहरणार्थ सहस्रों बार रसोईघरमें अग्नि और धूमको एक साथ देखनेसे उनकी व्याप्तिका ज्ञान होता है।

किन्तु केवल इतना ही कहना पर्याप्त नहीं है। भूयोदर्शनसे लाखों जगह हमें भले ही अग्नि और धूमका सम्बन्ध देखनेको मिल जाय किन्तु यदि कहीं एक स्थान पर भी धूमके साथ अग्निका सम्बन्ध न पाया जाय तो व्याप्ति समाप्त हो जायगी। अत: केवल बहुतसे स्थलोंमें साहचर्य होनेसे ही व्याप्तिकी सिद्धि नहीं होती। प्रत्युत साहचर्यके साथ ही साथ व्यभिचारका अभाव होना भी आवश्यक है। इसलिए व्याप्ति-ज्ञान के लिये निम्नलिखित दो बातें आवश्यक हैं—

१. साहचर्यका ज्ञान।

२. व्यभिचार-ज्ञानका अभाव।

यही कारण है कि व्याप्ति ज्ञानके विषयमें कहा गया है कि—

"व्यभिचार-ज्ञान-विरह-सहकृतम सहचार दर्शनं व्याप्ति ग्राहकं भवति।"

धूमके साथ अग्निका सहचार प्रत्येक स्थान पर मिलता है। जैसे रसोईघरमें, यज्ञशालामें इत्यादि।

धूमके साथ अग्निका व्यभिचार एक स्थान पर भी देखनेमें नहीं आता। जैसे, तालाबमें धूम नहीं है तो वहां अग्नि भी नहीं है।

इसी अव्यभिचरित सहचार-सम्बन्धके ज्ञानसे व्याप्तिका बोध होता है।

अनुमानके लिये व्याप्ति-ज्ञान होना परम आवश्यक है। यदि धूमके साथ अग्निकी व्याप्ति हमें पहलेसे ज्ञात नहीं है तो पर्वत पर धूमको देख कर अग्निका अनुमान नहीं किया जा सकता। अनुमान तभी किया जा सकता है जब हेतु और साध्यकी व्याप्ति मालूम रहे। अतएव व्याप्ति-ज्ञानको ही अनुमानका आधार समझना चाहिए।

पक्षधर्मता

व्याप्ति-ज्ञानके द्वारा हम केवल इतना ही कह सकते हैं कि "जहाँ-जहाँ धूम रहता है वहाँ-वहाँ अग्नि भी रहती है।" किन्तु केवल इसीसे यह निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता कि सामने किसी पर्वत पर अग्नि है। यदि उस पर्वत पर धुंएंका होना नहीं मालूम है तो वहाँ अग्निका अनुमान नहीं हो सकता है। अतः "पर्वत पर अग्नि है" इस अनुमानके लिये निम्नलिखित दो बातोंका होना आवश्यक है—

१. जहाँ-जहाँ धूम होता है वहाँ-वहाँ अग्नि होती है (व्याप्ति)।

२. उस पर्वत पर धूम है (पक्षधर्मता)।

पक्षधर्मताका अर्थ है पक्ष अर्थात् स्थान विशेषमें लिंगका पाया जाना, जैसे, पर्वत पर धुएंका पाया जाना। यदि पर्वतमें यह धर्म (धूमका होना) न पाया जाता तो हम कुछ भी अनुमान नहीं कर सकते। अतः सिद्ध है कि व्याप्ति-ज्ञानके साथ ही साथ पक्षधर्मताका ज्ञान होना भी आवश्यक है।

लिंग-परामर्श

अब यहां यह देख लेना आवश्यक है कि अनुमान किस प्रकार किया जाता है। सबसे पहले हमने देखा कि—(१) पर्वत पर धुवां उठ रहा है। (पक्षधर्मता)।

इसी समय हमें तुरन्त स्मरण आया कि—(२) जहाँ-जहाँ धुवां रहता है वहाँ-वहाँ अग्नि भी रहती है। (व्याप्ति)।

जब तक यह व्याप्ति-ज्ञान नहीं था तब तक धुंवां केवल धुवां था। उस समय वह किसी अन्य पदार्थका सूचक अर्थात् चिह्न नहीं था। अतएव एव अनुमानकी दृष्टिसे उसका कोई महत्त्व न था। किन्तु व्याप्ति-ज्ञान होनेके उपरान्त उसमें विशेष महत्त्व आ गया, क्योंकि अब वह केवल धुवां ही नहीं रहा प्रत्युत पदार्थान्तर अर्थात् अग्निका परिचायक भी हो गया। तात्पर्य यह कि अब उसमें लिंगत्व आ गया। अतः जहाँ पहले हमने केवल यह देखा था कि

'पर्वत पर धुवां उठ रहा है" (सामान्य ज्ञान)

वहाँ अब हम यह देख रहे हैं कि—

"पर्वत पर अग्निसूचक धुवां उठ रहा है" (विशिष्ट ज्ञान)

इसी विशिष्ट ज्ञानको परामर्श अथवा लिंग-परामर्श कहते हैं। किसी-किसीने इसे तृतीय लिंग-परामर्श भी कहा है क्योंकि—

१. 'पर्वत धूमवाला है'—यह प्रथम लिंग-परामर्श हुआ।
२. धूम अग्निका व्याप्य है—यह द्वितीय लिंग परामर्श हुआ।
३. पर्वत अग्नि-व्याप्य धूमवाला है—यह तृतीय लिंग परामर्श हुआ।

यहाँ प्रथम परामर्शमें लिंगका सम्बन्ध पक्षके साथ देखा जाता है, द्वितीयमें लिंगका सम्बन्ध साध्यके साथ देखा जाता है, और तृतीयमें साध्य सहित लिंगका सम्बन्ध पक्षके साथ देखा जाता है। इसी अन्तिम परामर्शसे यह अनुमिति निकलती है कि "पर्वत अग्निवाला है।"

अतः पक्षधर्मता-ज्ञान और व्याप्ति-ज्ञान दोनोंके सम्मिलित होनेसे जो विशिष्ट ज्ञान उत्पन्न होता है उसे परामर्श कहते हैं। तर्क संग्रहकारने लिखा है कि—

"व्याप्ति-विशिष्ट-पक्षधर्मता-ज्ञानम् परामर्शः।"

पक्षधर्मतासे केवल पक्ष और लिंगका सम्बन्ध जाना जाता है। किन्तु व्याप्ति-ज्ञानसे लिंग और साध्यका सम्बन्ध ज्ञात होता है। और इन दोनोंके एक साथ मिल जाने पर पक्ष, लिंग और साध्यका सम्बन्ध मालूम हो जाता है। इसी ज्ञानको परामर्श कहते हैं। तात्पर्य यह है कि परामृष्ट ज्ञानमें पक्ष लिंग और साध्य तीनों एक सूत्रमें बंध जाते हैं।

इसीलिए विश्वनाथ पंचानन भट्टाचार्य ने कारिकावलीमें लिखा है कि—

"व्याप्यस्यपक्षवृत्तित्वधीः परामर्श उच्यते।"

अनुमिति—

इसी परामर्शसे अन्तिम निष्पत्ति यह निकलती है कि—"पर्वत पर अग्नि है" यही अनुमानका निष्कर्ष है। इसीको अनुमिति कहते हैं। अतएव तर्क संग्रहकार अन्नम्भट्टने लिखा है कि—

"परामर्श जन्यम् ज्ञानम् अनुमितिः" अर्थात् परामर्शसे जन्य ज्ञानको ही अनुमिति कहते हैं।

टिप्पणी. इस विषयमें न्यायका मीमांसा तथा वेदान्तसे मतभेद है। मीमांसकों तथा वेदान्तियोंका कथन है कि व्याप्ति-ज्ञान और पक्षधर्मताका ज्ञान हो जानेसे ही अनुमिति हो जाती है। इन दोनोंके बीच में परामर्शकी आवश्यकता ही क्या है? व्याप्तिके द्वारा हमें लिंग और लिंगीका सम्बन्ध ज्ञात हो जाता है। पक्षधर्मतासे लिंग और पक्षका सम्बन्ध ज्ञात हो जाता है। और फिर अपने आप पक्ष तथा लिंगीका सम्बन्ध स्थापित हो जाता है। ऐसी अवस्थामें लिंग-परामर्शका कुछ काम ही नहीं है।

इसके उत्तरमें नैयायिकोंका कहना है कि प्रत्येक प्रमाणके लिये तीन बातें आवश्यक होती हैं—

१. **कारण,**

२. **व्यापार,**

३. **फल।**

अनुमानमें व्याप्तिज्ञान और पक्षधर्मता-ज्ञान **कारण** (साधकतम-कारण) है। इस कारणसे जो क्रिया होती है वह अर्थात् परामर्श ही **व्यापार** कहलाता है। और इस क्रिया अथवा व्यापारका **फल** ही अनुमिति है। अत: व्याप्ति-ज्ञान अनुमितिका कारण तो है किन्तु उसका अव्यवहित पूर्ववर्ती कारण नहीं है, क्योंकि बीचमें कार्य विशेष अर्थात् परामर्शका व्यवधान होता है। इस परामर्शके उपरान्त ही फलोत्पत्ति अर्थात् अनुमिति होती है। इसलिए सिद्ध है कि अनुमितिका चरम (अन्तिम) कारण परामर्श ही है और उसे परामर्श-जन्य ज्ञान समझना चाहिए।

अनुमानके भेद

महर्षि गौतम ने तीन प्रकारके अनुमानोंका वर्णन किया है—

१. **पूर्ववत्** २. **शेषवत्** और ३. **सामान्यतोदृष्ट।**

"अथतत्पूर्वकम् भिविधम् अनुमानं पूर्ववत् शेषवत् सामान्यतो दृष्टम् च।"

इन तीनोंका वास्तविक अर्थ क्या है? इस विषयको लेकर बहुत ही मतभेद चला है। स्वयं भाष्यकार वात्स्यायन ने भी इनसे दो भिन्न-भिन्न अर्थोंकी सम्भावना बतलाई है। यहाँ दोनों प्रकारके अर्थ दिये जाते हैं इनमें पहलेको हम सामान्य पक्ष और दूसरेको विशेष पक्षके नामसे कहेंगे।

सामान्य पक्ष.

१. **पूर्ववत्.** जब कारणसे कार्यका अनुमान किया जाय तो उसे पूर्ववत् अनुमान कहेंगे ; जैसे काली घटाओंको देखकर पानीके बरसनेका अनुमान करना। यहाँ कारणको देखकर कार्यका अनुमान किया गया है। कारण कार्यके पूर्व होता है। अतएव इसको पूर्ववत् (कारणवाला) अनुमान कहते हैं।

२. **शेषवत्.** जहाँ कार्यसे कारणका अनुमान किया जाता है उसे

शेषवत् अनुमान कहते हैं ; जैसे नदीमें बाढ़ आई देखकर "पानी बरसा है" ऐसा अनुमान करना, क्योंकि नदीमें पानीका बढ़ना पानीके बरसनेसे ही होता है। यहाँ शेष अर्थात् कार्य देखकर हम पूर्वभूत अर्थात् पहले होने वाले कारणका अनुमान करते हैं। इसलिए इसको शेषवत् "कार्यवाला" अनुमान कहते हैं।

३. **सामान्यतोदृष्ट.** एक स्थान पर एक अवस्थामें एक चीजको देखकर फिर दूसरी जगहमें वैसी ही अवस्था देखकर बिना देखे भी वही चीज यहाँ होगी ऐसा जो अनुमान किया जाता है उसीको सामान्यतोदृष्ट अनुमान कहते हैं। जैसे, हमने बारबार देखा है कि जो चीज़ एक जगहसे दूसरी जगह जाती है वह चलती है। फिर चन्द्रमाको देखते हैं कि वह एक जगहसे दूसरी जगहको जाता है इससे हम अनुमान करते हैं कि चन्द्रमा चलता है।

किन्तु इसमें और शेषवत्में इस प्रकार व्याख्या करनेमें कोई अन्तर नहीं मालूम पड़ता, क्योंकि यहाँ भी कार्य (स्थानान्तर प्राप्ति) से कारण (गमन) का अनुमान किया गया है।

वृत्तिकार विश्वनाथ पंचाननको भी यह बात खटकी है। इसीलिए उन्होंने सामान्यतोदृष्टोंका दूसरा उदाहरण दिया है। उनका कथन है कि—

पूर्ववत् और शेषवत्में कार्य-कारणके सम्बन्धके आधार पर अनुमान किया जाता है। किन्तु सामान्यतोदृष्टमें इस प्रकार कार्य या कारण नहीं होता। दो वस्तुओंका यदि साधारणतः एक साथ रहना पाया जाय तो एकसे दूसरेका अनुमान किया जा सकता है ; जैसे सींग और पूंछमें कार्य और कारण सम्बन्ध नहीं है, किन्तु फिर भी किसी जानवरकी सींग देखकर हम अनुमान कर सकते हैं कि उसके पूंछ भी होगी, क्योंकि सामान्य रूपसे ऐसा देखा जाता है कि जिस जानवरके सींग रहती है उसके पूंछ भी होती है। ऐसे ही अनुमानको सामान्यतोदृष्ट कहते हैं।

अब यहाँ इन अनुमानोंकी दूसरी व्याख्या भी समझ लेनी चाहिए।

विशिष्ट अर्थ.

१. **पूर्ववत्.** पूर्ववत्का अर्थ है पूर्वके समान अर्थात् दो चीज़ोंको साथ देखनेके उपरान्त यदि कुछ समयके पश्चात् एकको देखते हैं तो दूसरीका स्मरण हो आता है। जैसे धुवां और अग्निको साथ-साथ देखा है। फिर यदि दूसरे समयमें केवल धुवेंको ही देखें तो समझ लेते हैं कि

यहां अग्नि अवश्य होगी। इस प्रकारके अनुमानको पूर्ववत् अनुमान कहते हैं।

२. **शेषवत्.** शेषवत्का अर्थ है शेषके समान। जितनी बातें एक चीज़के विषयमें ही हो सकती हैं उनमेंसे और सबका होना जब असम्भव पाया जाय तब जो बाक़ी रह जाय उसका अनुमान करना शेषवत् कहलाता है। जैसे, शब्द या तो द्रव्य है या गुण अथवा कर्म। किन्तु विचार करने पर जब पता चलता है कि यह न तो द्रव्य ही है और न कर्म ही तो अन्तमें यह गुण ही हुआ। यह शेषवत् अनुमान है।

३. **सामान्यतोदृष्ट.** जब दो चीज़ोंका सम्बन्ध है पर उनमें से एक देखनेके योग्य नहीं है, तब जो देखने योग्य है उसको देखकर दूसरी चीज़का अनुभव किया जाना सामान्यतोदृष्ट कहलाता है; जैसे, इच्छा और द्वेष इत्यादि गुणोंसे आत्मा नामक अदृश्य द्रव्यका अनुमान करना।

प्रयोजनके आधार पर अनुमानके प्रभेद

१. **स्वार्थानुमान।**
२. **परार्थानुमान।**

१. **स्वार्थानुमान.** स्वार्थानुमान वह अनुमान है जो अपनी संशय-निवृत्तिके लिये किया जाता है।

'स्वीयसंशयनिवृत्तिप्रयोजनकमनुमानम् स्वार्थानुमानम्'।

यह अनुमान केवल अपने बोध या निश्चयके हेतु किया जाता है। अतएव इसमें प्रतिज्ञा आदि पंचावयवका प्रयोग नहीं किया जाता। केवल हेतु या लिंग देखकर साध्यका निश्चय कर लिया जाता है। जैसे, कोई आदमी बारबारके अनुभवसे जब यह जान जाता है कि जहां धूम रहता है वहां अग्नि रहती है और फिर वह किसी पर्वत के निकट खड़ा होकर देखता है कि उस पर धुवां उठ रहा है तो यह चिह्न या लिंग देखकर ही उसे मालूम हो जाता है कि पर्वत पर अग्नि है। ऐसे अनुमान में प्रतिज्ञा या उदाहरणकी आवश्यकता नहीं रहती। केवल लिंग-परामर्श से ही अनुमति हो जाती है। यही स्वार्थानुमान है।

२. **परार्थानुमान.** जो अनुमान दूसरोंकी शंकाके समाधानार्थ किया जाता है वह परार्थानुमान कहलाता है।

"परसंशयनिवृत्तिप्रयोजनकमनुमानम् परार्थानुमानम्"।

परार्थानुमान दूसरोंको समझानेके लिये किया जाता है। अतएव

इसमें प्रतिज्ञा आदि पांचों अवयवोंका प्रयोग रहता है। महर्षि गौतम के अनसार पांच अवयव (अंग) निम्नलिखित हैं—

१. प्रतिज्ञा, २. हेतु, ३. उदाहरण, ४. उपनय, ५. निगमन।

१. **प्रतिज्ञा**. **'साध्यनिर्देशः प्रतिज्ञा'**। अर्थात्, जो प्रतिपाद्य विषय है उसका निर्देश करना प्रतिज्ञा कहलाता है। दूसरे शब्दोंमें, अनुमानसे जो बात सिद्ध करनी है उसका वर्णन जिस वाक्यमें हो, वह प्रतिज्ञा कहलाता है। जैसे यदि हमें पर्वत पर अग्नि सिद्ध करना है तो अपने साध्य विषयको हम सबसे पहले कह सुनाते हैं कि पर्वत अग्नियुक्त है। यही हमारी प्रतिज्ञा है।

२. **हेतु**. **'(उदाहरण साधर्म्यात्) साध्य साधनम् हेतुः'**। दूसरा वाक्य जो अनुमानको सिद्ध करनेके कारणका निर्देश करता है हेतु कहलाता है। अथवा दूसरे शब्दोंमें इसे इस प्रकार कहा जा सकता है कि साध्यकी सिद्धि करनेवाला चिह्न जिस वाक्यमें होता है उसे हेतु कहते हैं। जैसे, हम अग्निका अस्तित्व धूमसे सिद्ध करना चाहते हैं, इसलिए अपनी प्रतिज्ञाके समर्थनमें कहते हैं कि "क्योंकि पर्वत धूमयुक्त है"। यही हमारा हेतु हुआ।

३. **उदाहरण**. **"साध्यसाधर्म्यात्तद्भावी दृष्टान्त उदाहरणम्"**। अपने प्रतिपाद्य विषयके समान कोई दृष्टान्त देना उदाहरण कहलाता है। जैसे, अपने पक्षके समर्थनमें हम रसोईघरका दृष्टान्त देते हैं। वहां धूमके साथ अग्नि भी रहती है। यह उदाहरण हुआ।

केवल दृष्टान्तके बल पर ही अनुमानकी सिद्धि नहीं होती, प्रत्युत् उसके लिये व्याप्तिका सम्बन्ध भी होना आवश्यक है। अतः उदाहरण को व्याप्तिका सूचक दृष्टान्त ही समझना चाहिए। इसीलिए नव्य नैयायिकोंने इसे स्पष्ट कर दिया है:—

'व्याप्ति प्रतिपादकमुदाहरणम्'

हेतु देनेके उपरान्त हेतु और साध्यका व्याप्ति-सम्बन्ध बतलाया जाता है और फिर दृष्टान्तके द्वारा उसे समझाया जाता है। उदाहरण, जो-जो धूमयुक्त है वह-वह अग्नियुक्त भी है जैसे, रसोईघर। यही हमारा उदाहरण हुआ।

४. **उपनय**. **"उदाहरणापेक्षस्तथेत्युपसंहारी (नतथेतिवा) साध्यस्योपनयः"** हेतु और साध्यका सम्बन्ध उदाहरणके द्वारा देनेके उपरान्त अपने पक्षमें उसे खींचना अर्थात् उपसंहार करना उपनय कहलाता है। इसमें व्याप्ति-विशिष्ट पक्षका बोध होता है अर्थात् कहा हुआ चिह्न यहाँ पर है, इस बातकी सूचना जिस वाक्यके द्वारा स्पष्ट

रूपसे मिलती हो उसे उपनय कहा जाता है। धूम और अग्निकी व्याप्ति रसोईघरमें दिखलाते हुए हम कहते हैं कि हमारे पक्ष (पर्वत) में भी ऐसा धूम (अग्निका सूचक धूम) है अर्थात् पर्वत भी इस (अग्निके व्याप्य) धूमसे युक्त है। यही हमारा उपनय हुआ।

५. **निगमन. 'हेत्वपदेशात् प्रतिज्ञायाः पुनर्वचनं निगमनम्'।**

वह वाक्य जो प्रतिज्ञाकी सिद्धि करता है या जिसमें साध्यकी सिद्धि हो जाती है, निगमन कहलाता है। प्रारम्भमें जो हमारा प्रतिपाद्य विषय था उसे प्रतिपादित करते हुए अन्तमें उसे फिर एक बार दुहरा दिया जाता है। जैसे, 'अतः पर्वत अग्नियुक्त है,' यह हमारा निगमन हुआ।

नवीन नैयायिकोंने पांच अवयवोंका मानना आवश्यक नहीं समझा है। इनके विचारसे तीन ही वाक्य साध्यकी सिद्धि कर सकते हैं—प्रतिज्ञा-हेतु और उदाहरण। मीमांसक और वेदान्तियोंने भी इन्हीं तीन वाक्योंको अनुमानके लिये काफ़ी समझा है। बौद्धोंने तो प्रतिज्ञा और हेतुको ही अनुमान-प्रमाणके लिये उपयुक्त समझा है।

वात्स्यायन-भाष्यमें अनुमानके लिये दस अवयव माने गये हैं। पांच ऊपर कहे हुए और पांच निम्नलिखित—

जिज्ञासा, संशय, शक्य प्राप्ति, प्रयोजन और संशय व्युदास।

वार्तिककारने लिखा है कि इन्हें अवयव मानना भूल है क्योंकि दूसरोंको समझानेमें इनका प्रयोजन नहीं पड़ता और दूसरोंको समझाना ही अनुमानका मुख्य उदेश्य है।

स्वार्थानुमान-'स्वान्तः-प्रति पत्ति' के हेतु किया जाता है। परार्थानुमान पर-प्रतिपत्तिके हेतु किया जाता है। यही दोनोंमें भेद है। सर्व प्रथम पहले स्वार्थानुमानके द्वारा ज्ञानोपार्जन कर पीछे पर-प्रबोधनार्थ पंचावयव वाक्यका प्रयोग किया जाता है।

न्याय-प्रयोग

अतः न्यायके अनुसार अनुमानका स्वरूप निम्न प्रकारसे हुआ—

१. पर्वत पर अग्नि है—प्रतिज्ञा।

२. क्योंकि वहां पर धुवाँ है—हेतु।

३. जहां-जहां धुवाँ होता है वहाँ-वहाँ अग्नि अवश्य होती है जैसे, रसोईघरमें—उदाहरण।

४. यहां पर धुवाँ उसी प्रकारका है जो अग्निके साथ रहता है—उपनय।

५. इसलिए पर्वत पर अग्नि है—निगमन।

इसे और भी स्पष्ट करनेके लिये एक दूसरा उदाहरण लिया जा सकता है।

१. केशव मरणशील है—प्रतिज्ञा।

२. क्योंकि वह मनुष्य है—हेतु।

३. जितने मनुष्य हैं वे सब मरणशील हैं जैसे, देवदत्त, नागार्जुन, शंकर, पाणिनि, कपिल आदि—उदाहरण।

४. केशव भी एक ऐसा ही मनुष्य है—उपनय।

५. इसलिए केशव मरणशील है—निगमन।

इन पांच अवयवोंसे युक्त अनुमान को "पचा व पव वाक्य" (महावाक्य) अथवा "न्याय-प्रयोग" कहा जाता है।

नव्यन्यायके अनुसार अनुमानके तीन प्रभेद हैं.

१. केवलान्वयी।

२. केवल व्यतिरेकी।

३. अन्वय व्यतिरेकी।

इन अनुमानोंको समझनेके लिये सर्व प्रथम हमें अन्वय तथा व्यतिरेक का अर्थ समझ लेना चाहिए। **अन्वय** का अर्थ है **साहचर्य** अर्थात् एक साथ रहना। जहाँ यह है वहाँ वह भी है जैसे, जहाँ धुवां है वहाँ अग्नि भी है।

व्यतिरेक का अर्थ है **अविनाभाव** अर्थात् वह नहीं है तो यह भी नहीं है। जैसे, जहाँ आग नहीं है वहाँ धुवां भी नहीं है। इसी धूम और अग्निके उदाहरणको लेकर इसे और भी स्पष्ट किया जा सकता है। यहाँ अन्वयका दृष्टान्त होगा महानस (रसोईघर) क्योंकि उसमें धूम भी है और अग्नि भी। किन्तु व्यतिरेकका दृष्टान्त होगा जलाशय क्योंकि उसमें अग्नि भी नहीं है और धूम भी नहीं है। जिस लिंगमें अन्वय और व्यतिरेक दोनों व्याप्तियां हों उसे अन्वय व्यतिरेक कहते हैं।

इसी प्रसंगमें पक्ष, सपक्ष और विपक्षके अर्थको भी समझ लेना आवश्यक है।

१. **पक्ष.** जिसमें साध्यका अस्तित्व सिद्ध करना है उसे पक्ष कहते हैं। तात्पर्य यह है कि जिसमें साध्यका अस्तित्व पहलेसे ही सिद्ध न हो बल्कि सम्भावित हो उसे पक्ष कहते हैं—

"संदिग्धसाध्यवान् पक्षः"

जैसे यदि पर्वतमें अग्निको सिद्ध करना है तो यहाँ पर्वतमें अग्निकी सम्भावना है किन्तु पहलेसे निश्चय नहीं है। इसीलिए यहाँ पर्वत पक्ष हुआ।

२. **सपक्ष.** इसका अर्थ है ऐसा स्थान जिसमें साध्यका होना निश्चित रूपसे मालूम रहे। तर्क संग्रहकारका कथन है—

'निश्चित साध्यवान् सपक्षः'

जैसे, रसोईघरमें अग्निका होना निश्चित रूपसे मालूम रहता है। अतः वह सपक्ष हुआ।

३. **विपक्ष.** इसका अर्थ है ऐसा स्थान जिसमें साध्यका न होना (अभाव) निश्चित रूपसे मालूम रहे—

'निश्चित साध्याभाववान् विपक्षः'

जैसे, तालाबमें अग्निका न होना निश्चित रूपसे मालूम है, अतः वह विपक्ष हुआ।

अब यहाँ पूर्वोक्त नव्यनैयायिकोंके भेदको समझ लेना चाहिए।

१. **केवलान्वयी.** केवलान्वयी अनुमान वह है जिसमें केवल अन्वय का दृष्टान्त मिल सके व्यतिरेकका नहीं। उदाहरणार्थ, 'घट अभिधेय है क्योंकि उसमें प्रमेयत्व रहता है जैसे पट।' इस स्थलमें प्रमेयत्व और अभिधेयत्वकी व्यतिरेक व्याप्ति नहीं है, क्योंकि सभी पदार्थोंमें अभिधेयत्व और प्रमेयत्व है। यहाँ व्याप्ति सम्बन्ध इस प्रकार स्थापित किया गया है कि जो-जो प्रमेय हैं वे-वे अभिधेय भी हैं अर्थात् जो-जो वस्तुएं जानी जा सकतीं हैं उनका नाम भी लिया जा सकता है। यहाँ प्रमेयत्व और अभिधेयत्वकी व्यतिरेक व्याप्ति नहीं है क्योंकि, व्यतिरेक के लिये यह दिखाना आवश्यक होगा कि जो-जो अभिधेय नहीं हैं वे-वे प्रमेय नहीं हैं किन्तु ऐसा कोई पदार्थ ही नहीं है जो अभिधेय न हो अर्थात् जितनी वस्तुएं मिलती हैं वे सब सपक्षमें ही आ जाती हैं, विपक्षका कोई दृष्टान्त ही नहीं मिलता। फिर व्यतिरेक दृष्टान्त कहाँसे आयेगा? ऐसी अवस्थामें केवल अन्वयका ही दृष्टान्त सम्भव हो सकता है। इस प्रकारके अनुमानको ही केवलान्वयी अनुमान कहते हैं।

२. **केवल व्यतिरेकी.** जिसमें केवल व्यतिरेक व्याप्ति हो वह केवल व्यतिरेकी अनुमान कहलाता है। जैसे, 'पृथ्वी अन्य पदार्थोंसे पृथक है क्योंकि इसमें गन्ध रहती है।' जो अन्य पदार्थोंसे पृथक नहीं है उसमें गन्ध नहीं है, जैसे जल। यह पृथ्वी वैसी नहीं है, इसलिए यह उस प्रकारकी नहीं हो सकती। यहाँ जो गन्धवाला है वह अन्य पदार्थों

से भिन्न है, ऐसा अन्वयदृष्टान्त नहीं है क्योंकि, पृथ्वी मात्र ही पक्ष है।

३. **अन्वय व्यतिरेकी.** जिस अनुमानमें अन्वय और व्यतिरेक दोनोंके दृष्टान्त मिल सकें उसे अन्वयव्यतिरेकी अनुमान कहते हैं। तात्पर्य यह कि जिस लिंगमें अन्वय और व्यतिरेक दोनों प्रकारकी व्याप्ति उपस्थित हों उसका नाम अन्वय व्यतिरेकी है। जैसे 'अग्नि' सिद्ध करनेमें हेतु, 'धूम' अन्वय व्यतिरेकी है क्योंकि जहाँ-जहाँ धूम है वहाँ-वहाँ अग्नि है जैसे रसोईघरमें (यह अन्वय व्याप्ति हुई) और जहाँ अग्नि नहीं है वहाँ धूम भी नहीं है जैसे जलाशयमें (यह व्यतिरेक व्याप्ति हुई)। सपक्ष और विपक्ष दोनों दृष्टान्त मिलनेके कारण ही इसे अन्वय व्यतिरेकी अनुमान कहते हैं।

पाश्चात्य न्याय (अनुमान) और भारतीय न्यायकी तुलना

१. पाश्चात्य अनुमानमें आकार विषयक सत्यताकी सिद्धि की जाती है, द्रव्य विषयक सत्यताकी आवश्यकता नहीं मानी जाती। परन्तु भारतीय अनुमानमें दोनों प्रकारकी सत्यताओंका होना आवश्यक रहता है।

२. पाश्चात्य तार्किक वाक्य तीन प्रकारके होते हैं—१. **निरपेक्ष वाक्य (Categorical propositions)** २. **हेतुफलाश्रित (Hypothetical propositions)** और ३. **वैकल्पिक वाक्य (Disjunctive propositions)**, परन्तु भारतीय तार्किक वाक्य केवल पहले प्रकारका अर्थात् निरपेक्ष वाक्य होता है।

३. पाश्चात्य तर्कशास्त्रमें अनुमानकी प्रक्रिया केवल तीन ही वाक्य से निष्पन्न हो जाती है। १. **दीर्घवाक्य (Major premise)** २. **ह्रस्ववाक्य (Minor premise)**, ३. तथा **निष्कर्ष (Conclusion)** जैसे—

सभी मनुष्य मरणशील हैं—**दीर्घवाक्य**
केशव एक मनुष्य है—**ह्रस्ववाक्य**
∴ केशव मरणशील है—**निष्कर्ष**

परन्तु भारतीय न्यायशास्त्रमें पांच वाक्यों (अवयवों) का प्रयोग किया जाता है—१. **प्रतिज्ञा**, २. **हेतु**, ३. **उदाहरण**, ४. **उपनय**, और ५. **निगमन**। **जैसे**—

१. केशव मरणशील है—**प्रतिज्ञा**
२. क्योंकि, वह मनुष्य है—**हेतु**
३. जितने मनुष्य हैं वे सब मरणशील हैं, जैसे देवदत्त, नागार्जुन, शंकर, पाणिनि, कपिल आदि—**उदाहरण**

४. केशव भी एक ऐसा ही मनुष्य है—**उपनय**
५. ∴ केशव मरणशील है—**निगमन**

४. सबसे बड़ा अन्तर पाश्चात्य न्याय और भारतीय न्यायमें उपनयकी उपस्थितिसे है। पाश्चात्य न्यायमें दीर्घ और ह्रस्ववाक्योंका कोई समन्वयात्मक वाक्य नहीं होता। परन्तु भारतीय न्यायमें हेतु वाक्य और उदाहरणका एकीकरण उपनयमें हो जाता है जो अनुमानके लिये नितान्त आवश्यक है। यही परामर्श-ज्ञान कहलाता है। वास्तवमें परामर्श-ज्ञानसे ही अनुमिति की जाती है।

५. परार्थानुमान और स्वार्थानुमानका भेद पाश्चात्य न्यायमें उपलब्ध नहीं होता है।

भारतीय परार्थानुमान पाश्चात्य न्यायवाक्य (syllogism) से बहुत अधिक समानता रखता है, किन्तु दोनों बिल्कुल एक ही नहीं हैं। भारतीय अनुमान पाश्चात्य न्यायवाक्यकी अपेक्षा अधिक स्वाभाविक तथा व्यावहारिक है। हम विचार करते समय अधिकतर भारतीय अनुमानके रूपमें ही सोचते हैं। जैसे, किसीकी मृत्यु देखकर कोई इस प्रकार विचार नहीं करता कि,

सब मनुष्य मरणशील हैं।
यह मनुष्य है।
∴ यह मरणशील है।

प्रत्युत सोचनेका ढंग प्रायः इस तरह होता है कि,
इस व्यक्तिकी मृत्यु आवश्यक थी, क्योंकि वह मनुष्य था
और सभी मनुष्य मरणशील हैं।

इस प्रकार इतना विचार-विमर्श करनेके उपरान्त हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि पाश्चात्य न्यायवाक्य और नैयायिकोंके परार्थानुमानमें काफ़ी समानताएं और विभिन्नताएं हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि भारतीय अनुमान-पद्धति पाश्चात्य अनुमान-पद्धतिसे अधिक स्वाभाविक है, परन्तु कुछ बातोंमें भारतीय अनुमान-पद्धतिमें भी कमियाँ हैं जैसे १. भारतीय न्यायमें सामान्य और विशेष वाक्योंका कोई भेद नहीं किया गया है, २. भारतीय न्यायमें आकार (Figure) और संयोग (Mood) पर भी ध्यान नहीं दिया गया है। जो कि हेतु (Middle Term) के स्थान पर निर्भर होता है।

जहाँ भारतीय-न्याय किसी मतके प्रतिपादनके लिये अथवा किसी वस्तुकी व्याख्याके लिये या निष्कर्षकी उपलब्धिके लिये अधिक

ठोस है वहीं अरस्तू का न्यायवाक्य थोड़ेसे वाक्यों द्वारा निगमनकी सत्यता (Validity) की परीक्षाके लिये अधिक उपयुक्त है।

हेत्वाभास

हेतुके द्वारा ही साध्यकी सिद्धि की जाती है। इसीलिए हेतुकी निर्दोषताके विषयमें नैयायिकोंने काफ़ी ज़ोर दिया है। हेतुमें यदि निम्नलिखित गुण हों तो वह सत् कहलायेगा:—

१. हेतुका पक्षमें रहना।

२. सपक्षमें हेतुका उपस्थित रहना।

३. विपक्ष दृष्टान्तोंमें हेतुका अभाव।

४. साध्यसे विपरीत वस्तुकी सिद्धिके लिये किसी दूसरे हेतुका अभाव।

५. प्रत्यक्ष इत्यादि प्रमाणों द्वारा बाधित न होना।

अनुमानकी सत्यता हेतुके इन सभी गुणों पर आधारित है यदि इन गुणोंमें से किसीमें भी कमी मालूम होती है तो सत् हेतु न होकर हेतुका आभासमात्र होता है। (हेतु + आभास = हेत्वाभास अर्थात् हेतुमें दोष तो हो जाता है किन्तु वह निर्दोष प्रतीत होता है।)

'न्यायदर्शन' में महर्षि गौतम ने निम्नलिखित पाँच प्रकारके हेत्वाभासोंको माना है—

१. सव्यभिचार।

२. विरुद्ध।

३. प्रकरणसम।

४. साध्यसम।

५. कालातीत।

नव्यनैयायिकोंने हेत्वाभासोंका वर्गीकरण निम्न प्रकारसे किया है:—

१. सव्यभिचार।

२. विरुद्ध।

३. सत्प्रतियक्ष।

४. असिद्ध।

५. बाधित।

(१) **सव्यभिचार हेत्वाभास.** सव्यभिचार हेतु वह है जो साध्य के साथ भी रहे और उससे भिन्न पदार्थमें भी। हेतुका साध्यके साथ नियमित सम्बन्ध होना चाहिए। धूमका अग्निके साथ नियमित साहचर्य

है अर्थात् धूमका अधिकरण (स्थिति या आधार) अग्निमात्र है। इसे दूसरे शब्दोंमें इस प्रकार कहा जा सकता है कि धूम ऐकान्तिक रूपसे अर्थात् केवल अग्निका आश्रित है। इसके विपरीत ताप केवल अग्निका आश्रित नहीं है, प्रत्युत वह अग्निके अतिरिक्त बिजली, सूर्यकी किरणों आदिसे भी उत्पन्न हो सकता है। वह केवल एक पदार्थका ही आश्रित नहीं है। वह अग्निमें भी पाया जाता है और अग्निके अभावमें भी। इसीलिए उसे अनैकान्तिक अर्थात् बहुतोंका आश्रित कहा जाता है। यथार्थ हेतुका साध्यके साथ ऐकान्तिक सम्बन्ध ही होता है अर्थात् सदैव वह साध्यके साथ ही रहता है, अलग नहीं। दूसरी ओर, जो हेतु साध्यके साथ भी रहे और अलग भी देखनेमें आवे तो वास्तवमें उसे हेतुका आभास मात्र ही समझना चाहिए। ऐसे ही हेतुको सव्यभिचार कहते हैं। इसीलिए महर्षि गौतम ने लिखा है कि—

"अनैकान्तिक : सव्यभिचार:"

उदाहरणके द्वारा इसे इस प्रकार समझना चाहिए कि मान लिया हमें यह सिद्ध करना है कि यह पशु "गाय है" और इसके लिये हम हेतु देते हैं कि "क्योंकि इसके सींग हैं।" यहाँ सींगका गायके साथ ऐकान्तिक सम्बन्ध नहीं है क्योंकि वह गायसे पृथक् अन्य पशुओंमें (जैसे भैंस, बकरी आदिमें) भी पाई जाती है अर्थात् इसका गायके साथ अनैकान्तिक सम्बन्ध है। इसीलिए यह हेतु उचित नहीं है और इसके द्वारा साध्यकी सिद्धि नहीं हो सकती। इस प्रकारके हेत्वाभासको सव्यभिचार हेत्वाभास कहा जाता है।

इसको एक दूसरा उदाहरण लेकर अधिक स्पष्ट किया जा सकता है: जैसे, "शब्द नित्य है क्योंकि उसका स्पर्श नहीं हो सकता।" यदि इस प्रकारका अनुमान किया जाय तो यहाँ 'स्पर्शका न होना' हेतु है और 'नित्य होना' साध्य। हम देखते हैं कि यद्यपि घटत्व इत्यादि पदार्थोंमें स्पर्शका न होना और नित्यता दोनों साथ-साथ पाये जाते हैं तथापि बहुत-सी ऐसी वस्तुएं हैं जहाँ दोनों साथ नहीं पाये जाते हैं। जैसे बुद्धिमें यद्यपि स्पर्श नहीं है तथापि वह अनित्य है। इससे नित्यता सिद्ध करनेमें स्पर्शका न होना सव्यभिचार हेतु हुआ, क्योंकि बुद्धिमें दोनोंका व्यभिचार पाया जाता है अर्थात् दोनों साथ-साथ नहीं पाये जाते हैं। एक और उदाहरण लिया जा सकता है। जैसे—

सभी प्रमेय (जानी जा सकनेवाली) वस्तुएं वह्निमान् हैं।
पर्वत प्रमेय है।
∴ पर्वत वह्निमान् है।

यहाँ 'प्रमेय होना' हेतु वह्निमान् वस्तुओंमें भी उपस्थित है जैसे रसोईघर, यज्ञशाला आदिमें, और अवह्निमान् वस्तुओंमें भी जैसे, तालाब इत्यादिमें। सभी प्रमेय वस्तुएं वह्निमान् नहीं हुआ करती हैं। अतः हम यह निष्कर्ष नहीं निकाल सकते हैं कि 'पर्वत वह्निमान् है क्योंकि वह प्रमेय है', कारण कि हम उपर्युक्त निष्कर्षके साथ ही साथ यह भी निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि 'पर्वत वह्निमान् नहीं है' 'क्योंकि वह प्रमेय है जैसे तालाब इत्यादि।' इसको अनैकान्तिक इसलिए कहा जाता है कि किसी वस्तुका होना एक अन्त हुआ और न होना दूसरा अन्त हुआ। 'है' या 'नहीं है' इसमें जो केवल एक बातके साथ रहे वह हुआ ऐकान्तिक और जो एकके साथ नहीं प्रत्युत दोनोंके साथ रहे वह है अनैकान्तिक। यह हेतु पुष्ट इसलिये हुआ कि इससे 'है' और 'नहीं है' ये दोनों बातें सिद्ध हो जातीं हैं। जैसे, 'यह नित्य है क्योंकि इसका स्पर्श नहीं होता है, जैसे आत्मा।' इसी प्रकार 'यह अनित्य है क्योंकि इसका स्पर्श नहीं होता जैसे-बुद्धि।' इस प्रकार नित्यता और अनित्यता दोनां एक हेतुसे ही सिद्ध हो जाती हैं जो कि तर्कशास्त्रके सिद्धान्तोंके अनुसार ग़लत है। दूसरे शब्दोंमें हम कह सकते हैं कि सव्यभिचार हेत्वाभासमें हेतु साध्यके साथ भी रहता है और साध्याभावके साथ भी। सव्यभिचार हेत्वाभास तीन प्रकारका होता है—

१. **साधारण सव्यभिचार हेत्वाभास।**
२. **असाधारण सव्यभिचार हेत्वाभास।**
३. **अनुपसंहारी सव्यभिचार हेत्वाभास।**

१ साधारण सव्यभिचार हेत्वाभास. इस हेत्वाभासमें हेतु सपक्ष तथा विपक्ष अर्थात् साध्य तथा साध्याभाव दोनोंमें विद्यमान रहता है। दूसरे शब्दोंमें हम कह सकते हैं कि जो हेत्वाभास साध्यके अभावमें भी पाया जाता है उसे साधारण सव्यभिचार हेत्वाभास कहा जाता है।

"साध्याभाववद् वृत्तिः साधारणः"

इसे **अतिव्याप्त हेतु** का दोष (Fallacy of too wide Middle Term) कहा जा सकता है। ऊपर दिये हुए उदाहरणमें हेतु प्रमेयत्व 'वह्निमान् पदार्थोंमें (जैसे रसोईघर इत्यादिमें) भी पाया जाता है और अवह्निमान् पदार्थोंमें (जैसे तालाब इत्यादिमें) भी। एक दूसरा उदाहरण लेकर इसे और भी स्पष्ट किया जा सकता है। जैसे—यदि कोई यह अनुमान करे कि——

"देवदत्त ब्राह्मण है क्योंकि उसके सिरमें चंदन लगा है"

तो यह अनुचित होगा क्योंकि सिरमें चंदनका लगा होना केवल

साध्य (ब्राह्मण) में ही नहीं होता है वरन् साध्यसे अन्य वर्णों (क्षत्रिय, वैश्य इत्यादि) में भी पाया जाता है। अर्थात् सपक्ष और विपक्ष दोनोंमें ही इसकी स्थिति देखनेमें आती है इसीलिए इसको साधारण सव्यभिचार हेत्वाभास कहते हैं।

२. **असाधारण सव्यभिचार हेत्वाभास.** यह हेत्वाभास अव्याप्त हेतु (Too narrow Middle Term) के कारण होता है। यह न तो सपक्षमें ही मिलता है और न विपक्षमें ही। विपक्षमें इसका न मिलना तो इसका आवश्यक गुण है इसलिए इसे दोष नहीं कहेंगे किन्तु यह सपक्षमें भी नहीं पाया जाता है। तात्पर्य यह कि इसकी स्थिति दिये हुए पक्ष मात्रमें ही सीमित होती है।

"सर्व-सपक्ष-विपक्ष-व्यावृत्तः पक्षमात्र वृत्तः असाधारणः"

जैसे—"शब्द नित्य है क्योंकि वह सुनाई पड़ता है।" सुनाई पड़ना केवल शब्दमें ही पाया जाता है क्योंकि यह उसीका एक धर्म या गुण है। सुनाई पड़ना और कहीं नहीं पाया जाता है। यह न नित्य पदार्थों, जैसे—आत्मा इत्यादिमें और न अनित्य पदार्थोंमें ही पाया जाता है। सुनाई पड़ना नित्य पदार्थोंमें न पाये जानेसे हम सुनाई पड़ने और नित्य पदार्थोंमें व्याप्ति-सम्बन्ध नहीं स्थापित कर सकते। व्याप्ति-सम्बन्ध न स्थापित होनेसे निष्कर्ष दोषपूर्ण हो जाता है। इसे और भी स्पष्ट करनेके लिये एक दूसरा उदाहरण लिया जा सकता है—

"पृथ्वी नित्य है क्योंकि इसमें गंध है।"

गंध पृथ्वीका एक गुण है यह और किसी नित्य या अनित्य पदार्थमें नहीं पाया जाता है। अतः गन्ध होने तथा नित्य होनेमें कोई व्याप्ति-सम्बन्ध नहीं स्थापित हो सकता है। इसलिए इस हेतुके द्वारा कोई सत्य निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता है।

३. **अनुपसंहारी सव्यभिचार हेत्वाभास.** जिस हेतुका दृष्टान्त न तो अन्वय (भाव) में ही मिले और न व्यतिरेक (अभाव) में ही प्राप्त हो, वह अनुपसंहारी सव्यभिचार हेत्वाभास कहलाता है। दूसरे शब्दोंमें, जिसमें सभी वस्तुएं पक्षमें शामिल हों उसे अनुपसंहारी हेत्वाभास कहते हैं। इस प्रकार इसके सपक्ष और विपक्षके उदाहरण ही नहीं मिल सकते। इसलिए तर्क संग्रहकारने लिखा है कि—

"अन्वय-व्यतिरेक-दृष्टान्त रहितः अनुपसंहारी"

जैसे—

'सब कुछ उत्तम है—
क्योंकि सब कुछ ईश्वर निर्मित है'।

यहां "ईश्वर-निर्मित होनेके कारण" यह हेतु माना गया है। इस हेतुका दृष्टान्त नहीं प्राप्त हो सकता अर्थात् हम यह नहीं दिखला सकते कि पक्षसे भिन्न स्थानमें भी हेतु और साध्यका सामंजस्य है क्योंकि पक्षसे भिन्न स्थान और कोई है ही नहीं। जब पक्षमें "सब कुछ" आ गया तब बाकी कुछ रहा ही नहीं जिसको लेकर हम कोई उदाहरण दे सकें। जब कोई उदाहरण ही नहीं दिया जा सकता तो यह सिद्ध होगा कि "जो-जो ईश्वर निर्मित है वह उत्तम है।"

यदि यह कहा जाय कि 'घट-पट' आदिका उदाहरण दिया जा सकता है तो यह उचित नहीं क्योंकि 'घट-पट' आदि सभी पदार्थ तो 'सब कुछ' के अन्दर आ जाते हैं। तात्पर्य यह है कि वे पक्षके अंतर्गत ही हैं और पक्ष अपना दृष्टान्त अपने आप ही नहीं हो सकता। इसलिए घट-पट आदि कोई भी पदार्थ दृष्टान्तकी कोटिमें नहीं आ सकते।

इसी प्रकार व्यतिरेकमें भी दृष्टान्त नहीं मिल सकता क्योंकि यह कैसे सिद्ध किया जायगा कि 'जो-जो उत्तम नहीं है वह-वह ईश्वर निर्मित नहीं है' हमने तो 'सब कुछ' को ईश्वर निर्मित मान लिया है, फिर 'ईश्वरसे जो नहीं निर्मित है' उसका दृष्टान्त कहां मिलेगा और इस प्रकार दृष्टान्त न मिलनेसे उपर्युक्त व्याप्ति-सम्बन्धका स्थापित होना असम्भव हो जायगा।

अतः यहां अन्वय और व्यतिरेकमें कोई भी दृष्टान्त न मिलनेके कारण हेतु दोषयुक्त हो जाता है। ऐसे ही हेत्वाभासको अनुपसंहारी कहा गया है।

इसका एक और उदाहरण भी लिया जा सकता है। जैसे—"सभी वस्तुएं अनित्य हैं क्योंकि वे प्रमेय हैं।"

यहां 'सभी वस्तुओं' को छोड़कर कोई वस्तु ऐसी नहीं है जो दृष्टान्त हो सके। अतः इस प्रकार कोई व्याप्ति-सम्बन्ध नहीं मिल सकता। इस कारण इसे अनुपसंहारी हेत्वाभास कहा गया है।

(२) **विरुद्ध हेत्वाभास.** जिस हेतुसे जो बात सिद्ध करनी है यदि उसका उल्टा ही सिद्ध हो अर्थात् ऐसा हेतु दिया जाय जो साध्यका उल्टा ही सिद्ध करे तो उसे विरुद्ध हेत्वाभास कहते हैं।

"सिद्धान्तमभ्युपेत्य तदविरोधी विरुद्धः।"

दूसरे शब्दोंमें जो सपक्षमें न रहकर विपक्षमें रहनेसे साध्याभावका साधक हो उसका नाम विरुद्ध हेत्वाभास है।

नव्यनैयायिकों ने लिखा है कि—

"साध्याभावव्याप्तो हेतुविरुद्धः।"

अर्थात् जो हेतु साध्याभावके साथ व्याप्त है उसीका नाम विरुद्ध हेत्वाभास है। जैसे—

'यह पानी ठंढा है क्योंकि यह अभी आग पर चढ़ा है।'

अथवा,

"शब्द नित्य है क्योंकि वह कार्य है जैसे 'घट' इत्यादि।" यहां 'घट' आदिकी भांति कार्य होनेसे शब्द नित्य है, इस अनुमानमें 'कार्य होनेसे' हेतु विरुद्ध है क्योंकि 'कार्य होनेसे' हेतुकी नित्यत्वाभाव रूप अनित्यत्व के साथ व्याप्ति पाई जाती है, आत्मा आदि नित्य द्रव्योंके साथ नहीं। इसी कारण नित्यत्व रूप साध्यके अभाव अनित्यत्वकी व्याप्तिका आश्रय होनेसे उक्त हेतु विरुद्ध है।

तात्पर्य यह कि जो कार्य है वह अनित्य है इस प्रकार अनित्यत्वकी व्याप्तिका आश्रय 'कार्य होना' है न कि नित्यत्वकी व्याप्तिका क्योंकि नित्य पदार्थ कार्य नहीं होता। इससे स्पष्ट है कि 'कार्य होना' हेतुसे शब्द की नित्यता नहीं सिद्ध होती प्रत्युत नित्यत्वके विरुद्ध अनित्यत्वका साधक होनेसे उक्त हेतु विरुद्ध है और यह साध्याभावके साथ व्याप्ति ज्ञानका बोधक होनेसे अनुमितिका प्रतिबन्धक है क्योंकि यह हेतु साध्याभावसे व्याप्त है। इस ज्ञानके होने पर 'शब्द नित्य है' इस प्रकार की अनुमिति नहीं हो सकती। एक दूसरा उदाहरण भी ले सकते हैं। मान लिया कि कोई यह सिद्ध करना चाहता है कि—

'यह पशु गधा है'

और इसके लिये यह हेतु देता है कि—

'क्योंकि इसके सींग हैं'

यहां प्रत्यक्ष सिद्ध है कि गधे के सींग नहीं होती है अर्थात् सींग गधे में नहीं प्रत्युक्त गधेसे भिन्न गाय, भैंस आदि पशुओंमें पाई जाती है। अतः यह हेतु साध्यका साधक नहीं प्रत्युक्त बाधक है। इसीको विरुद्ध हेत्वाभास कहते हैं।

साधारण सव्यभिचार और विरुद्ध हेत्वाभासोंमें मुख्य अन्तर यह है कि साधारण सव्यभिचार हेत्वाभासमें दिया हुआ हेतु साध्यके साथ भी पाया जाता है और उससे भिन्न वस्तुओंमें भी। किन्तु विरुद्ध हेत्वाभासमें हेतु कभी साध्यके साथ पाया ही नहीं जाता प्रत्युत सदैव साध्याभावमें ही पाया जाता है। इसलिए विरुद्ध हेत्वाभासमें जो हम सिद्ध करना चाहते हैं उसका उल्टा ही सिद्ध होता है।

'देवदत्त पंडित है क्योंकि वह मनुष्य है'।

यहां पर 'मनुष्य होना' साधारण सव्यभिचार हेतु है क्योंकि बहुत

से मनुष्य ऐसे हैं जो पंडित नहीं होते। अतः मनुष्य होनेसे पंडित होना नहीं सिद्ध हो सकता। दूसरी ओर यदि कहा जाय कि—

'पानी ठंढा है क्योंकि आग पर चढ़ा है'

तो यहां पर आग पर चढ़े रहनेसे पानीके ठंढा होनेके स्थान पर उसका गरम हो जाना सिद्ध हो जाता है। अतः यह विरुद्ध हेत्वाभास हुआ। इसलिए हम निष्कर्षमें यही कह सकते हैं कि विरुद्ध हेत्वाभासमें हेतु नियत रूपसे साध्यके अभावसे सम्बन्धित रहता है और साधारण सव्यभिचार हेत्वाभासमें हेतुमे भाव और अभाव दोनोंसे सम्बन्धित रहता है।

(३) **सत्प्रतिपक्ष हेत्वाभास.** सत्प्रतिपक्ष हेत्वाभास वह है जिसमें हेतु दूसरे उतने ही बलवान हेतुसे बाधित हो अर्थात् जिसमें साध्यके अभावको भी सिद्ध करनेवाला उतना ही बलवान हेतु मौजूद हो। इस कथनका अर्थ यह है कि साध्यको सिद्ध करनेके लिये एक हेतु दिया गया किन्तु यदि उसी समय उतना ही बलवान हेतु साध्यके अभावको भी सिद्ध करनेके लिये उपस्थित हो जाता है तो पहला हेतु सत्प्रतिपक्ष कहलाता है। जैसे—

"शब्द नित्य है क्योंकि वह सुनाई पड़ता है"।

"शब्द अनित्य है क्योंकि वह उत्पन्न होता है"।

दोनों हेतुओंसे उल्टी चीजें सिद्ध हो जाती हैं। इसमें दोनों हेतु समान बलवाले होते हैं।

विरुद्ध हेत्वाभास और सत्प्रतिपक्ष हेत्वाभासमें अन्तर केवल इतना ही है कि विरुद्ध हेत्वाभासमें एक ही हेतु होता है जो वस्तुतः उल्टी बात सिद्ध करता है, जैसे—"शब्द नित्य है क्योंकि वह उत्पन्न होता है"। इसमें हेतु शब्दका अनित्यत्व सिद्ध करता है। सत्प्रतिपक्षमें ऐसा नहीं होता। उसमें दो तुल्य बलवाले हेतु होते हैं जो साध्य और साध्यका उलटा सिद्ध करते हैं। विरुद्धसे साध्यका उल्टा सिद्ध होता है और सत्प्रतिपक्षमें यह कमजोरी होती है कि उल्टा सिद्ध करनेके लिये वैसा ही बलवान हेतु उपस्थित रहता है।

(४) **साध्यसम अथवा असिद्ध हेत्वाभास.** साध्यके विषयमें सन्देह रहता है, इसलिए हेतुके द्वारा उसकी सिद्धि की जाती है किन्तु हेतु तभी साध्यको सिद्ध करेगा जब वह स्वयं असंदिग्ध हो। यदि हेतु स्वयं असिद्ध है तब वह साध्यको सिद्ध नहीं कर सकता। कहावत भी है **"स्वयं असिद्धः कथं परान् साधयति ?"** इसलिए हेतु अर्थात् साधनको स्वयंसिद्ध रहना चाहिए। यदि वह स्वयंसिद्ध नहीं है तब तो वह भी

साध्य ही हो जाता है, साधन नहीं रहता। इसलिए महर्षि गौतम ने 'न्याय दर्शन' में लिखा है कि—

"साध्याऽविशिष्टः साध्यत्वात् साध्यसमः"

अर्थात् जो हेतु स्वयं साध्य कोटिमें आ जाता है। उसमें और साध्यमें भेद ही क्या रहा? ऐसे ही हेत्वाभासको 'साध्यसम' कहते हैं। अर्थात् जैसा संदेह साध्यके विषयमें है, जिस संदेहको दूर करनेके लिये अनुमान किया जाता है वैसा ही संदेह यदि हेतुके विषयमें भी हो तो वह हेतु साध्यके सम अर्थात् बराबर कहलाता है इसीसे उसे साध्यसम कहते हैं। जैसे—

"छाया द्रव्य है क्योंकि उसमें गति होती है"।

यहां छायामें द्रव्यत्व सिद्ध करनेके लिये जो हेतु (गति) कहा गया है वह स्वयं असिद्ध है। छायामें गति होती है, इसमें प्रमाण ही क्या हैं? यदि यह कहा जाय कि हमारे साथ-साथ छाया भी चलती है तो यह ठीक नहीं, क्योंकि गति गमनशील पुरुषमें है न कि छायामें। छाया तो केवल प्रकाशका अभाव मात्र है। गतिमान् पदार्थ जहाँ-जहाँ प्रकाशका अवरोध करता जाता है उसके पश्चात् भागमें छाया पड़ती जाती है। अतः छायामें गतिका होना सिद्ध नहीं हो सकता और जब यह गति स्वयं असिद्ध है तब दिये हुए साध्य अर्थात् द्रव्यत्वका साधन कैसे होगा?

यह असिद्ध हेत्वाभास तीन प्रकारका होता है—

१. **आश्रयासिद्ध।**

२. **स्वरूपासिद्ध।**

३. **व्याप्यत्वासिद्ध।**

१. **आश्रयासिद्ध.** वह हेतु है जिसका कि कोई वास्तविक आधार नहीं होता। पक्ष ही हेतुका आधार होता है। यदि पक्ष वास्तविक नहीं है तो हेतुका सम्बन्ध इससे नहीं स्थापित किया जा सकता। हेतुका एक आवश्यक गुण है कि उसे पक्षमें अवश्य विद्यमान रहना चाहिए (पक्ष धर्मता)। किन्तु यदि पक्ष अवास्तविक या काल्पनिक है तो हेतु उसमें किसी भी प्रकार विद्यमान नहीं रह सकता। इस प्रकार हेतु-वाक्य असत्य हो जायगा—

"यस्य हेतोराश्रयो नावगम्यते स आश्रयासिद्धः"।

अर्थात् जहां हेतुका आश्रय ही असिद्ध हो वहीं आश्रयासिद्ध हेत्वाभास होता है। जैसे—

आकाश का पुष्प सुगंधित है।

क्योंकि वह पुष्प है।

जैसे पृथ्वीका पुष्प।

यहां हेतुका आश्रयभूत पक्ष (आकाशका पुष्प) ही असिद्ध है।

ऐसे असम्भव पक्षमें कोई धर्म सिद्ध करनेके लिये जो हेतु दिया जाय वह आश्रयासिद्ध कहलाता है।

२. स्वरूपासिद्ध. वह हेतु है जो पक्षमें विद्यमान ही न हो। यहां पक्ष काल्पनिक या अवास्तविक नहीं होता प्रत्युत् हेतुकी प्रकृति ही ऐसी होती है कि वह पक्षमें विद्यमान नहीं रह सकता। यद्यपि हेतुका यह आवश्यक गुण है कि उसे पक्षमें अवश्य विद्यमान रहना चाहिए (पक्ष धर्मता) तथापि जब स्वभावसे ही हेतुका मेल नहीं खाता तो वह उसमें विद्यमान किस प्रकार रह सकता है? ऐसी अवस्थामें निष्कर्ष दोषयुक्त हो जायगा। इसलिए कहा गया है कि—

"यो हेतुराश्रयेनावगम्यते सः स्वरूपासिद्धः"।

अर्थात्, जहां दिया हुआ हेतु पक्षमें न पाया जाय वहां स्वरूपासिद्ध हेत्वाभास होता है। जैसे—

"घोड़ा गाय है क्योंकि उसके सींग है"।

यहां सींगका होना घोड़ोंमें कभी सम्भव नहीं है इससे यह हेतुस्वरूप से ही, अपने स्वभावसे ही असिद्ध हुआ।

दूसरा उदाहरण इस प्रकार दिया जा सकता है—

"घोड़ा भी पक्षी है क्योंकि वह आकाशमें उड़ सकता है"

यहां जो हेतु (आकाशमें उड़ना) दिया गया है वह पक्षमें (घोड़ेमें) नहीं पाया जाता। इसीको स्वरूपासिद्ध कहते हैं।

३. व्याप्यत्वासिद्ध अथवा अन्यथासिद्ध. यह वह हेतु है जिसका साध्यके साथ नियत साहचर्य सिद्ध नहीं हो पाता है। हेतु साध्यका व्याप्य नहीं माना जा सकता अर्थात् "जहां-जहां हेतु है वहां-वहां साध्य है" यह नहीं कहा जा सकता वहां व्याप्यत्वासिद्ध होता है। अर्थात् इस हेतुमें साध्यका व्याप्य होना सिद्ध नहीं होता है। यहां व्याप्ति उपाधि युक्त होती है।

"पर्वत पर धूम होगा,
क्योंकि उसमें अग्नि है"

यहां अग्नि अकेले पर्याप्त हेतु नहीं है क्योंकि अग्निका सम्बन्ध धूमके साथ तभी होता है जब उसका (अग्निका) भीगी लकड़ीके साथ संयोग होता है। इसे दूसरे शब्दोंमें इस प्रकार कहा जा सकता है कि अग्नि धूमको सिद्ध करनेके लिये एक दूसरी बातकी भी अपेक्षा रखती है। वह है भीगी लकड़ीका संयोग। इसीका नाम उपाधि है। इसका धूम

(साध्य) के साथ नित्य साहचर्य पाया जाता है किन्तु अग्निके साथ नहीं।

अग्नि धूमका निरपेक्ष कारण नहीं है। क्योंकि वह उपाधि अर्थात् (आर्देधन संयोग) की अपेक्षा रखता है और इस उपाधिके कारण अग्नि में धूमकी व्याप्ति नहीं हो सकती—अर्थात्

"जहां-जहां अग्नि है वहां-वहां धूम है"

ऐसा नहीं कहा जा सकता क्योंकि भीगी लकड़ी (उपाधि) के अभावमें निर्धूम अग्नि देखनेमें आती है (जैसे जलते हुए लोहेके गोले में)।

उपाधियुक्त (सोपाधिक) हेतु साध्यकी व्याप्तिको सिद्ध नहीं कर सकता। अत: उसको व्याप्यत्वासिद्ध कहते हैं।

इसे एक और उदाहरण लेकर स्पष्ट किया जा सकता है, जैसे—

"देवदत्त पंडित है क्योंकि वह काशीमें रहता है"।

जो काशीमें रहते हैं वे सब पंडित होते हैं, ऐसा यदि पाया जाय तो यह अनुमान ठीक हो सकता है परन्तु ऐसा होता नहीं। काशीमें रहनेके साथ ही साथ मेहनतसे पढ़ना आदि कुछ कारण ऐसे हैं जिनके बिना वह पंडित नहीं हो सकता। इस कारण 'काशीमें रहना' हेतु 'पंडित होना' साध्यका व्याप्य नहीं है। इसलिए यह व्याप्यत्वासिद्ध हेत्वाभास हुआ।

(५) **बाधित हेत्वाभास**. जहां हेतुसे बढ़कर बलवान दूसरा प्रमाण साध्यकी सिद्धिमें बाधा पहुंचाये अर्थात् जो अनुमान प्रमाणान्त है अर्थात् 'प्रत्यक्षादि' प्रमाणसे कट जाय उसे बाधित हेत्वाभास समझना चाहिए। जैसे—

"अग्निको उष्ण नहीं होना चाहिए क्योंकि वह द्रव्य है, और द्रव्य उष्ण नहीं होता जैसे मिट्टी, पत्थर आदि"। उपर्युक्त रूपसे द्रव्यत्व (हेतु) का सहारा लेते हुए यदि कोई अग्निकी अनुष्णता सिद्ध करना चाहे तो उसके विरुद्ध एक छोटी-सी चिनगारी काफी है। जो बात प्रत्यक्षसिद्ध है उसके विरुद्ध हेतु देना ही व्यर्थ है क्योंकि हेतु तो वहां दिया जाता है जहां साध्यको सिद्ध करना हो। और यहां तो वह (प्रत्यक्षादि) प्रमाणसे सिद्ध ही है। तो भी यदि हम कोई हेतु देकर इसका उल्टा सिद्ध करना चाहें तो वह बाधित कहलाता है। इसके अनेक भेद हैं जैसे—

प्रत्यक्षबाधित, अनुमानबाधित, आगमबाधित, स्ववचनबाधित, लोकबाधित आदि। प्रत्यक्षबाधितका उदाहरण ऊपर दिया जा चुका

है। इस बाधित हेत्वाभासमें यदि अनुमानसे बाधा आये तो उसे **अनुमानबाधित** हेत्वाभास कहते हैं, जैसे—

"शब्द अपरिणामी है क्योंकि किसीका बनाया हुआ नहीं है"

इसका बाधक दूसरा अनुमान है: "शब्द परिणामी है क्योंकि प्रत्यक्षका विषय है"। जितने प्रत्यक्षके विषय हैं वे सब परिणमनशील हैं जैसे वस्त्रादि। कोई-कोई हेतु आगमसे भी बाधित होता है जैसे पाप सुखका देनेवाला है क्योंकि कर्म है और जो कर्म है वह सुखका देनेवाला है, जैसे पुण्य कर्म। यहां पर हेतु आगम (शास्त्र) से बाधित है। जहां अपने ही वचनसे अपना पक्ष कट जाय वहां स्ववचन बाधित हेत्वाभास माना जाता है, जैसे "मेरी माता वन्ध्या है क्योंकि पुरुष संयोग होने पर भी गर्भ नहीं रहता"। माता अगर वन्ध्या होती तो माताको वन्ध्या कहनेवाला ही कहांसे आता? लोक बाधित, मनुष्यकी खोपड़ी पवित्र है क्योंकि प्राणीका अंग है जैसे शंख, शुक्ति आदि। मनुष्यकी खोपड़ी की पवित्रता लोक व्यवहारसे बाधित है।

बाधित और सत्प्रतिपक्ष हेतुमें यह अन्तर है कि बाधित हेत्वाभास में साध्य किसी दूसरे, उससे और प्रबल हेतुसे असिद्ध हो जाता है; लेकिन सत्प्रतिपक्षमें दोनों पक्ष एक ही प्रकार बलवान होते हैं। जहां पक्ष और प्रतिपक्षमें एक बलवान हो जायगा वहां वह बाधित हेत्वाभास हो जायगा।

281